आज़ाद कथा

भाग 1

आज़ाद कथा

भाग 1

प्रेमचंद

भारती भाषा प्रकाशन, दिल्ली-110032

प्रकाशक : भारती भाषा प्रकाशन, 518/6 बी, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-32
प्रथम संस्करण : 19[redacted] / मूल्य : पचास रुपये मात्र / आवरण : हरिप्रकाश त्यागी
मुद्रक : एस० एन० प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

AAZAD KATHA (Part-I) by Prem Chand Rs. 50.00

एक

मियां आज़ाद के बारे में हम इतना ही जानते हैं कि वह आज़ाद थे। उनके खानदान का पता नहीं, गांव-घर का पता नहीं; खयाल आज़ाद, रंग-ढंग आज़ाद, लिवास आज़ाद, दिल आज़ाद और मज़हव भी आज़ाद। दिन भर ज़मीन के गज़ वने हुए इधर-उधर घूमना, जहां वैठना वहां से उठने का नाम न लेना और एक वार उठ खड़े हुए तो दिन भर मटरगश्ती करते रहना उनका काम था। न घर, न द्वार; कभी किसी दोस्त के यहां डट गये, कभी किसी हलवाई की दूकान पर अड्डा जमाया; और कोई ठिकाना न मिला, तो फ़ाक़ा कर गये। सव गुन पूरे थे। कुश्ती में, लकड़ी-विनवट में, गदके-फरी में, पटे-वांक में उस्ताद। ग़रज़, आलिमों में आलिम, शायरों में शायर, रंगीलों में रंगीले, हर फन मौला आदमी थे।

एक दिन मियां आज़ाद वाज़ार में सैर सपाटा कर रहे थे कि एक वुड्ढे ने एक वांके से कहा कि मियां, वेधे आये हो, या जान भारी है, या छींकते घर से चले थे? यह अकड़ते क्यों चलते हो? यहां गरदन झुका कर चला कीजिए, नहीं तो कोई पहलवान गरदन नापेगा, सारी शेखी किरकिरी हो जाएगी, ऐंड़ना भूल जाइएगा! इससे क्या वास्ता? यह शहर कुश्ती, पटे-वांक और लकड़ी की टकसाल है। वहुत से लड़ंतिये आये, मगर पटकनी खा गये। हाथ मिलाते ही पहलवानों ने मारा चारों खाने चित्त। यह सुनते ही वह मियां वांके आग-भभूका हो गये। वोले—जी, तो कहीं इस भरोसे भी न रहिएगा, यहां पटकनी खानेवाले आदमी नहीं हैं, वीच खेत पछाड़ें तो सही; वने रहें हमारे उस्ताद, जिन्होंने हमें लकड़ी सिखायी। टालों की लकड़ी फेंकना तो सभी जानते हैं, मैदान में ठहरना मर्दों ही का काम है। हमारे उस्ताद तीस-तीस आदमियों से गोहार लड़ते थे। और कौन लोग? गंवार-घामड़ नहीं, पले हुए पट्ठे, जिन पर उनको ग़रूर था। फिर यह खयाल कीजिए कि तीस गदके वरावर पड़ते थे, मगर तीसों की खाली जाती थी। कभी आड़े हो गये, कभी गदके से चोट काट दी, कभी वन को समेट लिया, कभी पैंतरा वदल दिया। शागिर्दों को ललकारते जाते थे कि 'लगा दे वढ़ के हाथ, आ घुसके।' और वह झल्ला-झल्ला के चोटें लगाते थे, मगर मुंह की खाते थे। जव सवके दम टूट गये और लगे हांफने, तो गदके हाथ से छूट-छूट पड़े। मगर वाह रे उस्ताद! उनके वही खमदम, वही ताव-भाव, पहरों लकड़ी फेंकें, मगर दम न फूले; और जो कहीं भिड़ पड़े तो वात की वात में परे साफ थे। किसी पर पालट का हाथ जमाया, किसी को चाकी का हाथ लगाया। फिर यही मालूम होता था कि फुलझड़ी छूट रही है, या आतशवाजी की छछूंदर नाच रही है, या चरखी चक्कर में है। जनेवा का हाथ तो आज तक कोई रोक ही न सका; वह तुला हुआ हाथ पड़ता था कि इधर इशारा किया, उधर तड़ से पड़ गया। वस, मौत का तीर था, गदका हाथ में आया और मालूम हुआ कि विजली लौकने लगी। मुमकिन नहीं कि आदमी की आंख झपकने पाये। ललकार दिया कि रोक चाकी, फिर लाख जतन कीजिए, भला रोक तो लीजिए। निशाना तो कभी खाली जाने ही नहीं पाता

था। फरी उम्र-भर न छूटी। एक अंग ही लड़ा किये। छरहरा बदन, सीधे-सादे आदमी, सूरत देखे तो यक़ीन न आये कि उस्ताद है, मगर एक जरा सी बांस की खपाच दे, दीजिए फिर दिल्लगी देखिए, कैसे जौहर दिखाते है! हम जैसे उस्तादों की आंखे देखे हुए है, किसी से दबनेवाले नही।

मियां आज़ाद तो ऐसे आदमियों की टोह मे रहते ही थे, बाके के साथ हो लिये और दोनों शहर में चक्कर लगाने लगे। चौक में पहुचे, तो जिस पर नजर पड़ती है, बांका तिरछा; चुन्नटदार अंगरखे पहने, नुक्केदार टोपिया सिर पर जमाये, चुग्त घुटन्ने डाटे, ढाटे बांधे हुए तने चले जाते है। तमचे की जोड़ी कमर से लगी हुई, दो-दो विलायतिया पड़ी हुई, बाढ़े चढी हुई, पेशकब्ज, कटारे, सिरोही, शेर-बच्चा, सबसे लैस। बांके को देख कर एक दूकानदार की शामत आयी, हंस पड़ा। बाके ने आव देखा न ताव, दन से तमंचा दाग दिया। संयोग था, खाली गया। लोगो ने पूछा, क्यो भाई क्यो बिगड़ गये? तीखे होकर बोले—हमको देखकर बचाजी मुसकिराये थे, हमने गोली लगायी कि दांत पर पड़े और इनके दांत खट्टे हो जाय, मगर जिंदगी थी, बच निकले। मियां आजाद ने अपने दिल मे सोचा, यह बांके तो आफत के परकाले है, इनको नीचा न किया तो कुछ बात नही। एक तंबोली से पूछा—क्यो भाई, यहां बांके बहुत है? उसने कहा—मिया, बाका होना तो दिल्लगी नही, हां, बेफ़िक्रे बहुत है। और इन सबके गुरू-घंटाल वह हज़रत है, जिन्हें लोग एकरंग कहते है। वह संदली रंगा हुआ जोड़ा पहनकर निकलते है, मगर मजाल क्या कि शहर भर मे कोई संदली जोड़ा पहन तो ले। एकरग संदली जोड़ा कोई पहन नही सकता; कोई पहने तो गोली भी सर कर दे, इसके साथ यह भी है।

मियां आजाद ने सोचा कि इस एकरग का टेटुआ न लिया, तो खाना हराम। दूसरे दिन आप भी संदली बूट, संदली घुटन्ना, संदली अगरखा और टोपी डाटकर निकले। अब जिस गली-कूचे से निकलते है, उगलियां उठती है कि यह आज इस ढब से कौन निकले हैं भाई! होते-होते एकरंग के चेले-चापडो ने उनके कान मे भी भनक डाल दी। सुनते ही मुह लाल चुकंदर हो गया। कपड़े पहन, हथियार लगा, चल खड़े हुए। आजाद तबोली की दूकान पर टिक गये। उनका वेष देखते ही उसके होश उड गये। लगा हाथ जोड़ने कि भगवान् के लिए मेरी ही टोपी दे लीजिए, या जूता बदल डालिए, नही तो वह आता ही होगा, मुफ्त की ठायें-ठायें से क्या वास्ता? इनको तो कच्चे घड़े की चढ़ी थी, कब मानते थे, गिलौरी ली और अकड़ कर खड़े हुए। शहर मे धूम हो गयी कि आज आज़ाद और एकरग मे तलवार चलेगी। तमाशा देखनेवाले जमा हो गये। इतने मे मिया एकरंग भी दिखाई दिये। उनके आते ही भीड़ छट गयी। कोई इधर कतरा गया, कोई गली मे घुसा, कोई कोठे पर चढ गया। एकरंग ने जो इनको देखा, तो जल मरा। बोला—अबे ओ खब्ती, उतार टोपी, बदल जूता। हमारे होते तू संदली जोड़ा पहनकर निकले। उतार, उतार, नही तो मै बढकर काम तमाम कर दूगा। मियां आजाद पैतरा बदल कर तीर की तरह झपट पड़े और बड़ी फुर्ती से एक रंग की तोंद पर तमंचा रख दिया। बस हिले और धुआं उस पार! बोले और लाश फड़कने लगी। बेईमान, बड़ा बाका बना है, सैकड़ो भले आदमियो को बेइज्जत किया। इतने चाबुक मारूंगा कि याद करेगा। अभी उतार टोपी, उतार, उतार, नही तो धुआं उस पार। संयोग से एक दर्जी उधर से निकला, उसने एकरग की टोपी उतार जेब में रखी। एकरंग की एक न चली। आजाद ने ललकारा—हौसला हो तो आओ, दो-दो हाथ भी हो जायं, ख़बरदार जो आज से संदली जोड़ा पहना।

शहर भर में धूम हो गयी कि मियां आजाद ने एकरंग के छक्के छुड़ा दिये, चुपचाप दर्ज़ी से टोपी बदली। सच है, 'दबे पर बिल्ली चूहे से कान कटाती हे।' मियां

आज़ाद की धाक बंध गयी। एक दिन उन्होंने मुनादी कर दी कि आज मियां आज़ाद छह बजे से आठ बजे तक अपने करतब दिखायेंगे, जिन्हें शौक़ हो आयें। एक बड़े लम्बे-चौड़े मैदान में आज़ाद अपने जौहर दिखाने लगे। लाखों आदमी जमा थे। मियां आज़ाद ने नीबू पर निशान बनाया, और तलवार से उड़ाया, तो निशान के पास खट से दो टुकड़े। कसेरू उछाला और पांच-छह वार में छील डाला। तलवार की बाढ़ से दस-बारह की आंखों में सुरमा लगाया। चिराग़ जलाया और खांड़ा फेंकते-फेंकते गुल काट डाला, लौ अलग, बत्ती अलग। एक प्याले में दस कौड़ियां रखीं और दो पर निशान बना दिया। दोनों को तलवार से प्याले ही में काटा और बाकी कौड़ियां निलोह बच निकलीं। लकड़ी टेकी और बीस हाथ छत पर हो रहे। गदके का ज़रा इशारा किया और बीस हाथ उड़ गये। चालीस-चालीस आदमियों ने घेरा और यह साफ़ निकल भागे। पलंग के नीचे एक जंगली कबूतर छोड़ दिया गया। उन्होंने उसको निकलने न दिया। एक फिकैत ने ये करतब देखे तो बोला—अजी यह सब नट-विद्या है, मैदान में आयें तो मालूम हो।

आज़ाद—अच्छा! अब तुम्हें भी मैदान में आने का दावा हुआ। तुम्हारे एकरंग का तो रंग फीका हो गया, अब तुम मुंह चढ़ते हो, तुम्हें भी देखूंगा।

फिकैत—चोंच संभालो।

आज़ाद—तुम्हारी शामत ही आ गयी है, तो मैं क्या करूं। आजकल में तुम्हारी भी कलई खुली जाती है। तुम लोग बांके नहीं, बदमाश हो; जिधर से निकल जाओ, उधर आदमी कांप उठें कि भेड़िया आया। कोई हंसा और तुमने बंदूक छतियायी, किसी ने बात की और तुमने चोट लगायी। भाई वाह, अच्छा बांकपन है! तो बात क्या, जहां दस दिन डंड पेले और उबल पड़े, दो-चार दिन लकड़ी फेंकी और मुहल्लेवालों पर शेर हो गये। गुनी लोग सिर झुका ही के चलते हैं।

यही बातें हो रही थीं कि सामने से एक पहलवान ऐंड़ते हुए निकले, लंगोट बांधे मलमल की चादर ओढ़े दो-तीन पट्ठे साथ। एक कसेरूवाले के पास खड़े हो गये और उसके सिर पर एक धप लगा दी। वह पीछे फिरकर देखता है, तो एक देव खड़े हैं। बोले, तो पथा जाय; कान दबाकर, धप खाकर, दिल ही दिल में कोसता हुआ चला गया।

थोड़ी ही देर में मियां पहलवान ने एक खोंचेवाले का खोंचा उलट दिया; तीन-चार रुपये कि मिठाई धूल में मिल गयी। जब उसने गुल-गपाड़ा मचाया, तो पट्ठों ने दो-तीन गुद्दे, घूंसे, मुक्के लगा दिये, दो-चार लप्पड़ जमा दिये। वह बेचारा रोता-चिल्लाता, दुहाई देता चला गया।

आज़ाद सोचने लगे, यह तो कोई बड़ा ही शैतान है, किसी के लप्पड़, किसी के थप्पड़, अच्छी पहलवानी है! सारे शहर में तहलका मचा दिया। इसकी खबर न ली, तो कुछ न किया। यह सोचते ही मेरा शेर झपट पड़ा और पहलवान के पास जाकर घुटने से ऐसा धक्का दिया कि मियां पहलवान ने इतना बड़ा डील-डौल रखने पर भी बीस लुढ़कनियां खायीं। मगर पहलवान संभलते ही उनकी तरफ झपट पड़ा। तमाशाई तो समझे कि पहलवान आज़ाद को चुर्र-मुर्र कर डालेगा, लेकिन आज़ाद ने पहले ही से वह दांव-पेंच किये कि पहलवान के छक्के छूट गये, ऐसा दबाया कि छठी का दूध याद आ गया। उसने जैसे ही आज़ाद का बायां हाथ घसीटा, उन्होंने दाहिने हाथ से उसका हाथ बांधा और अपना छुड़ा, चुटकियों में कूल्हे पर लाद, घुटना टेक कर मारा—चारों खाने चित्त! पहलवान अब तक कोरा था, किसी दंगल में आसमान देखने की नौबत न आयी थी। आज़ाद ने जो इतने आदमियों के सामने पटकनी बतायी, तो बड़ी किरकिरी हुई और

तमाम उम्र के लिए दाग लग गया।

अब तो मियां आज़ाद जगत्-गुरु हो गये, एकरंग का रंग फीका पड़ गया, पहलवान ने पटकनी खायी, शहर भर में धूम हो गयी। जिधर से निकल जाते, लोग अदव करते थे। जिससे आंखें चार हुईं उसने जमीन चूम कर सलाम किया। अच्छे-अच्छे बांकों की कोर दवने लगी। जहां किसी शहज़ोर ने कमज़ोर को दबाया और उसने गुल मचाया—दोहाई मियां आज़ाद की, और यह बाड़ी लेकर आ पहुंचे। किसी बदमाश ने कमज़ोर को दवाया और उसने डांट बतायी—नहीं मानते, बुलाऊं मियां आज़ाद को? शोहदे-लुच्चे उनसे ऐसे थर्राते थे, जैसे चूहे बिल्ली से, या मरीज तिल्ली से। नाम सुना और बगलें झांकने लगे; सूरत देखी और गली-कूचों में दवक रहे। शहर भर में उनका डंका बज गया।

एक दिन आज़ाद सिरोही लिये ऐंड़ते जा रहे थे कि एक दर्ज़ी की दूकान के पास से निकले। देखते क्या हैं, रंगीले छैले, बांके जवान छोटे पंजे का मखमली जूता पहने, जुल्फें लटकाये, छुरी कमर से लगाये दर्ज़ी से तकरार कर रहे हैं। वाह मियां खलीफ़ा! तुमने तो हमें उलटे छूरे मूड़ा! खुदा जाने, किस कतर-व्योंत में रहते हो। सीनापिरोना तो नाम का है, हां, ज़बान अलबत्ता, कतरनी की तरह चला करती है। तुमसे कपड़े सिलवाना अपनी मिट्टी खराब करना है। दम धागा देना खूब जानते हो। टोपी ऐसी भोंड़ी बनायी कि फवतियां सुनते-सुनते नाकों दम आ गया।

दर्ज़ी—ऐ तो हुज़ूर, मैं इसको क्या करूं? मेरा भला इसमें क्या कुसूर है? आपका सिर ही टेढ़ा है। मैं टोपी बनाता हूं, सिर बनाना नहीं जानता।

बांके—चोंच संभाल, वहुत बढ़-बढ़ कर बातें न बना। बांकों के मुंह लगता है? और सुनिए, हमारा सिर टेढ़ा है। अबे, तेरा सिर सांचे का ढला है? तेरे ऐसे दर्ज़ी मेरी जेब में पड़े रहते हैं, मुंह बंद कर, नहीं दूंगा उलटा हाथ, मुंह टेढ़ा हो जायगा। और तमाशा देखिए, हमारा सिर गोया कद्दू हो गया है।

दर्ज़ी—आप मालिक हैं, मुल मेरी ख़ता नहीं। जैसा सिर वैसी टोपी। ऐसा सिर तो मैंने देखा ही नहीं; यह नयी गढ़ंत का सिर है, आप फरे लें; वस, मैं सी चुका। जब दाम देने का वक्त आया, तो यह झमेला किया।

यह सुनते ही बांके ने दर्ज़ी को इतना पीटा कि वह वेचारा वेदम हो गया। आखिर कफ़न फाड़ कर चीखा, दोहाई मियां आज़ाद की, दोहाई मेरे उस्ताद की। आज़ाद तो दूर से खड़े देख ही रहे थे, झट तलवार सैंत दूकान पर पहुंच गये। बांके ने पीछे फिर कर देखा, तो मियां आज़ाद।

आज़ाद—वाह भाई बांके, तुम सचमुच रुस्तम हो। वेचारे दर्ज़ी पर सारी चोटें साफ कर दीं। कभी किसी कड़ेखां से भी पाला पड़ा है? कहीं गोहार भी लड़ा है? या गरीबों ही पर शेर हो? बड़े दिलेर हो तो आओ, हमसे भी दो-दो हाथ हो जायं। तुम ढेर हो जाओ, या हम चरका खायं। आइए, फ़िर पैंतरा बदलिए, लगा बढ़कर हाथ, इधर या उधर।

बांके—हैं, हैं, उस्ताद, हमीं पर हाथ साफ करोगे, हम नौसिखिये तुम गुरूघंटाल। मगर आप इस कमीने दर्ज़ी की तरफ से बोलते हैं और शरीफ़ों पर तलवार तोलते हैं! सुभान अल्लाह! आइए, आपसे कुछ कहना है।

आज़ाद—अच्छा, तोबा करो कि अब किसी गरीब को न धमकायेंगे।

बांके—अजी हज़रत, धमकाना कैसा, हम तो ख़ुद ही वला में फंसे हैं; ख़ुदा ही बचाये, तो बचें। यहां एक फिकैत है, उससे हमसे लाग-डांट हो गयी है। कल नौचंदी के मेले में हमें घेरेगा, कोई दो सौ बांकों के जत्थे से हम पर हरवा करना चाहता है।

हम सोचते हैं कि दरगाह न जायं, तो बांकपन में बट्टा लगता है; और ज़ायं, तो किस विरते पर? यार, तुम साथ चलो तो जान बचे, नहीं तो वेमौत मरे।

आज़ाद—अच्छा, तुम भी क्या कहोगे! लो, बीड़ा उठा लिया कि कल तुमको ले चलेंगे और सबसे भिड़ पड़ेंगे, दो सौ हों, चाहे हजार, हम हैं और हमारी कटार, इतनी कटारें भोंकूं कि दम बंद हो जाय। मगर यह बता दो कि कुसूर तुम्हारा तो नहीं है?

वांके—नहीं उस्ताद, क़सम ले लो, जो मेरी तरफ़ से पहल हुई हो। मुझसे उन्होंने एक दिन अकड़ कर कहा कि तू तलवार न वांधा कर। मैं भी, आप जानिए, इनसान हूं। पित्ता तो मछली के भी होता है। मुझे भी ग़ुस्सा आ गया। मैंने कहा, धत्! तू और हमसे हथियार रखवा ले? वस, विगड़ ही तो गया और पंद्रह-वीस आदमी उसकी तरफ़ से वोलने लगे। मैंने भी जवाव दिया, दवा नहीं। मगर लड़ पड़ना मसलहत न थी। वांका हूं, तो क्या हुआ, विना समझे-वूझे वात नहीं करता। खैर, उसने ललकार कर कहा—अच्छा वचा, दरगाह में समझ लेंगे, अब की नौचंदी में हमीं न होंगे, या तुम्हीं न होगे।

आज़ाद—अच्छा, तुम लैस रहना, मैं दो घड़ी दिन रहे आऊंगा; घवराओ नहीं, तुम्हारा वाल-वांका हो, तो मूंछ मुड़ा दूं। ये दो सौ आदमी देखने ही भर के होंगे। सच्चे दिलेर उनमें दो-ही चार होंगे, जो आज़ाद की तलवार का सामना करें। मौत से लड़ना दिल्लगी नहीं है; कलेजा चाहिए!

दूसरे दिन आज़ाद हथियार वांध कर चले, तो रास्ते में वांके मिल गये और दोनों साथ-साथ टहलते हुए दरगाह पहुंचे।

नौचंदी जुमेरात; वनारस का वुढ़वामंगल मात; चारों तरफ़ चहल-पहल; कहीं 'तमाशाइयों' का हुजूम, हटो-वचो की धूम; आदमी पर आदमी टूटे पड़ते हैं, कोशों का तांता लगा हुआ है, मेवेवाले आवाज़ लगा रहे हैं, तंवोली वीड़े वना रहे हैं, गंडेरियां हैं केवड़े की, रेवड़ियां हैं गुलाव की। आज़ाद घूरते-घारते फाटक पर दाखिल हुए, तो देखा, सामने तीस-चालीस आदमियों का गोल है। वांके ने कान में कहा कि यही हजरत हैं, देख लीजिए, दंगे पर आमादा हैं या नहीं।

आज़ाद—भला, यहां तुम्हारी भी कोई जान-पहचान है? हो, तो दस-पांच को तुम भी वुला लो; भीड़-भड़क्का तो हो जाय। लड़ने वाले हम क्या कम हैं—मगर दो-चार जमाली खरवूज़े भी चाहिए, डाली की रौनक़ हो जाय।

वांके—अभी लाया, आप ठहरें; मगर वाहर टहलिए, तो अच्छा है, यहां जोखिम है।

आज़ाद फाटक के वाहर टहलने लगे। फिकैत ने जो देखा कि दोनों खिसके, तो आपस में हांड़ियां पकने लगीं—वह भगाया! वह हटाया! भागा है! उनके साथियों में से एक ने कहा—अजी, वह भागा नहीं है, एक ही काइयां है, किसी टोह में गया है। एक विगड़े दिल वाहर गये, तो देखा, वांके पश्चिम की तरफ गर्दन उठाये चले जाते हैं, और मियां आज़ाद फाटक से दस क़दम पर टहल रहे हैं। उलटे पांव आ कर खवर दी—उस्ताद, वस, यही मौक़ा है, चलिए, मार लिया है, वायें हाथ चला जाता है, और अकेला है। सव दूसरे फाटक से चढ़ दौड़े। ठहर वे, ठहर! वस, रुक जा, आगे क़दम वढ़ाया और, ढेर हुए! हिले, और दिया तुला हुआ हाथ। याद है कि नहीं, आज नौचंदी है। लोगों ने चारों तरफ़ से घेर लिया। वांके का रंग फ़क़ कि ग़ज़व ही हो गया! अव कुत्ते की मौत मरे। किस-किससे लड़ूंगा? एक की दवा दो कि सौ। मियां आज़ाद को कोई खवर कर देता, तो वह झपट ही पड़ते; मगर जव तक कोई जाय-जाय, हमारा काम

तमाम हो जायगा। एक यार ने बढ़कर बेचारे मुसीबत के मारे बांके के एक लठ लगा दिया, बायें हाथ की हड्डी टूट गयी। गुल-गपाड़े की आवाज आजाद ने भी सुनी। भीड़ काढ कर पहुंचे, तो देखा, बाके फसे हुए है। तलवार को टेका और दन से उस पार हुए। ख़बरदार खिलाड़ी ! हाथ उठाया और मैने टेटुआ लिया। बांके के दिल मे ढाढस हुआ, जान बची, नयी जिन्दगी हुई। इतने मे मिया आजाद ने तलवार म्यान से निकाली और पिल पड़े। तलवार का चमकना था कि फिकैत के सब साथी हुर्र हो गये, मैदान खाली, मिया आजाद और बांके एक तरफ, फिकैत और दो साथी दूसरी तरफ, बाकी रफूचक्कर। एक ने आजाद पर तमंचा चलाया, मगर खाली गया। आजाद ने झपट कर उसको ऐसा चरका दिया कि तिलमिला कर गिर पड़ा। दूसरे जवान दस कदम पीछे हट गये। बाके भी खिसक गये। अब आजाद और फिकैत आमने-सामने रह गये। वह कड़क कर झुका, इन्होंने चोट रोक कर सिर पर हाथ लगाना चाहा, उसने रोका और चाकी का हाथ दिया। आध घंटे तक शपाशप तलवार चला की। आख़िर आजाद ने बढकर 'जनेऊ' का वह हाथ लगाया कि 'भडारा' तक खुल गया, मगर फिकैत भी गिरते-गिरते 'बाहरा' दे ही गया। इधर यह, उधर वह धम से गिरे। तब बाके दौड़े और आजाद को उठाकर घर ले गये।

दो

आजाद की धाक ऐसी बंधी कि नवाबो और रईसों मे भी उनका जिक्र होने लगा। रईसो को मरज होता हे कि पहलवान, फिकैत, बिनवटिये को साथ रखे, बग्घी पर लेकर हवा खाने निकले। एक नवाब साहब ने इनको भी बुलवाया। यह छैला बने हुए, दोहरी तलवार कमर से लगाये जा पहुचे। देखा, नवाब साहब, अपनी मां के लाडले, भोले-भाले, अंधेरे घर के उजाले, मसनद पर बैठे पेचवान गुड़गुड़ा रहे है। सारी उम्र महल के अन्दर ही गुजरी थी, कभी घर के बाहर जाने तक की भी नौबत न आयी थी, गोया बाहर क़दम रखने की कसम खायी थी। दिनभर कमरे में बैठना, यारों-दोस्तो से गप्पे उडाना, कभी चौसर रग जमाया, कभी बाजी लड़ी, कभी पौ पर गोट पड़ी, फिर शतरंज बिछी, मुहरे खट-खट पिटने लगे। किश्त ! वह घोड़ा पीट लिया, वह प्यादा मार लिया। जब दिल घबराया, तब मदक का दम लगाया, चंडू के छींटे उड़ाये, अफ़ीम की चुसकी ली। आजाद ने झुक कर सलाम किया। नवाब साहब खुश होकर गले मिले, अपने करीब बिठाया और बोले—मैने सुना है, आपने सारे शहर के बांको के छक्के छुडा दिये।

आजाद—यह हुजूर का इक़बाल हे, वरना मै क्या हूं।

नवाब—मेरे मुसाहिबों मे आप ही जैसे आदमी की कमी थी, वह पूरी हो गयी, अब खूब छनेगी।

इतने में मीर आगा बटेर को मूठ करते हुए आये और सलाम करके बैठ गये। जरा देर के बाद अच्छे मिर्जा गन्ना छीलते हुए आये और एक कोने मे जा डटे। मिया झम्मन अंगरखे के बद खोले, गद्दी पर टोपी रखे खट से मौजूद। फिर क्या था, तू आ, मैं आ। दस-पंद्रह आदमी जमा हो गये, मगर सब झंडे-तले के शोहदे, छटे हुए गुरगे थे। कोई चीनी के प्याले मे अफ़ीम घोल रहा है, कोई चंडू का किवाम बना रहा है, किसी ने गडेरियां बनायी, किसी ने अमीर-हमजा का क़िस्सा छेड़ा, सब अपने-अपने धंधे मे लगे। नवाब साहब ने मीर आगा से पूछा—मीर साहब, आपने खुश्के का दरख़्त भी देखा हे ?

मीर आगा—हजूर, क़सम है जनाब अमीर की, सत्तर और दो बहत्तर बरस की उम्र होने की आयी, गुलाम ने आज तक आखों से नही देखा, लेकिन होगा बड़ा दरख़्त।

सारी दुनिया की उससे परवरिश होती है, जिसे देखो, ख़ुश्के पर हत्थे लगाता है।

अच्छे मिर्ज़ा—क़ुरवान जाऊं, दरख़्त के वड़े होने में क्या शक है। कश्मीर से लेकर, क़ुरवान जाऊं, वड़े गांव तक और लंदन से लेकर विलायत तक, सवका इसी पर दारमदार है।

नवाव—मेरा भी ख़याल यही है कि दरख्त होगा वहुत वड़ा; लेकिन देखने की वात यह है कि आख़िर किस दरख़्त से ज़्यादा मिलता है। अगर यह वात मालूम हो जाय, तो फिर जानिए कि एक नयी वात मालूम हुई। और भाई, सच पूछो, तो छान-वीन करने ही में ज़िंदगी का मज़ा है।

अच्छे मिर्ज़ा—सुना वरगद का दरख़्त वहुत वड़ा होता है। झूठ-सच का हाल ख़ुदा जाने; नीम का पेड़ तो हमने भी देखा है, लेकिन किसी शायर ने नीम के दरख़्त की वड़ाई की तरीफ़ नहीं की।

छुट्टन—हमने केले का पेड़, अमरूद का पेड़, ख़रवूज़े का पेड़ सव इन्हीं आंखों देख डाले।

आज़ाद—भला, यहां किसी ने वाहवाह की फलियों का पेड़ भी देखा है?

छुट्टन—जी हां, एक दफ़े नेपाल की तराई में देखा था, मगर शेर जो डकारा, तो मैं झप से गेंदे के दरख़्त पर चढ़ गया। कुछ याद नहीं कि पत्ती कैसी होती है।

नवाव—ख़ुश्के के दरख़्त का कुछ हाल दरियाफ़्त करना चाहिए।

अच्छे मिर्ज़ा—क़ुरवान जाऊं, इन लोगों का एतवार क्या? सव सुनी-सुनायी कहते हैं! क़ुरवान जाऊं, ग़ुलाम ने वह वात सोची है कि सुनते ही फड़क जाइये।

नवाव—कहिए, कहिए! ज़रूर कहिए! आपको क़सम है। मुझे यकीन हो गया कि आप दूर की कौड़ी लाये होंगे।

अच्छे मिर्ज़ा—(कतारे को खड़ा करके) क़ुरवान जाऊं, अगर ख़ुश्के का दरख़्त होगा, तो इस कतारे के वरावर ही होगा, न जौ भर वड़ा, न तिल भर छोटा।

नवाव—वाह मीर साहव, वाह, क्या वात निकाली!

मुसाहव—सुभान अल्लाह मीर साहव, क्या सूझ-वूझ है!

आज़ाद—आप तो अपने वक़्त के भुलक्कड़ निकले! मालूम होता है, सफ़र वहुत किया है।

अच्छे मिर्ज़ा—कौन, मैंने सफ़र! क़सम लो, जो नख़ास से वाहर आ गया हूं। मगर, क़ुरवान जाऊं, लड़कपन ही से ज़हीन था। अव्वाजान तो विलकुल वेवक़ूफ़ थे, मगर अम्मांजान तो वला की औरत थीं, वात में वात पैदा करती थीं।

इतने में गुल-गपाड़े की आवाज़ आयी। अंदर से मुवारकक़दम लौंडी सिर पीटती हुई आयी—हुज़ूर, मैं सदके, जल्दी चलिए, यह हंगामा कहां हो रहा है? वड़ी वेगम साहवा खड़ी रो रही हैं कि मेरे वच्चे पर आंच न आ जाय।

नवाव साहव जूतियां छोड़कर अंदर भागे। दरवाज़े सव वंद! अव किसी को हुक्म नहीं कि ज़ोर से वोले। इतने में एक मुसाहव ने ड्योढ़ी पर से पुकारा—हुज़ूर, फिर आख़िर मियां आज़ाद किस मरज की दवा हैं? गंड़ेरी छीलने के काम के नहीं, क़िवाम वनाना नहीं जानते, वटेर मुठियाना नहीं आता, इनको भेज कर दरियाफ़्त न कराइये कि दंगा कहां हो रहा है।

मुवारकक़दम—हां, हां, भेज दीजिए; कहिए, कुत्ते की चाल जायें और विल्ली की चाल आयें।

मियां आज़ाद ने कटार संभाली और वाहर निकले। राह में लोगों से पूछते जाते हैं कि भाई, यह फ़िसाद क्या है? एक ने कहा, अजी चिकमंडी में छुरी चली। पांच-चार क़दम

आगे बढे, तो दो आदमी बातें करते जाते थे कि पंसारी ने पुड़िया में कद्दू के बीज़ों की जगह जमाल-गोटा बांध दिया। गाहक ने बिगड़ कर पंसारी की गर्दन नापी। और दस क़दम चले तो एक आदमी ने कहा, वह तो कहिए खैरियत गुज़री कि जाग हो गयी नहीं तो भेड़िया घर भर को उठा ले जाता। यह भेड़िया कैसा जी ? हुजूर, एक मनिहार के घर से भेड़िया तीन बकरियां, दो मेंढे, एक खरहा और एक खाली पिंजड़ा उड़ा ले गया। उसकी औरत को भी पीठ पर लाद चुका था कि मनिहार जाग उठा। अब आज़ाद चकराये कि भाई अजब बात है, जो है नई सुनाता है। क़रीब पहुंचे तो देखा, पंद्रह-बीस आदमी मिलकर छप्पर उठाते हैं और गुल मचा रहे हैं। जितने मुंह उतनी बातें। और हंसी तो यह आती है कि नवाब साहब बदहवास होकर घर के अंदर हो रहे। वहां से लौट कर यह क़िस्सा बयान किया, तो लोगों की जान में जान आयी, दरवाज़े खुले, फिर नवाब साहब बाहर आये।

नवाब—मियां आज़ाद, तुम्हारी दिलेरी से आज जी खुश हो गया। आज मेरे यहां खाना खाना। आप ढाल नहीं बांधते।

आज़ाद—हुजूर, ढाल तो जनानों के लिए है, हम उम्र भर एक-अंग लड़ा किये, तलवार ही से चोट लगायी और उसी पर रोकी, या खाली दी या काट गये। एक दिन आपको तलवार का कुछ हुनर दिखाऊंगा, आपकी आंखों में तलवार की बाढ़ से सुरमा लगाऊंगा।

नवाब—ना साहब, यह खेल उजड्डपन के हैं, मेरी रूह कांपती है, तलवार की सूरत देखते ही जूड़ी चढ़ आती है। हां, मिर्ज़ा साहब जीवट के आदमी हैं। इनकी आंखों में सुरमा लगाइये, यह उफ़ करने वाले नहीं।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊं हुजूर, अब तो बाल पक गये, दांत चूहों की नजर हुए, कमर टेढ़ी हुई, आंखों ने टका-सा जवाब दिया, होश-हवास चंपत हुए। क्या कहूं हुजूर, जब लोगों को गंडेरियां चूसते देखता हूं, तो मुंह देखकर रह जाता हूं।

इतने में मियां कमाली, मियां झम्मन और मियां दुन्नी भी आ पहुंचे।

कमाली—खुदावंद, आज तो अजीब ख़बर सुनी, हवास जाते रहे। शहर भर में खलबली मची है, अल्लाह बचाये, अबकी गरमी की फ़सल खैरियत से गुज़रती नहीं नज़र आती, आसार बुरे हैं।

नवाब—क्यों ? क्यों ? खैर तो है ? क्या क़यामत आने वाली है या आफ़ताब सवा नेज़े पर हो रहा ? आखिर माजरा क्या है, कुछ बताओ तो सही।

अच्छे मिर्ज़ा—ऐ हुजूर, यह जब आते हैं, एक नया शिगोफा छोड़ते हैं। खुदा जाने, कौन इनके कान में फूंक जाता है। ऐसी सुनायी कि नशा हिरन हो गया, जम्हाइयां आने लगीं।

कमाली—अजी, आप किस खेत की मूली हैं, हमसे तो बड़े-बड़ों के नशे हिरन हुए हैं। जब पहली तारीख आयेगी, तो आंखें खुल जायेंगी, आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा। और दो-चार दिन मीठे टुकड़े उड़ा लो। वाह साहब, हम तो ढूंढ-ढांढ कर खबरें लायें, आप दिनभर पीनक में ऊंघा करें, और हमीं को उल्लू बनायें। पहली को कलई खुल जायगी, बचा, सूरत बिगड़ जाय तो सही।

नवाब—क्या ! क्या ! पहली तारीख कैसी ? अरे मियां, तुम तो पहेलियां बुझवाते हो, आखिर पहली को क्या होने वाला है ?

कमाली—ऐ हुजूर, यह न पूछिए, बस, कुछ कहा नहीं जाता। एक हलवाइन अभी जवान-जहान है। मारे हौके के औटा हुआ दूध जो पी गयी तो पेट फूल कर कुप्पा हो गया। किसी ने कुछ बताया, किसी ने कुछ नुस्खा पिलाया; मगर वह अंटा-ग़ाफ़िल

हो गयी। अब सुनिए कि जब चिता पर जाने लगी, कुलबुला कर उठ बैठी। अरे राम ! अरे बाप-रे-बाप ! यू क्या भवा ! हलवाइयों ने वह बम-चख मचायी कि कुछ न पूछिए। 'यू देखो, ल्हास हिलत है ! अरे यू क्या अंधेर भवा ?' आखिरकार दो-चार हलवाइयों ने जी कड़ा करके लाश को घसीट लिया और झटपट कफ़न फाड़कर उसे निकाला, तो टैयां सी उठ बैठी। हुजूर, क़सम है खुदा की, उसने वह वह बातें बयान की कि कहीं नहीं जातीं। जब मरी तो यमराज के दूतों ने मुझे उठाकर भगवान के पास पहुंचाया, सीताजी बैठी पूरी बेलत रहैं, हमका देखके भगवान बोले कि इसको ले जाओ। मुझे उसकी बोली तो याद नहीं, मगर मतलब यह था कि पहली को बड़ा अंधेरा घुप छा जायेगा और तूफ़ान आयेगा, जितने गुनहगार बंदे हैं सब जलाये जायेंगे, और अफ़ीमची जिस घर में होंगे उसको फ़रिश्ते जला कर खाक-सियाह कर देंगे।

नवाब—मिर्ज़ा साहब, ये बोरियां-बंधना उठाइए, आपका यहां ठिकाना नहीं। नाहक़ कहीं फ़रिश्ते मेरी कोठी फंक दें तो कहीं का न रहूं। बस, बक़चा संभालिए, कहीं और बिस्तर जमाइए।

अच्छे मिर्ज़ा—कुरबान जाऊं हुजूर, यह बड़ा बेईमान आदमी है। हुजूर तो भोले-भाले रईस हैं, जिसने जो कहा मान लिया। भला कहीं फ़रिश्ते घर फूंका करते हैं ? मुझ बुड्ढे को न निकालिए, कई पुश्तें इसी दरबार में गुज़र गयीं, अब किसका दामन पकड़ूं ? अरे वाह रे झूठे, अच्छी बेपर की उड़ायी, हलवाइन मरी भी और जी भी उठी, बेसिर-पैर की बात।

नवाब—खैर, कुछ भी हो, आप अपना सुबीता करें। मेरे बाप-दादा की मिलकियत कहीं फ़रिश्ते फूंक दें तो बस ! आप हैं किस मरज की दवा ? चारपाइयां तोड़ा करते हैं।

अच्छे मिर्ज़ा—वाह री किस्मत ? यहां जान लड़ा दी, बकरे की जान गयी, खानेवाले को मजा न आया। इस शैतान से खुदा समझे, जिसने मेरे हक़ में कांटे बोये। खुदा करे, इसका आज के सातवें ही दिन जनाज़ा निकले। जैसे ही आकर बैठा, मेरी बायीं आंख फड़कने लगी, तो यह गुल खिला।

नवाब साहब मुसाहबों को यह नादिरी हुक्म देकर जनानखाने में चले गये कि मिर्ज़ा को निकलवा दो। उनके जाते ही मिर्ज़ा की ले-दे शुरू हो गयी।

क़माली—मिर्ज़ा साहब, अफ़ीम का डब्बा बगल में दबाइए और चलते-फिरते नज़र आइए। सरकार का नादिरी हुक्म है और छोटी बेगम साहिबा महनामथ मचा रही हैं कि इस बुड्ढे को खड़े-खड़े निकाल दो। सो अब खिसकिए, नहीं बुरी होगी।

झम्मन—वाजिबी बात है, सरकार चलते-चलते हुक्म दे गये थे। हम लोग मजबूर हैं, अब आप अपना सुबीता कीजिए, अभी सवेरा है, नहीं हम पर पिट्टस पड़ेगी। और भाई, जब फ़रिश्तों के आने का डर है तो कोई तुमको क्योंकर अपने घर में रहने दे ? कहीं एक जरा-सी चिनगारी रख दें, तो कहिए मकान जलकर खाक-सियाह हो गया कि नहीं, फिर कैसी होगी ?

अच्छे मिर्ज़ा—अबे, तो फ़रिश्ते कहीं गांव जलाया करते हैं। वह ऊटपटांग बातें बकता है। लो साहब, हमारे रहने में जोखिम है, जो आठों पहर ड्योढ़ी पर बने रहते हैं। अच्छा अड़ंगा दिया।

झम्मन—अड़ंगा-बड़ंगा मैं नहीं जानता, अब आप खसकंत की ठहराइए, बहुत दिन मीठे टुकड़े उड़ाये, चुग़लियां खा-खाकर रईस का मिज़ाज बिगाड़ दिया, किसी से ज़रा-सी खता हुई और आपने जड़ दी। 'भुस में चिनगी डाल जमालो अलग खड़ी।' पचासों भले मानसों की रोटी ली। इनसान से ग़लती हो ही जाती है, यह चुग़ली खाना

क्या माने। ओ गफ़ूर मिर्जा ने तुम्हे भी तो उखाड़ना चाहा था ?

गफ़ूर—अरे, यह तो अपने बाप की जड़ खोदनेवाले आदमी है, भीतर से बाहर तक कोई तो इनसे खुश नही।

दुन्नी—मिर्जा, अगर कुछ हुया है तो इस मुसाहबी पर लात मारो; जिस अल्लाह ने मुह चीरा है वह रोजी भी देगा।

मुबारकक़दम—गफ़ूर ! गफूर ! छोटी बेगम साहिबा का हुक्म है कि इस मुए अफ़ीमची को शहर से निकाल दो। कहती है, जब तक यह न टलेगा दाहिने हाथ का खाना हराम है।

अच्छे मिर्जा—शहर से निकाल दो। तमाम शहर पर बेगम साहब का क्या इजारा है ? वह अभी कल आयी, यहां इस घर मे उम्र बीत गयी।

कमाली—अबे ओ नमकहराम. छोटा मुह बड़ी बात ! बेगम साहिबा के कहने को दुलखता है। इतनी पड़ेगी बेभाव की कि याद करोगे, चाद गंजी कर दी जायगी।

अच्छे मिर्जा—अब जो यहा पानी पिये उस पर लानत !

यह कहकर मिर्जा ने अफीम की डिबिया उठायी और चले। मुसाहबो ने उनके जलाने के लिए कहना शुरू किया—मिर्जा जी, कभी-कभी आ जाया कीजिएगा। एक बोला—लाइए डिबिया, मै पहुंचा दू। दूसरा बोला—कहिए तो घोड़ा कसवा दू। मिर्जा ने किसी को कुछ जवाब न दिया, चुपके से चले ही गये।

इधर पहली तारीख़ आयी तो मियां कमाली चकराये कि अब मै झूठा बना, और साख गयी। लोगो ने नवाब को चंग पर चढाया कि हुजूर, जो हम कहे वह कीजिए, तो आज की बला टल जाय। नवाब ने मुसाहबो को सारा अख़्तियार दे दिया। फिर क्या था, एक तरफ़ ब्राह्मण देवता बैठे मंत्रो का जप कर रहे है, हवन हो रहा है, और स्वाहा-स्वाहा की आवाज आ रही है। दूसरी तरक हाफ़िज जी कुरान पढ रहे हैं, और दीवानख़ाने मे महफ़िल जमी हुई है कि फ़रिश्तो को झंझोटी की धुन सुनाकर खुश कर लिया जाय।

झम्मन—मिर्जा जी न सिधारते तो खुदा जाने इस वक़्त क्या कुछ हो गया होता।

नवाब—होता क्या; कोठी की कोठी भक से उड़ जाती। अब किसी अफीमची को आने तक न दूगा।

तीन

नवाब साहब के दरबार मे दिनोदिन आजाद का सम्मान बढने लगा। यहां तक कि वह अक्सर खाना भी नवाब के साथ ही खाते। नौकरो को ताकीद कर दी गयी कि आजाद का जो हुक्म हो, वह फ़ौरन बजा लाये, जरा भी मीनमेख न करे। ज्यो-ज्यो आजाद के गुण नवाब पर खुलते जाते थे, और मुसाहबो की किरकिरी होती जाती थी। अभी लोगो ने अच्छे मिर्ज़ा को दरबार से निकलवाया था, अब आजाद के पीछे पड़े। वह सिर्फ पहलवानी ही जानते हैं, गदके और बिनवट के दो-चार हाथ कुछ सीख लिये है, बस, उसी पर अकड़ते फिरते है कि जो कुछ हूं, बस, मै ही हूं। पढे-लिखे वाजिबी ही वाजिबी हे, शायरी इन्हे नही आती, मजहबी मुआमिलो मे बिलकुल कोरे हैं।

एक दिन नवाब साहब के सामने एक साहब बोल उठे—हुजूर, इस शहर मे एक आलिम आया है, जो मंतिक (न्याय) के जोर से झूठ को सच कर दिखाता हे। मगर खुदा को नही मानता, पक्का मुनकिर (नास्तिक) है। मिया आजाद को तो मंतकी बनने

ा दावा है। कहिए, उस आलिम को नीचा दिखायें।

आज़ाद—हां ! हां, जब कहिए तब, मुझे तो ऐसे मुनकिरों की तलाश रहती । लाइए मंतकी साहब को, ख़ुदा का वह पक्का सबूत दूं कि वह ख़ुद फड़क जायं. ज़रा हां तक लाइए तो सही, भागे राह न मिले। जो फिर इस शहर में मुंह दिखायें, तो ादमी न कहना।

नवाब—हां ! हां ! मीर साहब, ज़रा उनको फांस-फूंस कर लाइए, तो मियां ाज़ाद के जौहर तो खुले।

मीर साहब ने ज़ोर से हुक्के के दो-चार दम लगाये और झप से उस आलिम को ला लाये। हज़ारों आदमी बहस सुनने के लिए जमा हो गये, गोया बटेरों की पाली है। तनी भीड़ थी कि थाली उछालिए तो सिर ही सिर जाय। आलिम ने आते ही पूछा कि ौन साहब बहस करेंगे ? मियां आज़ाद बोले—हम हैं। अब सब लोग बेकरार हो रहे हैं ़ देखें, क्या सवाल-जवाब होते हैं, चारों तरफ़ खिचड़ी पक रही है।

आलिम—जनाब, आप तो किसी अखाड़े के पट्ठे मालूम होते हैं, सूरत से तो सा मालूम होता है कि आपको मंतिक छू भी नहीं गयी।

आज़ाद—जी, सूरत पर न जाइएगा, कोई सवाल कीजिए, तो हम जवाब दें।

आलिम—अच्छा, पहले इन तीन सवालों का जवाब दीजिए—

(1) ख़ुदा है, तो हमें नज़र क्यों नहीं आता ?

(2) शैतान दोज़ख में जलाया जायगा ! भला नारी (आग से बने हुए) को ाग का क्या डर ? आग़ आग़ में नहीं जल सकती।

(3) जो करता है, ख़ुदा करता है, फिर इंसान का क़सूर क्या।

चारों तरफ़ सन्नाटा पड़ गया कि वाह, क्या आलिम है, कैसे कड़े सवाल किये कि कुछ जवाब ही नहीं सूझता। बिगड़े दिल लोग दांत पीस रहे हैं कि बाहर निकले तो रदन भी नापें। मियां आज़ाद कुछ देर तक तो चुपचाप खड़े रहे, फिर एक ढेला उठा-र उस आलिम की खोपड़ी पर मारा, बेचारा हाय करके बैठ गया। अच्छे जंगली से ाला पड़ा, मैं बहस करने आया था या लप्पा-डुग्गी। जब कुछ जवाब न सूझा तो पत्थर ारने लगे। जो मैं भी एक पत्थर खींच मारूं तो कैसी हो ? नवाब साहब, आप ही न्साफ़ कीजिए।

नवाब—भाई आजाद, हमें यह तुम्हारी हरकत पसंद नहीं आयी। इस ढेलेबाज़ी के या माने ? माना कि मुनकिर गरदन मारने लायक होता है, मगर बहस करके कायल ीजिए, यह नहीं कि जूता खींच मारा या ढेला तान कर मारा।

कमाली—हुज़ूर, आलिम का जवाब देना कारेदारद है। ढेलेबाजी करना दूसरी ात है।

झम्मन—अजी, इसने बड़े-बड़े आलिमों को सर कर दिया, भला आज़ाद क्या सके मुंह आयेंगे।

नवाब—यह पत्थर क्यों फेंका जी, बोलते क्यों नहीं ?

आज़ाद—हुज़ूर, मैंने तो इनके तीनों सवालों का वह जवाब दिया कि अगर कोई ़दरदां होता तो गले से लगा लेता और करोड़ों रुपये इनाम भी देता, सुनिए—

(1) ख़ुदा है, सो हमें नज़र क्यों नहीं आता ?

जवाब—अगर उस ढेले से उनको चोट लगी, तो चोट नज़र क्यों नहीं आती ?

सुभान अल्लाह का दौंगड़ा बरस गया। वाह उस्ताद ! क्या जवाब दिया है कि ांत खट्टे कर दिये।

(2) शैतान को जहन्नुम में जलाना बेकार है, वह तो ख़ुद नारी (अग्निमय) है।

जवाब—इनसे पूछिए कि यह मिट्टी के ही पुतले हैं या नहीं? इनकी खोपड़ी मिट्टी की बनी है या रबड़ की? फिर मिट्टी का ढेला लगा, तो सिर क्यों भन्ना गया?

तमाशाइयों ने गुल मचाया—सुभान अल्लाह! वाह मियां आज़ाद! क्या मुंह-तोड़ जवाब दिया है।

(3) जो करता है ख़ुदा करता है।

जवाब—फिर ढेले मारने का इलज़ाम हम पर क्यों है?

चारों तरफ़ टोपियां उछलने लगीं—वाह मेरे शेर! क्या कहना है! कहिए, अब तो आप ख़ुदा के कायल हुए, या अब भी कुछ मीनमेख है? लाख बातों की एक बात यह है कि जब आपका सिर मिट्टी का है और मिट्टी ही का ढेला मारा, तब आपकी खोपड़ी क्यों भन्नायी? मियां मुनकिर बहुत झेंपे, समझ गये कि यहां शोहदों का जमघट है, चुपके से अपने घर की राह ली। आज़ाद की और भी धाक बंधी। अब तक तो पहलवान और फिकैत ही मशहूर थे, अब आलिम भी मशहूर हुए। नवाब ने पीठ ठोंकी—वाह, क्यों न हो! पहले तो मैं झल्लाया कि ढेलेबाज़ी कैसी; मगर फिर तो फड़क गया।

मुसाहबों का यह वार भी ख़ाली गया, तो फिर हंड़िया पकने लगी कि आज़ाद को उखाड़ने की कोई दूसरी तदबीर करनी चाहिए। अगर यह यहां जम गया, तो हम सभी को निकलवा कर छोड़ेगा। यह राय हुई कि नवाब साहब से कहा जाय, हुज़ूर आज़ाद को हुक्म दें कि बटेरों को मुठियायें, बटेरों को लड़ायें। फिर देखें, बचा क्या करते हैं। बगलें न झांकने लगें तो सही। यह हुनर ही दूसरा है।

आपस में यह सलाह कर एक दिन मियां क़माली बोले—हुज़ूर, अगर मियां आज़ाद बटेर लड़ायें, तो सारे शहर में हुज़ूर की धूम हो जाय।

नवाब—क्यों मियां आज़ाद, कभी बटेर भी लड़ाये हैं?

झम्मन—आज हमारी सरकार में जितने बटेर हैं, उतने तो मटियाबुर्ज़ के चिड़ियाखाने में भी न होंगे। एक-एक बटेर हज़ार-हज़ार की खरीद का, नोकदम के बनाने में तोड़े-के-तोड़े उड़ गये, सेरों मोती तो पीसकर मैंने अपने हाथों खिला दिये हैं, कुछ दिनों रोज़ खरल चलता था। मगर आप भी कहेंगे कि हम आदमी हैं! इस ड्योढ़ी पर इतने दिनों से हो, अब तक बटेरख़ाना भी न देखा? लो आओ, चलो तुमको सैर करायें।

यह कहकर आज़ाद को बटेरख़ाने ले गये। मियां आज़ाद क्या देखते हैं कि चारों तरफ़ काबुकें ही काबुकें नज़र आती हैं, और काबुकें भी कैसी, हाथीदांत की तीलियां, उन पर गंगाजमुनी कलस, कारचोबी छतें, कामदार मख़मली गिलाफ़ें, रंग-बिरंगे सोने-चांदी की नन्हीं-नन्हीं कटोरियां, जिनमें बटेर अपनी प्यारी-प्यारी चोंचों से पानी पियें, पांच-पांच छह-छह सौ लागत की काबुकें थीं, खूंटियां भी रंग-बिरंगी। दुन्नी मियां एक-काबुक उतारकर बटेर की तारीफ़ करने लगे, तो पुल बांध दिये। एक बटेर को दिखाकर कहा—अल्लाह रखें, क्या मझोला जानवर है! सफ़शिकन (दलसंहार) जो आपने सुना हो, तो यही है। लंदन तक खबर के क़ाग़ज़ में इनका नाम छप गया। मेरी जान की कसम, ज़रा इसकी आनबान तो देखिएगा। हाय, क्या बांका बटेर है! यह नवाब साहब के दादाजान के वक़्त का है। ऐसे रईस पैदा कहां होते हैं। दम के दम में लाखों फूंक दिये, रुपये को ठीकरा समझ लिया। पतंगबाज़ी का शौक़ हुआ, तो शहर भर के पतंगबाज़ों को निहाल कर दिया, कनकौवेवाले बन गये। अजी, और तो और, लौंडे, जो गली-कूचों में लंगर और लग्गे ले-लेकर डोर लूटा करते हैं रोज़ डोर बेच-बेचकर चखौतियां करते थे। अफ़ीम का शौक़ हुआ, तो इतनी खरीदी कि टके सेर से सोलह रुपये सेर तक बिकने लगी। मालवा खाली, चीन खुक्खल, बंबई तक के गन्ने आते थे।

आज़ाद—ऐसे ही कितने रईस विगड़ गये।

क़माली—रईसों के वनने-विगड़ने की क्या फ़िक्र! यहां तो जो शौक़ किया, ऐसा ही किया; फिर भला वटेरवाज़ी में उनके सामने कौन ठहरता। उनके वक़्त का अव यह एक सफ़शिकन वाक़ी रह गया है। वुजुर्गों की निशानी है। वस, यह समझिए कि मुहम्मद अली शाह के वक़्त में ख़रीदा गया था। अव कोई सौ वर्ष का होगा, दो कम या दो ऊपर, मगर वुढ़ापे में भी वह दमख़म है कि मुर्ग़ को लपककर लात दे तो वह भी चें वोल जाय। पारसाल की दिल्लगी सुनिए, नवाव साहव के मामूं तशरीफ़ लाये। उनमें भी रियासत की वू है। कनकौवा तो ऐसा लड़ाते हैं कि मियां विलायत उनके आगे पानी भरें। दो-दो तोले अफ़ीम पी जायं और वही दमख़म। वटेरवाज़ी का भी परले सिरे का शौक़ है। उनका ज़फ़रपैकर तो वला का वटेर है, वटेर क्या है, शेर है। मेरे मुंह से निकल गया कि हुज़ूर को तो वटेरों का वहुत शौक़ है, करोड़ों ही वटेर देख डाले होंगे, मगर सफ़शिकन-सा वटेर तो हुज़ूर ने भी न देखा होगा। वोले, इसकी हक़ीक़त क्या है, ज़फ़र-पैकर को देखो तो आंखें खुल जायं, वढ़कर एक लात दे, तो सफ़शिकन क्या, आपको नोकदम पाली वाहर कर दे। हौसला हो, तो मंगवाऊं।

"दूसरे दिन पाली हुई। हज़ारों आदमी आ पहुंचे। शहरभर में धूम थी कि आज वड़े मार्के का जोड़ है। ज़फ़रपैकर इस ठाट से आया कि ज़मीन हिल गयी, और मेरा तो कलेजा दहलने लगा। मगर शफ़शिकन ने उस दिन आवरू रख ली, जमी तो नवाव साहव इसको वच्चों से भी ज़्यादा प्यार करते हैं। पहले इसको दाना खिलवा लेते हैं, फिर कहीं आप खाते हैं। एक दिन ख़ुदा जाने; विल्ली देखी या क्या हुआ कि अपने आप फड़कने लगा। नवाव समझे कि वूंदा हो गया, फिर तो ऐसे धारोधार रोये कि घर भर में कुहराम मच गया। मैंने नवाव साहव को कभी रोते नहीं देखा। मुहर्रम की मजलिसों में एक आंसू नहीं निकलता। जव वड़े नवाव साहव सिधारे तो आंसू की एक वूंद न गिरी। यह वटेर ही ऐसा अनमोल है। सच तो यह है कि उसने उस दिन नवाव की सात पीढ़ियों पर एहसान किया। वल्लाह, जो कहीं घट जाता, तो मैं तो जंगल की राह लेता। मियां, जग में आवरू ही आवरू तो है, और क्या। ख़ैर साहव, जैसे ही दोनों चक्की खा चुके, ज़फ़र-पैकर विजली की तरह सफ़शिकन की तरफ़ चला। आते ही दवोच वैठा, चोटी को चोंच से पकड़कर ऐसा झपेटा कि दूसरा होता तो एक रगड़े में फुर्र से भाग निकलता। नवाव का चेहरा फ़क़ हो गया, मुंह पर हवाइयां छूटने लगीं कि इतने में सफ़शिकन लौट ही तो पड़ा। वाह मेरे शेर! खूव फिरा!! पाली भर में आवाज गूंजने लगी कि वह मारा है! एक लात ऐसी जमायी कि ज़फ़रपैकर ने मुंह फेर लिया। मुंह का फेरना था कि सफ़-शिकन ने उचककर एक झंझौटी वतलायी। वाह पट्ठे, और लगा! आखिर ज़फ़रपैकर नोकदम पाली वाहर भागा। चारों तरफ़ टोपियां उछल गयीं! आज यह वटेर अपना सानी नहीं रखता। मियां आज़ाद, अव आप वटेरख़ाना अपने हाथ में लीजिए।"

नवाव—वल्लाह, यही मैं भी कहनेवाला था।

झम्मन—काम ज़रा मुश्किल है।

दुन्नी—वटेरों का लड़ाना दिल्लगी नहीं, वड़े तज़रवे की ज़रूरत है।

आज़ाद—हुज़ूर फ़रमाते हैं, तो वटेरख़ाने की निगरानी मैं ही करूंगा।

कहने को तो आज़ाद ने यह कह दिया; मगर न कभी वटेर लड़ाये थे, न जानते थे कि इनको कैसे लड़ाया जाता है। घवराये, कहीं नवाव के वटेर हारे तो सारी वला मेरे सिर पर पड़ेगी। कुछ ऐसी तदवीर करनी चाहिए कि यह वला टल जाय। जव शाम हुई तो वह सवकी नज़रें वचाकर वटेरख़ाने में गये और कावुकों की खिड़कियां खोल दीं वटेर सव फुर्र से भाग गये। पिंजरे ख़ाली हो गये। कई पुश्तों की वसायी हुई वस्ती उजड़

गयी। बटेरों को उड़ाकर आजाद ने घर की राह ली।

दूसरे दिन मियां आजाद सवेरे मुह अधेरे बाजार मे मटरगश्ती करते हुए नवाब साहब की तरफ़ चले। बाजार भर मे सन्नाटा! हलवाई भट्ठी में सो रहा है, नानबाई बरतन धो रहा है, बजाजा बंद, कुजड़ो की दूकान पर अरुई न शकरकद, जौहरियो की दूकान मे ताला पड़ा हुआ है। मगर तंबाकूवाला जगा हुआ है। मेहतर सड़क पर झाड दे रहा है। मैदेवाला पिसनहारियो से आटा ले रहा है। इतने मे देखते क्या हे कि एक आदमी लुगी बांधे, हाथ मे चिलम लिये, बौखलाया हुआ घूम रहा है कि कही से एक चिनगारी मिल जाय तो दम लगे, धुआंधार हुक़्क़ा उड़े। जहां जाते है, 'फिर' 'भाग' की आवाज आती है। भाई, ऐसा शहर नही देखा जहां आग मांगे न मिले, जानो इसमे छप्पन टके खर्च होते है! मुहल्लेवालों को गालियां देते हुए नानबाई की दूकान पर पहुंचे और बोले—बड़े भाई, एक जरी आग तो झप से दे देना, मेरा यार, ला तो झटपट।

नानबाई—अच्छा, अच्छा, तो दूकान से अलग रहो, छाती पर क्यो चढ़े बैठते हो! यहां सौ धंधे करने है, आपकी तरह कोई वेफ़िकर तो हूं नही कि तड़का हुआ, चिलम ली, और लगे कौड़ी दूकान मांगने। मिल गयी तो ख़ैर, नही तो गालियां देनी शुरू की। सवेरे-सवेरे न अल्लाह का नाम न राम-राम। चिलम लिये दूकान पर डट गये। वाह, अच्छी दिल्लगी है! ऐसी ही तलब है तो एक कंडी क्यो नही गाड रखते कि रात भर आग ही आग रहे। ऐसे ही उचक्के तो चोरी करते है। आंख चूकी, और माल गायब! क्या सहल लटका है कि चिलम लेकर आग मांगने आये है। किसी दिन मै चिलमविलम न तोड़ताड़ कर फेक दू! तुम तडके-तड़के दूकान पर न आया करो जी, नही तो किसी दिन ठायं-ठाय हो जायेगी।

हज़रत की आंखो से खून टपकने लगा, दात पीसकर रह गये। यहां से चले, तो हलवाई की दूकान पर पहुंचे और बोले—मियां एक जरा-सी आग देना, भाई हो न! हलवाई का दूध बिल्ली पी गयी थी, झल्लाया बैठा था, समझा कि कोई फ़क़ीर भीख मांगने आया है। झिडक कर बोला कि और दूकान देखो। सवेरे-सवेरे कौडी की पड़ गयी। जाता है, कि दू धक्का! रहे कही, मरे कही, कौड़ी मांगने यहां मौजूद। 'दुनिया भर के मुर्दे नानामऊ घाट!' अब खडा घूरता क्या है?

चिलमबाज—कुछ वाही हुआ है बे! अबे, हम कोई फ़क़ीर है, कही मै आकर एक घस्सा दू न! लो साहब! हम तो आग मांगने आये है, यह हमको भिखमंगा बनाता है! अंधा है क्या?

हलवाई—भिखमगा नही, तू है कौन? लंगोटी बाध ली और चले आग मांगने! तुम्हारे बाबा का कर्ज खाया है क्या?

बेचारे यहां से भी निराश हुए, चुपके से कान दबाये चल खड़े हुए। आज तड़के-तड़के किसका मुंह देखा था कि जहा जाते है, झौड़ हो जाती है। इतने मे देखा कि एक सुनार की दूकान पर आग दहक रही है। उधर लपके। सुनार दूकान पर न था। यह तो हुक़्के की फ़िक्र में चौधियाये हुए थे ही, झप से दूकान पर चढ गये। सुनार भी उसी वक़्त आ गया और इनको देखकर आगभभूका हो गया। तू कौन है बे? वाह, खाली दूकान पर क्या मजे से चढ आये! (एक धप जमाकर) और जो कोई अदद जाता रहता? इतने मे दस-पांच आदमी जमा हो गये। क्या है मियां, क्या है? क्यो भले आदमी की आबरू बिगाड़े देते हो?

सुनार—है क्या! यह हमारी दूकान पर चोरी करने आये थे।

चिलमबाज—मै चोर हू, चोर की ऐसी ही सूरत होती है?

एक आदमी—कौन! तुम! तुम तो हमे पक्के चोर मालूम होते हो। अच्छा,

तुम फिर उनकी दूकान पर गये क्यों ? दूकानदार नहीं था, तो वहां तुम्हारा क्या काम ? जो कोई गहना ले भागते, तो यह तुम्हें कहां ढूंढ़ते फिरते ?

सुनार—साहव, इनका फिर पता कहां मिलता, जाते जमुना उस पार। चलो थाने पर।

लोगों ने सुनार को समझाया, भाई, अव जाने दो। देखो जी, खवरदार, अव किसी की दूकान पर न चढ़ना, नहीं पथे जाओगे। सुनार ने छोड़ दिया। जव आप चलने लगे, तो उसे इन पर तरस आ गया। बोला, अच्छा आग लेते जाओ। हज़रत ने आग पायी और घर की राह ली। तड़के-तड़के अच्छी वोहनी हुई, चोर वने, मार खायी, झिड़के गये, थाने जाते-जाते वचे, तव कहीं आग मिली।

मियां आज़ाद यह दिल्लगी देखकर आगे वढ़े और नवाव की ड्योढ़ी पर आये।

नवाव—आज इतना दिन चढ़ गया, कहां थे ?

आज़ाद—हुज़ूर. आज बड़ी दिल्लगी देखने में आयी, हंसते-हंसते लोट जाइएगा। तलव भी क्या बुरी चीज़ है।

यह कहकर आज़ाद ने सारी दास्तान सुनायी।

नवाव—खूव दिल्लगी हुई। आग के वदले चपतें पड़ीं। अरे मियां, ज़रा खोजी को वुलाना। हां, ज़रा खोजी के सामने सुनाना। किसी दिन यह भी न पिटें।

खोजी नवाव के दरवार के मसख़रे थे। ठिगना कद, काले कौए का-सा रंग, वदन पर मांस नहीं, पर आंखों में सुरमा लगाये हुए। लुढ़कते हुए आये और वोले—ग़ुलाम को हुज़ूर ने याद किया है ?

नवाव—हां, इस वक़्त किस फ़िक्र में थे ?

खोजी—खुदावंद, अफ़ीम घोल रहा था, और कोई फ़िक्र तो हुज़ूर की वदौलत क़रीव नहीं फटकने पाती। मैं फ़िक्र क्या जानूं, 'जोर न जांता, अल्लाह मियां से नाता।'

नवाव—अच्छा खोजी, इस हौज़ में नहाओ तो एक अशर्फ़ी देता हूं।

खोजी—हुज़ूर, अशर्फ़ियां तो आपकी जूतियों के सदक़े से वहुत-सी मिल जायेंगी, मगर फिर जीना कठिन हो जायेगा। न मरे सही, लेकिन, 'नकटा जिया वुरे हवाल !' न साहव, मुझे तो कोई एक गोते पर एक अशर्फ़ी दे, तो भी पानी में न पैठूं, पानी की सूरत देखते ही वदन कांप उठता है।

दुन्नी—कैसे मर्द हो कि नहाने-से डरते हो !

खोजी—हम नहीं नहाते तो आप कोई क़ाज़ी हैं ?

आज़ाद—अजी, सरकार का हुक्म है।

खोजी—चलिए, आपकी वला से। कहने लगे सरकार का हुक्म है। फिर कोई अपनी जान दे।

आज़ाद—हुज़ूर, जो इस वक़्त यह हौज़ में धम से न कूद पड़ें, तो अफ़ीम इन्हें न मिले।

खोजी—आप कौन वीच में वोलने वाले होते हैं ? अरसठ वरस से तो मैं अफ़ीम खाता आया हूं, अव आपके कहने से छोड़ दूं, तो कहिए, मरा या जिया ?

नवाव—अच्छा भाई, जाने दो। दूध खाओगे ?

खोजी—वाह खुदावंद, नेकी और पूछ-पूछ। लेकिन जरी मिठास खूव हो। शाहजहांपुर की सफ़ेद शक्कर या कालपी की मिश्री घोलिएगा। अगर थोड़ा-सा केवड़ा भी गवड़ दीजिए तो पीते ही आंखें खुल जायें।

इतने में एक चोवदार घवराया हुआ आया और वोला—खुदावंद; गज़व हो

गया। जांबख्शी हो तो अर्ज करूं, सब बटेर उड़ गये।

नवाब—अरे! सब उड़ गये?

चोबदार—क्या कहूं, हुजूर, एक का भी पता नही।

मुसाहबो ने हाय-हाय करनी शुरू की, कोई सिर पीटने लगा, कोई छाती कूटने लगा। नवाब ने रोते हुए कहा, भाई और जो गये सो गये, मेरे सफ़शिकन को जो कोई ढूंढ लाये, हजार रुपये नक़द दू। इस वक़्त मै जीते जी मर मिटा। अभी साड़नी-सवारो को हुक्म दो कि पचकोमी दौरा करें। जहा सफ़शिकन मिले, समझा-बुझा कर ले ही आये।

झम्मन—उनको समझाना, हुजूर, मुश्किल है। वह तो अरबी मे बाते करते है। सारा कुरान उन्हे याद है। उनसे कौन बहस करेगा?

नवाब—मुझे तो उससे इश्क हो गया था जी, वह नोकीली चोंच, वह अकड-अकड़ कर काकुन चुनना! सैकड़ो पालिया लड़ी, मगर कोरा आया। किस बांकपन से झपटकर लात देता था कि पाली भर थर्रा उठती थी। उसकी बिसात ही क्या थी, मझोला जानवर, लेकिन मैदान का शेर। यह तो मै पहले ही से जानता था कि यह बटेर की सूरत में किसी फ़कीर की रूह है। अब सुना कि नमाज भी पढता था।

झम्मन—हुजूर को याद होगा कि रमजान के महीने मे उसने दिन के वक़्त दाना तक न हुआ; हुजूर समझे थे कि बूदा हो गया, मगर मै ताड़ गया कि रोजे से है।

खोजी—खुदावंद, अब मै हुजूर से कहता हूं कि दस-पांच दफ़ा मैने अफ़ीम भी पिला दी; मगर वल्लाह, जो जरा भी नशा हुआ हो।

क़माली—हुजूर, यकीन जानिए, पिछले पहर से सुबह तक कावुक से हक-हक की आवाज आया करती थी। गफूर, तुमको भी तो हमने कई बार जगाकर सुनाया था कि सफ़शकिन खुदा को याद कर रहे है।

नवाब—अफ़सोस, हमने उसे पहचाना ही नही। दिल डूबा जाता है, कोई पखा झलना।

मुसाहब—जल्दी पखा लाओ।

नवाब—

प्रीतम जो मै जानती कि प्रीत किये दुख होय;
नगर ढिंढोरा पीटती कि प्रीत करै जनि कोय।

खोजी—(पीनक से चौककर) हां उस्ताद, छेड़े जा। इस वक़्त तो मिया शोरी की रूह फड़क गयी होगी।

नवाब—चुप, नामाकूल। कोई है। इसको यहां से टहलाओ। यह रईसो की सोहबत के क़ाबिल नही। मुझको भी कोई गवैया समझा है। यहां तो जी जलता है, इनके नजदीक क़ौवाली हो रही है।

खोजी—ख़ुदावंद, गुलाम तो इस दम अपने आपे मे नही। हाय, सफ़शिकन की काबुक खाली हो और मै अपने आपे मे रहू! हुजूर ने इस वक़्त मुझ पर बड़ा जुल्म किया।

नवाब—शाबाश खोजी, शाबाश! मुआफ़ करना, मै कुछ और ही समझा था। क्यो जी, साडनी-सवार दौडाया गया कि नही?

सवार—हुजूर, जाता तो हू, मगर वह मेरी क्या सुनेगे, कोई मौलवी भी तो साथ भेजिए, मै तो कुछ ऊंट ही चढना जानता हूं, उनसे दलील कौन करेगा भला!

आज़ाद—किसी अच्छे मौलवी को बुलवाना चाहिए।

मुसाहिबो ने एक मौलाना साहब को तजवीजा। मगर यारो ने उनसे कुल दास्तान

ड़ीं बयान की। चोबदार ने मकान पर जाकर सिर्फ़ इतना कहा कि नवाब साहब ने आपको ाद किया है। मौलवी साहब उसके साथ हो लिये और दरबार में आकर नवाब साहब को लाम किया।

नवाब—आपको इसलिए तकलीफ़ दी कि मेरी आंखों का नूर, मेरे कलेजे का कड़ा नाराज़ होकर चला गया है। बड़ा आलिम और दीनदार है। बहस करने में कोई ससे पेश नहीं पाता; आप जाइए और उसको माकूल करके ले आइये।

मौलना—मां-बाप का कड़ा हक़ होता है। वह कैसे नादान आदमी हैं?

खोजी—मौलाना साहब, वह आदमी नहीं हैं, बटेर है। मगर इल्म और अक़्ल में ादमियों के भी कान काटते हैं।

क़माली—सफ़शिकन का नाम तो मौलाना साहब, आपने सुना होगा। वह तो :-दूर तक मशहूर थे। जनाब, बात यह है कि सरकार का बटेर सफ़शिकन कल काबुक से ड़ गया। अब यह तजवीज हुई है कि एक-एक सांड़नी-सवार जाये और उसे समझा-बुझा र ले आये। मगर ऊंटवान तो फिर ऊंटवान, वह दलील करना क्या जाने, इसलिए आप ाये गये हैं कि साड़नी पर सवार हों, और उनको किसी तदबीक से ले आयें।

मौलाना—ठीक, आप सब के सब नशे में तो नहीं हैं? होश की बातें करो। ख़ुद ख़रे बनते हो। बटेर भी आलिम होता है, वह भी कोई मौलवी है, लाहौल! अच्छे च्छे गाउदी जमा हैं। बंदा जाता है।

नवाब—यह किस कोढ़मग़ज को लाये थे जी? खासा जांगलू है।

आज़ाद—अच्छा, हुज़ूर भी क्या याद करेंगे कि इतने बड़े दरबार में एक भी तकी न निकला। अब गुलाम ने बीड़ा उठा लिया कि जाऊंगा और सफ़शिकन को ाऊंगा। मुझे एक सांड़नी दीजिए, मैं उसे-ख़ुद ही चला लूंगा। खर्च के लिए कुछ रुपये । दिलवाइये, न जाने कितने दिन लग जायें।

नवाब—अच्छा, आप घर जाइये और लैस होकर आइए।

मियां आज़ाद घर गये तो और मुसाहिबों में खिचड़ी पकने लगी—यार, यह तो ज़ी जीत ले गया। कहीं से एक आध बटेर पकड़ कर लायेगा और कहेगा, यही सफ़शिकन । फिर तो हम सब पर शेर हो जायेगा। हमको-आपको कोई न पूछेगा। खोजी जाकर ाव साहब से बोले—हुज़ूर, अभी मियां आज़ाद दो दिन से इस दरबार में आये हैं, नका एतबार क्या? जो सांड़नी ही लेकर रफ़ूचक्कर हों, तो फिर कोई कहां उनका पता गाता फिरेगा?

क़माली—हां ख़ुदावंद, कहते तो सच हैं।

झम्मन—खोजी सूरत ही से अहमक मालूम होते हैं, मगर बात ठिकाने की कहते । ऐसे आदमी का ठिकाना क्या?

दुन्नी—हम तो हुज़ूर को सलाह न देंगे कि मियां आज़ाद को सांड़नी और सफ़र-र्च दीजिए। जोखिम की बात है।

नवाब—चलो, बस, बहुत न बको। तुम ख़ुद जैसे हो, वैसा ही दूसरों को समझते । आज़ाद की सूरत कहे देती है कि कोई शरीफ़ आदमी है, और मान लिया कि सांड़नी ाती ही रहे, तो मेरा क्या बिगड़ जाएगा? सफ़शिकन पर से लाखों सदके हैं। सांड़नी की क़ीक़त ही क्या।

इतने में मियां आज़ाद घर से तैयार होकर आ गये। अशर्फ़ियों की एक थैली र्च के लिए मिली। नवाब ने गले लगा कर रुखसत किया। मुसाहब भी सलाम बजा ाये। आजाद सांड़नी पर बैठे और सांड़नी हवा हो गयी।

चार

आजाद यह तो जानते ही थे कि नवाब के मुसाहबों में से कोई चौक के बाहर जानेवाला नही इसलिए उन्होंने सांड़नी तो एक सराय मे बांध दी और आप अपने घर आये। रुपये हाथ में थे ही, सवेरे घर से उठ खड़े होते, कभी सांड़नी पर, कभी पैदल, शहर और शहर के आस-पास के हिस्सों में चक्कर लगाते, शाम को फिर सांड़नी सराय में बांध देते और घर चले आते। एक रोज़ सुबह के वक्त घर से निकले तो क्या देखते है कि एक साहब केचुललेट का धानी रंगा हुआ कुरता, उस पर रुपये ग़जवाली महीन शरबती का तीन कमरतोई का चुस्त अंगरखा, गुलबदन का चूड़ीदार घुटन्ना पहने, मांग निकाले, इत्र लगाये, माशे भर की नन्ही-सी टोपी आलपीन से अटकाये, हाथो मे मेहदी, पोर-पोर छल्ले, आंखों में सुर्मा, छोटे पंजे का मखमली जूता पहने, एक अजब लोच से कमर लचकाते, फूक-फूक कर क़दम रखते चले आते थे। दोनों ने एक-दूसरे को खूब जोर से घूरा। छैले मियां ने मुसकराते हुए आवाज दी—ऐ, जरा इधर तो देखो, हवा के घोड़े पर सवार हो! मेरा कलेजा बल्लियों उछलता है। भरी बरसात के दिन, कही फिसल न पड़ो, तो क़हक़हा उड़े।

आज़ाद—आप अपना मतलब कहिए, मेरे फिसलने की फ़िक्र न कीजिए।

छैला—गिरिएगा, तो मुझसे ज़रूर पूछ लीजिएगा।

आज़ाद—बहुत खूब, ज़रूर पूछूंगा, बल्कि आपको साथ लेकर, गिरूं तो सही।

छैला—खुदा की क़सम, आपके, काले कपड़ों से मैं समझा कि बनैला कुसुम के खेत से निकल पड़ा।

आजाद—और मैं आपको देखकर यह समझा कि कोई जनाना मटकता जाता है।

छैला—वल्लाह, आपकी धज ही निराली है। वह डबल कोट और लक्कड़तोड़ बूट। जांगलू मालूम होते हो। इस वक़्त ऐसे बदहवास कहां बगटुट भागे जाते हो? सच कहिएगा, आपको हमारी जान की क़सम।

आजाद—आज प्रोफ़ेसर लॉक संस्कृत पर एक लेक्चर देनेवाले हैं, बड़े मशहूर आलिम है। योरप में इनकी बड़ी शोहरत है।

छैला—भाई, क़सम खुदा की, कितने भोंडे हो। प्रोफ़ेसर के मशहूर होने की एक ही कही। हम इतने बड़े हुए, क़सम ले लो, जो आज तक नाम भी सुना हो। क्या दुन्नीखां से ज़्यादा मशहूर है? भाई, जो कही 'तुम्हारे घूंघरवाले बाल' एक दफ़ा भी उसकी जबान से सुन लो, तो उम्र-भर न भूलो। वल्लाह, क्या टीपदार आवाज है; मगर तुम ऐसे कोढ़मग़जों को गलेबाजी से क्या वास्ता, तुम तो प्रोफ़ेसर साहब के फेर में हो।

आजाद—तुम्हारी जिंदगी राग और लै ही में गुजरेगी। इस नाच और रंग ने आपकी यह गति बनायी कि मूछ और दाढ़ी कतरवायी, मेंहदी लगवायी और मर्द से औरत बन गये। अरे, अब तो मर्द बनो; इन बातों से बाज आओ।

छैला—जी, तो आपके प्रोफ़ेसर लॉक के पास चला जाऊं? अपने को आपकी तरह गड्डामी बनाऊं। किसी गली-कूचे में निकल जाऊं तो तालियां पड़ने लगें।

आजाद—अब यह फ़रमाइए कि इस वक़्त आप कहां के इरादे से निकले है?

छैला—कल रात को तीन बजे तक एक रंगीले दोस्त के यहां नाच देखता रहा। वह प्यारी-प्यारी सूरतें देखने मे आयीं कि वाह जी वाह! किस काफिर का उठने को जी चाहता हो। जलसा बरखास्त हुआ तो बस, कलेजे को दोनों हाथों से थाम कर निकले; लेकिन रात भर कानो मे छमाछम की आवाज आया की। परियों की प्यारी-प्यारी सूरत

आंखों में फिरा की। अब इस वक़्त फिर जाते हैं, ज़रा सेक आयें, भैरवी उड़ रही होगी—

'रसीले नैनों ने फंदा मारा।'

आज़ाद—कल फ़ुरसत हो तो हमसे मिलिएगा।

छैला—कल तक तो मेरी नींद का खुमार ही रहेगा।

आज़ाद—अच्छा, परसों सही।

छैला—परसों? परसों तो खुदा भी बुलाये तो बंदा न जाने का। परसों नवाब साहब के यहां बटेरों की पाली है, महीनों से बटेर तैयार हो रहे हैं।

आज़ाद—अच्छा साहब, परसों न सही, मंगल को सही।

छैला—मंगल को तड़के से बाने की कनकइयां लड़ेंगी, अभी बनारस से बाना मंगाया है, माही जाल की कनकइयां ऐसी सधी हैं कि हरदम काबू में, मोड़ो, गोता दो, खींचो, जो चाहे सो करो जैसे खेत का घोड़ा।

आज़ाद—अच्छा, बुध को फ़ुरसत है!

छैला—वाह-वाह, बुध को तो बड़े ठाट से भठियारियों की लड़ाई होगी। देखिए तो, कैसी-कैसी भठियारियां किस बांकी अदा से हाथ चमका कर, उंगलियां मटका कर लड़ती हैं और कैसी-कैसी गालियां सुनाती हैं कि कान के कीड़े मर जायं।

आज़ाद—बिरस्पत को तो जरूर मिलिएगा?

छैला—जनाब, आप तो पीछे पड़ गये, मिलूं तो सब कुछ, जब फ़ुरसत भी हो। यहां मरने तक की तो फ़ुरसत नहीं, अब की नौचंदी जुमेरात है, बरसों से मन्नतें मानी हैं, आपको दीनदुनिया की ख़बर तो है नहीं।

आज़ाद—तो मालूम हुआ, आपसे मुलाक़ात नहीं होगी। आज मुर्ग़ लड़ाइएगा, कल पतंग उड़ाइएगा, कहीं गाना होगा, कहीं नाच होगा, आप न हों तो रंग क्यों-कर जमे। मेला-ठेला तो आपसे कोई काहे को छूटता होगा फिर भला मिलने की कहां फ़ुरसत? रुख़सत।

छैला—ऐ, तो अब रूठे क्यों जाते हैं?

आज़ाद—अब मुझे जाने दीजिए, आपका और हमारा मेल जैसे गन्ना और मदार का साथ। जाइए, देखिए, भैरवी का लुत्फ़ जाता है।

छैला—जनाब, अब नाच-गाने का लुत्फ़ कहां, वह चमक-दमक अब कहां, दिल ही बुझ गया। जो लुत्फ़ हमने देखे हैं, वह बादशाहों को ख्वाब में नसीब न हुए होंगे। यह क़ैसरबाग़ अदन को मात करता था। परियों के झुंड, हसीनों के जमघट, रात को दिन का समां रहता था। अब यहां क्या रह गया! गली कूचों में कुत्ते लोटते हैं। एक वह ज़माना था कि साक़िनों के मिज़ाज न मिलते थे। बांके-तिरछे रईसज़ादे एक-एक दम की दो-दो अशर्फ़ियां फेंक देते थे। अब तो शहर भर में इस सिरे से उस सिरे तक चिराग़ लेकर ढूंढ़िए तो मैदान ख़ाली है। कल नयी सड़क की तरफ़ जो निकला, तो नुक्कड़ पर एक [illegible]ी बंधा देखा। पूछा, तो मालूम हुआ कि बी हैदरजान का हाथी है। क़सम ख़ुदा की, [illegible] खुश हुआ कि आंखों में आंसू आ गया।

ख़ुदा आबाद रक्खे लखनऊ को फिर ग़नीमत है;
नज़र कोई न कोई अच्छी सूरत आ ही जाती है।

आज़ाद—अच्छा, यह सब जलसे आपने देखे और अब भी आंखें सेका ही करते [illegible]गर सच कहिएगा, बने या बिगड़े, बसे या उजड़े, नेकनाम हुए या बदनाम? यहां तो [illegible]ा देखते हैं।

छैला—जनाव यह तो बड़ा कड़ा सवाल है। सच तो यों है कि उम्र भर इस नाचरंग ही के फंदे मे फंसे रहे, दिनरात तबला, सारंगी, बायां, ढोल, सितार की धुन मे मस्त रहे। खुदा की याद ताक़ पर, इल्म छप्पर पर, छटे हुए शोहदे बन बैठे; लेकिन अब तो पानी मे डूब गये, ऊपर एक अंगुल हो तो, और एक हाथ हो तो, बराबर है। आप लोग इस भरोसे मे हों कि हमें आदमी बनायें तो यह ख़ैर-सलाह है। बूढ़े तोते भी कही राम-राम पढ़ते है ?

आजाद—ख़ैर, शुक्र है कि आप अपने को बिगड़ा हुआ समझते तो है। कडुवे न हूजिए तो कहूं कि इस जनाने भेस पर लानत भेजिए, यह लोच, यह लचक, यह मेहदी, यह मिस्सी, कुछ औरतों ही को अच्छी मालूम होती है। जरा तो इस दाढ़ी-मूंछ का ख़याल करो।

छैला—यह भर्रे किसी ऐसे-वैसे को दीजिए, यहां बड़े-बड़ों की आंखें देखी है। आपके झांसे मे कोई अनाड़ी आये, हम पर चकमा न चलने का।

आजाद—आपको डोम-डारियों ही की सोहबत पसन्द आयी या किसी और की भी ? लखनऊ में तो हर फ़न के आदमी मौजूद है।

छैला—हम तो हमेशा ऐसी ही टुकड़ी मे रहे। घरफूंक तमाशा देखा। लंगोटी मे फाग खेला। मियां शोरी के टप्पे, क़दर मियां की ठुमरियां, वसीटखां की टीपदार आवाज प्यारेखां का ख़याल छोड़कर जायं कहां ? सारंगी-मंजीरे की आवाज सुनी तो छप से घुस पड़े, मसजिद में अज़ान हुआ करे, सुनता कौन है। बहुत गुजर गयी, थोड़ी बाक़ी है।

आजाद—लखनऊ में ऐसे-ऐसे आलिम पड़े है कि जिनका नाम आफ़ताब की तरह सारी खुदाई में रोशन है। कर्बला और मदीने तक के समझदार लोग इन बुजुर्गों का कलाम शौक़ से पढते हैं। मुफ्ती सादुल्लाह साहब, सैयद मुहम्मद साहब, वग़ैरह उल्मा का नाम बच्चे-बच्चे की ज़बान पर है। अब शायरों को देखिए, ख्वाजा हैदरअली आतश, शेख नासिख अपने फ़न के खुदा थे। मरसिया कहना तो लखनऊ वालों का हिस्सा है। मीर अनीस साहब को खुदा बख्शे, जबान की सफ़ाई तो यहां ख़त्म हो गयी। मिर्जा दबीर तो गोया अपने फ़न के मवज्जिद थे। नसीम और सबा ने आतश को भड़का दिया। गोया तो गोया शायरी के चमन का बुलबुल था। मिर्जा रज्जबअली बेग सरूर ने वह नस्र लिखी कि क़लम तोड दिये। यहां के कारीगरों के भी झंडे गड़े है। कुम्हार तो ऐसे दुनिया के पर्दे पर न होंगे। मिट्टी की मूरतें ऐसी बनायी कि मुसव्विरों की किरकिरी हो गयी। बस, यही मालूम होता है कि मूरत बोला ही चाहती है। जिस अजायबघर में जाइएगा, लखनऊ के कुम्हारों की कारीगरी जरूर पाइएगा। ख़ुशनवीसो ने वह कमाल पैदा किया कि एक-एक हर्फ़ की पांच-पांच अशर्फ़ियां ली। बांके ऐसे कि शेर का पंजा तोड़ डालें, हाथी को डपटें तो चिग्घाड़ कर मंजिलों भागें। रुस्तम और इस्फंदियार को चुटकियों में लड़ा दें। उस्ताद मुहम्मदअली खां फिकैत, छरहरा बदन, लेकिन गदका हाथ मे आने की देर थी। परे के परे दम में साफ़ कर दिये। कड़क कर तमाचे का तुला हाथ लगाया, तो दुश्मन का मुंह फिर गया। अखाड़े मे गदका लेकर खड़े हुए, तो मालूम हुआ, बिजली चमक गयी। एक दफ़ा ललकार दिया कि रोक, बैठ गयी ! देख संभल। खबरदार, यह आयी, वह आयी, वह पड़ गयी ! वाह-वाह की आवाज सातवें आसमान जा पहुंची। बला की सफ़ाई, ग़जब की सफ़ाई थी। जो मुंह चढा, उसने मुह की खायी। सामने गया और शामत आयी। कामदानी वह ईजाद की कि उड़ीसा और कोचीन तक धूम हो गयी। लेकिन आपको तो न इल्म से सरोकार, न फ़न से मतलब; आप तो ताल-सुर के फेर मे पड़े है।

छैला—हजरत, इस वक़्त भैरवी सुनने जाता था और 'जागे भाग प्यारा नजर

आया' सुनने का शौक़ चर्राया था; लेकिन आपने पादरियों की तरह बकवास करके काया पलट दी। आप जो हमें राह पर लाते हों, तो इतना मान जाओ कि ज़रा क़दम बढ़ाये हुए, हमारे साथ हाथ में हाथ दिये हुए, पाटेनाले तक चले चलो; देखूं तो परिस्तान से क्योंकर भाग आते हो ? उन्हीं हसीनों का सिज़दा ना करो, तो कुछ जुर्माना दूं। उस इन्द्र के अखाड़े से कोरे निकल आओ, तो टांग की राह निकल जाऊं।

आज़ाद—(घड़ी जेब से निकाल कर) ऐं ! आठ पर इक्कीस मिनट ! इस ख़ुशगप्पी ने आज बड़ा सितम ढाया, लेक्चर सुनने में न आया। मुफ़्त की बकबक झकझक ! लेक्चर सुनने क़ाबिल था।

छैला—अल्लाह जानता है, इस वक़्त कलेजे पर सांप लोट रहे हैं ! न जाने तड़के-तड़के किस मनहूस का मुंह देखा है कि भैरवी के मज़े हाथ से गये ?

आज़ाद—आप भी निरे चोंच ही रहे। इतनी देर तक समझाया, सिरमग़ज़न की, मगर वाह रे कुत्ते की दुम, बारह बरस बाद भी वह टेढ़ी ही निकली।

छैला—तो मेरे साथ आइए न, बगलें क्यों झांकते हो ? जब जानें कि निलोह निकल आओ।

आज़ाद—अच्छा, चलिए। देखें, कौन-सा हसीन अपनी निगाहों के तीर से हमें घायल करता है ! बरसों के ख़यालों को कोई क्या मिटा देगा ? हम, और किसी के थिरकने पर फ़िदा हो जायं ! तोबा ! कोई ऐसा माशूक़ तो दिखाइए, जिसे हम प्यार करें। हमारा माशूक़ वह है जिसमें कमाल हो। जुल्फ़ और चोटी पर कोई और सिर धुनते हैं।

ख़ुलासा यह कि आज़ाद छैले मियां के साथ हाफ़िज़ जी के मकान में जा पहुंचे। महफ़िल सजी हुई थी। तीन-चार हसीनाएं मिलकर मुबारकबाद गाती थीं यही मालूम होता था कि राग और रागिनी हाथ बांधे खड़ी हैं। जिसे देखो, गर्दन हिलाता है। पाजेब की छमाछम दिल को रौंदती है, कोई इधर से उधर चमक जाती है, कोई ऊंचे सुरों में तान लगाती है, कोई सीने पर हाथ रख कर 'गहरी नदियां' बताती है, कोई नशीली आंखों के इशारे से 'नैना रसीले' की छवि दिखाती है, धमा-चौकड़ी मची हुई है। छैले मियां ने एक हसीन से फ़रमाइश की कि हज़रत मीर की यह ग़ज़ल गाओ—

ग़ैर के कहने से मारा उसने हमको बे-गुनाह;
यह न समझा वह कि वाक़या में भी कुछ था या न था।
याद ऐयामे कि अपनी रोजोशब की जायबाश;
था दरे बाजे बयावां, या दरे मयखाना था।

इस ग़ज़ल ने वह लुत्फ दिखाया और ऐसा रंग जमाया कि मियां आज़ाद तक 'ओ हो !' कह उठते थे; इसके बाद एक परी ने यह ग़ज़ल गायी—

हाल खुले तो किस तरह यार की वज्दे-नाज़ का;
जो है यहां वह मस्त है अपनी ही सोजोसाज़ में।

इस ग़ज़ल पर जलसे में कुहराम मच गया। एक तो ग़ज़ल हक़्क़ानी, दूसरे हसीना की उठती जवानी, तीसरे उसकी नाज़ुकबयानी। लोग इतने मस्त हुए कि झूम-झूम कर यही शेर पढ़ते थे—

हाल खुले तो किस तरह यार की वज्दे-नाज़ का;
जो है यहां वह मस्त है अपनी ही सोजोसाज़ में।

अब सबको शकी जगह यक़ीन हो गया कि अब किसी का रंग न जमेगा। हर तरफ़ से हक़्क़ानी ग़जलों की फ़रमाइश है। न ध्रुपद का ख़याल, न टप्पे की फ़िक्र, न भैरवी की धुन, न पक्के गाने का जिक्र, बस हक़्क़ानी ग़जलों की धूम है।

अब दिल्लग़ी देखिए कि बुड्ढे-जवान सब के सब बेधड़क उस मोहनी को घूर रहे है कोई उससे आखे लड़ाता है, कोई सिर धुनता है, कोई ठंडी आहें खीचता है। दो-चार मनचले रईसो ने हसीनों को बुलाकर बड़े शौक़ से पास बैठाया। नोंक-झोंक, हंसी मजाक चुहल-दिल्लग़ी, धौल-धप्पा होने लगा। हाफ़िज़ जी भी बेसीग के बछड़े बने हुए मजे से चौमुखी लड़ रहे है।

बूढ़े मियां—आजकल के लड़कों को भी हवा लगी है।

एक जवान—जनाब, अब तो हवा ही ऐसी चली है कि जवान तो जवान, बुड्ढो तक को बुढ़भस लगा है। सौ बरस का सिन, चार के कंधों पर लदने के दिन, मगर जवानी ही के दम भरते है।

बूढ़े मियां—अजी, हम तो जमाने भर के न्यारिये है, हमें कोई क्या चंग पर चढ़ायेगी; मगर तुम अभी जुमा-जुमा आठ दिन की पैदायश, ऐसा न हो, उनके फेर मे आ जाओ; फिर दीनदुनिया दोनों को रो बैठो।

जवान—वाह जनाब, आपकी सोहबत में हम भी पक्के हो गये है, ऐसे कच्चे नही कि हम पर किसी के दांव-पेंच चलें।

बूढ़े मियां—कच्चे-पक्के के भरोसे न रहिएगा, इन हसीनों का बड़े-बड़े ज़ाहिदों ने सिज़दा किया है; तुम किस खेत की मूली हो।

जवान—इन बुतों को हम फ़क़ीरों से भला क्या काम है, ये तो तालिब जर के है और यां ख़ुदा का नाम है।

हसीना—इन बड़े मियां से कोई इतना तो पूछो कि बाल-बाल गल कर बर्फ़-सा सफ़ेद हो गया और अब तक सियाहकारी न छोड़ी, यह समझाते किस मुंह से है ? इनकी सुनता कौन है ! जरा शेख जी, बहुत बढ़-चढ़कर बातें न बनाया कीजिए; शाहछड़े वाली गली में रोज बीस-बीस चक्कर होते है; ऐ, तुम थकते भी नही ?

हाफ़िज जी—शेख जी जहां बैठते है, झगड़ा जरूर खरीदते है। आप है कौन ? आये कहां से नासेह बन के ! अच्छा, बी साहब, अपना कलाम सुनाइए; मगर शर्त यह है कि जब हम तारीफ़ करें तो झुक के सलाम कीजिए।

हसीना—आप हैं तो इसी लायक कि दूर ही से झुक कर सलाम कर लें।

इधर तो यह बातें हो रही थीं, उधर दूसरी टुकड़ी मे गाली और फक्कड़ का छर्रा चलता था। तीसरे मे धौल-धप्पा होता था। लड़के, जवान, बूढ़े बेधड़क एक-दूसरे पर फबतियां कसते थे। इतने में दोपहर की तोप दगी, जलसा बरख़ास्त, तबल्चियों ने बोरिया-बंधना उठाया। चलिए, सन्नाटा हो गया।

पांच

मियां आजाद की सांड़नी तो सराय में बंधी थी। दूसरे दिन आप उस पर सवार होकर घर से निकल पड़े। दोपहर ढले एक क़स्बे में पहुंचे। पीपल के पेड़ के साये में बिस्तर जमाया। ठंडे-ठंडे हवा के झोंकों से जरा दिल को ढाढस हुई, पांव फैलाकर लंबी तानी, तो दीन-दुनिया की ख़बर नही। जब खूब नींद भर कर सो चुके, तो एक आदमी ने जगा दिया। उठे, मगर प्यास के मारे हलक में कांटे पड़ गये। सामने इदारे पर एक हसीन औरत पानी भर रही थी। हजरत भी पहुंचे।

आज़ाद—क्यों नेकबख्त, हमें एक ज़रा सा पानी नही पिलातीं। भरते न बनता हो तो लाओ हम भरें। तुम भी पियो, हम भी पियें, एहसान होगा।

औरत ने कोई जवाब न दिया, तीखी चितवन से देखकर पानी भरती रही।

आज़ाद—"सखी से सूम भला, जो देवे तुरत जवाब।" पानी न पिलाओ, जवाब तो दे दो। यह क़स्बा तो अपने हक़ में कर्बला का मैदान हो गया। एक बूंद पानी को तरस गये।

औरत ने फिर भी जवाब न दिया। पानी भर कर चली।

आज़ाद—भई, अच्छा गांव है! जो बात है, निराली! एक लुटिया पानी न मिला, वाह री क़िस्मत! लोग तो इस भादों की जलती-बलती धूप में पौसरे बैठाते हैं, केवड़ा पड़ा हुआ पानी पिलाते हैं, यहां कोई बात तक नहीं सुनता।

मियां आज़ाद को हैरत थी कि इस कमसिन नाज़नीन का वहां इस वीराने में क्या काम। साथे की तरह साथ हो लिये। वह कनखियों से देखती जाती थी; मगर मुंह नहीं लगाती थी। बारे, सड़क से दायें हाथ पर एक फाटक के सामने वह बैठ गयी और पेड़ के साये में सुस्ताने लगी। आज़ाद ने कहा—अगर यह बर्तन भारी हो तो लाओ मै ले चलूं, इशारे की देर है। क़सम लो, जो एक बूंद भी पीऊं, गो प्यास के मारे कलेजा मुंह को आता है और दम निकला जाता है; लेकिन तुम्हारा दिल दुखाना मंजूर नही।

हसीना ने इसका भी जवाब न दिया। फिर हिम्मत करके उस बर्तन को उठाया और फाटक के अंदर हो रही। मियां आज़ाद भी चुपके-चुपके दबे पांव उसके पीछे-पीछे गये। हसीना एक खुले हुए छोटे से बंगले में जा बैठी और आज़ाद दरख़्तों की आड़ में दबक रहे कि देखें, यहां क्या गुल खिलता है। उस बंगले के चारों तरफ़ खाई खुदी हुई थी, इर्द-गिर्द सरपत बोई हुई थी, ऐसी घनी कि चिड़िया तक का गुज़र न हो; और वह तेज़ कि तलवार मात। बड़ा ऊंचा मेहराबदार फाटक लगा हुआ था। वह जौहरदार शीशम की लकड़ी थी कि बायद व शायद। क्यारियां रोज़ सींची जाती थीं, रविशों पर सुर्खी कटी थी, हरे-भरे दरख्त आसमान से बातें कर रहे थे। कहीं अनार की कतार, कहीं लखवट की बहार, इधर आम के बाग़, अमरूद और चकोतरों से टहनियां फटी पड़ती थीं, नारंगियां शाखों पर लदी हुई थी, फूलों की बू-बास, कहीं गुलमेंहदी, कहीं गुल-अब्बास, नेवाड़ी फूली हुई, ठंडी-ठंडी हवा, ऊदी-ऊदी घटा, कलियों चिटक, जूड़ी की भीनी महक, कनैल की दमक। बाग़ के बीचो-बीच में एक तीन फुट का ऊंचा पक्का चबूतरा बना था। यह तो सब कुछ था; मगर रहने वाले का पता नही। उस हसीना की चालढाल से भी बेगानापन बरसता था एकाएक उसने बर्तन ज़मीन पर रख दिया और एक नेवाड़ की पलंगरी पर सो रही। इनको दांव मिला, तो खूब छककर मेवे खाये और बर्तन को मुंह से लगाया; तो एक बूंद भी न छोड़ा। इतने में पांव की आहट सुनाई दी। आज़ाद झट अंगूर की टट्टी में छिप रहे; मगर ताक लगाये बैठे थे कि देखे, है कौन! देखा कि फाटक की तरफ़ से कोई आहिस्ता-आहिस्ता आ रहा था। बड़ा लंबा-तड़ंगा, मोटा-ताजा आदमी था। लंगोट बांधे, अकड़ता उस बंगले की तरफ़ जा रहा था। समझे कि कोई पहलवान अपने अखाड़े से आया है। नज़दीक आया, तो यह गुमान दूर हो गया। मालूम हुआ कि कोई शाह जी हैं। वह लंगोट, जिसमे पहलवान का धोखा हुआ था, तहमद निकला। शाह साहब सीधे बंगले में दाखिल हुए। औरत को पलंग पर सोता पाया तो पलंग पर हाथ मारकर चिल्ला-उठे—उठ। हसीना घबराकर उठ बैठी और शाह जी के क़दम चूमे। शाह जी एक तिरपाई पर बैठ गये और उससे यों बातें करने लगे—बेटी, आज तुमको हमारे सबब से बहुत राह देखनी पड़ी। यहां से दस कोस पर एक गांव में एक राजा रहता है। अस्सी वर्ष का हो गया, मगर अल्लाह ने न लड़का दिया, न लड़की। एक दिन मुझे बुलवाया। मैं

कही आता-जाता तो हू नही, साफ़ कहला भेजा कि तुम्हें गरज हो तो आओ, खुदा के बंदे खुदा के सिवा और किसी के द्वार पर नही जाते। आखिर रानी को लेकर वह आप आया और मेरे क़दमो पर गिर पड़ा। मैने रानी के सिर पर एक बिना सूघा गुलाब का फूल दे मारा। पांचवे महीने अल्लाह ने लड़का दिया और राजा मेरे पास दौड़ा आता था कि मै राह मे मिला। देखते ही मुझे रथ पर बिठा लिया, अब कहता है, रुपया लो, जागीर लो, गांव लो, हाथी-घोड़े लो। मगर मै कब मांगता हूं। फ़कीरो को दुनिया से क्या काम। इस वक़्त जाकर पीछा छूटा। तुम पानी तो लायी होगी?

हसीना—मै आपकी लौंड़ी हूं, यह क्या कम है कि आप मेरा इतना ख़याल रखते है। वह पानी रखा हुआ है। आप फूक डाल दे, तो मै चली जाऊ।

यह कहकर वह उठी; मगर बर्तन देखा, तो पानी नदारत। ऐ! यह पानी क्या हुआ! जमीन पी गयी, या आसमान! अभी पानी भर कर रखा था, देखते-देखते उड़ गया। ग़जब खुदा का, एक बूद तक नही; लबालब भरा हुआ था।

शाह जी—अच्छा, तो बता दू; मुझे जोग-बल से मालूम हो गया कि तुम आती हो। जब तुम सो रही, तो मैने आंख बंद की, और यहां पहुंच गया। पानी पिया, तो फिर आंख बंद की और फिर राजा साहब के पास हो रहा। फूक डालने की साइत उसी वक़्त थी। टल जाती, तो फिर एक महीने बाद आती। अब तुम यह इलायची लो और कल आधी रात को मरघट में गाड़ दो। तुम्हारी मुराद पूरी हो जायेगी।

युवती ने इलायची ले ली। मियां आजाद चुपके-चुपके सब सुन रहे थे। अब उन्हें खूब ही मालूम हो गया कि शाह जी रंगे सियार है। लोटे का पानी तो मैने पिया, और आपने यह गढ़ा कि आंख बंद करते ही यहां आये, और पानी पीकर फिर किसी तरकीब से चल दिये। खूब खिलखिलाकर हंस पड़े। वाह रे मक्कार! जालिये! इतना बड़ा झूठा न देखा, न सुना। ऐसे बड़े वली हो गये कि इनकी दुआ से एक रानी पांचवे ही महीने बच्चा जन पड़ी। झूठ भी तो कितना! हद तो यो है कि झूठो के सरदार है। पट्टे बढ़ा लिये, तहमद बांध कर शाह जी बन गये। लगे पुजने। कोई बेटा मांगता है, कोई तावीज मांगता है, कोई कहता है मेरा मुक़दमा जितवा दो तो नयाज चढ़ाऊ, कोई कहता है नौकरी दिलवा दीजिए तो मिठाई खिलाऊं। संयोग से कही उसकी मुराद पूरी हो गयी, तो शाह साहब की चादी है, वरना किसकी मजाल कि शिकायत का एक हर्फ़ मुंह से निकाले। डर है कि कही जबान न सड़ जाये। अल्लाह री धाक! बहुत अक्ल के दुश्मन इन बने हुए फ़क़ीरो के जाल मे फंस जाते है। आजाद ऐसे बने हुए सिद्ध और रंगे सियार फ़क़ीरों की कब्र तक से वाकिफ़ थे। सोचा, इनकी मरम्मत कर देनी चाहिए।

शाह साहब ने चबूतरे पर लुंगी बिछायी और उस पर लेट कर दुआ पढने लगे; मगर पढ़े-लिखे तो थे नही, शीन-काफ़ तक दुरुस्त नही; अनाप-शनाप बकने लगे। अब मियां आजाद से न रहा गया, बोल उठे—क्या कहना है शाह जी, वल्लाह आपने तो कमाल कर दिया। अब तो शाह जी चकराये कि यह आवाज किसने कही, यह दुश्मन कौन पैदा हुआ। इधर-उधर आंखें फाड़-फाड़कर देखा, मगर न आदमी, न आदमजाद, न इनसान, न इनसान का साया। या खुदा, यह कौन बोला? यह किसने टोका? समझे कि यह आसमानी ढेला है। किसी जिन्न की आवाज है। डरपोक तो थे ही, बदन थरथराने लगा, हांथ-पांव फूल गये, करामातें सब भूल गये, हवास ग़ायब, होश कलाबाजी खाने लगे। कुरान की आयतें गलत-सलत पढ़ने लगे। आखिर चिल्ला उठे—महजरूल अजायब। तो इधर यह बोल उठे—लुंगी मयशाह जी ग़ायब। अब शाह जी की घबराहट का हाल न पूछिए, चेहरा फ़क़, काटो तो लहू नही बदन में। मियां आजाद ने भांप लिया कि शाह साहब पर रोब छा गया, झट निकल कर पत्तों को खूब खड़खड़ाया। शाह जी कांप उठे कि

प्रेतों का लश्कर का लश्कर आ खड़ा हुआ। अब जान से गये। तब आज़ाद ने एक फारसी ग़ज़ल खूब लै के साथ पढ़ी, जैसे कोई ईरानी पढ़ रहा हो। शाह जी मस्त हो गये, समझे कि यह तो कोई फ़क़ीर हैं। अब तो जान में जान आयी। मियां आज़ाद के क़दम लिए। उन्होंने पीठ ठोंकी। शाह जी उस वक़्त नशे की तरंग में थे; ख़याल बंध गया कि कोई आसमान से उतरा है।

आज़ाद—कीस्ती वो अज कुजाई व बामनत चे कार अस्त।

(कौन है, कहां से आता है और मुझसे क्या काम है?)

शाह जी के रहे-सहे हवास और ग़ायब हो गये। ज़बान समझ में न आयी। समझे कि जरूर आसमान का फरिश्ता है। हमारी जान लेने को आया है। दबे दांतों बोले—समझता नहीं हूंगा कि आप क्या हुक्म देंगे। हमने बहुत गुनाह किए, अब माफ़ फ़रमाओ। कुछ दिन और जीने दो, तो यह ठगविद्या छोड़ दूं। मैं समझ गया कि आप मेरी जान लेने आये है।

आज़ाद—यह बुढ़ापा और इतनी बदकारी, यह सिन और साल और यह चाल-ढाल। याद रख कि जहन्नुम के गड्ढे मे गिरेगा और दोज़ख की आग में जलाया जाएगा। सुन, मैं न आसमान का फ़रिश्ता हूं, न कोई जिन्न हूं। मैं हकीम बलीनास की पाक रूह हू, हकीम हूं, खुदा से डरता हूं, मेरे कब्जे में बहुत से तिलस्म हैं, मेरा मजार इसी जगह पर था जहां तेरा चबूतरा है और जहां तू नापाक रहता है और शोरबा लुढ़काता है। खैर तेरी जहालत के सबब से मैंने तुझे छोड़ दिया; लेकिन अब तूने यह नया फरफंद सीखा कि हसीनों को फांसता है और उनसे कुछ ऐंठता है। उस जमाने में यह औरत मेरी बीवी थी। ले, अब यह हथकंडे छोड़, मक्र और दग़ा से मुंह मोड़, नहीं तो तू है और हम। अभी ठीक बनाऊंगा और नाच नचाऊंगा। तेरी भलाई इसी में है कि अपना कुल हाल कह चल, नहीं, तू जानेगा। मेरा कुछ न जाएगा।

शाह जी ने शराब की तरंग में मारे डर के अपनी बीती कहानी शुरू की—चौदह बरस के सिन से मुझे चोरी करने की लत पड़ी और इतना पक्का हो गया कि आंख चूकी और गठरी उड़ायी, ग़ाफ़िल हुआ और टोपी खिसकायी। पहले कुछ दिन तो लुटियाचोर रहे, मगर वह तो करती विद्या है, थोड़े ही दिनों में हम चोरों के गुरू-घंटाल हो गये। सेंद लगाना कोई हमसे सीखे, छत की कड़ियों में यों चिमट रहूं, जैसे कोई छिपकली, उचकफांद में बन्दर मेरे मुकाबले में मात है, दबे पांव कोसों निकल जाऊं, क्या मजाल किसी को आहट हो, शहर भर के बदमाश, लुक्के, लुच्चे, शोहदे हमारी टुकड़ी में शामिल हुए जिसने हेकड़ी की उसको नीचा दिखाया; जो टेढ़ा हुआ उसको सीधा बनाया। खूब चोरियां करने लगे। आज इसका माल मारा, कल उसकी छत काटी, परसों किसी नवाब के घर में सेंद की। यहां तक कि डाके मारने लगे, सड़कों पर लूटमार शुरू कर दी। गोल में दुनियाभार के बेफिक्रे जमा हैं, कोई चंडू उड़ाता है, कोई चरस के दम लगाता है। गांजे, भांग, ठर्रे, सबका शौक है। तानें उड़ रही हैं, बोतलें चुनी हुई हैं, गंडेरियों के ढेर लगे हुए है, मक्खियां भिन-भिन करती हैं, सबको यह फ़िक्र है कि किसी का माल तार्के। एक दिन शामत आयी, एक नवाब साहब के यहां चोरी करने का शौक़ चर्राया। उनके ख़िदमतगार को मिलाया, नौकरानियों को भी कुछ चटाया, और एक बजे के वक़्त घर से निकले उसी मुहल्ले में एक महीने पहले ही एक मकान किराये पर ले रखा था। पहले उसी मकान म पैठे। नवाब का मकान कोई पचास ही क़दम होगा। तीन आदमी दस कदम पर और पांच बीस क़दम पर खड़े हुए। हम, ख़िदमतगार और एक चोर साथ चले कि घर में धंस पड़े। क़रीब गये तो ड्योढ़ी पर चौकीदार ने पुकारा, कौन? सन से जान निकल गयी! उम्रभर में यही ख़ता हुई कि चौकीदार को पहले से न मिला लिया। अब क्या

करें। "पिछली बुद्धि गंवार की !" फिर चौकीदार ने ललकारा, कौन आता है। हमने कहा—हम हैं भाइ। चौकीदार बोला—हम की एक ही कही, हम का कुछ नाम भी है? आखिर, हमने चौकीदार को उसी दम कुछ चटा कर सेद दी। घर में घुसे, तो क्या देखते है कि एक पलंग पर नवाब साहब सोते हे, और दूसरे पलंग पर उनकी बेगम साहिबा मीठी नीद में मस्त है, मगर शमा रोशन है। अपने साथी से इशारा किया कि शमा को गुल कर दे। वह ऐसा घबराया कि बड़े जोर से फूंक मारी। मैने कहा, खुदा ही खैर करे, ऐसा न हो कि नवाब जाग उठें तो लेने के देने पड़े आगे बढ़कर मैने बत्ती को तेल मे खिसका दिया, चलिए, चिराग़ गुल, पगड़ी ग़ायब। बेगम साहिबा के सिरहाने ज़ेवर का संदूक रखा था, मगर आड़ में। हम तो महरी की ज़बानी कच्चा चिट्ठा सुन चुके थे, "घर का भेदी लंका ढाय", फौरन संदूक उठाया और दूसरे साथी को दिया बाहर पहुंचाये। वह कुछ ऐसा घबराया कि मारे बौखलाहट के कांपने लगा और धक से गिर पड़ा। धमाके की आवाज सुनते ही नवाब चौंक पड़े, शेर बच्चा सिरहाने से उठा, पैतरे बदल-बदल कर फिकैती के हाथ दिखाने लगे। मैंने एक चाकी का हाथ दिया, और झट कमरे से निकल, दीवाल पर चढ़, पिछवाड़े कूदा और 'चोर-चोर' चिल्लाता हुआ नाके बाहर। वे दोनों सिरबोझिये नौसिखिये थे, पकड़ लिये गये। मगर वाह रे नवाब ! बड़ा ही दिलेर आदमी है। दोनों को घेर लिया। वे तो जेलखाने गये, मैं बेदाग़ बच गया। अब मैने वह पेशा छोड़ा और खून पर कमर बांधी। एक महीने में कई खून किये। पहले एक सौदागर के घर मे घुस कर उसे चारपाई पर ढेर कर दिया; जमा-जथा हमारे बाप की हो गयी। फिर रेल पर एक मालदार जौहरी का गला घोट डाला और जवाहरात साफ़ उड़ा लिये। तीसरी दफ़ा दो बनजारे सराय में उतरे थे। हमें खबर मिली कि उनके पास सोने की ईंटें है। उनको सराय ही मे अंटा-ग़फ़ील करना चाहा। भठियारे ने देख लिया पकड़े गये और कैदखाने गये। वहां आठ दिन रहे थे, नवें दिन रात को मौका पाकर कालकोठरी का दरवाजा तोड़ा, एक बरकंदाज का सिर ईट से फोड़ा, पहरे के चौकीदार को उसी की बंदूक से शहीद किया और साफ़ निकल भागे। अब सोचा, कोई नया पेशा अख्तियार करें, सोचते-सोचते सूझी कि शाह जी बन जाओ। चट फ़क़ीरों का भेस बदल कर एक पेड़ के नीचे बिस्तर जमा दिया। पुजने लगे। एक दिन इस गांव के ठाकुर का लड़का बीमार हुआ। यहां हकीम, न डॉक्टर ! किसी ने कह दिया कि एक फ़क़ीर पकरिया के नीचे बैठे खुदा को याद किया करते हैं, चेहरे से नूर बरसता है, किसी से न लेते है न देते है। ठाकुर ने सुनते ही अपने भाई को भेजा। हम साथ गये। खुशी से फूले न समाते थे कि आज पाला हमारे हाथ रहा तो उम्र भर चैन से गुजरेगी। हमारा पहुंचना था कि सब उठ खड़े हुए। हम किसी से बोले न चाले, जाकर लड़के के पास बैठ गये और कुछ बुदबुदा कर उठ खड़े हुए। देखा, लड़के का बुरा हाल है, बचना मुहाल है। ठाकुर क़दमों पर गिर पडा। हमने पीठ ठोंकी और लंबे-लंबे डग बढ़ाते चल दिये। संयोग से एक यूरोपियन डॉक्टर दौरा करता हुआ उस गांव में आया और उसकी दवा से मरीज चंगा हो गया। अब मजा देखिए, डॉक्टर का कोई नाम भी नहीं लेता, सब हमारी तारीफ़ करते है। ठाकुर ने हमें एक हाथी और हजार रुपये दिये। यह हमने क़बूल न किया। सुभानअल्लाह ! फिर तो हवा बंध गयी। अब चारों तरफ़ हम ही हम है, कोई बीमार हो, तो हम पूछे जायें, कोई मरे तो हम बुलाये जायें। मियां-बीवी के झगडो मे हम क़ाजी बनते हैं, बाप-बेटे का झगड़ा हम फ़ैसला करते है। सुबह से शाम तक डालियों पर डोलियां आती रहती हैं।

आजाद ने यह क़िस्सा सुनकर शाह जी को खूब डांटा—तू काफ़िर हे, मलऊन है, तू अपनी मक्कारी से खुदा के बन्दों को ठगता है, अब हमारी बात सुन, हमारा चेला

वन जा, तो तुझे छोड़ दें। कल तड़के गजरदम गांव भर में कह दे कि हमारे पीर आये हुए हैं। दो सौ ग्यारह साल की उम्र बताना। जिसे जियारत करनी हो, आये शाह जी की वाछें खिल गयीं कि चलो, किसी तरह जान तो बची नूर के तड़के गांव भर में पुकार आये कि हमारे पीर आये हैं, जिसे देखना हो, देख ले। शाह जी की तो वहां धाक वंधी ही थी, जब लोगों ने सुना कि इनके भी वली-खंगड़ आये हैं, तो शौक़ चर्राया कि ज़ियारत को चले। दो दिन और दो रात मियां आज़ाद अपने घर पर आराम करते रहे। तीसरे दिन फ़क़ीराना वेष वदले हुए हरे-हरे पेड़ों के साये में आ बैठे। देखते क्या हैं, पौ फटते ही औरत-मर्द, ठट के ठट जमा हो गये। हिन्दू और मुसलमान, जवान औरतें, गहनों से लदी हुई आकर बैठी हुई हैं। तव आज़ाद ने खड़े होकर कुरान की आयतें पढ़ना शुरू की और वोले—ऐ ख़ुदा के बन्दों; मैं कोई वली नहीं हूं, तुम्हारी ही तरह ख़ुदा का एक नाचीज़ वन्दा हूं। अगर तुम समझते हो कि कोई इनसान चाहे कितना ही वड़ा फ़क़ीर क्यों न हो, ख़ुदा की मरज़ी में दखल दे सकता है, तो तुम्हारी ग़लती है। होता वही है, जो ख़ुदा को मंज़ूर होता है। हमारा फर्ज यही है कि तुम्हें ख़ुदा की याद दिलायें। अगर कोई फ़क़ीर, कोई करामात दिखा कर अपना सिक्का जमाना चाहता हो, तो समझ लो कि वह मक्कार है। जाओ, अपना-अपना धंधा देखो।

छः

मियां आज़ाद मुंह-अंधेरे तारों की छांह में विस्तर से उठे, तो सोचे; सांड़नी के घास-चारे की फ़िक्र करके ज़रा अदालत और कचहरी की भी दो घड़ी सैर कर आयें। पहुंचे तो क्या देखते हैं, एक घना वाग़ है, और पेड़ों की छांह में मेला-सा लगा है। कोई हलवाई से मीठी-मीठी वातें करता है। कोई मदारिये को ताजा कर रहा है। कुंजड़े फलों की डालियां लगाये वैठे हैं। पानवाले की दूकान पर वह भीड़ है कि खड़े होने की जगह नहीं मिलती। चूरनवाला चूरन वेच रहा है। एक तरफ़ एक हकीम साहव दवाओं की पुड़िया फैलाये जिरियान की दवा वेच रहे हैं। वीसों मुंशी-मुतसद्दी चटाइयों पर वैठे अर्ज़ियां लिख रहे हैं मुस्तग़ीस हैं कि एक-एक के पास दस-दस वैठे क़ानून छांट रहे हैं—अरे मुंशीजी, यो का अंट-संट चिघटियां सी खंचाय दिहो ? हम तो आपन मज़मून वतावत हैं, तुम अपने अढ़ाई चाउर अलग चुरावत हौ। ले मोर मुंसी जी, तनिक अस सोच-विचार के लिखो कि फ़रीक़ सानी क्यार मुक़द्दमा ढिसमिसाय जाय। ले तोहार गोड़ धरित है, दुइ कच्चा अउर लै लेव। आज़ाद ने जो गवाह घर की ओर रुख़ किया, तो सुभानअल्लाह ! काले-काले चोगों की वहार नज़र आयी। कोई इधर से उधर भागा जाता है, कोई मसनद लगाये वैठा गंवारों से डींग मार रहा है। ज़रा और आगे वढ़े थे कि चपरासी ने कड़ककर आवाज़ लगायी—सत्तारखां हाजिर हैं ? एक अफीमची के पांव लड़खड़ाये, सीढ़ियों से लुकढ़कते हुए धम से नीचे ! एक ठठोल ने कहा—वाह जनाव, गिरे तो मुझसे पूछ क्यों न लिया ? आज़ाद ज़रा और आगे वढ़े, तो एक आदमी ने डांट वतायी—कौन हो ? क्या काम है ?

आजाद—इसी शहर में रहता हूं। ज़रा सैर करने चला आया।

आदमी—कचहरी में खड़े रहने का हुक्म नहीं है, यहां से जाइये, वरना चपरासी को आवाज़ देता हूं।

आजाद—विगड़िये नहीं, वस इतना वता दीजिये कि आपका ओहदा क्या है ?

आदमी—हम उम्मीदवारी करते हैं। तीन महीने से रोज़ यहां काम सीखते हैं। अब फर्राटे उड़ाता हूं। डाकेट तड़ से लिख लूं, नक़शा चुटकियों में वनाऊं। किसी काम में

बन्द नहीं। पन्द्रह रुपये की नौकरी हमें मिला ही चाहती है। मगर पहले तो घास छीलना मुश्किल मालूम होता था, अब लुक़मान बन गया।

आज़ाद—क्यों मियां, तुम्हारे वालिद कहां नौकर हैं ?

उम्मीदवार—जनाब, वह नौकर नहीं हैं, दस गांव के ज़मींदार हैं।

आज़ाद—क्या तुमको घर से निकाल दिया, या कुछ खटपट है ?

उम्मीदवार—तो जनाब हम पढ़े-लिखे हैं कि नहीं !

आज़ाद—हज़रत, जिसे खाने को रोटियां न हों, वह सत्तू बांधकर नौकरी के पीछे पड़े, तो मुज़ायक़ा नहीं। तुम ख़ुदा के करम से ज़मींदार हो, रुपयेवाले हो, तुमको यह क्या सूझी कि दस-पांच की नौकरी के लिए एड़ियां रगड़ते हो ? इसी से तो हिन्दुस्तान खराब है; जिसे देखो, नौकरी पर आशिक़। मियां, कहा मानो, अपने घर जाओ, घर का काम देखो, इस फेर में न पड़ो। यह नहीं कि आमामा बांधा और कचहरी में जूतियां चटकाते फिरते हैं ! मुहर्रिर पर लोट, अमानत पर उधार खाये बैठे हैं।

दूसरे उम्मीदवार की निस्बत मालूम हुआ कि एक लखपती महाजन का लड़का है। बाप की कोठी चलती है। लाखों का वारा-न्यारा होता है। बेटा बारह रुपये की नौकरी के लिए सौ-सौ चक्कर लगाता है। चौथे दर्जे से मदरसा छोड़ा और अपरेंटिस हुए। काम खाक नहीं जानते। बाहर जाते हैं, तो मुंसरिम साहब से पूछकर। इस वक़्त जब दफ़्तर वाले अपने-अपने घर जाने लगे, तो हज़रत पूछते क्या हैं—क्यों जी, यह सब चले जाते हैं, अभी छुट्टी की घंटी तो बजी ही नहीं।

स्कूल की घंटी याद आ गयी !

मियां आज़ाद दिल ही दिल में सोचने लगे कि ये कमसिन लड़के, पंद्रह-सोलह बरस का सिन; पढ़ने-लिखने के दिन मदरसा छोड़ा, कॉलेज से मुंह मोड़ा और उम्मीदवारों के गोल में शामिल हो गये। 'अलिफबे नगाड़ा, इल्म को चने के खेत में पछाड़ा !' मेहनत से जान निकलती है, किताब को देखकर बुखार चढ़ आता है। जिससे पूछो कि भाई,मदरसा क्यों छोड़ बैठे, 'तो यही जवाब पाया कि उकलेदिस की अक़्ल से नफ़रत है। तवारीख़ किसे याद रहे, यहां तो घर के बच्चों का नाम नहीं याद आता। हम भी सोचें, कहां का झंझट ! अलग भी करो, चलता धंधा करो, जिसे देखिए, नौकरी के पीछे पड़ा हुआ है। ज़मींदार के लड़के को यह ख़्वाहिश होती है कि कचहरी में घुसूं, सौदागर के लड़के को जी से लगी है कि कॉलेज से चंपत हूं और कचहरी की कुर्सी पर जा डटूं। और मुहर्रिर, मुंशी, अमले तो नौकरी के हाथों बिक ही गये हैं। उनकी तो घूंटी ही में नौकरी है। बाबू बनने का शौक़ ऐसा चर्राता है कि अक़्ल को ताक़ पर रखकर गुलामी करने को तैयार हो जाते हैं।

यह सोचते हुए मियां आज़ाद और आगे चले, तो चौक में आ निकले। देखते क्या हैं, पंद्रह-बीस कमसिन लड़के बस्ते लटकाये, स्लेटें दबाये, पैर जमाये, लपके चले आते हैं। पंद्रह-पंद्रह बरस का सिन, उठती जवानी के दिन, मगर कमर बहत्तर जगह से झुकी हुई, गालों पर झुर्रियां, आंखें गड्ढे में धंसी हुई। यह झुका हुआ सीना, नयी जवानी में यह हाल ! बुढ़ापे मे तो शायद उठकर पानी भी न पिया जायेगा। एक लड़के से पूछा, क्यों मियां, तुम सब के सब इतने कमज़ोर क्यों दिखलायी देते हो ? लड़के ने जवाब दिया, जनाब, ताक़त किसके घर से लायें ? दवा तो है नही कि अत्तार की दूकान पर जायें, दुआ नहीं कि किसी शाह जी से सवाल करें, हम तो बिना मौत ही मरे। दस वर्ष के सिन में तो बीवी छम-छम करती हुई घर में आयी। चलिए, उसी दिन से पढ़ना-लिखना छप्पर पर रखा। नयी धुन सवार हुई। तेरहवें वर्ष एक बच्चे के अब्बाजान हो गये। रोटियों की फ़िक्र ने सताया। हम दुबले-पतले न हों, तो कौन हो ? फिर अच्छी गिज़ा भी मयस्सर नहीं; आज तक कभी दूध की सूरत न देखी, घी का सिर्फ़ नाम सुनते हैं।

मियां आज़ाद दिल में सोचने लगे, इन ग़रीबों की जवानी कैसी बर्बाद हो रही है ! इसी धुन में टहलते हुए हज़रतगंज की तरफ़ निकल गये, तो देखा, एक मैदान में दस-पंद्रह वर्ष के अंग्रेजों के लड़के और लड़कियां खेल रहे हैं। कोई पेड़ की टहनी पर झूलता है, कोई दीवार पर दौड़ता है। दो-चार गेंद खेलने पर लट्टू हैं। एक जगह देखा, दो लड़कों ने एक रस्सी पकड़ कर तानी और एक प्यारी लड़की बदन तौल कर ज़मीन से उस पार उचक गयी। सब के सब खुश और तंदुरुस्त हैं। आज़ाद ने उन होनहार लड़कों और लड़कियों को दिल से दुआ दी और हिन्दुस्तान की हालत पर अफ़सोस करते हुए घर आये।

सात

मियां आज़ाद सांड़नी पर बैठे हुए एक दिन सैर करने निकले, तो एक सराय में जा पहुंचे। देखा, एक बरामदे में चार-पांच आदमी फ़र्श पर बैठे धुआंधार हुक़्क़े उड़ा रहे हैं, गिलौरी चबा रहे हैं और ग़ज़लें पढ़ रहे हैं। एक कवि ने कहा, हम तीनों के तख़ल्लुस का क़ाफ़िया एक है—अल्लामी, फ़हामी और हामी; मगर तुम दो ही हो—वकाद और जवाद। एक शायर और आ जायें, तो दोनों तरफ़ से तीन-तीन हो जायें। इतने में मियां आज़ाद तड़ से पहुंच गये।

एक ने पूछा—आप कौन ?

आज़ाद—मैं शायर हूं।

आप तख़ल्लुस क्या करते हैं ?

आज़ाद ने कहा—आज़ाद। तब तो इन सबकी बांछें खिल गयीं। जवाद, वकाद और आज़ाद का तुक मिल गया। अब लोग ग़ज़लें पढ़ने लगे। एक आदमी शेर पढ़ता है, बाक़ी तारीफ़ करते हैं—सुभान-अल्लाह, क्या तबीयत पायी है, वाह-वाह ! फिर फ़र-माइएगा; क़लम तोड़ दिये, कितनी साफ़ ज़बान है ! इस बोल-चाल पर क़ुरबान। कोई झूमता है, कोई टोपियां उछालता है।

आज़ाद—मियां, सुनो हम शायरी के क़ायल नहीं। आप लोग तो ज़बान पर मरते हैं हम खयालों पर जान देते हैं। हमें तो नेचर की शायरी पसंद है।

फ़हामी—अख़्ख़ाह, आप नेचरिए हैं। अनीसिए और दबीरिए तो सुनते थे, अब नेचरिए पैदा हुए। ग़ज़ब ख़ुदा का ! आपको इन उस्तादों का कलाम पसंद नहीं आता, जो अपना सानी नहीं रखते थे ?

आज़ाद—मैं तो साफ़ कहता हूं, यह शायरी नहीं, ख़ब्त है, बेतुकापन है, इसका भी कुछ ठिकाना है, झूठ के छप्पर उड़ा दिये। अब कान खोलकर नेचरी शायरी सुनो।

यह कह कर आज़ाद ने अंग्रेज़ी की एक कविता सुनायी तो वह क़हक़हा पड़ा कि सराय भर गूंज उठी।

फ़हामी—वाह जनाब, वाह, अच्छी गिट-पिट है। इसी को आप शायरी कहते हैं ?

आज़ाद—"शेख़ क्या जाने साबुन का भाव !" "भैंस के आगे बीन बजाये, भैंस खड़ी पगुराय।"

आज़ाद तो नेचरल शायरी की तारीफ़ करने लगे, उधर वे पांचों उर्दू की शायरी पर लोट-पोट थे। आतश और मीर की ज़बान, नासिख, अनीस, जौक, ग़ालिब, मोमिन जैसे उस्तादों के क़लाम पढ़-पढ़कर सुनाते थे। अब बताइए, फ़ैसला कौन करे ? भठियारिन झगड़ा चुकाने से रही, भठियारा घास ही छीलना जाने, आख़िर यह राय तय पायी कि

शहर चलिए ! जो पढ़ा-लिखा आदमी पहले मिले, उसी का फ़ैसला सबको मजूर। सबने हाथ पर हाथ मारा। चलने ही को थे कि भठियारिन ने इनको ललकारा और चमक कर मियां जवाद का दामन पकड़ा—मियां, यह बुत्ते किसी और को बताना, हम भी इसी शहर में बढ़कर इतने बड़े हुए है। हूं तो अभी आपकी लड़की के बराबर, मूल सैकड़ों ही कुओं का पानी पी डाला। पहले कौड़ी-कौड़ी बायें हाथ से रख जाइए, फ़िर असबाब उठाइए।

अल्लामी—नेकवख्त, हम शरीफ़ भलेमानस है। शरीफ़ लोग कहीं दो पैसे के लिए ईमान बेचा करते है ? चलो, दामन छोड़ दो, अभी दम के दम में आये।

भठियारिन—इस दाम में बंदी न आयेगी। ऐसे बड़े साहूकार खरे असामी हो, तो एक गंडा चुपके से निकाल दो न ?

वकाद—यह मुड़चिरी है या भठियारिन ? साहब, इससे पीछा छुड़ाओ। ऐसी भठियारिन तो कहीं देखी न सुनी।

भठियारिन—मियां, कुछ बेधे तो नहीं हुए हो, या बिल्ली नांघ कर घर से चले थे ? चुपके से पैसे रखकर तब क़दम उठाइए।

मियां जवाद सीधे-सादे आदमी थे। जब उन्होंने देखा कि मुफ़्त में घेरे गये, तो कहा—भाई, तुम पांचों जाओ, हम यहां बी भठियारिन की ख़ातिर से बैठे हैं। तुम लोग निपट आओ। वे सब तो उधर चले और जवाद सराय ही में भठियारी की हिरासत में बैठे, मगर एक आने पैसे न दे सके। दो-चार मिनट के बाद पुकारा—भठियारी-भठियारी ! मैं लेटा हूं। कही ऐसा न हो कि तुम्हारे पेट में चूहे दौड़ें कि रफ़ू-चक्कर हुए। फिर तीन मिनट के बाद गला फाड़-फाड़ चिल्लाने लगे—भठियारिन, हम भागने वाले असामी नही हैं, तुम मजे से अपनी दाल बघारो। जब इन्होंने बार-बार छेड़ना शुरू किया, तो वह आग-भभूका हो गयी और बोली—मियां ऐसे दो पैसे से दरगुजरी. तुमने तो गुल मचा-मचा कर मेरा कलेजा पका दिया। आप जायें, बल्कि खटिया समेत दफ़न हों, तो मैं ख़ुश, मेरा अल्लाह ख़ुश। ऐ वाह, "देखी तेरी कालपी और बावन पुरे उजाड़।" मियां, हूं तो अभी जुमा-जुमा आठ दिन की, मुल नाक पर मक्खी बैठने नही देती !

इधर मियां जवाद भठियारिन से चुहल कर रहे थे, उधर वे पांचों आदमी सरा से चले, तो रास्ते में एक बुजुर्ग से मुलाक़ात हुई।

हामी ने कहा—या मौलाना, एक मसला हल कीजिए; तो एहसान होगा।

बुजुर्ग—मियां, मैं एक ज़ाहिल, बेवकूफ़, बेसमझ, गुमराह आदमी हूं, मौलाना नहीं; मौलाना होना दुश्वार बात है। मुझे मौलाना कहना इस लफ़्ज को बदनाम करना है

हामी—अच्छा साहब, आप मौलाना न सही, मुंशी सही, मियां सही, आप ए झगड़े का फ़ैसला कर दीजिए और घर का रास्ता लीजिए। आपका हमारे झगड़ों प और बुज़ुर्गों के बुज़ुर्गों पर एहसान होगा। झगड़ा यह है कि यह साहब (आजाद की तरफ़ इशारा करके) नेचरी शायरी के तरफ़दार है, और हम चारों उर्दू-शायरी पर जान देते हैं। अब बतलाइए, हममें से कौन ठीक कहता है और कौन ग़लत ?

बुजुर्ग—यह तो बहुत ग़ौर करने की बात नही। आप चारों मुफ़्त में झगड़ा करते हैं। आप सीधे अस्पताल जाइए और फ़स्द खुलवाइए, शायरी पर जान देना समझदारों का काम नही। जान ख़ुदा की दी हुई है, उसी की याद में लगानी चाहिए। बाक़ी रहीं दूसरे क़िस्म की शायरी, मैने उसका नाम भी नही सुना, उसके बारे मे क्या अर्ज करूं ?

पांचों आदमी यहां से निराश होकर आगे बढ़े, तो एक मक्तबख़ाना नजर से गुज़रा। टूटा-फूटा मकान, पुरानी-धुरानी दालान दीवारें, बाबा आदम के वक़्त की। एक मौलवी साहब लम्बी दाढ़ी लटकाये, हाथ में छड़ी लिये, हिल-हिल कर पढ़ा रहे हैं और बीस-पचीस लड़के जदल-क़ाफ़िया उड़ा रहे हैं। एक लड़के ने दूसरे की चांद पर तड़ से ध

जमायी। मौलवी साहव पूछते हैं—अबे, यह क्या हुआ ? लड़के कहते हैं—जी, कुछ नहीं तख्ती गिर पड़ी। अबे, यह तख्ती की आवाज़ थी ? जी हां, और नहीं तो क्या ? इतने में दो-चार शरीर लड़कों ने मुंह चिढ़ाना शुरू किया। देखिए मौलवी साहव, यह मुंह चिढ़ाता है। नहीं मौलवी साहव, यह झक मारता है, मैं तो वाहर गया था। गुल-गपाड़े की आवाज़ ऐसी वुलंद है कि आसमान की खवर लाती है, कान-पड़ी आवाज़ नहीं सुनाई देती। जिधर देखो, चिल्ल-पों, जूती-पैज़ार ! मगर सव के सव हिल-हिल कर वड़वड़ाते जाते हैं। किताव तो दो ही चार पढ़ रहे हैं; मगर वाही-तवाही, अनाप-शनाप वहुतों को ज़वान पर है।

एक—आज शाम को मैं वाने की कनकइया ज़रूर लड़ाऊंगा।

दूसरा—आग़ा तक़ी के वाग में कौवा हलाल है।

तीसरा—अरे साली, तुझे गुलवूटे की पहचान रहे।

चौथा—मौलवी साहव, गो पीर हुए, नादान रहे।

पांचवां—पढ़ोगे-लिखोगे, तो होगे खराव,
खेलोगे-कूदोगे, होगे नवाव।

मगर सवकी आवाज़ ऐसी मिल-जुल गयी है कि खाक समझ में नहीं आता, क्या खुराफ़ात वकते हैं। लौंडे तो जदल-क़ाफिया उड़ा रहे हैं, उधर मौलवी साहव मज़े से ऊंघते हैं। जव नींद खुली, तो एक लड़के को वुलाया—आओ, किताव लाओ, सवक पढ़ लो। वह सिर खुजलाता हुआ मौलवी साहव के क़रीव जा वैठा, और सवक़ शुरू हुआ, मगर न तो लड़के ने कुछ समझा कि मैंने क्या पढ़ा और न मौलवी साहव को मालूम हुआ कि मैंने क्या पढ़ाया। दोपहर के वक़्त लड़के तख्ती लेकर वैठे, कोई गेंदे की पत्ती तख्ती पर मलता है, कोई कौड़ी से तख्ती को चिकनाता है। आध घंटे तक यही हुआ किया। फिर लड़के लिखने वैठे। मौलवी साहव कोठरी से मक्खियों को निकाल और दरवाज़ा वंद करके सो रहे। यहां खूव लप्पा-डुग्गी हुई। दो घंटे के वाद मौलवी साहव चौंके। कोठरी खोलते हैं, तो यहां दो लड़कों में चट-पट हो रही है, दोनों गुंथे पड़े हैं। निकलते ही एक के तमाचे लगाने शुरू किये। जो अमीर का लड़का था और मौलवी साहव को त्योहारी और जुमेराती खूव दिया करता था, उससे तो न वोले, वेचारे ग़रीव पर खूव हाथ साफ़ किया। आज़ाद ने दिल में कहा—

गर हमीं मकतव अस्त वईं मुल्ला,
कारे तिफ़्लां तमाम ख्वाहद शुद।

(अगर यही मकतव है और यही मौलवी, तो लड़के पढ़ चुके।)

आठ

एक दिन मियां आज़ाद सराय में वैठे सोच रहे थे, किधर जाऊं कि एक वूढ़े मियां लठिया टेकते आ खड़े हुए और वोले—मियां, जरा यह खत तो पढ़ लीजिये, और इसका जवाव भी लिख दीजिए। आज़ाद ने खत लिया और पढ़कर सुनाने लगे—

मेरे खूसट शौहर, खुदा तुमसे समझे !

आज़ाद—वाह ! यह तो निराला खत है। न सलाम, न वंदगी। शुरू ही से कोसना शुरू किया।

वूढ़े—जनाव, आप खत पढ़ते हैं कि मेरे घर का क़ज़िया चुकाते हैं ! पराये झगड़े

से आपका वास्ता ? जब मियां-बीवी राज़ी हैं, तब आप कोई क़ाज़ी हैं !

आज़ाद—अच्छा, तो यह कहिये कि आपकी बीवी-जान का ख़त है। लीजिये, सुनाये देता हूं—

''मेरे खूसट शौहर, ख़ुदा तुमसे समझें ! सिकन्दर पाताल से प्यासा आया; मगर तुमने अमृत की दो-चार बूंदें जरूर पी ली है, जभी मरने का नाम नही लेते। कुछ ऊपर सौ बरस के तो हुए, अब आख़िर क्या आक़बत के बोरिये बटोरोगे ? जरा दिल मे शरमाओ, हजारो नौजवान उठते जाते हैं, और तुम टैयां से मौजूद हो। डंकूफीवर भी आया, मगर तुम मूंछों पर ताव ही देते रहे। हैजे ने लाखों आदमी चट किये, मगर आप तो हैज़े को भी चट कर जायें और डकार तक न लें। बुखार में हजारों हयादार चल बसे, मगर तुम और भी मोटे हो गये। तुम्हें लक़वा भी नही मारता, लू के झोंके भी तुम्हे नही झुलसाते, दरिया मे भी तुम नही फिसल जाते, और सौ बात की एक वात यह है कि अगर हयादार होते, तो एक चुल्लू काफी था; मगर तुम वह चिकने घड़े हो कि तुम पर चाहे हजारों ही घड़े पड़ें; लेकिन एक बूद न थम सके। वाह पट्ठे, क्यो न हो ! किस बुरी साइत में तुम्हारे पाले पड़ी। किस बुरी घड़ी मे तुम्हारे साथ ब्याह हुआ। मां-बाप को क्या कहूं, मगर मेरी गर्दन तो कुंद छुरी से रेत डाली। इससे तो किसी कुएं ही मे ढकेल देते, कसाई ही के हवाले कर देते, तो यह रोज-रोज का कुढना तो न होता। तुम खुद ही इंसाफ करो। तुम्हारे बुढभस से मुझ पर क्या गाज पड़ी। हाथ तो आपके कांपते है, पांव मे सकत नही, न मुंह में दांत न पेट मे आंत, कमर कमान की तरह झुकी हुई, आंखों की यह कैफ़ियत कि दिन को ऊट नही सूझता। लाठी टेककर दस क़दम चले भी तो सांस फूल गयी, दम टूट गया। सुस्ताने बैठे, तो उठने का नाम नही लेते। सुबह को नन्ही-नन्ही दो चपातियां खा ली, तो शाम तक खट्टी डकारें आ रही है, तोला भर सिकंजवीन का सत्यानाश किया; मगर हाजमा ठीक न हुआ ! हाफ़िजे का यह हाल कि अपने बाप का भी नाम याद नही। फिर सोचो तो कि ब्याह करने का शौक़ क्यों चर्राया। एक पाव तो क़ब्र मे लटकाया हे और ख़याल यह गुदगुदाया है कि दूल्हा बनें, दुलहिन लाये। ख़ुदा-क़सम जिस वक़्त तुम्हारा पोपला मुंह, सफ़ेद भौह, गालों की झुर्रियां, दोहरी कमर, गंजी चांद और मनहूस सूरत याद आती है, तो खाना हराम हो जाता है। वाह बड़े मियां, वाह ! ख़ुदा झूठ न बुलाये, तो हमारे अब्बाजान से पचास-साठ बरस बड़े होंगे, और अम्माजान को तुमने गोद में खिलाया हो तो ताज्जुब नही। ख़ुदा गवाह है, तुम मेरे दादा के बाप से भी बड़े हो, मगर वाह री क़िस्मत, कि आप मेरे शौहर हुए ! जमीन फट जाये, तो मैं धंस जाऊं।

—तुम्हारी जवान बीवी'

आजाद—जनाब, इसका जवाब किसी बड़े मुंशी से दिलवाइये।

बूढा—बुढापे मे अब कभी शादी न करेंगे।

आजाद—वाह, क्या अभी शादी करने की हवस बाक़ी है ? अभी पेट नही भरा !

बूढा—अब इसका ऐसा जवाब लिखिये कि दांत खट्टे हो जाये।

आजाद—आप औरत के मुह नाहक़ लगते है।

बूढा—जनाब, उसने तो मेरी नाक मे दम कर दिया, और सच पूछो, तो जिस दिन उसको ब्याह लाये, नाक ही कट गयी। ऐसी चंचल औरत देखी न सुनी। मजाल क्या कि नाक पर मक्खी बैठ जाये।

आख़िर आजाद ने पत्र का जवाब लिखा—

''मेरी अलबेली, छैल-छबीली, नादान बीवी को उसके बूढ़े शौहर की उठती जवानी देखनी नसीब हो। वह जुग-जुग जिये और तुम पूतो फलो, दूधो नहाओ, अठारह

लड़के हों और अठारह दूनी छत्तीस छोकरियां। जब मैं दालान में क़दम रखूं, तो सब बच्चे, 'अब्बा आये, अब्बा आये, खिलौने लाये, पटाखा लाये' कहकर दौड़ें। मगर डर यह है कि तुम भी अभी कमसिन हो, उनकी देखा-देखी कहीं मुझे अब्बा न कह उठना कि पास-पड़ोस की औरतें मुझे उंगलियों पर नचायें। मुझे तुमसे इतनी ही मुहब्बत है, जितनी किसी को अपनी बेटी से होती है। अपनी नानी को मैं ऐसा प्यारा न था, जितनी तुम मुझे प्यारी हो। और क्यों न हो, तुम्हारी परदादी को मैंने गोदियों में खिलाया है और मेरी बहन ने उसे दूध पिलाया है। मुझे तुम्हारी दादी का गुड़िया खेलना इस तरह याद है, जैसे किसी को सुबह का खाना याद हो। तुम्हारे ख़त ने मेरे दिल के साथ वह किया, जो बिजली खलियान के साथ करती है, लेकिन मुझमें एक बड़ी सिफ़त यह है कि परले सिरे का बेहया हूं। और क्यों न हो, शर्म औरतों को चाहिए, मैं तो चिकना घड़ा हूं। माना कि आंखों में नूर नहीं, मगर निगाह बड़ी बारीक रखता हूं, बहरा सही, लेकिन मतलब की बात खूब सुनता हूं, बुड्ढा हूं, कमज़ोर हूं, मगर तुम्हारी मुहब्बत का दम भरता हूं। तुम्हारा प्यारा-प्यारा मुखड़ा, रसीली अंखियां, गोरी-गोरी बहियां जिस वक़्त याद आती हैं, कलेजे पर सांप लोटने लगता है। तुम्हारा चांदनी रात में निखरकर निकलना, कभी मुसकराना, कभी खिलखिलाना—कितना शरमाना? कैसा लजाना! और तो और, तुम्हारी फुर्ती से दिल लोट-पोट है, कलेजे पर चोट है। तुम्हारा फिरकी की तरह चारों ओर घूमना, मोरों की तरह झूमना, कभी खेलते-खेलते मेरी चपतगाह पर टीप जमायी, कभी शोखी से वह डांट बतायी कि कलेजा कांप उठा, कभी आप-ही-आप रोना, कभी दिन-दिन-भर सोना, अल्हड़पन के दिन, बारह बरस का सिन, बीबीजान, तुम पर कुर्बान, ले कहा मानो, हमें ग़नीमत जानो। मैं सुबह का चिराग़ हूं, हवा चले या न चले, अब गुल हुआ, अब गुल हुआ। डूबता हुआ आफ़ताब हूं, अब डूबा, अब डूबा। मुझे सताना, मुए पर सौ दुर्रे! तुम खूब जानती हो कि मेरी बातें कितनी मीठी होती हैं। सत्तर बरस हो गये कि दांत चूहे ले गये, तब से हलुए पर बसर है, फिर जो रोज़ हलुआ खायेगा, उसकी बातें मीठी क्यों न होंगी। तुम लाख रूठो, फिर भी हमारी हो, बीबी हो, वह शुभ घड़ी याद करो; जब हम दूल्हा बने, पुराने सिर पर नयी पगड़ी जमाये, सेहरा लटकाये, मेंहदी लगाये, मुर्ग़ी के बराबर घोड़िया पर सवार, 'मीठी पोई' जाते थे, और तुम दुलहिन बनी, सोलह सिंगार किये पालकी में से झांक रही थीं। हमारे गालों की झुर्रियां, हमारा पोपला मुंह, हमारी टेढ़ी कमर देखकर खुश तो न हुई होगी? और क्या लिखूं, एक नसीहत याद रखो, एक तो मेले-ठेले न जाना, दूसरे आसपास की छोकरियों को गुइयां न बनाना। ख़ुदा करे, जब तक ज़मीन और आसमान क़ायम हैं, तुम जवान रहो, और नादान रहो; हमारे सफ़ेद बाल तुम्हें भायें, हासिद खार खायें।

—तुम्हारा बूढ़ा शौहर"

बूढ़ा—माशा-अल्लाह! आपने खूब लिखा, मगर इस ख़त को ले कौन जाये? अगर डाक से भेजता हूं, तो गुम होने का डर, उस पर तीन दिन की देर। अगर आप इतना एहसान करें कि इसे वहां पहुंचा भी दें, तो क्या पूछना।

आज़ाद सैलानी तो थे ही, समझे, क्या हर्ज़ है. सांड़नी मौजूद है, चलूं, इसी बहाने ज़रा दिल्लगी देख आऊं। कुछ बहुत दूर भी नहीं, सांड़नी पर मुश्किल से दो घण्टे की राह है। बोले—आप बुज़ुर्ग आदमी हैं, आपका हुक्म बजा लाना मेरा फर्ज़ है, लीजिए जाता हूं।

यह कहकर सांड़नी पर बैठे और छुन-छुन करते जा पहुंचे। दरवाज़े पर आवाज़ दी, तो एक कहारिन ने बाहर निकलकर पूछा—मियां कौन हो, कहां से आना हुआ, किसकी तलाश है?

आज़ाद—बी महरी साहबा, सलाम। हम मुसाफ़िर परदेशी हैं।

कहारिन—वाह! अच्छे आये मियां, यह क्या कुछ सराय है?

आज़ाद—ख़ुदा के लिए बेगम साहिबा से कह दो कि बड़े मियां ने एक ख़त भेजा है।

महरी ने एक चौकड़ी भरी, तो घर के अन्दर थी। जाकर बोली—बीवी, मियां के पास से एक साहब आये हैं, ख़त लाये हैं।

वह चौंक उठी—चल झूठी, किसी और को जाकर उड़ाना, यहां कच्ची गोलियां नहीं खेली हैं। मियां किसी क़ब्रिस्तान में मीठी नींद सो रहे होंगे कि ख़त भेजेंगे?

महरी—जरी, झरोखे से झांकिये तो; वह क्या सामने खड़े हैं।

बेगम साहब झरोखे की तरफ़ चलीं, तो अपनी बूढ़ी अम्मा को आईना सामने रखे, बाल संवारते देखा। छेड़कर बोलीं—ऐ अम्मा, आज तो बेतौर चोटी-कंघी की फ़िक्र है। कोई घूरे; तो इंसान निखार करे। कोई मरे, तो आदमी शिकार करे। तुम दो ऊपर अस्सी बरस की हुईं, मगर जवानी की हवस न गई। ख़ुदा ही ख़ैर करे।

अम्मा—मुझ नसीबों-जली की किस्मत में यही बदा था कि बेटी की ज़बान से ऐसी-ऐसी बातें सुनूं। कोई और कहती, तो उसकी ज़बान निकाल लेती; लेकिन तुम तो मेरी आंखों की पुतली हो। हाय! ममता बुरी चीज़ है! बेटा, तुम ये बातें क्या जानो, अभी जवान हो, नादान हो, बनावट-सजावट तो मेरी घुट्टी में पड़ी थी, और मैं न बनती-ठनती, तो तुम्हारी आंखों को तिरछी चितवन कौन सिखाता? बाहर जाओ, तुम्हारे मियां का आदमी आया है।

बीवी ने झरोखे से जो देखा, एक आदमी सचमुच खड़ा है, और है भी अलबेला, छैला, जवान, तो तुरन्त महरी को भेजा कि जाकर उन्हें बैठने के लिए कुर्सी निकाल दे। आज़ाद तो कुर्सी पर बैठे और चिक के उधर आप जा बैठीं। आज़ाद की उन पर निगाह पड़ी, तो तीर-सा लग गया। कमर ऐसी पतली कि साये के बोझ से बल खाये, मुखड़ा बिन घने चांद को लजाये, उस पर स्याह रेशमी लिबास और हिना की बू-बास। जीवन फटा पड़ता था, निगाह फिसली जाती थी।

महरी ने आज़ाद से पूछा—बड़े मियां तो आराम से हैं?

आज़ाद—हां, मैं उनका ख़त लाया हूं। अपनी बेगम साहिबा से मेरा सलाम कहो और यह ख़त उनको दो।

महरी—बेगम साहिबा कहती हैं, आप ख़त लाये हैं, तो पढ़कर सुना भी दीजिए।

आज़ाद ने ख़त पढ़कर सुनाया, तो उस नाज़नीन का चेहरा मारे ग़ुस्से के सुर्ख़ हो गया। बिना कुछ कहे-सुने समझकर वहां से उठी और अपनी मां के पास आकर खड़ी हो गयी। अम्माजान इस वक़्त चांदनी की बहार देखने में मसरूफ़ थीं। बोलीं—बेटी, देख तो क्या नूर की चांदनी छिटकी हुई है, चांद इस वक़्त दुलहिन बना हुआ है!

बेटी—अम्मीजान, तुम्हारी भी अनोखी बातें हैं। सर्दी की चांदनी, जैसे बूढ़े की नसीबों-जली बीवी की जवानी। आज तो आसमान यों ही झक-झक कर रहा है, आज निकला तो क्या, जब जानें कि अंधेरे-धुप में शक्ल दिखाये। बुढ़िया ताड़ गयी। बोली—बेटी, जरा सब्र करो, अपनी जवानी की कसम, बुड्ढा तो क़ब्र में पांव लटकाये बैठा है, आज मुआ, कल दूसरा दिन, फिर हम तुमको किसी अच्छे घर ब्याहेंगे। अबकी ख़ुदाई भर की ख़ाक छानकर वह ढूंढ़ निकालूं, जो लाखों में एक हो। सुबह-शाम ख़बर आना ही चाहती है कि बुड्ढा चल बसा।

यह सुनकर बेटी खिलखिलाकर हंस पड़ी। बोली—अम्मा, जब तुम अपनी जवानी की क़सम खाती हो, तो मुझे बेअख़्तियार हंसी आती है। तुम तो अपने को बिलकुल नन्हीं

ही समझती हो। करोड़ों तो आपके गालों पर झुर्रियां, बगुले के पर का-सा सफ़ेद जूड़ा, सिर घड़ी का खटका बना हुआ, कमर टेढ़ी, मगर मेहंदी का लगाना न छूटा, न छूटा। रंगीन दुपट्टा ही उम्र भर ओढ़ा, जब देखो, कंघी-चोटी से लैस। ख़ुदा-क़सम, ऐसी अनगढ़ बूढ़ी देखी न सुनी।

बुढ़िया ने टुइयां तोते की तरह पोपले मुंह से कहा—प्यारी, तुम्हारी बातों से मुझे हौल होता है, अल्लाह मेरी बच्ची पर रहम खाये, बूढ़े के मरने की खबर सुनाये।

महरी—बड़ी बेगम, आपके नमक की क़सम, साहबज़ादी को दिलोजान से आपका प्यार है; मगर भोली नादान हैं, जो अनाप-शनाप मुंह में आया, कह सुनाया। अल्हड़पन के तो इनके दिन ही हैं, जुमा-जुमा आठ दिन की पैदाइश, नेक-बद, ऊंच-नीच क्या जानें। जब सयानी होंगी, तो शहूर आप-ही-आप सीख जायेंगी। बुढ़िया ने एक ठण्डी सांस भर-के कहा—जो मुझे इनकी बातों से रंज हुआ हो, तो ख़ुदा मुझे जन्नत न दे। मगर करूं क्या, बुरा तो यह मालूम होता है कि मुझको यह आये-दिन ताने देती है कि तुम बुढ़िया हो, बुढ़ापे में निखरती क्यों हो? मैं किससे कहूं कि इसके ग़म ने मेरी कमर तोड़ डाली, इसको कुढ़ते देखकर घुली जाती हूं, नहीं, अभी मेरा सिन ही क्या है! अच्छा, तू ही ईमान से कह, कोई और भी मुझे बूढ़ी कहता है?

महरी दिल में तो हंसती थी कि इन्हें जवान बनने का शौक़ चर्राया है, हौवा के साथ खेली होंगी, मगर अभी नन्हीं ही बनी जाती हैं; लेकिन छटी हुई औरत थी, बात बनाकर बोली—ऐ तौबा, बुढ़ापे की आप में तो छांह भी नहीं, मेरा अल्लाह जानता है, जब आप और बिटिया को कोई साथ देख लेता है, तो पहले आप पर नज़र पड़ती है, पीछे इन पर। बल्कि, एक मुई दिलजली ने परसों चुटकी ली थी कि "छोटी बी तो छोटी बी; बड़ी बी सुभान-अल्लाह।" लड़की तो ख़ैर, इसकी मां ने तो ख़ूब काठी पायी है। आपका चेहरा कुंदन की तरह दमकता है, जो देखता है, तरसता है।

बुढ़िया तो खिल गयी लेकिन बेटी जल उठी। कड़ककर बोली—चल, चुप ख़ुशा-मदिन! अल्लाह करे, तेरा मियां भी मेरे मियां का-सा बुड्ढा हो जाये। और तुम ख़ुशा-मद न करो, तो खाओ क्या? अम्मा पर लोगों की नज़र पड़ती है! झूठे पर शैतान की फटकार! बूढ़ी औरत, कुछ ऊपर सौ बरस का सिन, लठिया टेककर दस क़दम चलती है, तो घंटों हांफा करती है। दिन को ऊंट और सारस नहीं सूझता, इनके बूढ़े नख़रे देख-कर हमको हंसी आती है। जी जलता है कि यह किस बिरते पर इतराती हैं, मुंह में दांत न पेट में आंतें, भला कमर तो मेरे सबब से झुक गयी, और दांत क्या हुए?

आखिर, महरी ने उसे समझा-बुझाकर बात टाल दी, और बोली—वह मियां बाहर बैठे हैं, उनके लिए आप क्या कहती हैं? उसने महरी की बात का कुछ जवाब न दिया। वहां से उठकर बगीचे में आयी और इठला-इठलाकर टहलने लगी। बाल बिखरे हुए, यही मालूम होता था कि सांप लहरा रहा है। कमर लाखों बल खा रही है। मियां आज़ाद ने चिक की दराजों से जो उसे बेनक़ाब देखा, तो सन से जान निकल गयी! कलेजे पर सांप लोटने लगा। संयोग से उस रमणी ने कहीं इनको देख लिया कि आंखें सेक रहे हैं और दूर ही से जोबन लूट रहे हैं, तो बदन को छिपाये, आंख चुराये, बिजली की तरह लौककर नज़र से ग़ायब हो गयीं। आज़ाद हैरान कि अब क्या करूं। आखिर, दिल की बेक़रारी ने ऐसा मजबूर किया कि आठ-आठ आंसू रोकर यह ग़ज़ल गाने लगे—

> क्या जानिए कि वस्ल में क्या बात हो गयी;
> आंखें नहीं मिलाते हैं शरमाये जाते हैं।
> दिल मेरा लेके क्या कहीं भूल आये हैं हुज़ूर?
> खोये हुए से आप जो कुछ पाये जाते हैं।

काले डसे जो जुल्फ़ तुम्हारी कभी छुये !
लो, अब तुम्हारे सिर की क़सम खाये जाते हैं ।

तमकनत को न काम फ़रमाओ;
एक नजर मुड़के देखती जाओ ।
आशिकों से न इस क़दर शरमा;
एक निगह के लिए न आंख चुरा ।
जाने-जां, कुछ तरस न खाओगी ?
यों तड़पता ही छोड़ जाओगी ?

वह इन-ऐसों की कब सुननेवाली थी, मुड़कर देखना गाली थी । आजाद ने जब देखा कि यहां दाल गलने की नहीं, कोई यों टहलते हुए देख ले, तो लेने के देने पड़ें, तो बेचारे रोते हुए घर आये ।

उधर उस नाजनी ने जवानी की उमंग में यह ठुमरी भैरवी की धुन मे लहरा-लहराकर गायी—

पिया के आवन की भयी बिरियां, दरवजवा ठाढ़ी रहूं;
मोरे पिया को बेगि ले आओ री, निकसत जियरा जाय;
पिया दरवजवा ठाढ़ी रहूं !

इसके जवाब में उनकी अम्मांजान टीपदार आवाज में क्या कहती है—

जोबनवां हो, चार दिना दीन्हों साथ ।
जोबन रितु जात सभी मुख मोरत, 'कदर' न पूछे बात रे ।
जोबनवां हो, चार दिना दीन्हों साथ ।

मियां आजाद ने चलते-चलते बाहर से यह तान लगायी—

तेरे नैनों ने मुझे मारा, रसीली मतवारियों ने जादू डारा ।

महरी ने देखा कि सबने अपने-अपने हाल के मुताबिक हांक लगायी । एक मै ही फिसड्डी रह गई, तो वह भी कफ़न फाड़कर चीख उठी—

जाओ-जाओ, काहे ठाढ़े डारे गल-बाही रे ?
घेरे रहत नित मेरे जैसे छाई रे ।

जानत हूं जो हमसे चहत हो
नाहक इतनी विनती करत हो,

'कदर' करत हो अरे नाही-नाहीं रे ।
जाओ चलो, काहे ठाढ़े डारे गल-बाही रे !

नौ

आजाद को नवाब साहब के दरबार से चले महीनों गुजर गये, यहां तक कि मुहर्रम आ गया । घर से निकले, तो देखते क्या है, घर-घर कुहराम मचा हुआ है, सारा शहर हुसैन का मातम मना रहा है । जिधर देखिए, तमाशाइयों की भीड़, मजलिसों की धूम, ताज़िया-

खानों में चहल-पहल और इमामवाड़ों में भीड़-भाड़ है। लखनऊ की मजलिसों का क्या कहना ! यहां के मर्सिये पढ़नेवाले रूम और शाम तक मशहूर हैं। हुसेनावाद का इमामवाड़ा चौदहवीं रात का चांद वना हुआ था। उनके साथ एक दोस्त भी हो लिये थे। उनकी वेक़रारी का हाल न पूछिये। वह लखनऊ से वाक़िफ़ न थे, लोटे जाते थे कि हमें लखनऊ का मुहर्रम दिखा दो; मगर कोई जगह छूटने न पाये। एक आदमी ने ठण्डी सांस खींचकर कहा—मियां, अव वह लखनऊ कहां ? वे लोग कहां ? वे दिन कहां ? लखनऊ का मुहर्रम रंगीले पिया जानआलम के वक्त में अलवत्ता देखने क़ाविल था। जव देखो, वांकों की तलवार म्यान से दो अंगुल वाहर। किसी ने ज़रा तीखी चितवन की, और उन्होंने खट से सिरोही का तुला हुआ हाथ छोड़ा, भंडारा खुल गया। एक-एक घण्टे में वीस-वीस वारदातों की खवर आती थी, दूकानदार जूतियां छोड़-छोड़कर सटक जाते थे। वह धक्कमधक्का, वह भीड़-भड़ाका होता था कि वाह जी वाह। इंतज़ाम करना खालाजी का घर न था। अव कोई चूं भी नहीं करता, तव छोटे-छोटे आदमी हज़ारों लुटाते थे, अव कोई पैसा भी ख़र्च नहीं करता। अव न अनीस हैं, न दवीर, न जमीर हैं न दिलगीर।[1]

अफ़सोस जहां से दोस्त क्या-क्या न गये;
इस वाग़ से क्या-क्या गुलेराना न गये।
था कौन-सा वाग़, जिसने देखी न खिज़ां,
वो कौन-से गुल खिले जो मुरझा न गये।

दवीर का क्या कहना था, एक वंद पढ़ा और सुननेवाले लोट गये। अनीस को दा वख़्शे, क्या कलाम था, गोया जवाहिरात के टुकड़े हैं। लेकिन हाथी लुटेगा भी, तो ..हां तक ! अव भी इस शहर की ऐसी ताज़ियादारी दुनिया भर में कहीं नहीं होती।

आज़ाद और उनके दोस्त चले जाते थे। राह में वह भीड़ थी कि कंधे से कंधा छिलता था। हवा भी मुश्किल से जगह पाती थी। ग़रीव-अमीर, वूढ़े-जवान उमड़े चले आते हैं। जिधर देखो, निराली ही सज-धज। कोई हुसेन के मातम में नंगे ही सिर चला जाता है, कोई हरा-हरा जोड़ा फड़काता है। हसीनों की मातमी पोशाक, विखरे हुए वाल, कभी लजाना, कभी मुस्कराना। शोहदों का सौ-सौ चकफेरियां लगाना, तमाशाइयों की वातें, दिहातिनें वेंदी लगाये, फरिया फड़काये, गोंद से पटिया जमाये वातें कर रही हैं। लीजिए, आग़ा वाक़र के इमामवाड़े में खट से दाखिल। वाह मियां वाक़र, क्यों न हो, नाम कर गये। चकाचौंध का आलम है। लेकिन गली तंग, तमाशाइयों की अक्ल दंग। मगर लोग घुस-पैठ कर देख ही आते हैं। नाक टूटे या सिर फूटे, आग़ा वाक़र का इमामवाड़ा ज़रूर देखेंगे।

दोनों आदमी वहां से आगे वढ़े, तो कच्चे पुल पहुंचे। देखते क्या हैं, एक वावा-आदम के ज़माने के वूढ़े अगले वक़्तों के लोगों को रो रहे हैं। वाह-वाह ! लखनऊ के कुम्हार, क्या क़माल हैं। वुड्ढा ऐसा वनाया कि मालूम होता है, पोपले मुंह से अव वोला, और अव वोला। वही सन के से वाल, वही सफेद भौंहें, वही चितवन, वही माथे की शिकन, वही हाथों की झुर्रियां, वही टेढ़ी कमर, वही झुका हुआ सीना। वाह रे कारीगर, तू भी अपने फ़न में यकता है। वहां से जो चले, तो दारोग़ा वाजिदअली के इमामवाड़े में आये। यहां सूरज-मुखी पर वह जोवन था कि आफ़ताव अगर एक नज़र छिप कर देख पाता, तो शर्म के मारे मुंह छिपा लेता। वेधड़क जाकर कुर्सियों पर वैठ

1. लखनऊ के मशहूर मर्सिया कहने वाले।

गये। इलायची, चिकनी डली पेश की गयी। वहां से हुसेनाबाद पहुंचे। सुभान-अल्लाह! यह इमामबाड़ा है या जन्नत का मकान! क्या सजावट थी; बुर्जों पर कंदीलें रोशन थी, मीनारों पर शमा जलती हुई चिराग़ों की कतार हवा के झोंकों से लहरा-लहरा कर अजब समां दिखाती थी। नजर जो देखी, तो आंखें ठंडी हो गयीं।

अब इनके दोस्त को शौक़ चर्राया कि तवायफ़ों के इमामबाड़ों की ज़ियारत करे। पहले मियां आज़ाद झिझके और बोले—बंदा ऐसी जगह नही जाने का, अपनी शान के खिलाफ़ है। दोस्त ने कहा—भाई, तुम बड़े रूखे-फीके आदमी हो। हैदर, मुश्तरी, गौहर और आबादी के मर्सिये न सुने, तो किसी से क्या कहेंगे कि लखनऊ का मुहर्रम देखा। आजकल वहां जाना हलाल है! इन दस दिनों में मजे से जहां चाहे जाइए, रंगीन कमरों में दो गाल हंस-बोल आइए, कोई कुछ नही कह सकता।

आज़ाद—यह कहिए तो खैर, वंदा भी लहू लगा कर शहीदों में दाखिल हो जाय। पहले ग़ौहर के यहां पहुंचे। अच्छे-अच्छे रईस-ज़ादे बैठे हुए है। एक बड़े मालदार जौहरी साहब मटकते हुए आये। दस रुपये की कारचोबी टोपी सिर पर, प्याजी अतलस की भड़कीली अचकन पहने हुए। खिदमतगार के कंधे पर क़ीमती दुशाला। यह ठाट-बाट, मगर बैठते ही टोके गये। वैठे तो जरीह (ताजिया) की तरफ़ पीठ करके! ग़ौहर ने एक अजीव अदा से झिड़क दिया—ऐ वाह, बड़े तमीज़दार हो। जरीह की तरफ़ पीठ कर ली। सीधे वैठो, आदमियत के साथ!

मियां आज़ाद ने चुपके से दोस्त के कान में कहा—मियां, इस टीम-टाम से तो आये, मगर घुड़की खाकर मिनके तक नही।

दोस्त—भाईजान, ग़ौहर लखनऊ की जान है, लखनऊ की शान है। ऐसा खुश-नसीब कोई हो तो ले कि इसकी घुड़कियां सहे।

लोग अदब से गरदन झुकाये बैठे कनखियों से आंखों को सेक रहे थे, लेकिन किसी के मुंह से बात न निकलती थी। यहां से उठे, तो फिरंगी-महल में हैदरजान के यहां पहुंचे। वहां मर्सिया हो रहा था—

निकले खेमे से जो हथियार लगाये अब्बास,
चढ़ के रहबार पर मैदान में आये अब्बास।

इस शेर को ऐसी प्यारी आवाज़ से अदा किया कि सुननेवाले लोटन कबूतर हुए जाते थे। राग और रागिनी तो उसकी लौडियां थी। सबके सब सिर धुनते थे, क्या प्यारा गला पाया है! मियां आज़ाद की वांछें खिली जाती थीं और गरदन तो घड़ी का खटका हो गयी थी।

यहां से उठे, तो मुश्तरी के कमरे में पहुंचे। देखनेवालों का वह हुजूम था कि तिल रखने की जगह नही।

"खजर जो बोसा गाहे पयंबर पै चल गया" इसको झंझौटी की धुन में इस लुत्फ़ से पढ़ा कि लोग फड़क उठे।

दोस्त—क्यों यार, क्या लखनऊ में ज़ेवर पहनने की क़सम है?

आजाद—भाई, तुम बिलकुल ही गंवार हो। मातम में जेवर का क्या ज़िक्र है? गोरे-गोरे कानों में काले-काले करनफूल, हाथों में सियाह चूड़ियां, बस यही काफ़ी हैं। लेकिन यह सादगी भी अजीव लुत्फ़ दिखाती है।

यहां से उठकर दोनों आदमी मातम की मजलिसों मे पहुंचे। जिधर जाते हैं, रोने-पीटने की आवाज आती है; जिसे देखिए, आंखों से आंसू बहा रहा है। सारी रात मजलिसों में घूमते रहे, सुबह अपने घर पहुंचे।

वसंत के दिन आये। आज़ाद को कोई फ़िक्र तो थी ही नहीं, सोचे, आज वसंत की वहार देखनी चाहिए। घर से निकल खड़े हुए, तो देखा कि हर चीज़ ज़र्द है, पेड़-पत्ते ज़र्द, दरोदीवार ज़र्द, रंगीन क़मरे ज़र्द, लिवास ज़र्द, कपड़े ज़र्द। शाहमीना की दरगाह में धूम है, तमाशाइयों का हुजूम है। हसीनों के झमकड़े, रंगीले जवानों की रेल-पेल, इंद्र के अखाड़े की परियों का दंगल है, जंगल में मंगल है। वसंत की वहार उमंग पर है, ज़ाफ़रानी दुपट्टों और केसरिये पाजामों पर अजव जोवन है। वहां से चौक पहुंचे। जौहरियों की दूकान पर ऐसे सुंदर पुखराज हैं कि पुखराज-परी देखती, तो मारे शर्म के हीरा खाती और इंद्र का अखाड़ा भूल जाती। मेवा वेचनेवाली ज़र्द आलू, नारंगी, अमरूद, चकोतरा, महतावी की वहार दिखलाती है, चंपई दुपट्टे पर इतराती है। मालिन गेंदा, हज़ारा, ज़र्द गुलाव की वू-वास से दिल ख़ुश करती है। और पुकार-पुकार कर लुभाती है, गेंदे का हार है, गले की वहार है। हलवाई खोपड़े की ज़र्द वर्फ़ी, पिस्ते की वर्फ़ी, नानख़ताई, वेसन के लड्डू, चने के लड्डू दुकान पर सजाये वैठा है। खोंचेवाले पापड़, दालमोठ, सेव वग़ैरह वेचते फिरते हैं। आज़ाद यही वहार देखते, दिल वहलाते चले जाते थे। देखते क्या हैं, लाला वसंतराय के मकान में कई रंगीले जवान वांकी टोपियां जमाये, वसंती पगिया वांधे, केसरिये कपड़े पहने वैठे हैं। उनके सामने चंद्रमुखी औरतें वैठी नौवहार की धुन में वसंत गा रही हैं। क़ालीन ज़र्द है, छतपोश ज़र्द, कंवल ज़र्द, ज़र्द झालर से मकान सजाया है, वसंत-पंचमी ने दरोदीवार तक को वसंती लिवास पहनाया है। कोई यह गीत गाती है—

ऋतु आयी वसंत अजव वहार;
खिले ज़र्द फूल विरवों की डार।
चटक्यो कुसुम, फूलै लागी सरसों;
झूमत चलत गेहूं की वार।
हर के द्वारे माली का छोहरा;
गरवा डारत गेंदों के हार।
टेसू फूले, अंवा वौरे;
चंपा के रूख कलियन की वहार।
गरवा डारे उस्ताद के द्वारे;
चलो सव सखियां कर-कर सिंगार।

ोई मियां अमानत की यह ग़ज़ल गाती है—

है जलवए तन से दरोदीवार वसंती;
पोशाक जो पहने है मेरा यार वसंती।
क्या फ़स्ले वहारी में शिगूफे हैं खिलाये;
माशूक़ हैं फिरते सरे-वाज़ार वसंती।
गेंदा है खिला वाग़ में, मैदान में सरसों;
सहरा वह वसंती है, यह गुलज़ार वसंती।
मुंह ज़र्द दुपट्टे के न आंचल से छिपाओ;
हो जाय न रंगे गुले-रुख़सार वसंती।

आज़ाद चले जाते थे कि एक नयी सज-धज के बुज़ुर्ग से मुठभेड़ हुई। वड़े तजुर्बे-

कार, खर्राट आदमी थे। आजाद को देखते ही बोले—आइए-आइए खूब मिले। वल्लाह, शरीफ़ की सूरत पर आशिक़ हूं। चीन, माचीन, हिंद और सिंध रूम और शाम, अलगरज, सारी ख़ुदाई की बंदे ने खाक छानी है, और तू यार जानी है। सफ़र का हाल सुन, घुंघरू बोले छुन-छुन। ऐसी बात सुनाऊं, परी को लुभाऊं, जिनको रिझाऊं, मिसर की दास्तान सुनाऊं।

यह तकरीर सुनकर आजाद के होश पैंतरे हो गये, समझ मे न आया, कोई पागल है, या पहुंचा हुआ फ़कीर। मगर आसार तो दीवानेपन के ही हे।

खुर्राट ने फिर बड़बडाना शुरू किया—सुनो यार, कहता है ख़ाकसार, हम सो रहे तुम जागो, फिर हम उठ बैठे, तुम सो रहो, सफ़र यार का है, सोते-जागते राह काटे सफर का अधा कुआं उन्ही ईटो से पाटे।

यह कह कर खुर्राट ने एक खोचेवाले को बुलाया और पूछा—खुटियां कितने सेर? बर्फ़ी का क्या भाव? लड्डू पैसे के कै? बोलो झटपट, नही हम जाते है। खोचेवाले ने समझा, कोई दीवाना है। बोला—पैसे भी हे या भाव ही से पेट भरोगे?

खुर्राट—पैसे नही है, तो क्या मुफ़्त मांगते है? तौल दे सेर भर मिठाई।

मिठाई लेकर आजाद को जिद करके खिलाई, ठंडा पानी पिलवाया और बोले—शाम हुई, अब सो रहो, हम असबाब ताकते है। मिया आजाद एक दरख्त के नीचे लेटे खुर्राट ने ऐसी मीठी-मीठी बाते की कि उन्हे उस पर यक़ीन आ गया। दिन भर के थके थे ही, लेटते ही नीद आ गयी। सोये तो घोड़े बेच कर, सिर-पैर की खबर नही, गोया मुर्दो से शर्त लगायी है। वह एक काइयां, दुनिया-भर का न्यारिया, उनको ग़ाफ़िल पाया, तो घड़ी, सोने की चेन, चांदी की मूठवाली छड़ी, चांदी का गिलौरीदान लेकर चलता हुआ। आध घटे मे आजाद की नीद खुली, तो देखा कि खुर्राट गायब है, घड़ी और चेन, डब्बा और छडी भी गायब। चिल्लाने लगे—लूट लिया, जालिम ने लूट लिया झांसा दे गया। ऐसा चकमा कभी न खाया। दौड़कर थाने मे इत्तला की। मगर खुर्राट कहा, वह तो यहां से दस कोस पर था। बेचारे रो-पीट कर बैठ रहे। थोडी ही दूर गये होगे कि एक चौराहे पर एक जवान को मुश्की घोड़े पर सवार आते देखा। घोडा ऐसा सरपट जा रहा था कि हवा उसकी गर्द तक को न पहुंचती थी। अंधेरा हो ही गया था एक कोने मे दबक रहे कि ऐसा न हो, कही झपेट में आ जाये। इतने मे सवार उनके पास आ खड़ा हुआ। झट घोडे की बाग रोकी और इनकी तरफ़ नजर भर कर देखने लगा यह चकराये, माजरा क्या है? यह तो बेतरह घूर रहा है, कही हंटर तो न देगा।

जवान—क्यों हजरत, आप किसी को पहचानते भी है? ख़ुदा की शान, आप और हमको भूल जाये!

आजाद—मियां, तुमको धोखा हुआ होगा। मैने तो कभी तुम्हारी सूरत भी नही देखी।

जवान—लेकिन मैने तो आपकी सूरत देखी है; और आपको पहचानता हूं। क्या इतनी जल्दी भूल गये? यह कहकर वह जवान घोड़े से उतर पड़ा और आजाद से चिमट गया।

आजाद—आपको सचमुच धोखा हुआ।

जवान—भाई, बड़े भुलक्कड हो! याद करो, कॉलेज मे हम-तुम, दोनो एक ही दर्जे में पढते थे। वह किश्ती पर हवा खाने जाना और दरिया के मजे उडाना; वह मदारी खोचेवाला, वह उकलैदिस के वक्त उड़ भागना, सब भूल गये? अब मिया आजाद को याद आयी। दोस्त के गले से लिपट गये और मारे ख़ुशी के रो दिये।

जवान—तुम्हें याद होगा, जब मै इंटरमीडिएट का इम्तिहान देने को था,

मेरे पास फीस का भी ठिकाना न था। रुपये की तलाश में इधर-उधर भटकता फिरता था कि राह में अस्पताल के पास तालाव पर तुमसे मुलाक़ात हुई और तुमने मेरे हाल पर रहम करके मुझे रुपये दिये। तुम्हारी मदद से मैंने वी० ए० तक पढ़ा। लेकिन इस वक़्त तुम वड़े उदास नज़र आते हो, इसका क्या सवव है?

आज़ाद—यार, कुछ न पूछो। एक खुर्राट के चकमे में आ गया। यहीं घास पर लेट रहा, और वह मेरी घड़ी-चेन वग़ैरह लेकर चलता हुआ।

जवान—भई वाह! इतने घाघ वनते हो, और एक खुर्राट के भर्रे में आ गये! आपके वटन तक उतार ले गया और आपको ख़वर नहीं। ले अव कान पकड़िए कि अव फिर किसी मुसाफ़िर की दोस्ती का एतवार न करेंगे। मिठाई तो आप खा ही चुके हैं, चलिए, कहीं वैठकर वसंती गाना सुनें।

ग्यारह

एक दिन आज़ाद शहर की सैर करते हुए एक मकतवखा़ने में जा पहुंचे। देखा, एक मौलवी साहव खटिया पर उकड़ू वैठे हुए लड़कों को पढ़ा रहे हैं। आपकी रंगी हुई दाढ़ी पेट पर लहरा रही है। गोल-गोल आंखें, खोपड़ी घुटी-घुटाई, उस पर चौगोशिया टोपी जमी-जमायी। हाथ में तसवीह लिये खटखटा रहे हैं। लौंडे इर्द-गिर्द गुल मचा रहे हैं। हू-हक़ मची हुई है, गोया कोई मंडी लगी हुई है। तहजीव कोसों दूर, अदव काफूर, मगर मौलवी साहव से इस तरह से डरते हैं, जैसे चूहा विल्ली से, या अफीमची नाव से। जरी चितवन तीखी हुई, और खलवली मच गई। सव किताबें खोले झूम-झूम कर मौलवी साहव को फुसला रहे हैं। एक शेर जो रटना शुरू किया, तो वला की तरह उसको चिमट गये। मतलव तो यह कि मौलवी साहव मुंह का खुलना और ज़वान का हिलना और उनका झूमना देखें, कोई पढ़े या न पढ़े, इससे मतलव नहीं। मौलवी साहव भी वाजवी ही वाजवी पढ़े-लिखे थे, कुछ शुद-वुद जानते थे। पढ़ाने के फ़न से कोरे। एक शागिर्द से चिलम भरवायी, दूसरे से हुक्का ताजा कराया; दम-झांसे में काम लिया, हुक्का गुड़-गुड़ाया और धुआं उड़ाया। शामत यह थी कि आप अफ़ीम के भी आदी थे। चीनी की प्याली आयी, अफीम घोली और उड़ायी। एक महाजन के लड़के ने वर्फ़ी मंगवायी; आपने खूव डट कर चखी, तो पीनक ने आ दवोचा। ऊंघे, हुक्का टेढ़ा हो गया। गरदन अव ज़मीन पर आयी, और अव जमीन पर आयी। हुक़्क़ा गिरा और चकनाचूर हो गया। दो-एक लड़कों की किताबों पर चिनगारियां गिरीं। अव पीनक से चौंके, तो ऐसे झल्लाये कि किसी लड़के के चपत लगायी, किसी की खोपड़ी पर धप जमायी, एक के कान गरमाये। पीनक में आकर ख़ुद तो हुक्का गिराया और शागिर्दों को वेक़सूर पीटना शुरू किया। खैर, इतने में एक लड़का किताव ले कर पढ़ने आया। उसने पढ़ा—

दिलम कुसूद कुसादम चु नामा अत गोई,
कलीदे वाग़े गुलिस्तान दिल कुसाई वूद।

(जव मैंने तेरा ख़त खोला, तो मेरा दिल खुल गया; गोया वह पत्र ख़ुशी के वाग़ के दरवाज़े की कुंजी था।)

अव मौलवी साहव का तरजुमा सुनिए—

दिल तेरा खुला, खोला मैंने जो ख़त तेरा,
कहे तू कुंजी दरवाज़े वाग़दिल खोलने की थी।

माशा-अल्लाह, क्या तरजुमा था! न मौलवी साहव ने ख़ुद समझा, न लड़के ने। और दिल्लग़ी सुनिए कि मौलवी साहव भी शागिर्द के साथ पढ़ते जाते हैं और दोनों

हिलते जाते है। जब यह पढ़ चुके, तो दूसरे साहब किताब बगल में दबाये आ बैठे।

मौलवी साहब—अरे गावदी, नयी किताबें शुरू की, और चिराग़ी नदारद, शुकराना छप्पर पर! जा, दौड़ कर दो आने घर से ले आ।

लड़का—मौलवी साहब, कल लेता आऊंगा। आप तो हत्थे ही पर टोक देते हैं। आपको अपनी मिठाई ही से मतलब है कि मुफ्त के झगड़े से?

मौलवी—ये झांसे किसी और को देना! अच्छा, अपने बाप की क़सम खा कि कल जरूर लाऊंगा।

लड़का—मौलवी साहब के बड़े सिर की क़सम, चढ़ते चांद तक जरूर लाऊंगा।

इस पर सब लड़के हंस पड़े कि कितना ढीठ लड़का है! क़सम भी खायी तो मौलवी साहब के सिर की, और सिर भी छोटा नही, बड़ा।

मौलवी—चुप गधे, मेरा सिर क्या कद्दू है? अच्छा, पढ़।

लड़का तो ऊटपटांग पढ़ने लगा, मगर मौलाना साहब चूं भी नहीं करते। उन्हे मिठाई की फ़िक्र सवार है। सोच रहे है, जो कल दो आने न लाया, तो खूब कोड़े फटकारूंगा, तस्मा तक तो बाक़ी रखूंगा नही।

दस-पांच लड़के एक-दूसरे को गुदगुदा रहे है और मौलवी साहब को दिखाने के लिए जोर-जोर से चिल्लाकर कोई शेर पढ़ रहे है।

आजाद को मकतब की यह हालत और लौंडों की यह चिल्ल-पों देख सुनकर ऐसा ग़ुस्सा आया कि अगर पाते, तो मौलवी साहब को कच्चा ही खा जाते। दिल मे सोचे, यह मकतबखाना है या पागलखाना? जिधर देखिए, गुल-गपाड़ा, धौल-धप्पा हो रहा है। मालूम होता है, भरी बरसात में मेढक गांव-गांव या पिछले पहर कौवे कांव-कांव कर रहे है। घर पर आते ही मकतबों की हालत पर यह कैफ़ियत लिख डाली—

(1) नूर के लड़के से छुटपुटे तक लड़कों को मकतबखाने में कैद रखना बेहूदगी है। लड़के दस बजे आयें, चार बजे छुट्टी पायें, यह नही कि दिन भर दांता-किल-किल, पढ़ना भी अजीरन हो जाए, और यही जी चाहे कि पढने-लिखने की दुम मे मोटा-सा रस्सा बांधें, मौलवी साहब को हवा बतायें और दिल खोलकर गुलछर्रे उड़ाये।

(2) यह क्या हिमाक़त है कि जितने लड़के है, सबका सबक अलग दो-दो, चार-चार, दस-दस का एक-एक दर्जन बना लीजिए, मेहनत की मेहनत बचेगी और काम ज्यादा होगा।

(3) जिधर देखता हूं, अदब (साहित्य) की तालीम हो रही है। तालीम मे सिर्फ़ अदब ही शामिल नही, हिसाब है, तवारीख है, जुगराफिया है, उकलैदिस है; मगर पढ़ाये कौन? मौलवी साहब को तो सौ तक गिनती नही आती।

(4) सब लड़कों का गुल मचा-मचा कर आवाज लगाना महज फ़जूल है। कोई खोंचेवाला, गंडेरीवाला, चने-परमलवाला इस तरह चिल्लाये, तो मुजायक़ा नही; मटर-सटर, गोल-गप्पे, मसालेदार बैंगन, मूली, तुरई, लो तरकारी—यह तो फेरी देनेवालों की सदा है, मकतब को मंडी बनाना हिमाक़त है।

(5) तरजुमे पर खुदा की मार और शैतान की फटकार। 'जाता हूं बीच एक बाग़ के, वास्ते लाने अच्छी चीजों के, मैने देखा मैने, तू जाता है तू।' वाह, क्या तू-तू मैं-मैं है! तरजुमा सही होना चाहिए, यह तो न कोई आवाज़ कसे कि लड़के बंगला बोल रहे है।

(6) पढ़ते वक़्त लड़कों को हिलना ऐब है। मगर कहें किससे? मौलवी साहब तो खुद झूमते है।

(7) मतलब जरूर समझाना चाहिए; लड़का मतलब ही न समझेगा, तो उसे

फ़ायदा क्या खाक होगा ?

(8) सवक़ को वरज़वान रटना बुरी वात है। किताव वन्द की और फर-फर दस सफ़े सुना दिये। हाफ़िज़ा कुछ मज़वूत हुआ सही, मगर सितम यह है कि फिर तोते की तरह वात के सिवा कुछ याद नहीं रहता।

(9) छोटे-छोटे लड़कों को वड़ी-वड़ी कितावें पढ़ाना उनकी ज़िन्दगी खराव करना है। ज़रा से टट्टू पर जव दो हाथियों का वोझ लादोगे, तो टट्टू वेचारा आंखें मांगने लगेगा, या नहीं ? ज़रा-सा वच्चा और पढ़े 'मीना वाज़ार' !

(10) लड़के को शुरू ही से फ़ारसी पढ़ाना उसका गला घोटना है। पहले उर्दू पढ़ाइए इसके वाद फ़ारसी। शुरू ही से करीमा-मामकीमां पढ़ाना उसकी मिट्टी खराव करना है।

(11) मौलवी साहव लड़कों से चिलम भरवाना, हुक़्क़ा ताज़ा करवाना छोड़ दें। इसकी जगह इनको वातचीत करने और मिलने-जुलने का आदाव सिखायें।

(12) अफीमची मौलवी छप्पर पर रखे जायं। मौलवी ने अफीम खायी और लड़कों को शामत आयी। वह पीनक में झूमा करेंगे।

यह इश्तिहार मोटे क़लम से लिख कर मियां आज़ाद रातोरात मकतव के दरवाज़े पर चिपका आये। झट से निकल करके शहर में भी दो-चार जगह चिपका दिया। दूसरे दिन इश्तिहार के पास लोग ठट के ठट जमा हुए। किसी ने कहा, सम्मन चिपकाया गया है; कोई वोला, ठेठर का इश्तिहार है। वारे एक पढ़े-लिखें साहव ने कहा—यह कुछ नहीं है, मौलवी साहव के किसी दुश्मन का काम है। अव जिसे देखिए, क़हक़हा उड़ाता है। भाई वल्लाह, किसी वड़े ही फिक़रेवाज़ का काम है। मौलवी वेचारे को ले ही डाला, पटरा कर दिया। मकतवखाने में लड़कों के चेहरे गुलनार हो गये : धत् तेरे की ! वचा रोज़ कमचियां जमाते थे, चपतें लगाते थे, अफीम घोली और सिर पर शेख-सद्दो सवार। अव आटे-दाल का भाव मालूम होगा। मौलवी साहव तशरीफ़ का वक्चा लाये, तो लड़के उनका कहना ही नहीं मानते। मौलवी साहव कहते हैं, किताव खोलो। शागिर्द जवाव देते हैं, वस मुंह वंद करो। फ़र्माया कि अव वोला, तो हम विगड़ जायेंगे। शागिर्दों ने कहा: हम खूव वनायेंगे। तव तो झल्लाये और डपट कर कहा, मैं वड़ा गर्म मिज़ाज हूं। एक गुस्ताख़ ने मुस्करा कर कहा, फिर हम ठंडा वनायेंगे। दूसरा वोला, किसी ठंडे मुल्क में जाइए। तीसरा वोला, दिमाग़ में गर्मी चढ़ गयी है। मौलवी साहव घवराये कि माजरा क्या है। वाहर की तरफ़ नज़र डाली, तो देखा, गोल के गोल तमाशाई खड़े क़हक़हे लगा रहे हैं। वाहर गये, तो इश्तिहार नज़र आया। पढ़ा, तो कट गये। दिल ही दिल से लिखने वाले को गालियां देने लगे। पाऊं, तो कच्चा ही खा जाऊं। इतने डंडे लगाऊं कि छठी का दूध याद आ जाए। वदमाश ने कैसा खाक़ा उड़ाया है। जभी तो लड़के इतने ढीठ हो गये हैं। मैं कहता हूं आम, वे कहते हैं इमली। अव इज़्ज़त डूवी। मकतवखाने में जाता हूं, तो खौफ़ है, कहीं लौंडे रोज़ की कसर न निकालें और अंजर-पंजर ढीले कर दें। भाग जाऊं, तो रोटियों के लाले पड़ें। खाऊं क्या, अंगारे ? आखिर ठान ली कि वोरिया-वंधना छोड़ो मुल्लागीरी से मुंह मोड़ो। भागे, तो घर पर दम लिया। लड़कों ने जो देखा कि मौलवी साहव पत्ता-तोड़ भागे जाते हैं, तो जूतियां वगल में दवा, तख्तियां और वस्ते संभाल, दुम के पीछे चले। तमाशाइयों में वातें होने लगीं—

एक—अरे मियां, यह भागा कौन जाता है वगटुट ?

दूसरा—शैतान है, शैतान। आज लड़कों के दांव पर चढ़ गया है, कैसा दुम दवाये भागा जाता है !

अव सुनिए कि मुहल्ले भर में खलवली मच गयी। अजी, ऐसे मकतव की ऐसी-

तैसी। बरसों से लौंडे पढ़ते हैं, एक हरफ़ न आया। लड़कों की मिट्टी पलीद की। पढ़ाना-लिखाना खैरसल्लाह, चिलमें भरवाया करते। सबने मिलकर कमेटी की कि मौलवी साहब का आम जलसे में इम्तिहान लिया जाए, और मनादी हो कि जिन साहब ने यह इश्तिहार लिखा है, वह ज़रूर आयें। ढिंढोरिया मुहल्ले भर में कहता फिरा कि खलक़ ख़ुदा का, मुल्क सरकार का, हुक्म कमेटी का कि आज एक जलसा होगा और मौलवी साहब का इम्तिहान लिया जायगा। जिसने इश्तिहार लिखा है, वह भी हाजिर हो।

मियां आज़ाद बहुत ख़ुश हुए, शाम को जलसे में जा पहुंचे। जब दो-तीन सौ आदमी, अहाली-मवाली, डोम-डफाली, ऐरे-गैरे, नत्थू-खैरे, सब जमा हुए, तो एक मेंबर ने कहा—हज़रत, यह तो सब कुछ है; मगर मौलवी साहब इस वक़्त नदारद हैं। एकतरफ़ा डिगरी न दीजिए। उन्हें बुलवाइए, तब इम्तिहान लीजिए। यों तो वह आयेंगे नहीं। हम एक तदबीर बतायें, जो दौड़े न आयें, तो मूंछ मुड़ा डालें, हाथ क़लम करा डालें। कहला भेजिए कि किसी के यहां शादी है, निकाह पढ़ने के लिए अभी बुलाते हैं! लोगों ने कहा, ख़ूब सूझी, दूर की सूझी। आदमी मौलवी साहब के दरवाज़े पर गया और आवाज़ दी—मौलवी साहब, अजी मौलवी साहब! क्या मर गये? इस घर में कोई है, या सबको सांप सूंघ गया? दरवाज़ा धमधमाया, कुंडी खटखटायी, मगर जवाब नदारद। तब तो आदमी ने झल्लाकर पत्थर फेंकने शुरू किये। दो-एक मौलवी साहब के घुटे हुए सिर पर भी पड़े। मौलवी साहब बोले—कौन है? आदमी ने कहा—वारे आप जिन्दा तो हुए। मैंने तो समझा था, कफ़न की ज़रूरत पड़ी। चलिए, ईदूखां के यहां शादी है, निकाह पढ़ दीजिए। निकाह का नाम सुनते ही मौलाना ख़मीरी रोटी की तरह फूल गये, अंगरखे का बंद तड़ से टूट गया। कफ़न फाड़कर चिल्ला उठे—आया, आया, ठहरे रहो, अभी आया। शिमला खोपड़ी पर जमा, अक़ीक़ का कंठा हाथ में ले, सुरमा लगा घर से चले। आदमी साथ है, दिल में कहते जाते हैं, आज पौ-बारह हैं, बढ़कर हाथ मारा है, छप्पन करोड़ की तिहाई, हाथी के हौदे में घुटे। लंबे-लंबे डग भरते आदमी से पूछते जाते हैं—क्यों मियां, अब कितनी दूर मकान है? पास ही है न देखें, निकाह पढ़ाई क्या मिलती है? सवा रुपये तो मामूली है; मगर ख़ुदा ने चाहा तो बहुत कुछ ले मरूंगा। आदमी पीछे-पीछे हंसता जाता है कि मियां हैं किस ख़याल में! वारे ख़ुदा-ख़ुदा करके वह मंज़िल तय हुई, मकान में आये, तो होश उड़ गये। यह कैसा ब्याह है भाई, न ढोल, न शहनाई, हमारी शामत आयी। कनखियों से इधर-उधर देख रहे हैं, अक़्ल दंग है कि ये सब के सब हमीं को क्यों घूर रहे हैं। इतने में मीर-मजलिस ने कहा—जिन साहब ने इश्तिहार लिखा था, वह अगर आये हों तो कुछ फर्मायें।

आज़ाद ने खड़े होकर कहा—यह जो मौलवी साहब आप लोगों के सामने खड़े हैं, इनसे पूछिए कि मकतबख़ाने में अफीम क्यों पीते हैं? जब देखिए, पीनक में ऊंघ रहे हैं या मिठाई ठूंग रहे हैं। लड़कों का पढ़ाना खाला जी का घर नहीं कि सिर घुटाया और मुल्ला बन गये, चूड़ी निगली और पीर जी बन गये।

मौलवी साहब ताड़ गये कि यहां मेरी दुर्गति होने वाली है। भागने ही को थे कि एक आदमी ने टांग पकड़ कर आंटी बतायी, तो फ़ट से ज़मीन पर आ रहे। अच्छे फंसे। ख़ूब निकाह पढ़ाया। मुफ़्त में उल्लू बने। खैर, मियां आज़ाद ने फिर कहा—

'मौलवी साहब को किसी मजार का मुजाविर या कहीं का तकियेदार बना दीजिए, तो ख़ूब मीठे टुकड़े उड़ायें और डंड पेलें। यह मकतबख़ाने में लल्लू का दसहरा उनको क्यों बना दिया? लड़कों की कैफ़ियत सुनिए कि दिन भर गुल्ली-डंडा खेला करते हैं, चीख़ते हैं, चिल्लाते हैं, और दिन भर में अठारह मर्तबा पेशाब करने और पानी पीने जाते हैं। कोई कहता है, मौलवी साहब, देखिए, यह हमारी नाक पकड़ता है, कोई कहता है,

यह हमसे लड़ता है। मौलवी साहब को इससे कुछ मतलब नहीं कि लड़के पढ़ते हैं या नहीं। वहां तो हिलते जाओ और गुल मचाओ कि कान पड़े आवाज़ न सुनाई दे, उसमें चाहे जो कुछ ऊल-जलूल बको।'

मौलवी साहब फिर रस्सी तुड़ाकर भागने लगे। लोग लेना-लेना करके दौड़े। गये थे रोज़े बख्शाने, नमाज़ गले पड़ी। चिल्लाकर बोले—तुम कौन होते हो जी हमारा ऐब निकालने वाले, हम पढ़ायें या न पढ़ायें, तुमसे मतलब ?

आज़ाद—हज़रत, आज ही तो पंजे म फंसे हो। रोज़ तोंद निकाले बैठे रहा करते थे। यह तोंद है या बेईमान की कब्र ? या हवा का तकिया ? अन्न पचक जाये, तो सही। खुदा जाने, कहां का गंवार बिठा दिया है। कल सुबह को इनका इम्तिहान लिया जाये।

मौलवी साहब—आप बड़े शैतान हैं !

आज़ाद—आप लंगूर हैं; मगर हैरत है कि यह ठुड्डी से दुम की कोंपल क्योंकर फूटी !

इस तरह जलसा ख़तम हुआ। लोगों ने दिल में ठान ली कि कल चाहे ओले पड़ें, चाहे कड़कड़ाती धूप हो, चाहे भूचाल आये; मगर हम आयेंगे और ज़रूर आयेंगे। मौलवी साहब से ताकीद की गयी कि हज़रत, कल न आइएगा, तो यहां रहना मुश्किल हो जायेगा—मौलवी साहब का चेहरा उतर गया था, मगर कड़ककर बोले—हम और न आयें, आयें और बीच खेत आयें। हम क्या कोई चोर हैं, या किसी का माल मारा है ?

मौलवी साहब घर पहुंचे, तो आज़ाद को लगे पानी पी-पीकर कोसने। इसकी ज़बान सड़े, मुंह फूल जाय; सारी चौकड़ी भूल जाय; आसमान से अंगारे बरसें; ऐसी जगह मरे, जहां पानी न मिले; डंकू फीवर चट करे; इंजिन के नीचे दबकर मरे। मगर इन गालियों से क्या होता था। रात किसी तरह कटी, दूसरे रोज़ नूर के तड़के लोग फिर जलसे में आ पहुंचे। मगर मौलाना ऐसे ग़ायब हुए, जैसे गधे के सिर से सींग। बारे यारों ने तत्तो-थभों करके सिर सहलाते, सब्ज़ बाग़ दिखलाते घसीट ही लिया। मियां आज़ाद ने पूछा—क्यों मौलवी साहब, किस मनसूबे में हो ?

मौलवी साहब—सोचता हूं कि अब कौन चाल चलूं ? सोच लिया है कि अब मुल्लागीरी छोड़ प्यादों में नौकरी करेंगे। बस, वतन से जायेंगे, तो फिर लौटकर घर न आयेंगे। अमीर-ग़रीब सब पर मुसीबत पड़ती है। फिर हमारी बिसात क्या ? चारखाने का अंगरखा न सही, गाढ़े की मिरजई सही। मगर आप एक ग़रीब के पीछे नाहक क्यों पड़े हुए हैं ? 'कहां राजा भोज, कहां गंगुआ तेली !'

आज़ाद—ये झांसे रहने दीजिए, ये चकमे किसी और को दीजिए।

मौलवी साहब—खुदा की पनाह ! मैं आपका ग़ुलाम और आपको चकमे दूंगा ? आपसे क्या अर्ज़ करूं कि कितना जी तोड़कर लड़कों को पढ़ाता हूं। इधर सूरज निकला और मैंने मकतब का रास्ता लिया। दिन भर लड़कों को पढ़ाया। क्या मजाल कि कोई लड़का गरदन तक उठा ले। कोई बोला, और मैंने टीप जमायी, खेला, और शामत आयी। समझ-बूझकर चलता था, अगर कोई लड़का मकतब में खिलौना लाता, तो उसे तुरत अंगीठी में डलवा देता। मगर आपने सारी मेहनत पर पानी फेर दिया। आपके सामने मेरी कौन सुनता है।

मीर मजलिस ने कहा—मियां आज़ाद इन्हें बकने दीजिए, आप इनका इम्तिहान लीजिए।

मियां आज़ाद तो सवाल पूछने के लिए खड़े हुए, उधर मौलवी साहब का बुरा हाल हुआ। रंग फ़क, कलेजा शक, आंखों में आंसू, मुंह पर हवाइयां छूट रही हैं, कलेजा धक-धक करता है, हाथ-पांव कांपने लगे। किसी तरह खड़े तो हुए, मगर क़दम न जमा।

पांव डगमगाये और लड़खड़ा कर गिरे। लोगों ने उन्हें उठाकर फिर खड़ा किया।

आज़ाद—यह शेर किस वहर में है—

मैंने कहा जो उससे ठुकराके चल न ज़ालिम;
हैरत में आके बोला—क्या आप जी रहे हैं ?

मौलवी साहब—बहर (दरिया) में आप ही गोते लगाइए, और ख़ुदा करे, डूब जाइए। जिसे देखो, हमीं पर शेर है। नामाकूल इतना नहीं समझते कि हम मौलवी आदमी लौंडे पढ़ाना जानें या शायरी करना। हमें शेर से मतलब ! आये वहां से वहर पूछने !

आज़ाद—वेशुनो अज नैचूं हिकायत मी कुनद;
वज जुदाईहा शिकायत मी कुनद।

इस शेर का मतलब बतलाइए !

मौलवी साहब—इसका बताना क्या मुश्किल है ? नै कहते हैं चंडू की नै को। बस, उस ज़माने में लोग चंडू पीते थे और शिकायत करते थे।

आज़ाद—बकरी की पिछली टांगों को फ़ारसी में क्या कहते हैं ?

मौलवी साहब—यह किसी अपने भाई-बंद, बूचड़-क़स्साब से पूछिए। बंदा न छीछड़े खाय; न जाने। वाह, अच्छा सवाल है ! अब मुल्लाओं को बूचड़ों की शागिर्दी भी करनी चाहिए !

आज़ाद—हिंदुस्तान के उत्तर में कौन मुल्क है ?

मौलवी—खुदा जाने, मैं क्या देखने गया था कि आपकी तरह मैं भी सैलानी हूं ?

आज़ाद—सबसे बड़ा दरिया हिंदोस्तान में कौन है ?

मौलवी—फ़िरात, नहीं, वह देखिए, भूला जाता हूं, अजी वही, दजला, दजला, खूब याद आया।

हाजिरीन—वाह रे गावदी; अच्छी उलटी गंगा बहायी। फ़िरात और दजला हिंद में है ? इतना भी नहीं जानता।

आज़ाद—चांद के घटने-चढ़ने का सबब बताओ ?

मौलवी—वाह, क्या खूब, खुदाई कारखानों में दखल दूं ? इतना तो किसी की समझ में आता नहीं कि फ़ीमिशन क्या है, फिर भला यह कौन जाने कि चांद कैसे घटता-बढ़ता है। खुदा का हुक्म है, वह जो चाहता है, करता है।

आज़ाद—पानी क्योंकर बरसता है ?

मौलवी—यह तो दादीजान तक को मालूम था। बादल तालाबों, नदियों, कुओं, गढ़ों, हौजों से घुस-पैठ कर दो-तीन रोज़ खूब पानी पीता है; जब पी चुका, तब आसमान पर उड़ गया, मुंह खोला तो पानी रिम-झिम बरसने लगा। सीधी-सी तो बात है।

हाजिरीन—वल्लाह; क्या बेपर की उड़ायी है ! आदमी हो या चोंच ! कहने लगे, बादल पानी पीता है।

आज़ाद—गिनती आपको कहां तक याद हैं और पहाड़े कहां तक ?

मौलवी—जवानी में रुपये के टके गिन लेता था; अब भी आठ-आठ आने एक दफ़े में गिन सकता हूं। मगर पहाड़े किसी हलवाई के लड़के से पूछिए।

आज़ाद—एक आदमी ने तीन सौ पचत्तर मन गल्ला ख़रीदा, रात को चोरों ने मौक़ा ताक कर एक सौ पच्चीस मन उड़ा लिया, तो बताओ उस आदमी को कितना घाटा हुआ ?

मौलवी—यह झगड़ा जौनपुर के क़ाज़ी चुकायेंगे। मैं किसी के फटे में पांव नहीं डालता। मुझे किसी के टोटे-घाटे से मतलव ? चोरी-चकारी का हाल थानेदारों से पूछिए। वंदा मौलवी है। मुल्ला की दौड़ मसजिद तक।

आज़ाद—शाहजहां के वक़्त में हिंदोस्तान की क्या हालत थी और अकवर के वक़्त में क्या ?

मौलवी—अजी, आप तो गड़े मुर्दे उखाड़ते हैं ! अकवर और शाहजहां, दोनों की हड्डियां गलकर खाक हो गयी होंगी। अव इस पचड़े से मतलव ?

आज़ाद ने हाजिरीन से कहा—आप लोगों ने मौलवी साहव के जवाव सुन लिये, अव चाहे जो फ़ैसला कीजिए।

हाजिरीन—फ़ैसला यही है कि यह इसी दम अपना वोरिया-वंधना संभाले। यह चरकटा है। इसे यही नहीं मालूम कि वहर किस चिड़िया का नाम है, वादल किसे कहते हैं, दो तक का पहाड़ा नहीं याद, गिनती जानता ही नहीं, दज़ला और फ़िरात हिंदोस्तान में वतलाता है ! और चला है मौलवी वनने। लड़कों की मुफ़्त में मिट्टी ख़राव करता है।

बारह

आज़ाद तो इधर सांड़नी को सराय में वांधे हुए मज़े से सैर-सपाटे कर रहे थे, उधर नवाव साहव के यहां रोज़ उनका इंतज़ार रहता था कि आज आज़ाद आते होंगे और सफ़शिकन को अपने साथ लाते होंगे। रोज़ फ़ाल देखी जाती थी, सगुन पूछे जाते थे। मुसाहव लोग नवाव को भड़काते थे कि अव आज़ाद नहीं लौटने के; लेकिन नवाव साहव को उनके लौटने का पूरा यक़ीन था।

एक दिन वेगम साहिवा ने नवाव साहव से कहा—क्यों जी, तुम्हारा आज़ाद किस खोह में धंस गया ? दो महीने से तो कम न हुए होंगे।

महरी—ऐ, वह चंपत हुआ, मुआ चोर।

वेगम—ज़वान संभाल, तेरी इन्हीं वातों पर तो मैं झल्ला उठती हूं। फिर कहती है कि छोटी वेगम मुझसे तीखी रहती हैं।

नवाव—हां, आज़ाद का कुछ हाल तो नहीं मालूम हुआ; मगर आता ही होगा।

वेगम—आ चुका।

नवाव—चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, मेरा आज़ाद सफ़शिकन को ला ही छोड़ेगा। दोनों में इल्मी वहस हो रही होगी। फिर तुम जानो, इल्म तो वह समंदर है, जिसका ओर न छोर।

वेगम—(क़हक़हा लगाकर) इल्मी वहस हो रही होगी ? क्यों साहव, मियां सफ़शिकन इल्म भी जाते हैं ? मैं कहती हूं, आखि़र अल्लाह ने तुमको कुछ रत्ती, तोला, माशा अक़्ल भी दी है ? मुआ वटेर, जरी-सी जानवर, काकुन के तीन दानों में पेट भर जाय, उसे आप आलिम कहते हैं। मेरे मैके पड़ोस में एक सिड़ी सौदाई दिन-रात वाही-तवाही वका करता है। उसकी और तुम्हारी वातें एक-सी हैं।

महरी—क्या कहती हो वीवी, उस सौदाई निगोड़े को इन पर से सदक़े कर दूं !

नवाव—तुम समझी नहीं महरी, अभी तो अल्हड़पने ही के न दिन हैं इनके। ख़ुदा की क़सम, मुझे इनकी ये ही वातें तो भाती हैं। यह कमसिनी का सुभाव है और दो-तीन वरस, फिर यह शोखी और चुलवुलापन कहां ? यह जव झिड़कती या घुड़कती हैं, तो जी ख़ुश हो जाता है।

महरी—हां, हां, जवानी तो फिर बावली होती ही है।

बेगम—अच्छा, महरी, तुझे अपने बुढ़ापे की क़सम, जो झूठ बोले, भला बटेर भी पढ़े-लिखे हुआ करते है? मुंह-देखी न कहना, अल्लाह लगती कहना।

महरी—बुढ़ापा! बुढ़ापा कैसा? बीबी, बस ये ही बातें तो अच्छी नहीं लगतीं, जब देखो, तब आप बूढ़ी कह देती है! मैं बूढ़ी काहे से हो गयी? बुरा न मानिए तो कहूं, आपसे भी टांठी हूं।

इतने में ग़फ़ूर ख़िदमतगार ने पुकारा—हुज़ूर, पेचवान भरा रखा है, वहां भेज दूं या बग़ीचे में रख दूं?

नवाब—यह चांदीवाली छोटी गुड़गुड़ी बेगम साहिबा के वास्ते भर लाओ। कल विसवां तंबाकू आया है, वही भरना। और पेचवान बाहर लगा दो, हम अभी आये।

यह कहकर नवाब ने बेगम साहिबा के हंसी-हंसी में एक चुटकी लीं और बाहर आये। मुसाहबों ने खड़े हो-होकर सलाम किये। आदाब बजा लाता हूं हजूर, तसलीमात अर्ज़ करता हूं, खुदावंद। नवाब साहब जाकर मसनद पर बैठे।

खोजी—उफ्! मौत का सामना हुआ, ऐसा धक्का लगा कि कलेजा बैठा जाता है, हत् तेरे गीदी चोर की।

नवाब—क्यों, क्यों, ख़ैर तो है!

खोजी—हुज़ूर, इस वक़्त बटेरख़ाने की ओर गया था।

नवाब—उफ, भई, दिल बेक़रार है। खोजीमियां, तुमको तो हमारी तसल्ली करनी चाहिए थी, न कि उल्टे ख़ुद ही रोते हो, जिसमें हमारे हाथ-पांव और फूल जायं। अब सफ़शिकन से हाथ धोना चाहिए। हम जानते हैं कि वह ख़ुदा के यहां पहुंच गये।

मुसाहब—ख़ुदा न करे, ख़ुदा न करे।

खोजी—(पीनक से चौंककर) इसी बात पर फिर कुछ मिठाई नही खिलवाते।

नवाब—कोई है, इस मरदक की गरदन तो नापता। हम तो अपनी क़िस्मतों को रो रहे है, वह मिठाई मांगता है। बेतुका, नमकहराम!

खोजी—देखिए, देखिए, फिर मेरी गरदन कुंद छुरी से रेती जाती है। मैं मिठाई कुछ खाने के वास्ते थोड़े ही मंगवाता हूं। इसलिए मगवाता हूं कि सफ़शिकन का फ़ातिहा पढ़ूं।

नवाब—शाबाश, जी खुश हो गया! माफ़ करना, बेअख़्तियार नमकहराम का लफ़्ज मुंह से निकल गया, तुम बड़े···

मुसाहब—तुम बड़े हलालख़ोर हो।

इस पर वह क़हक़हा पड़ा कि नवाब साहब भी लोटने लगे, और बेगम ने घर से लौंडी को भेजा कि देखना तो, यह क्या हंसी हो रही है।

नवाब—भई, क्या आदमी हो, वल्लाह, रोते को हंसाना इसी का नाम है। खोजी बेचारे को हलालख़ोर बना दिया।

खोजी—हुज़ूर, अब मैं यहां न रहूंगा। क्या बेवक़्त की शहनाई सब के सब बजाने लगे! अफ़सोस, सफ़शिकन का किसी को ख़याल तक नहीं।

नवाब साहब मारे रंज के मुंह ढांप कर लेट रहे। मुसाहबों में से कोई चंडूखाने पहुंचा, कोई अफीम घोलने लगा।

तेरह

इधर शिवाले का घंटा बजा ठनाठन, उधर दो नाक़ों से सुबह की तोप दगी दनादन।

मियां आज़ाद अपने एक दोस्त के साथ सैर करते हुए बस्ती के बाहर जा पहुंचे। क्या देखते हैं, एक बेल-बूटों से सजा हुआ बंगला है। अहाता साफ़, कहीं गंदगी का नाम नहीं। फूलों-फलों से लदे हुए दरख़्त खड़े झूम रहे हैं। दरवाज़ों पर चिकें पड़ी हुई हैं। बरामदे में एक साहब कुर्सी पर बैठे हुए हैं और उनके क़रीब दूसरी कुर्सी पर उनकी मेम साहिबा बिराज रही हैं। चारों तरफ़ सन्नाटा छाया हुआ है। न कहीं शोर, न कहीं गुल। आज़ाद ने कहा—जिन्दगी का मज़ा तो ये लोग उठाते हैं।

दोस्त—बेशक, देखकर रश्क आता है।

दोनों आदमी आगे बढ़े। कई छोटे-छोटे टट्टू तेज़ी से दौड़ते हुए नज़र आये। उन पर ख़ूबसूरत काठियां कसी हुई थीं और कई लड़के बैठे हुए हंसते-बोलते चले जाते थे। कपड़े सफ़ेद, जैसे बगुले के पर; चेहरे सुर्ख़, जैसे गुलाब का फूल। मियां आज़ाद कई मिनट तक उन अंगरेज-लड़कों का उछलना-कूदना देखते रहे। फिर अपने दोस्त से बोले—देखा आपने, इस तरह बच्चों की परवरिश होती है। कुछ और आगे बढ़े तो सौदागरों की बड़ी-बड़ी कोठियां दिखायी दीं। इतनी ऊंची गोया आसमान से बातें कर रही हैं। दोनों आदमी अन्दर गये, तो चीजों की सफ़ाई और सजावट देखकर दंग रह गये। सुभान-अल्लाह ! यह कोठी है या शीश-महल। दुनिया भर की चीजें मौजूद। आज़ाद ने कहा—यह तिजारत की बरकत है। वाह री तिजारत ! तेरे क़दम धो-धो कर पिये। इतने में सामने से कई बग्घियां आयीं। सब पर अंगरेज़ बैठे हुए थे। किसी हिन्दुस्तानी का कोसों तक पता ही नहीं। गोया उनके लिए घर से निकलना ही मना है। और आगे बढ़े, तो एक कुतुबख़ाना नज़र आया। लाखों किताबें चुनी हुई, साफ़-सुथरी, सुनहरी जिल्दें चढ़ी हुई। आदमी अगर साल भर जम कर बैठे, तो आलिम हो जाय। सुबह से आठ बजे तक लोग आते हैं, अख़बार और किताबें पढ़ते हैं और दुनिया के हालात मालूम करते हैं। मगर हिन्दुस्तानियों को इन बातों से क्या सरोकार ?

दस बजे का वक़्त आ गया। अब घर की सूझी। बस्ती में दाख़िल हुए। राह में एक अमीर आदमी के मकान के दरवाज़े पर दो लड़कों को देखा। नख-सिख से तो दुरुस्त हैं; मगर कानों में बाले, भद्दे-भद्दे कड़े हैं, अंगरखा मैला-कुचैला, पाजामा गंदा, हाथों पर गर्द, मुंह पर ख़ाक, दरवाज़े पर नंगे पांव खड़े हैं। मौलवी साहब ड्योढ़ी में बैठे दो और लड़कों को पढ़ा रहे हैं। मगर ड्योढ़ी और पाख़ाना मिला हुआ है।

मियां आज़ाद—कहिए जनाब, वे टट्टुओं पर दौड़नेवाले अंगरेजों के बच्चे भी याद हैं ? इनको देखिए, मैले-गंदे, दिन भर पाख़ाने का पड़ोस। भला ये कैसे मज़बूत और तंदुरुस्त हो सकते हैं ? हां, ज़ेवर से अलबत्ते लसे हुए हैं ! सच तो यह है कि चाहे लड़का जितने ज़ेवर पहने हो, उसको वह सच्ची ख़ुशी नहीं हासिल हो सकती, जो उन प्यारे बच्चों को हवा के झोंकों और टापों की खटपट से मिलती थी। लड़का तड़के गजरदम उठा, हम्माम में गया, साफ़-सुथरे कपड़े पहने। यह अच्छा, या यह अच्छा कि लचके, पट्टे और बिन्नट्ट के कपड़ों में जकड़ दिया जाय, ज़ेवर सिर से पांव तक लाद दिया जाय और गढ़ैया पर बिठा दिया जाय कि कूड़े के टोकरे गिना करे।

ये बातें हो ही रही थीं कि सात-आठ जवान सामने से गुज़रे। अभी उन्नीस ही बरस का सिन है, मगर गालों पर झुर्रियां, किसी की कमर झुकी हुई, किसी का चेहरा ज़र्द। सुर्ख़ और सफ़ेद रंग धुआं बनकर उड़ गया। और तुर्रा यह कि अलिफ के नाम बे नहीं जानते। एक नम्बर अव्वल के चंडूबाज हैं, दूसरे बला के बातूनी। वह फर्राटे भरें कि भला-चंगा आदमी घनचक्कर हो जाय। एक साहब कॉलेज में तालीम पाते थे, मगर प्रोफ़ेसर से तकरार हो गयी, झट मदरसा छोड़ा। दूसरे साहब अपने दाहिने हाथ की दो उंगलियों से बायें हाथ पर ताल बजा रहे हैं—धिन ता धिन ता। दो साहब बहादुर नामी

बटेर के घट जाने का अफ़सोस कर रहे है। किसी को नाज है कि मैं बाने की कनकइया खूब लड़ाता हू, तुक्कल खूब बढ़ाता हूं।

मिया आजाद ने कहा—इन लोगों को देखिए, अपनी जिंदगी किस तरह खराब कर रहे है। शरीफ़ो के लडके है, मगर बुरी सोहबत है। पढना-लिखना छोड़ बैठे। अब मटर-गश्ती से काम हे। किसी को क़लम पकड़ने का शऊर नही।

इतने मे दो साहब और मिले। तोद निकाले हुए, मोटे थलथल। आजाद ने कहा—इन दोनो को पहचान रखिए। इन अक़्ल के दुश्मनो ने रुपये को दफ़न कर रखा है। एक के पास दो लाख से ज्यादा है और दूसरे के पास इससे भी ज्यादा; मगर जमीन के नीचे। बीवी और लड़कों को कुछ जेवर तो बनवा दिये है, बाकी अल्लाह-अल्लाह, खैर-सल्लाह! अगर तिजारत करे तो अपना भी फ़ायदा हो, और दूसरो का भी। मगर यह सीखा ही नही। बगाल-बंक और दिल्ली-बंक तो पहले सुना करते थे, यह जमीन का बंक आज नया सुना।

दोनों आदमी घर पहुंचे। खाना खाकर लेटे। शाम को फिर सैर करने की सूझी; एक बाग़ मे जा पहुंचे। कई आदमी बैठे हुक्के उड़ाते थे और किसी बात पर बहस करते थे। बहस से तकरार शुरू हुई। मिर्जा सईद ने कहा—भई, कलजुग है, कलजुग। इसमे जो न हो, वह थोड़ा। अब पुराने रस्मों को लोग दकियानूसी बताते है, शादी-ब्याह के खर्च को फ़िजूल कहते है। बच्चो को जेवर पहनाना गाली है। अब कोई इन लोगो से इतना तो पूछे कि जो रस्म बाप-दादो के वक़्त से चली आती है, उसको कोई क्योकर मिटाये?

यकायक पूरब की तरफ़ से शोर-गुल की आवाज सुनायी दी। किसी ने कहा, चोर आया, लेना, जाने न पाये। कोई बोला, सांप है। कोई भेड़िया-भेड़िया चिल्ला उठा। किसी को शक हुआ कि आग लगी। सबके सब भडभड़ा कर खड़े हुए, तो चोर न चकार, भेडिया न सियार। एक मियां साहब लंगोट कसे लट्ठ हाथ मे लिये अकड़े खड़े है, और उनसे दस कदम के फ़ासले पर कोई लाला जी बास की खपाच लिये डटे खड़े है। इर्द-गिर्द तमाशाइयो की भीड़ है। इधर मिया साहब पैतरे बदल रहे है, उधर लाला उगलिया मटका-मटका कर गुल मचा रहे है। मिर्जा सईद ने पूछा—मिया साहब, खैर तो है? मिया—क्या अर्ज करूं मिर्जा साहब, आपको दिल्लगी सूझती है और यहा जान पर बन गयी है। यह लाला मेरे पड़ोसी है। इनका क़ायदा है कि ठर्रा पीकर हजारो गालियां मुझे दिया करते है। आज कोठे पर चढकर खुदा के वास्ते लाखो बाते सुनायी। अब फ़रमाइए, आदमी कहां तक जब्त करे? लाख समझाया कि भाई, आदमी से ऊंट और इंसान से बेदुम के गधे न बन जाओ, मगर यह बादशाह की नही सुनते, मै किस गिनती मे हूं। ताल ठोक कर लड़ने को तैयार हो गये। खुदा न करे, किसी भलेमानस को अनपढ से साबिका पड़े।

लाला—और सुनिएगा, हम चार-पाच बरस लखनऊ मे रहे, अनपढ ही रहे।

मियां—बारह बरस दिल्ली में रहकर तुमने क्या सीख लिया, जो अब चार बरस लखनऊ में रहने से फ़ाजिल हो गये।

लाला—यह साठ बरस से हमारे पड़ोसी है, खूब जानते हे कि बरस दिन का त्योहार हे; हम शराब जरूर पियेंगे; चुस्की जरूर लगायेगे, नशे मे गालियां जरूर सुनायेगे। अब अगर कोई कहे, शराब क़लिया छोड़ दो, तो हम अपनी पुरानी रस्म को क्योकर छोड़े?

मिर्जा सईद—अजी लाला साहब, बहुत बहकी-बहकी बातें न कीजिए। हमने माना कि पुरानी रस्म है, मगर ऐसी रस्म पर तीन हरफ़! आप देखे तो कि इस वक़्त

आपकी क्या हालत है ? कीचड़ में लतपत, सिर-पैर की खबर नहीं, भलेमानसों को गालियां देते हो और कहते हो कि यह तो हमारी रस्म है ।

आज़ाद—मिर्ज़ा सईद, ज़रा मुझसे तो आंखें मिलाइए । शर्माये तो न होंगे ? अभी तो आप कहते थे कि पुरानी रस्म को कोई क्योंकर मिटाये । यह भी तो लाला जी की पुरानी रस्म है; जिस तरह होती आई है, उसी तरह अब भी होगी । यह धूप-छांह की रंगत आपने कहां पायी ? गिरगिट की तरह रंग क्यों बदलने लगे ? जनाब, बुरी रस्म का मानना हिमाक़त की निशानी है ।

मिर्ज़ा सईद बगलें झांकने लगे । आज़ाद और उनके दोस्त और आगे बढ़े, तो देखते क्या हैं कि एक गंवार औरत रोती चली जाती है, और एक मर्द चुपके-चुपके समझा रहा है—चुपाई मार, चुपाई मार । मियां आज़ाद समझे, कोई बदमाश है । ललकारा, कौन है बे तू, इस औरत को कहां भगाये लिये जाता है ? उस गंवार ने कहा—साहब, भगाये नहीं लिये जात हौं; यो हमार मिहरिया आय, हमरे इहां रसम है कि जब मिहरिया मइका से ससुरार जान है, तो दुइ-तीन कोस लौं रोवत है ।

सईद—वल्लाह, मैं कुछ और ही समझा था । खुदा की पनाह, रस्म की मिट्टी खराब कर दी ।

आज़ाद—बजा है, अभी आप उस बाग़ में क्या कह रहे थे ? बात यह है कि पढ़े-लिखे आदमियों को बुरी रस्मों का मानना मुनासिब नहीं । यह क्या ज़रूरी है कि अक्ल की आंखों को पाकेट में बन्द करके पुरानी रस्मों के ढर्रे पर चलना शुरू करें; और इतनी ठोकरें खायं कि क़दम-क़दम पर मुंह के बल गिरें । खुदा ने अक्ल इसलिए नहीं दी कि पुरानी रस्मों में सुधार न करें, बल्कि इसलिए कि ज़माने के मुताबिक़ अदल-बदल करते रहें । अगर पुरानी बातों की पूरी-पूरी पैरवी की जाती, तो ये जामदानी के कुरते और शरबती के अंगरखे नज़र न आते । लोग नंगे फिरते होते । गुलाब और कबाब के बदले हम पाढ़े और हिरन का कच्चा गोश्त खाते होते । खुदा ने आंखें दी हैं; मगर अफ़सोस कि हमने बन्द कर लीं ।

मिर्ज़ा सईद—तो आप नाच-रंग के जलसों के भी दुश्मन होंगे ? आप कहेंगे कि यह भी बुरी रस्म है ?

आजाद—बेशक बुरी रस्म है । मैं उसका दुश्मन तो नहीं हूं, मगर खुदा ने चाहा तो बहुत जल्द हो जाऊंगा । यह कितनी बेहूदा बात है कि हम लोग औरतों को रुपये का लालच देकर इस तरह ज़लील करते हैं ।

मिर्ज़ा सईद—तो यह कहिए कि आप कोरे मुल्ला हैं । यह समझ लीजिए कि इन हसीनों का दम ग़नीमत है । दुनियां की चहल-पहल उनके दम से, महफ़िल की रौनक़ उनके क़दम से । यहां तो जब तक तबले की गमक न हो, चांद-से मुखड़े की झलक न हो, कड़ों की झनकार न हो, छड़ों की छनकार न हो, छमाछम की आवाज़ न आये, कमरा न सजे, ताल न बजे, धमा-चौकड़ी न मचे, मेहदी न रचे, रंगरलियां न मनायें, शादियाने न बजायें, आवाज़ें न करें, इत्र में न बसें, ताने न सुनें, सिर न धुनें, गलेबाज़ी न हो, आंखों में लाल डोरे न हों, शराब-कबाब न हो, परियां बुल-बुल की तरह चहकती न हों, सेवती के फूल और हिना की टट्टियां महकती न हों, क़हक़हे न हों, चहचहे न हों, तो किस गौखे का दम भर जीने को जी चाहे ? वल्लाह महफ़िल बावले कुत्ते की तरह काट खाय—

महफ़िल में गुदगुदाती हो, शोखी निगाह की;
शीशों से आ रही हो, सदा वाह-वाह की ।

इधर जामेमुल (शराब) हो, उधर सुराही की कुल-कुल हो, इधर गुल हो, उधर

बुलबुल हो, महफ़िल का रंग खूब जमा हो, समां बंधा हो, फिर जो आपकी गरदन भी न हिल जाय, तो झुक कर सलाम कर लूं। अब ग़ौर फ़रमाइए कि ऐसे तायफ़े को, जो डिबिया में बन्द कर रखने क़ाबिल है, आप एक क़लम मिटा देना चाहते हैं ?

आज़ाद—जनाब, आपको अपनी तवायफ़ें मुबारक हों। यहां इस फेर में नही पड़ते।

ये बातें करते हुए लोग और आगे बढ़े, तो क्या देखते हैं कि मस्त हाथी पर एक महंत जी सवार, गेरुए कपड़े पहने, भभूत रमाये, पालथी मारे, बड़े ठाठ से बैठे हैं। चेले-चापड़ साथ हैं। कोई घोड़े की पीठ पर सवार, कोई पैदल। कोई पीछे बैठा मुरछल हिलाता है, कोई नरसिंघा बजाता है। आज़ाद बोले—कोई इन महंत जी से पूछे कि आप ख़ुदा की इबादत करते हैं, या दुनिया के मज़े उड़ाते हैं ? आपको इस टीम-टाम से क्या मतलब ?

मिर्ज़ा सईद—कुछ बाप की कमाई तो है नहीं, अहमक़ों ने जागीरें दे दीं, महंत बना दिया। अब ये मौजें करते हैं।

आज़ाद—जागीर देनेवालों को क्या मालूम था कि उनके बाद महंत लोग यों गुलछर्रे उड़ायेंगे ? यह तो हमारा काम है कि इन महंतों की गरदन पकड़ें, और कहें, उतर हाथी से, ले हाथ में कमंडल।

यकायक किसी ने छींक दिया। सईद बोले—हत्तेरे छींकनेवाले की नाक काटूं। यार, ज़रा ठहर जाओ, छींकते चलना बदशगुनी है।

आज़ाद—तो जनाब, हमारा और आपका साथ हो चुका। यहां छींक की परवाह नहीं करते। आप पर कोई आफ़त आये, तो हमारा जिम्मा।

अभी दस क़दम भी न गये थे कि बिल्ली रास्ता काट गयी। सईद ने आज़ाद का हाथ पकड़ कर अपनी तरफ़ खींच लिया। भई अजब बेतुके आदमी हो, बिल्ली राह काट गयी और तुम सीधे चले जाते हो ? ज़रा ठहरो, पहले कोई और जाय, तब हम भी चलें।

अब सुनिए कि आध घंटे तक मुंह खोले खड़े हैं। या ख़ुदा, कोई इधर से आये। आजाद ने झल्ला कर कहा—भई, हमको आपका साथ अजीरन हो गया। यहां इन बातों के क़ायल नही। ख़ैर वहां से ख़ुदा-ख़ुदा करके चले, तो थोड़ी देर के बाद सईद ने फिर आज़ाद को रोका—हांय-हांय, ख़ुदा के वास्ते उधर से न जाना। मियां अन्धे हो, देखते नहीं, गधे खड़े हैं। आजाद ने कहा—गधे तो आप ख़ुद है। डंडा उठाया, तो दोनों गधे भागे। फिर जो आगे बढ़े, तो सईद की बायीं आंख फड़की। ग़ज़ब ही हो गया। हाथ-पांव फूल गये, सारी चौकड़ी भूल गये। बोले—यार, कोई तदबीर बताओ, बायीं आंख बेतरह फड़क रही है मर्द की बायीं और औरत की दाहिनी आंख का फड़कना बुरा शगुन है। आज़ाद खिलखिलाकर हंस पड़े कि अजीब आदमी हैं आप ! छींक हुई और हवास ग़ायब; बिल्ली ने रास्ता काटा, और होश पैंतरे; गधे देखे और औसान खता; और जो बायीं आंख फड़की, तो सितम ही हुआ ! मियां, कहना मानो, इन ख़ुराफ़ात बातों में न जाओ। यह वहम है, जिसकी दवा लुक़मान के पास भी नही। मेरा और आपका साथ हो चुका। आप अपना रास्ता लीजिए, बन्दा रुख़सत होता है।

चौदह

मियां आज़ाद ठोकरें खाते, डंडा हिलाते, मारे-मारे फिरते थे कि यकायक सड़क पर एक खबसूरत जवान से मुलाक़ात हुई। उसने इन्हें नज़र भर कर देखा, पर यह पहचान न

सके। आगे बढ़ने ही को थे कि जवान ने कहा—

हम भी तसलीम की ख़ू डालेंगे;
वेनियाज़ी तेरी आदत ही सही।

आज़ाद ने पीछे फिर कर देखा, जवान ने फिर कहा—

गो नहीं पूछते हरगिज़ वो मिज़ाज;
हम तो कहते हैं, दुआ करते हैं।

'कहिए जनाब, पहचाना या नहीं ? यह उड़नघाइयां, गोया कभी की जान-पहचान ही नहीं।' मियां आज़ाद चकराये कि यह कौन साहब हैं ! वोले—हज़रत, मैं भी इस उठती ही जवानी में आंखें खो वैठा। वल्लाह, किस मरदूद ने आपको पहचाना हो।

जवान—ऐं, कमाल किया ! वल्लाह, अव तक न पहचाना ! मियां, हम तुम्हारे लंगोटिये यार हैं अनवर।

आज़ाद—अख़्ख़ाह, अनवर ! अरे यार, तुम्हारी तो सूरत ही वदल गयी।

यह कहकर दोनों गले मिले और ऐसे ख़ुश हुए कि दोनों की आंखों से आंसू निकल आये। आज़ाद ने कहा—एक वह ज़माना था कि हम-तुम वरसों एक जगह रहे, साथ-साथ मटर-गश्ती की; कभी वाग़ में सैर कर रहे हैं, कभी चांदनी रात में विहाग उड़ा रहे हैं, कभी जंगल में मंगल गा रहे हैं, कभी इल्मी वहस कर रहे हैं; कभी वांक का शौक, कभी लकड़ी की धुन। वे दिन अव कहां !

अनवर ने कहा—भाई, चलो, अव साथ-साथ रहें, जियें या मरें, मगर चार दिन की ज़िंदगी में साथ न छोड़ें। चलो, ज़रा वाज़ार की सैर कर आयें। मुझे कुछ सौदा लेना है। यह कहकर दोनों चौक चले पहले वजाजें में धंसे। चारों तरफ़ से आवाजें आने लगीं—आइए, आइए, अजी मियां साहव, क्या ख़रीदारी मंजूर है ? खां साहव, कपड़ा ख़रीदिएगा ? आइए, वह-वह कपड़े दिखाऊं कि वाज़ार भर में किसी के पास न निकलें। दोनों एक दूकान में जाकर वैठ गये। दूकान में टाट विछा है, उस पर सफ़ेद चांदनी, और लाला नैनसुख डोरिये का अंगरखा डाटे वड़ी शान से वैठे हैं। तोंद वह फ़रमायशी, जैसे रुपये के दो वाले तरवूज़ ! एक तरफ़ तनजेव, शरवती, अद्धी के थानों की कतार है, दूसरी तरफ़ मोमी छींट और फलालैन की वहार है। अलगनी पर रूमाल क़रीने से लटके हुए लाल-भभूका या सफ़ेद जैसे वगुले के पर, या हरे-हरे धानी, जैसे लहवर। दरवाज़ा लाल रंगा हुआ, पन्नी से मढ़ा हुआ। दीवार पर सैकड़ों चिड़ियां टंगी हुई।

अनवर—भई, स्याह मख़मल दिखाना।

वज़ाज़—वदलू, वदलू, जरी खां साहव को काली मख़मल का थान दिखाओ, वढ़िया।

लाला वदलू, कई थान तड़ से उठा लाये—सूती, वूटीदार। अनवर ने कई थान देखे, और तव दाम पूछे।

लाला—ग़ज़ों के हिसाव से वताऊं, या थाने के दाम।

अनवर—भई, ग़ज़ों के हिसाव से वताओ। मगर लाला, झूठ कम वोलना।

लाला ने क़हक़हा उड़ाया—हुज़ूर, हमारी दूकान में एक वात के सिवा दूसरी नहीं कहते। कौन मेल पसन्द है ? अनवर ने एक थान पसन्द किया, उसकी क़ीमत पूछी।

लाला—सुनिए ख़ुदावन्द, जी चाहे लीजिए, जी चाहे न लीजिए, मुल दस रुपये ग़ज़ से कम न होगी।

अनवर—ऐं, दस रुपये ग़ज़ ! यार ख़ुदा से तो डरो। इतना झूठ !

लाला—अच्छा, तो आप भी कुछ फ़र्माओ।

अनवर—हम चार रुपये गज़ से टका ज्यादा न देंगे।

आज़ाद ने अनवर से कहा—चार रुपये ग़ज मे न देगा।

अनवर—आप चुपके बैठ रहें, आपको इन बातो मे जरा भी दखल नही है। 'शेख़ क्या जाने साबुन का भाव?'

लाला—चार रुपये ग़ज तो बाजार भर मे न मिलेगी। अच्छा, आप सात के भाव दे दीजिए। बोलिए, कितनी खरीदारी मंजूर है? दस ग़ज उतारूं?

अनवर—क्या खूब, दाम चुकाये ही नही और ग़जो की फ़िक्र पड़ गयी। वाजवी बताओ, वाजबी। हमे चकमा न दो, हम एक घाघ है।

लाला—अच्छा साहब, पांच रुपये ग़ज लीजिएगा? या अब भी चकमा है!

अनवर—अब भी महगी है, तुम्हारी ख़ातिर से सवा चार सही। बस पांच गज़ उतार दो।

लाला ने नाक-भौ चढ़ाकर पांच गज मखमल उतार दी, और कहा—आप बड़े कड़े ख़रीदार है। हमे घाटा हुआ। इन दामों शहर भर में न पाइएगा।

आज़ाद—भई, क़सम है ख़ुदा की, मेरा ऐसा अनाड़ी तो फंस ही जाय और वह गच्चा खाय कि उम्र भर न भूले।

अनवर—जी हा, यहा का यही हाल है। एक के तीन मांगते है।

यहा से दोनो आदमी अनवर के घर चले। चलते चलते अनवर ने कहा—लो खूब याद आया। इस फ़ाटक मे एक बांके रहते है। जरी मै उनसे मिल लू। मिया आजाद और अनवर, दोनो फ़ाटक मे हो रहे, तो क्या देखते है, एक अधेड़ उम्र का कड़ियल आदमी कुर्सी पर बैठा हुआ है। घुटन्ना चूडीदार, चुस्त, जरा शिकन नही। चुन्नटदार अंगरखा एड़ी तक, छाता गोल कटा हुआ, चड्ढी ऊंची, नुक्केदार माशे भर की कटी हुई टोपी। सिरोही सामने रखी है और जगह-जगह करौली कटार खाडा, तलवारे चुनी हुई है। सलाम-कलाम के बाद अनवर ने कहा—जनाब, वह बंदूक आपने पचास रुपये की ख़रीदी थी, दो दिन का वादा था, जिसके छः महीने हो गये; मगर आप सांस-डकार तक नही लेते। बंदूक हजम करने का इरादा हो, तो साफ़-साफ कह दीजिए, रोज की ठांय-ठाय से क्या फ़ायदा?

बांके—कैसी बंदूक, किसकी बंदूक? अपना काम करो, मेरे मह न चढना मिया, हम बांके लोग है, सैकड़ों को गच्चे, हजारो को झांसे दिये, आप बेचारे किस खेत की मूली है? यहां सौ पुश्त से सिपहगरी होती आयी है। हम, और दाम दे?

अनवर—वाह, अच्छा बांकपन है कि आंख चूकी, और कपड़ा ग़ायब, कम्मल डाला और लूट लिया। क्या बांकपन इसी का नाम है? ऐसा तो लुक्के-लुच्चे किया करते है। आज के सातवे दिन बाये हाथ से रुपये गिन दीजिएगा, वरना अच्छा न होगा।

बाके ने मूछो पर ताव देकर कहा—मालूम होता है, तुम्हारी मौत हमारे हाथ बदी। बहुत बढ-बढकर बाते न बनाओ। बांकों से टकराना अच्छा नही।

इस तकरार और तू तू, मै-मै के बाद दोनो आदमी घर चले। इधर इन बाके का भांजा, जो अखाड़े से आया और घर मे गया, तो क्या देखता है कि सब औरते नाक-भौ चढाये, मुंह बनाये, गुस्से मे भरी बैठी है। ऐ ख़ैर तो है! यह आज सब चुपचाप क्यो बैठे है? कोई मिनकता ही नही। इतने मे उसकी मुमानी कड़क कर बोली—अब चूडिया पहनो, चूड़िया! और बहू-बेटियों मे दब कर बैठ रहो। वह मुआ करोडो बाते सुना गया पक्के पहर भर तक ऊल-जलूल बका किया और तुम्हारे मामू बैठे सब सुना किये। 'फेरी मुह पर लोई, तो क्या करेगा कोई!' जब शर्म निगोडी भून खायी, तो फिर क्या। यह न

हुआ कि मुए कलजिभे की ज़बान तालू से खींच लें।

भांजे की जवानी का जोश था; शेर की तरह बिफरता हुआ बाहर आया और बोला—मामूजान, यह आज आपसे किससे तक़रार हो गयी? औरतें तक झल्ला उठीं और आप चुपके बैठे सुना किये? वल्लाह, इज्जत डूब गयी। ले, अब जल्दी उसका नाम बताइए, अभी आंतों का ढेर किये देता हूं।

मामू—अरे, वही अनवर तो है। इसका क़र्ज़दार हूं। दो बातें सुनाये तो भी क्या? और वह है ही बेचारा क्या कि उससे भिड़ता! वह पिद्दी, मैं बाज़, वह दुबला-पतला आदमी, मैं पुराना उस्ताद। बोलने का मौक़ा होता तो इस वक़्त उसकी लाश न फड़कती होती? ले गुस्सा थूक दो; जाओ, खाना खाओ, आज मीठे टुकड़े पके हैं।

भांजा—क़सम ख़ुदा की, जब तक उस मरदूद का खून न पी लूं, तब तक खाना हराम है। मीठे टुकड़ों पर आप ही हत्थे लगाइए। यह कहकर घर से चल खड़े हुए। मामू ने लाख समझाया, मगर एक न मानी।

इधर अनवर जब घर पहुंचे, तो देखते क्या हैं, उनका लड़का तड़प रहा है। घबराये, वह क्या, ख़ैरियत तो है? लौंडी ने कहा—भैया यहां खेल रहे थे कि बिच्छू ने काट लिया। तभी से बच्चा तड़प कर लोट रहा है। अनवर ने आज़ाद को वहीं छोड़ा और खुद अस्पताल चले कि झटपट डॉक्टर को बुला लायें। मगर अभी पचास क़दम भी न गये होंगे कि सामने से उस बांके का भांजा आ निकला। आंखें चार हुईं। देखते ही शेर की तरह गरज कर बोला—ले संभल जा। अभी सिर खून में लोट रहा होगा। हिला और मैंने हाथ दिया। बांकों के मुंह चढ़ना खाला जी का घर नहीं। बेचारे अनवर बहुत परेशान हुए। उधर लड़के की वह हालत, इधर अपनी यह गत। जिस्म में ताक़त नहीं, दिल में हिम्मत नहीं। भागें, तो क़दम नहीं उठते; ठहरें तो पांव नहीं जमते। सैकड़ों आदमी इर्द-गिर्द जमा हो गये और बांके को समझाने लगे—जाने दीजिए, इनके मुक़ाबले में खड़े होना आपके लिए शर्म की बात है। अनवर की आंखें डबडबा आयीं। लोगों से बोले—भाई, इस वक़्त मेरा बच्चा घर पर तड़प रहा है, डॉक्टर को बुलाने जाता था कि राह में इन्होंने घेरा। अब किसी सूरत से मुझे बचाओ। मगर उस बांके ने एक न मानी। पैंतरा बदल कर सामने आ खड़ा हुआ। इतने में किसी ने अनवर के घर खबर पहुंचायी कि मियां से एक बांके से तलवार चल गयी। जितने मुंह उतनी बातें। किसी ने कह दिया कि चरका खाया और गर्दन खट से अलग हो गयी। यह सुनते ही अनवर की बीवी सिर पीट पीट कर रोने लगी—लोगो, दौड़ो, हाय, मुझ पर बिजली गिरी। हाय, मैं जीते-जी मर मिटी। फिर बच्चे से चिमट कर विलाप करने लगी—मेरे बच्चे, अब तू अनाथ हो गया, तेरा बाप दगा दे गया। हाय. मेरा सुहाग लुट गया।

मियां आज़ाद यह खबर पाते ही तीर की तरह घर से निकल कर उस मुक़ाम पर जा पहुंचे। देखा, तो ज़ालिम तलवार हाथ में लिये मस्त हाथी की तरह चिंघाड़ रहा है। आज़ाद ने झट से झपट कर अनवर को हटाया और पैंतरा बदल कर बांके के सामने आ खड़े हुए। वह तो जवानी के नशे में मस्त था, पहले, हथकडी का हाथ लगाना चाहा; मगर आज़ाद ने खाली दिया। वह फिर झपटा और चाहा कि चाकी का हाथ जमाये, मगर यह आड़े हो गये।

आजाद—बचा, यह उड़नघाइयां किसी गंवार को बताना। मेरे सामने छक्के छूट जाएं, तो सही। आओ चोट पर। वह बांका झल्लाकर झपटा और घुटना टेक कर पालट का हाथ लगाने ही को था कि आजाद ने पैंतरा बदला और तोड़ किया—मोढ़ा। मोढ़ा तो उसने बचाया, मगर आज़ाद ने साथ ही जनेवे का वह तुला हुआ हाथ जमाया कि उसका भंडारा तक खुल गया। धम से ज़मीन पर आ गिरा। मियां आज़ाद को सबने घेर लिया,

कोई पीठ ठोकने लगा, कोई डंड मलने लगा। अनवर लपके हुए घर गये। बीवी की बांछें खिल गयी, गोया मुर्दा जी उठा।

दूसरे दिन अनवर और आजाद कमरे में बैठे चाय पी रहे थे कि डाकिया हरी-हरी वर्दी फड़काये, लाल-लाल पगिया जमाये, ख़ासा टैयां बना हुआ आया और एक अखबार देकर लंबा हुआ। अनवर ने झटपट अख़बार खोला, ऐनक लगायी और अख़बार पढ़ने लगे। पढते-पढ़ते आखिरी सफ़े पर नज़र पड़ी, तो चेहरा खिल गया।

आजाद—यह क्यों खुश हो गये भई? क्या खबर है?

अनवर—देखता हूं कि यह इश्तिहार यहां कैसे आ पहुंचा? अखबारो मे इन बातो का क्या जिक्र? देखिए—

"जरूरत है एक अरबी प्रोफ़ेसर की नजीरपुर-कॉलेज के लिए। तनख्वाह दो सौ रुपये महीना।"

आजाद—अख़बारों मे सभी बातें रहती है, यह कोई तो नयी बात नही। अखबार लड़को का उस्ताद, जवानों को सीधी राह बताने वाला, बुड्ढो के तजुर्बे की कसौटी, सौदागरो का दोस्त, कारीग़रो का हमदर्द, रिआया का वकील, सब कुछ है। किसी कालम मे मुल्की छेड़-छाड़, कही नोटिस और इश्तिहार, अंग्रेजी अख़बारो मे तरह-तरह की बातें दर्ज होती है और देसी अखबार भी इनकी नक़ल करते है। शतरंज के नक्शे क़ौमी तमस्सुको का निर्ख़, घुड़दौड़ की चर्चा, सभी कुछ होता है। जब कभी कोई ओहदा खाली हुआ और अच्छा आदमी न मिला, तो हुक्काम इसका इश्तिहार देते है। लोगो ने पढ़ा और दरख़्वास्त दाग दी; लगा तो तीर, नही तुक्का।

अनवर—अब तो नये-नये इश्तिहार छपने लगेगे। कोई नया गंज आबाद करे, तो उसको छपवाना पड़ेगा—एक नौजवान साक़िन की जरूरत है, नये गज मे दूकान जमाने के लिए; क्योंकि जब तक धुआंधार चिलमे न उड़े, चरस की लौ आसमान की खबर न लाये, तब तक गज की रौनक नही। अफीमची इश्तिहार देगे कि एक ऐसे आदमी की जरूरत है, जो अफीम घोलने की ताक मे हो, दिन-रात पीनक मे रहे; मगर अफीम घोलने के वक़्त चौक उठे। आराम-तलब लोग छपवायेगे कि एक ऐसे किस्सा कहने वाले की जरूरत है, जिसकी जबान कतरनी की तरह चली जाय, जिसके अमीर-हमजा की दास्तान जबान पर हो, ज़मीन और आसमान के क़ुलाबे मिलाये, झूठ के छप्पर उड़ाये, शाम से जो बकना शुरू करे, तो तड़का कर दे। खुशामद पसंद लोग छपवायेंगे कि एक ऐसे मुसाहब की जरूरत है, जो आठो गांठ कुम्मैत हो, हां मे हा मिलाये, हमको सखावत मे हातिम, दिलेरी मे रुस्तम, अक़्ल मे अरस्तू बनाये—मुह पर कहे कि हुजूर ऐसे और हुजूर के बाप ऐसे, मगर पीठ-पीछे गालियां दे कि इस गधे को मैने खूब ही बनाया। बेफ़िक्रे छपवायेगे कि एक बटेर की जरूरत है, जो बढ-बढकर लात लगाता हो; एक मुर्ग की, जो सवाये-ड्योढे को मारे; एक मेढे की, जो पहाड़ मे टक्कर लेने से बंद न हो।

इतने में मिर्जा सईद भी आ बैठे। बोले—भई, हमारी भी एक जरूरत छपवा दो। एक ऐसी जोरू चाहिए जो चालाक और चुस्त हो, नख-सिख से दुरुस्त हो, शोख़ और चंचल हो, कभी-कभी हंसी मे टोपी छीनकर चपत भी जमाये, कभी रूठ जाये, कभी गुदगुदाये; खर्च करना न जानती हो, वरना हमसे मीजान न पटेगी; लाल मुह हो; सफ़ेद हाथ-पांव हो, लेकिन ऊचे कद की न हो, क्योकि मैं नाटा आदमी हूं; खाना पकाने मे उस्ताद हो, लेकिन हाजमा खराब हो, हल्की-फुल्की दो चपातियां खाय, तो तीन दिन मे हजम हो; सादा मिजाज ऐसी हो कि गहने-पाते से मतलब ही न रखे, हंसमुख हो, रोते को हंसाये, मगर यह नही कि फटी जूती की तरह बेमौका दांत निकाल दे, दरख़्वास्त खटाखट आयें, हां, यह भी याद रहे कि साहब के मुह पर दाढ़ी न हो।

आज़ाद—और तो ख़ैर, मगर यह दाढ़ी की बड़ी कड़ी शर्त है। भला क्यों साहब औरतें भी मुछक्कड़ हुआ करती हैं ?

सईद—कौन जाने भई, दुनिया में सभी तरह के आदमी होते हैं। जब वेमूंछ के मर्द होते हैं, तो मूंछ वाली औरतों का होना भी मुमकिन है। कहीं ऐसा न हो कि पीछे हमारी मूंछ उसके हाथ में और उसकी दाढ़ी हमारे हाथ में हो।

आज़ाद—अजी, जाइए भी औरत के भी कहीं दाढ़ी होती है ?

सईद—हो या न हो, मगर यह पख हम जरूर लगायेंगे।

आपस में यही मज़ाक हो रहा था कि पड़ोस से रोने-पीटने की आवाज़ आयी। मालूम हुआ कोई बूढ़ा आदमी मर गया। आज़ाद भी वहां जा पहुंचे। लोगों से पूछा इन्हें क्या बीमारी थी ? एक बूढ़े ने कहा—यह न पूछिए, हुकुम की बीमारी थी।

आज़ाद—यह कौन बीमारी है ? यह तो कोई नया मरज़ मालूम होता है। इसकी अलामतें तो बताइए।

बूढ़ा—क्या बताऊं, अक्ल की मार इसका खास सबब है। अस्सी वर्ष के थे, मगर अक़्ल के पूरे, तमीज छू नहीं गयी ! ख़ुदा जाने, धूम में बाल सफ़ेद किये थे या नज़ला हो गया था। हज़रत की पीठ पर एक फोड़ा निकला। दस दिन तक इलाज़ नदारद। दसवें दिन किसी गंवार ने कह दिया कि गुलेअब्बास के पत्ते और सिरका बांधो। झट से राज़ी हो गये। सिरका बाज़ार से ख़रीदा, पत्ते बाग़ से तोड़ लाये, और सिरके में पत्तों को खूब तर करके पीठ पर बांधो। दूसरे रोज़ फोड़ा आध अंगुल बढ़ गया। किसी और गौखे ने कह दिया कि भटकटैया बांधो, यह टोटका है। इसका नतीजा यह हुआ कि दर्द और बढ़ गया, किसी ने बताया कि इमली की पत्ती, धतूरा और गोबर लांधो। वहां क्या था, फौरन मंज़ूर। अब तड़पने लगे। आग लग गयी। मुहल्ले की एक औरत ने कहा—मैं बताऊं, मुझसे क्यों न पूछा। सरल तरकीब है, मूली के अचार के तीन क़तले लेकर ज़मीन में गाड़ दो। तीन दिन के बाद निकालो और कुएं में डाल दो। फिर उसी कुएं का पानी अपने हाथ भर कर पी जाओ। उसी दम चंगे न हो जाओ, तो नाक कटा डालूं। सोचे, भई इसने शर्त बड़ी कड़ी की है। कुछ तो है कि नाक बदली। झट मूली के कतले गाड़े और कुएं ने डाल पानी भरने लगे उस पर तुर्रा यह कि मारे दर्द के तड़प रहे थे। रस्सी हाथ से छूट गयी धम से गिरे, फोड़े में ठेस लगी, तिलमिलाने लगे यहां तक कि जान निकल गयी।

आज़ाद—अफ़सोस, बेचारे की जान मुफ्त में गयी। इन अक़्ल के दुश्मनों से कोई इतना तो पूछे कि हर ऐरे-गैरे की राय पर क्यों इलाज कर बैठते हो ? नतीजा यह होता है, या तो मरज़ बढ़ जाता है; या जान निकल जाती है।

पन्द्रह

मियां आज़ाद एक दिन चले जाते थे। क्या देखते हैं, एक पुरानी-धुरानी गड़हिया के किनारे एक दढ़ियल बैठे काई की कैफ़ियत देख रहे हैं। कभी ढेला उठाकर फेंका, छप। बुड्ढे आदमी और लौंडे बने जाते हैं। दाढ़ी का भी ख़याल नहीं। लुत्फ़ यह कि मुहल्ले भर के लौंडे इर्द-गिर्द खड़े तालियां बजा रहे हैं, लेकिन आप गड़हिया की लहरों ही पर लट्टू हैं। कमर झुकाये चारों तरफ़ ढेले और ठीकरे ढूंढ़ते फिरते हैं। एक दफ़ा कई ढेले उठाकर फेंके। आज़ाद ने सोचा, कोई पागल है क्या। साफ़-सुथरे कपड़े पहने, यह उम्र यह वज़ा, और किस मज़े से गड़हिया पर बैठे रंगरलियां मना रहे हैं। यह ख़बर नहीं कि गांव भर के लौंडे ने चपत ज़माने के लिए हाथ उठाया, मगर हाथ खींच लिया। दूसरे ने

पेड़ की आड़ से कंकड़ी लगायी। तीसरे ने दाढ़ी पर घास फेंकी। चौथे ने कहा—मिया, तुम्हारी दाढी मे तिनका; मगर मेरा शेर जरा न मिनका। गड़हिया से उठे, तो दूर की सूझी। झप से एक पेड़ पर चढ़ गये, फुनगी पर जा बैठे और बंदर की तरह लगे उचकने। उस टहनी पर से उचके, तो दूसरी डाल पर जा बैठे। उस पर लड़कों को भी बुलाते हे कि आओ, ऊपर आओ। इमली का दरख्त था, इतना ऊंचा कि आसमान से बातें कर रहा था। हजरत मजे से बैठे इमली खाते और चिये लड़कों पर फेंकते जाते है। लौंडे गुल मचा रहे है कि मियां, मियां, एक चियां हमको इधर फेंको, इधर; हाथ ही टूटे, जो उधर फेके। क्या मजे से गपर-गपर करके खाते जाते है, इधर एक चियां भी नही फेकते ओ कंजूस, ओ मक्खीचूस, ओ बंदर, अरे मुछंदर, एक इधर भी। थोड़ी देर में खटखट करते पेड़ से उतरे। इतने में कमसरियट के तीन-चार हाथी चारे और गन्ने से लदे झूमते हुए निकले। आपने लड़कों को सिखाया कि गुल मचा कर कहो—हाथी, हाथी गन्ना दे। लौडे ने जो इतनी शह पायी, तो आसमान सिर पर उठा लिया। सब चीखने लगे—हाथी, हाथी, गन्ना दे। एकाएक एक रीछवाला आ निकला। आपने झट रीछ की गरदन पकड़ी और पीठ पर हो रहे। टिक-टिक-टिक्, क्या टट्टू है! रीछवाला चिल्ल-पों मचाया ही किया, आपने दो-तीन लड़कों को आगे-पीछे अगल-बगल बिठा ही लिया। मजे से तने बैठे है, गोया अपने वक़्त के बादशाह है। थोड़ी देर बाद लड़कों को जमीन पर पटका, खुद भी धम से जमीन पर कूद पड़े, और झट लंगोट कस, ताल ठोक, रीछ से कुश्ती लड़ने पर आमादा हो गये। तब तो रीछवाला चिल्लाया—मियां, क्यों जान के दुश्मन हुए हो। चबा ही डालेगा! यह तो हवा के घोड़े पर सवार थे, आव देखा न ताव, चिमट ही तो गये और एक अंटी बतायी तो रीछ चारों खाने चित्त। लौंडों ने वह गुल मचाया कि रीछ पूरब भागा, और रीछवाला पश्चिम। मुहल्ले भर मे क़हक़हा उड़ने लगा। थोड़ी ही देर के बाद एक भड्डुरी आ निकला। धोती बांधे, पोथी बग़ल में दबाये, रुद्राक्ष की माला पहने, आवाज लगाता जाता है—साइत विचारें, सगुन विचारें। दढ़ियल के क़रीब से गुजरा, तो शिकार इनके हाथ आया। बोले—भई, इधर आना। उसकी बांछें खिल गयी कि पौ बारह है। अच्छी बोहनी हुई। दढ़ियल ने हाथ दिखाया और पूछा—हमारी कितनी शदियां होंगी? उसने कन्या, मकर, सिंह, वृश्चिक करके बहुत सोच के कहा—पांच। आपने उसकी पगड़ी उछाल दी। लड़कों को दिल्लगी सूझी, किसी ने सिर सुहलाया तो किसी ने चपत लगाया। अच्छी तरह बोहनी हुई। दढियल ने कहा—सच कहना, आज साइत देखकर चले थे या यों ही? अपनी साइत देख लेते हो या औरों को राह बताते हो? अच्छा, खैर, बताओ, हमारे यहां लड़का कब तक होगा? भड्डुरी ने कहा—बस, बस, आप और किसी से पूछिएगा। भर पाया। यह कहकर चलने को ही था कि दढियल ने लड़कों को इशारा किया। वे तो इनको अपना गुरु ही समझते थे। एक ने पोथी ली, दूसरे ने माला छिपायी, तीसरे ने पगिया टहला दी। दस-पांच चिमट गये। बेचारा बड़ी मुश्किल से जान छुड़ा कर भागा और क़सम खायी कि अब इस मुहल्ले मे क़दम न रखूंगा। इतने में खोंचेवाले ने आवाज दी—गुलाबी रेवड़ियां, करारी खुटियां, दालमोठ सलोने, मटर तिकोने। लौडे अपने-अपने दिल मे खुश हो गये कि दढ़ियल के हुक्म से खोंचा लूट लेंगे और खूब मिठाइयां चखेंगे। मगर उन्होने मना कर दिया—खबरदार, हाथ मत बढ़ाना। जब खोमचे वाला पास आया, तब उन्होंने मोल-तोल करके दो रुपये में सारा खोंचा मोल ले लिया और लड़कों को खूब छका कर खिलाया। एक दस मिनट के बाद आवाज आयी—खीरे लो, खीरे। आपने उचक कर टोकरा उलट दिया। सारे खीरे जमीन पर गिर पड़े। जैसे ही लड़कों ने चाहा, खीरे बटोरें कि उन्होंने डांट बतायी। खीरे वाले के दोनों हाथ पकड़ लिये और लड़कों से कहा—खीरे उठा-उठा कर इसी गड़हिया मे

फेंकते जाओ। पचास-साठ खीरे आनन-फानन गड़हिया में पहुंच गये। अभी तमाशा हो ही रहा था कि एक चिड़ीमार कंपा-जाल लिये हुए आ निकला। हाथ में तीन-चार जानवर, कुछ झोले के अन्दर। सब फड़फड़ा रहे हैं। कहता जाता है—काला भुजंगा मंगल के रोज़। दढ़ियल ने पुकारा—आओ मियां, इधर आओ। एक भुजंगा लेकर अपने ऊपर से उतार कर छोड़ा। चिड़ीमार ने कहा—टका हुआ। दूसरा जानवर एक लड़के पर से उतार कर छोड़ा। इसी तरह दस-पन्द्रह चिड़िया छांड़कर चुपचाप खड़े हो गये। गोया कुछ मतलब ही नहीं। चिड़ीमार ने कहा—हुजूर, दाम। आपने फ़र्माया—तुम्हारा नाम? तब तो वह चकराया कि अच्छे मिले। बोला—हुज़ूर, धेली के जानवर थे। आप बोले—कैसी धेली और कैसा धेला! कुछ घास तो नहीं खा गया? भंग पी गया है या शराब का नशा है? इधर लड़कों ने जाल-कंपा सब टहला दिया। थोड़ी देर रो-पीटकर उसने भी अपनी राह ली।

दढ़ियल ने लड़कों को छोड़ा और वहां से किसी तरफ़ जाना ही चाहते थे कि आज़ाद ने क़रीब आकर पूछा—हज़रत, मैं बड़ी देर से आपका तमाशा देख रहा हूं, कभी खीरे गड़हिया में फेंके, कभी इमली पर उचक रहे, कभी चिड़ीमार की खबर ली, कभी भड़ुरी को आड़े हाथों लिया। मुझे खौफ़ है कि आप कहीं पागल न हो जायें, जल्दी फ़स्द खुलवाइए।

दढ़ियल—मुझे तो आप ही पागल मालूम होते हैं। इन बातों के समझने के लिए बड़ी अक्ल चाहिए। सुनिए, आपको समझाऊं। गड़हिया पर बिस्तर जमाकर ढेले फेंकने और पेड़ पर उचक कर इमली खाने और हाथी से गन्ने मांगने का सबब यह है कि लौंडे भी हमारी देखा-देखी उचक-फांद में वर्क़ हो जायें, यह नहीं कि मरियल टट्टू की तरह जहां बैठे, वहीं जम गये। लड़कों को कम से कम दो घंटे रोज़ खेलना-कूदना चाहिए वरना बीमारी सतायेगी। रीछ वाले के रीछ पर उचक बैठने, रीछ को भगा देने और चिड़ीमार के जानवरों को मुफ़्त बेकौड़ी-बेदाम छुड़ा देने का सबब यह है कि जब हम जानवरों को तकलीफ़ में देखते हैं, तो कलेजे पर सांप लोटने लगता है और इन चिड़ीमारों का तो मैं जानी दुश्मन हूं। बस चले, तो काले पानी भिजवा दूं। जहां देखा कि दो-चार भलेमानुस खड़े हैं, लगे जानवरों को ज़ोर से दबाने, जिसमें वे चीखें, और लोग उनकी हालत पर कुछ दे निकलें, इनकी हड्डियां चढ़ जायें। खीरे इसलिए गड़हिया में फिकवा दिये कि आजकल हवा खराब है, खीरे खाने से भला-चंगा आदमी बीमार हो जाय। मगर इन कुंजड़ों-कबाड़ियों को इन बातों से क्या वास्ता? उन्हें तो अपने टकों से मतलब। मैंने समझा, एक कबाड़िये के नुक़सान से पचासों आदमियों की जान बच जाय, तो क्या बुरा? देख लो, खोमचे वाले को हमने अपने पास से दो रुपये खनाखन गिन दिये। अब समझे, इस तमाशे का हाल?

यह कहकर उन्होंने अपनी राह ली और आज़ाद ने भी दिल में उनकी नेकनीयती की तारीफ़ करते हुए दूसरी तरफ़ का रास्ता लिया। अभी कुछ ही दूर गये थे कि सामने से एक साहब आते हुए दिखायी दिये। उन्होंने आजाद से पूछा—क्यों साहब, आप अफ़ीम तो नहीं खाते?

आज़ाद—अफ़ीम पर खुदा की मार! क़सम ले लीजिए, जो आज तक हाथ से भी छुई हो। इसके नाम से नफ़रत है।

यह कहकर आज़ाद नदी के किनारे जा बैठे। वहां से पलट कर जो आये, तो क्या देखते हैं कि वही हज़रत ज़मीन पर पड़े आंखें मांग रहे हैं। चेहरे पर मुर्दनी छायी है, होंठ सूख रहे हैं, आंखों से आंसू बह रहे हैं। न सिर की फ़िक्र है, न पांव की। आज़ाद चकराये, क्या माजरा है। पूछा—क्यों भई, खैर तो है? अभी तो भले-चंगे थे, इतनी

जल्द कायापलट कैसे हो गयी ?

अफ़ीमची—भई, मैं तो मर मिटा। कहीं से अफ़ीम ले आओ। पिऊं, तो आंखें खुलें; जान में जान आये। छुटपन ही से अफ़ीम का आदी हूं। वक़्त पर न मिले, तो जान निकल जाय।

आज़ाद—अरे यार, अफ़ीम छोड़ो, नहीं इसी तरह एक दिन दम निकल जायेगा।

अफ़ीमची—तो क्या आप अमृत पीकर आये हैं ? मरना तो एक दिन सभी को है।

आज़ाद—मियां, हो बड़े तीखे; 'रस्सी जल गयी, मगर बल न गया।' पड़े सिसक रहे हो, मगर जवाब, तुर्की ब तुर्की ज़रूर दोगे।

अफ़ीमची—जनाब, अफ़ीम लानी हो तो लाइए, वर्ना यहां बक-बक सुनने का दिमाग़ नहीं।

आज़ाद—अफ़ीम लाने वाले कोई और ही होंगे, हम तो इस फ़िक्र में बैठे हैं कि आप मरें, तो मातम करें। हां, एक बात मानो तो अभी लपक जाऊं, ज़रा लकड़ी के सहारे से उस हरे-भरे पेड़ के तले चलो; वहां हरी-हरी घास पर लोट मारो, ठंडी-ठंडी हवा खाओ, तब तक मैं आता हूं।

अफ़ीमची—अरे मियां, यहां जान भारी है। चलना-फिरना उठना बैठना कैसा !

आखिर आज़ाद ने उन्हें पीठ पर लादा और ले चले। उनकी यह हालत कि आंखें बंद, मुंह खुला हुआ; मालूम ही नहीं कि जाते कहां हैं। आज़ाद ने उनको नदी में ले जाकर गोता दिया। बस क़यामत आ गयी। अफ़ीमची आदमी पानी की सूरत से नफ़रत, लगे चिल्लाने—बड़ा गच्चा दे गया, मारा, पटरा कर दिया ! उम्र भर में आज ही नदी में क़दम रखा; खुदा तुझसे समझे; सन से जान निकल गयी ठिठुर गया; अरे ज़ालिम, अब तो रहम कर। आज़ाद ने एक गोता और दिया। फिर ताबड़तोड़ कई गोते दिये। अब उनकी कैफ़ियत कुछ न पूछिए। करोड़ों गालियां दीं। आज़ाद ने उनको रेती में छोड़ दिया और लंबे हुए। चलते-चलते एक बरगद के पेड़ के नीचे पहुंचे, जिसकी टहनियां आसमान से बातें करती थीं और जटाएं पाताल की खबर लेती थीं। देखा एक हज़रत नशे में चूर एक दुबली-पतली टट्टुई पर सवार टिक-टिक करते जा रहे हैं।

आज़ाद—इस टट्टुई पर कौन लदा है ?

शराबी—अच्छा जी, कौन लदा है ! ऐसा न हो कि कहीं मैं उतर कर अंजर-पंजर ढीले कर दूं। यों नहीं पूछता कि इस हवाई घोड़े पर आसन जमाये, बाग उठाये कौन सवार जाता है। आंखों के आगे नाक, सूझे क्या खाक। टट्टू ऐसे ही हुआ करते हैं ?

आज़ाद—जनाब, कसूर हुआ, माफ़ कीजिए। सचमुच यह तो तुर्की नस्ल का पूरा घोड़ा है। खुदा झूठ न बुलाये, जमना पार की बकरी इससे कुछ ही बड़ी होगी।

शराबी—हां, अब आप आये राह पर। इस घोड़े की कुछ न पूछिए। मां के पेट से फुदकता निकला था।

आज़ाद—जी हां, वह तो इसकी आंखें ही कहे देती हैं। घोड़ा क्या, उड़न-खटोला है।

शराबी—इसकी क़ीमत भी आपको मालूम है ?

आज़ाद—ना साहब ! भला मैं क्या जानूं। आप तो खैर गधे पर सवार हुए हैं, यहां तो टांगों की सवारी के सिवा और कोई सवारी मयस्सर ही न हुई। मगर उस्ताद कितनी ही तारीफ़ करो, मेरी निगाह में तो नहीं जंचता।

शराबी—अच्छा, तो इसी बात पर कड़कड़ाये देता हूं।

यह कहकर एड़ लगायी मगर टट्टू ने जुंबिश तक न की। वह और अचल हो गया। अब चाबुक पर चाबुक मारते हैं, एड़ लगाते हैं और वह टसकने का नाम तक नहीं

लेता। आज़ाद ने कहा—बस ज़्यादा शेखी में न आइए, ठंडी-ठंडी हवा खाइये।

यह कहकर आज़ाद तो चले, मगर शरावी के पांव डगमगाने लगे। वाग अव छूटी और अव छूटी। दस क़दम चले और वाग रोक ली। पूछा—मियां, मुसाफ़िर, मैं नशे में तो नहीं हूं?

आज़ाद—जी नहीं, नशा कैसा? आप होश की वातें कर रहे हैं।

शरावी इसी तरह वार-वार आज़ाद से पूछता था। आखिर जब आज़ाद ने देखा कि यह अव घुड़िया पर से लुढ़का ही चाहते हैं, तो झट घुड़िया को एक खेत में हांक दिया, और गुल मचाया कि ओ किसान, देख, यह तेरा खेत चराये लेता है। किसान के कान में भनक पड़ी, तो लट्ठ कंधे पर रख लाखों गालियां देता हुआ झपटा। आज चचा वनाके छोड़ूंगा; रोज सुअरिया चरा ले जाते थे, आज वहुत दिन के वाद हत्थे चढ़े हो। नज़दीक गया, तो देखता है कि टट्टुई है और एक आदमी उस पर लदा है। किसान चालाक था। वोला—आप हैं वावू साहव! चलिए, आपको घर ले चलूं। वहीं खाना खाइए और आराम से सोइए। यह कहकर घुड़िया की रास थामे हुए, कांजी-हाउस पहुंचा और टट्टुई को कांजी-हाउस में ढकेल कर चंपत हुआ। यह वेचारे रात भर कांजी-हाउस में रहे, सुवह को किसी तरह घर पहुंचे।

सोलह

मियां आज़ाद के पांव में तो आंधी रोग था। इधर-उधर चक्कर लगाये, रास्ता नापा और पड़ कर सो रहे। एक दिन सांड़नी की खवर लेने के लिए सराय की तरफ़ गये, तो देखा, वड़ी चहल-पहल है। एक तरफ़ रोटियां पक रही हैं, दूसरी तरफ़ दाल वघारी जाती है। भठियारियां मुसाफ़िरों को घेर-घार कर ला रही हैं, साफ़-सुथरी कोठरियां दिखला रही हैं। एक कोठरी के पास एक मोटा ताज़ा आदमी जैसे ही चारपाई पर वैठा, पट्टी टूट गयी। आप गड़ाप से झिलंगे में हो रहे। अव वार-वार उचकते हैं; मगर उठा नहीं जाता। चिल्ला रहे हैं कि भाई, मुझे कोई उठाओ। आखिर भठियारों ने दाहिना हाथ पकड़ा, वायीं तरफ़ मियां आज़ाद ने हाथ दिया और आपको वड़ी मुश्किल से खींच-खांच के निकाला। झिलंगे से वाहर आये, तो सूरत विगड़ी हुई थी। कपड़े कई जगह मसक गये थे। झल्ला कर भठियारी से वोले—वाह, अच्छी चारपाई दी! जो मेरे हाथ-पांव टूट जाते या सिर फूट जाता, तो कैसी होती?

भठियारी—ऐ वाह मियां, 'उलटा चोर कोतवाल को डांटे!' एक तो छपरखट को चकनाचूर कर डाला, पट्टी के वहत्तर टुकड़े हो गये, देंगे टका और छह रुपये पर पानी फेर दिया, दूसरे हमीं को ललकारते हैं।

आज़ाद—जनाव इन भठियारिनों के मुंह न लगिए, कहीं कुछ कह वैठें, तो मुफ़्त की झेंप हो। देखभाल कर वैठा कीजिए। कहां से आ रहे हैं?

हकीम—यहीं तक आया हूं।

आज़ाद—आप आये कहां से हैं?

हकीम—जी गोपामऊ मकान है।

आज़ाद—यहां किस ग़रज़ आना हुआ?

हकीम—हकीम हूं।

आज़ाद—यह कहिए कि आप तवीव है।

हकीम—तवीव आप खुद होंगे, हम हकीम हैं।

आज़ाद—अच्छा साहव, आप हकीम ही सही; क्या यहां हिकमत कीजिएगा?

हकीम—और नही तो क्या, भाड़ झोंकने आया हूं ? या सनीचर पैरों पर सवार था ? भला यह तो फ़र्माइए कि यह कैसी जगह है ? लोग किस फैशन के है ? आब-हवा कैसी है ?

आजाद—यह न पूछिये जनाब। यहां के बाशिंदे पूरे घुटे हुए, आठों गांठ कुम्मैत है। और आब-हवा तो ऐसी है कि वर्षो रहिये, पर सिर मे दर्द तक न हो। पावभर की खुराक हो, तो तीन पाव खाइये। डकार तक आये, तो मुझे सजा दीजिये।

यह सुनकर हकीम साहब ने मुह बनाया और बोले—तब तो बुरे फसे !

आजाद—क्यों, बुरे क्यों फंसे ? शौक़ से हिकमत कीजिये। आब-हवा अच्छी है, बीमारी का नाम नही।

हकीम—हजरत, आप निरे बुद्धू है। एक तो आपने यह गोला मारा कि आब-हवा अच्छी है। इतना नही समझते कि आब-हवा अच्छी है, तो हमसे क्या वास्ता, हमे कौन पूछेगा। बस, हाथ पर हाथ रखे मक्खियां मारा करेंगे। हम तो ऐसे शहर जाना चाहते है, जहां हैजे का घर हो, बुख़ार पीछा न छोड़ता हो, दस्त और पेचिस की सबको शिकायत हो, चेचक का वह जोर हो कि ख़ुदा की पनाह। तब अलबत्ता हमारी हड़ियां चढ़ें। आपने तो वल्लाह, आते ही गोला मारा। आप फ़रमाते है कि यहां पाव भर के बदले तीन पाव गिजा हजम होती है। आमदनी टका नही और खायें चौगुना। तो कहिए, मरे या जिये ? बंदा सवेरे ही बोरियां-बंधना उठाकर चंपत होगा। ऐसी जगह मेरी बला रहे, जहां सब हट्टे-कट्टे ही नजर आते है। भला कोई ख़ास मरज भी है यहां ? या मरज़ का इस तरफ़ गुजर ही नही हुआ ?

आजाद—हजरत, यहां के पानी मे यह असर है कि वर्षो का मरीज आये, और एक क़तरा पी ले, तो बस, खासा हट्टा-कट्टा हो जाय।

हकीम—पानी क्या अमृत है ! तो सही, जो पानी में जहर न मिला दिया तो...।

आजाद—जनाब, हजारों कुएं और पचासो बावलियां है, किस-किस में जहर मिलाते फिरिएगा ?

हकीम—ख़ैर भाई, समझा जायेगा; मगर बुरे फंसे ! इस वक़्त होश ठिकाने नही है ! ओ भठियारी, जरी हमको पंसारी की दूकान से तोला भर सिकंजबीन तो ला देना।

भठियारी—ऐ मियां, पंसारी यहां कहां ? किसी फ़कीर की दुआ ऐसी है कि यहां हकीम और पंसारी जमने ही नही पाता। कई हकीम आये, मगर क़ब्र मे है। कई पंसारियों ने दूकान जमायी मगर चिता में फूंक दिये गये। यहां तो बीमारी ने आने की क़सम खायी है।

हकीम—भई, बड़ा निकम्मा शहर है। खुदा के लिए हमें टट्टू किराये पर कर दो, तो रफ़ू-चक्कर हो जाये। ऐसे शहर की ऐसी-तैसी।

इन्हें धता बता कर आजाद सराय के दूसरे हिस्से में जा पहुंचे। क्या देखते है, एक बुजुर्ग आदमी बिस्तर जमाये बैठे हैं। आजाद बेतक़ल्लुफ़ तो थे ही, 'सलामअलेक' कहकर पास जा बैठे। वह भी बड़े तपाक से पेश आये। हाथ मिलाया, गले मिले, मिजाज पूछा।

आजाद—आप यहां किस ग़रज से तशरीफ़ लाये हैं ?

उन्होंने जवाब दिया—जनाब, मै वकील हूं। यहां वकालत करने का इरादा है। कहिए, यहां की अदालत का क्या हाल है ?

आजाद—यह न पूछिए। यहां के लोग भीगी बिल्ली है; लड़ना-भिड़ना जानते ही नही। साल भर में दो-चार मुक़दमे शायद होते हों। चोरी-चकारी यहां कभी सुनने ही में नही आती। जमीन, आराज़ी, लगान, पट्टीदारी के मुक़दमे कभी सुने ही नही।

क़र्ज़ कोई ले न दे।

वकील साहब का रंग उड़ गया। मगर हकीमची की तरह झल्ले तो थे नहीं, आहिस्ता से बोले—सुभान अल्लाह, यहां के लोग बड़े भले आदमी हैं। ख़ुदा उनको हमेशा नेक रास्ते पर ले जाय। मगर दिल में अफ़सोस हुआ कि इस टीम-टाम, धूमधाम से आये, और यहां भी वही ढाक के तीन पात। जब मुक़दमे ही न होंगे, तो खाऊंगा क्या, दुश्मन का सिर। इन्हें भी झांसा देकर आज़ाद आगे बढ़े, तो देखा चारपाई बिछाये शहतूत के पेड़ के नीचे एक साहब बैठे हुक़्क़ा उड़ा रहे हैं। आज़ाद ने पूछा—आपका नाम ?

वह बोले—गुम-नाम हूं।

आजाद—वतन कहां है ?

वह—फ़क़ीर जहां पड़ रहे, वहीं उसका घर।

आजाद—आपका पेशा क्या है ?

वह—ख़ूने-जिगर खाना।

आज़ाद—तो आप शायर हैं, यह कहिए।

आज़ाद चारपाई के एक कोने पर बैठ गये और बेतक़ल्लुफ़ होकर बोले—जनाब, हुक़्क़ा तो मेरे हवाले कीजिये और आप अपना कलाम सुनाइये। शायर साहब ने बहुत कुछ चुना-चुनी के बाद दूसरे का कलाम अपना कहकर सुनाया—

क्या हाल हो गया है दिले-बेक़रार का
आज़ार हो किसी को इलाही, न प्यार का।
मशहूर है जो रोज़े-क़यामत जहान में;
पहला पहर है मेरी शबे-इंतज़ार का।
इमतास देखना मेरी वहशत के वलवले;
आया है धूमधाम से मौसम बहार का।
राह उनकी तकते-तकते जो मुद्दत गुज़र गयी;
आंखों को हौसला न रहा इंतिज़ार का।

आज़ाद—सुभान-अल्लाह, आपका कलाम बहुत ही पाकीज़ा है। कुछ और उस्तादों के कलाम सुनाइये।

शायर—बहुत ख़ूब; सुनिये—

दाग़ दे जाते हैं जब आते हैं;
यह शिगूफ़ा नया वह लाते हैं।

आज़ाद—सुभान-अल्लाह ! दाग़ के लिए शिगूफ़ा, क्या ख़ूब !

शायर—यार तक बार कहां पाते हैं;
रास्ता नाप के रह जाते हैं।

आज़ाद—वाह, क्या बोलचाल है !

शायर—फिर जुनूं दस्त न दिखलाये हमें;
आज तलवे मेरे खुजलाते हैं।

आज़ाद—वाह वाह, क्या ज़बान है !

शायर—फूल का जाम पिलाओ साक़ी;
कांटे तालू में पड़े जाते हैं।

आज़ाद—फूल के लिए कांटे क्या ख़ूब।

शायर—कंघी के नाम से होते है खफ़ा;
बात सुलझी हुई उलझाते है।

आजाद—बहुत खूब।

शायर—अच्छा जनाब, यह तो फ़र्माइए, यहां के रईसों में कोई शायरी का क़दरदान भी है?

आजाद—क़िब्ला, यह न पूछिये। यहां मारवाड़ी अलबत्ता रहते हैं। शायर या मुंशी की सूरत से नफ़रत है। यहां के रईसों से कुछ भी भरोसा न रखिये।

शायर—तब तो यहां आना ही बेकार हुआ। आखिर, क्या एक भी रंगीन मिजाजे रईस नही है?

आजाद—अब आप तो मानते ही नही। यहां क़दरदां खुदा का नाम है।

सत्रह

आजाद के दिल मे एक दिन समायी कि आज किसी मसजिद मे नमाज पढ़ें, जुमे का दिन है, जामे-मसजिद में खूब जमाव होगा। फ़ौरन मसजिद में आ पहुंचे। क्या देखते है, बड़े-बड़े जाहिद और मौलवी, क़ाजी और मुफ़्ती बड़े-बड़े अमामे सिर पर बांधे नमाज पढ़ने चले आ रहे है; अभी नमाज शुरू होने में देर है, इसलिए इधर-उधर की बातें करके वक़्त काट रहे है। दो आदमी एक दरख्त के नीचे बैठे जिन्न और चुड़ैल की बातें कर रहे हैं। एक साहब नवजवान है, मोटे-ताजे; दूसरे साहब बुड्ढे हैं, दुबले-पतले।

बुड्ढे—तुम तो दिमाग के कीड़े चाट गये। बड़े बक्की हो। लाखो दफ़े समझाया कि यह सब ढकोसला है, मगर तुम्हें तो कच्चे घड़े की चढ़ी है, तुम कब सुनने वाले हो।

जवान—आप बुड्ढे हो गये, मगर बच्चों की-सी बातें करते है। अरे साहब, बडे-बड़े आलिम, बड़े-बड़े माहिर भूतों के क़ायल है। बुढ़ापे मे आपकी अक़्ल भी सठिया गयी?

बुड्ढे—अगर आप भूत-प्रेत दिखा दें, तो टांग के रास्ते निकल जाऊं। मेरी इतनी उम्र हुई, कभी किसी भूत की सूरत न देखी। आप अभी कल के लौंडे है, आपने कहां देख ली?

जवान—रोज ही देखते है जनाब! कौन-सा ऐसा मुहल्ला है, जहां भूत और चुड़ैल न हों? अभी परसों की बात है, मेरे एक दोस्त ने आधी रात के वक़्त दीवार पर एक चुड़ैल देखी। बाल-बाल मोती पिरोये हुए, चोटी कमर तक लटकती हुई, ऐसी हसीन कि परियां झख मारें। वह सन्नाटा मारे पड़े रहे, मिनके तक नही। मगर आप कहते है, झूठ है।

बुड्ढे—जी हां झूठ है—सरासर झूठ। हमारा खयाल वह बला है, जो सूरत बना दे, चला-फिरा दे, बातें करते सुना दे। आप क्या जानें, अभी जुमा-जुमा आठ दिन की तो पैदाइश है। और मियां, करोड़ बातों की एक बात तो यह है कि मैं बिना देखे न पतियाऊंगा। लोग बात का बतंगड़ और सुई का भाला बना देते है। एक सही, तो निन्यानबे झूठ। और आप ऐसे ढुलमुलयक़ीन आदमियों का तो ठिकाना ही नही। जो सुना, फौरन मान लिया। रात को दरख्त की फुनगी पर बंदर देखा और थरथराने लगे कि प्रेत झांक रहा है। बोले और गला दबोचा। हिले और शामत आयी। अंधेरे-घुप में तो यों ही इनसान का जी घबराता है। जो भूत-प्रेत का खयाल जम गया, तो सारी चौकड़ी भूल गये। हाथ-पांव सब फूल गये। बिल्ली ने म्याऊं किया और जान निकल गयी। चूहे की खड़बड़ सुनी और बिल ढूंढने लगे। अब जो चीज़ सामने आयेगी, प्रेत बन जायेगी।

यहां सब पापड़ बेल चुके हैं। कई जिन्न हमने उतारे, कई चुड़ैलों से हमने मुहल्ले ख़ाली कराये। जहां दस जूते खोपड़ी पर जमाये और प्रेत ने बक़चा संभाला। यों ग़प उड़ाने को कहिए, तो हम भी ग़प बेपर की उड़ाने लगें। याद रखो, ये ओझे-सयाने सब रंगे सियार हैं। सब रोटी कमा खाने के लटके हैं। बंदर न नचाये, मुर्ग़ न लड़ाये, पतंग न उड़ाये, भूत-प्रेत ही झाड़ने लगे।

जवान—ख़ैर, इस तू-तू मैं-मैं से क्या वास्ता? चलिए हमारे साथ। कोई दो-तीन कोस के फ़ासले पर एक गांव है, वहां एक साहब रहते हैं। अगर आपकी खोपड़ी पर उनके अमल से भूत न चढ़ बैठे, तो मूंछ मुड़वा डालूं। कहियेगा, शरीफ़ नहीं चमार है। बस, अब चलिए, आपने तो जहां जरा-सी चढ़ायी और कहने लगे कि पीर-पयंबर, देवी-देवता, भूत-प्रेत सब ढकोसला है। लेकिन आज ठीक बनाये जाइयेगा।

यह कहकर दोनों उस गांव की तरफ़ चले। मियां आज़ाद तो दुनिया भर के बेफ़िक्रे थे ही, शौक़ चर्राया कि चलो, सैर देख आओ। यह भी पुराने खयालों के जानी दुश्मन थे। कहां तो नमाज़ पढ़ने मसजिद आये थे, कहां छू-छक्का देखने का शौक़ हुआ; मसजिद को दूर ही से सलाम किया और सीधे सराय चले। अरे, कोई इक्क़ा, किराये का होगा? अरे मियां, कोई भठियारा इक्क़ा भाड़े करेगा।

भठियारा—जी हां, कहां जाइयेगा?

आज़ाद—सकजमलदीपुर।

भठियारा—क्या दीजियेगा?

आजाद—पहले घोड़ा-इक्क़ा तो देखें—'घर घोड़ा नखास मोल!'

भठियारा—वह क्या कमानीदार इक्क़ा खड़ा है और यह सुरंग घोड़ी है, हवा से बातें करती जाती है; बैठे और दन से पहुंचे।

इक्का तैयार हुआ। आज़ाद चले, तो रास्ते में एक साहब से पूछा—क्यों साहब, इस गांव को सकजमलदीपुर क्यों कहते हैं? कुछ अजीब बेढंग-सा नाम है। उसने कहा—इसका बड़ा क़िस्सा है। एक साहब शेख़ ज़मालुद्दीन थे। उन्होंने गांव बसाया और इसका नाम रखा शेख़ज़मालुद्दीनपुर। गंवार आदमी क्या जानें, उन्होंने शेख़ का सक़, ज़माल का जमल और उद्दीन का दी बना दिया।

इक्क़े वाले से बातें होने लगीं। इक्क़े वाला बोला—हुजूर, अब रोज़गार कहां! सुबह से शाम तक जो मिला, खा-पी बराबर। एक रुपया जानवर खा गया, दस-बारह आने घर के ख़र्च में आये, आने दो आने सुलफ़े-तमाखू में उड़ गये। फिर मोची के मोची। महाजन के पचीस रुपये छह महीने से बेबाक़ न हुए। जो कहीं कच्ची में चार-पांच कोस ले गये, तो पुट्ठियां धंस गयीं पैंजनी, हाल, धुरा सब निकल गया। दो-चार रुपये के मत्थे गयी। रोज़गार तो तुम्हारी सलामती से तब हो, जब यह रेल उड़ जाय। देखिये, आप ही ने सात गंडे जमलदीपुर के दिये, मगर तीन चक्कर लगाकर।

कोई पौने दो घंटे में आज़ाद सकजमलदीपुर पहुंचे। पता-वता तो इनको मालूम था ही, सीधे शाह साहब के मकान पर जा पहुंचे। ठट के ठट आदमी जमा थे। औरत-मर्द टूटे पड़ते थे। एक आदमी से उन्होंने पूछा—क्या आज यहां कोई मेला है? उसने कहा—मेला-वेला नाहीं, एक मनई के मूड़ पर देवी आयी हैं, तौन मेहरारू, मनसेधू सब देखै आवत हैं। इसी झुंड में आज़ाद को वह बूढ़े मियां भी मिल गये, जो भूत-चुड़ैल को ढकोसला कहा करते थे। अकेले एक तरफ़ ले जाकर कहा—जनाब, मैंने मसजिद में आपकी बातें सुनी थीं। क़सम खाता हूं, जो कभी भूत-प्रेत का क़ायल हुआ हूं। अब ऐसी कुछ तदबीर करनी चाहिए कि इन शाह साहब की क़लई खुल जाये।

इतने में शाह साहब नीले रंग का तहमद बांधे, लम्बे-लम्बे बालों में हिना का तेल

डाले, मांग निकाले, खड़ाऊं पहने तशरीफ़ लाये। आंखों में तेज भरा था। जिसकी तरफ़ नजर भर कर देखा, वही कांप उठा। किसी ने क़दम लिये, किसी ने झुक कर सलाम किया। शाह साहब ने गुल मचाना शुरू किया—धूनी मेरी जलती है, जलती है और बलती है। धूनी मेरी जलती है। खड़ी मूंछोंवाला है, लम्बे गेसूवाला है, मेरा दरजा आला है। झूम-झूम कर जब उन्होंने यह आवाज़ लगायी तो सब लोग सन्नाटे में आ गये। एका-एक आपने अकड़कर कहा—किसी को दावा हो, तो आकर मुझसे कुश्ती लड़े। हाथी को टक्कर दूं, तो चिग्घाड़ कर भागे; कौन आता है?

अब सुनिए; पहले से एक आदमी को सिखा-पढ़ा रखा था। वह तो सधा हुआ था ही, झट सामने आकर खड़ा हो गया और बोला—हम लड़ेंगे। बड़ा कड़ियल जवान था; गैंडे की-सी गरदन, शेर का-सा सीना; मगर शाह साहब की तो हवा बंधी हुई थी। लोग उस पहलवान की हालत पर अफ़सोस करते थे कि बेधा है; शाह साहब चुटकियों में चुर्र-मुर्र कर डालेंगे।

खैर दोनों आमने-सामने आये और शाह साहब ने गरदन पकड़ते ही इतनी जोर से पटका कि वह बेहोश हो गया। आज़ाद ने बूढ़े मियां से कहा—जनाब,यह मिली भगत है। इसी तरह गंवार लोग मूड़े जाते है। मै ऐसे मक्कारों की क़ब्र तक से वाक़िफ़ हूं। ये बातें हो ही रही थीं कि शाह साहब ने फिर अकड़ते हुए आवाज़ लगायी—कोई और ज़ोर लगायेगा? मियां आज़ाद ने आव देखा न ताव, झट लंगोट बांध; चट से कूद पड़े। आओ उस्ताद; एक पकड़ हमसे भी हो जाय। तब तो शाह साहब चकराये कि यह अच्छे बिगड़े दिल मिले। पूछा—आप अंग्रेज़ी पढ़े है? आजाद ने कड़क कर कहा—अंग्रेज़ी नहीं, अंग्रेजी का बाप पढ़ा हूं। बस, अब संभलिये, मै आ गया। यह कहकर, घुटना टेक कलाजंग के पेच पर मारा, तो शाह साहब चारों खाने चित जमीन पर धम से गिरे। इनका गिरना था कि मियां आजाद छाती पर चढ़ बैठे। अब बताओ बच्चा, काट लूं नाक, कतर लूं कान, बांधू दुम में नमदा! बदमाश कहीं का! बूढ़े मियां ने झपट कर आज़ाद को गोद में उठा लिया। वाह उस्ताद, क्यों न हो। शाह साहब उसी दिन गांव छोड़कर भागे।

शाह साहब को पटकनी देकर और गांव के ढुलमुल-यक़ीन गंवारों को समझा-बुझा कर आज़ाद बूढ़े मियां के साथ-साथ शहर की तरफ़ चल खड़े हुए। रास्ते में उन्ही शाह साहब की बाते होने लगीं—

आजाद—क्यों, सच कहियेगा, कैसा अड़ंगा दिया? बहुत बिलबिला रहे थे। यहां उस्तादों की आंखें देखी है। पोर-पोर में पेंचैती कूट-कूट कर भरी है। एक-एक पेंच के दो-दो सौ तोड़ याद है। मैं तो उसे देखते ही भांप गया कि यह बना हुआ है। लड़ैतिये का तो कैंडा ही उसका न था। गरदन मोटी नहीं, छाती चौड़ी नहीं, बदन कटा-पिटा नहीं, कान टूटे नही। ताड़ गया कि धामड़ है। गरदन पकड़ते ही दबा बैठा।

बूढ़े मियां—अब इस गांव में भूलकर भी न आयेगा। एक मर्तबा का जिक्र सुनिये, एक बने हुए सिद्ध पालथी मार कर बैठे और लगे अकड़ने की कोई छिपा कर हाथ मे फूल ले, हम चुटकियों में बता देंगे। मेरे बदन में आग लग गयी मैने कहा—अच्छा, मैंने फूल लिया, आप बतलाइये तो सही। पहले तो आंखें नीली-पीली करके मुझे डराने लगे। मैंने कहा—हजरत, मैं इन गीदड़-भभकियों में नही आने का। यह पुतलियों का तमाशा किसी नादान को दिखाओ। बस, बताओ, मेरे हाथ में क्या है? थोड़ी देर तक सोच-साच कर बोले—पीला फूल है। मैने कहा—बिलकुल झूठ। तब तो घबराये और कहने लगे—मुझे धोखा हुआ। पीला नहीं, हरा फूल है। मैंने कहा—वाह भाई लाल-बुझक्कड़ क्यों न हो! हरा फूल आज तक देखा न सुना, यह नया गुल खिला। मेरा यह

कहना था कि उनका गुलाब-सा चेहरा कुम्हला गया। कोई उस वक़्त उनकी बेकली देखता। मैं जामे में फूला न समाता था। आख़िर इतने शर्मिंदा हुए कि वहां से पत्ता-तोड़ भागे। हम ये सब खेल खेले हुए हैं।

आज़ाद—ऐसे ही एक शाह साहब को मैंने भी ठीक किया था। एक दोस्त के घर गया, तो क्या देखता हूं कि एक फ़क़ीर साहब शान से बैठे हुए हैं और अच्छे-अच्छे पढ़े-लिखे आदमी उन्हें घेरे में खड़े हैं। मैंने पूछा—आपकी तारीफ़ कीजिये, तो एक साहब ने, जो उस पर ईमान ला चुके थे, दबे दांतों कहा—शाह साहब ग़ैबदां (त्रिकालदर्शी) हैं। आपके कमालों के झंडे गड़े हुए हैं। दस-पांच ने तो उन्हें आसमान ही पर चढ़ा दिया। मैंने दिल में कहा—बचा, तुम्हारी ख़बर न ली, तो कुछ न किया। पूछा, क्यों शाह जी, यह तो बताइये, हमारे घर में लड़का कब तक होगा? शाह जी समझे, यह भी निरे चोंगा ही हैं। चलो, अनाप-सनाप बताकर उल्लू बनाओ और कुछ ले मरो। मेरे बाप, दादे और उनके बाप के परदादे का नाम पूछा। यहां याद का यह हाल है कि बाप का नाम तो याद रहता है। दादाजान का नाम किस गधे को याद हो। मगर ख़ैर, जो ज़बान पर आया, ऊल-जलूल बता दिया। तब फ़र्माते क्या हैं, बच्चा दो महीने के अंदर ही अंदर बेटा ले। मैंने कहा—हैं शाह साहब, जरा संभले हुए। अब तो कहा, अब न कहियेगा। पन्द्रह दिन तो बंदे की शादी को हुए और आप फ़र्माते हैं कि दो महीने के अंदर ही अंदर लड़का ले। वल्लाह, दूसरा कहता, खून पी लेता। इस फ़िक़रे पर यार लोग खिलखिला कर हंस पड़े और शाह जी के हवास ग़ायब हो गये। दिल में तो करोड़ों ही गालियां दी होंगी, मगर मेरे सामने एक न चली। जनाब, उस दयार में लोग उन्हें ख़ुदा समझते थे। शाह जी कभी रुपये बरसाते थे। कभी बेफ़स्ल के मेवे मंगवाते थे, कभी घड़े को चकनाचूर करके फिर जोड़ देते थे। सैकड़ों ही अलसेंटे याद थीं, मेरा जवाब सुना, तो हक्का-बक्का हो गये। ऐसे भागे कि पीछे फिर कर भी न देखा। जहां मैं हूं, भला किसी सिद्ध या शाह जी का रंग जम तो जाय।

यही बातें करते हुए लोग फिर अपने-अपने घर सिधारे।

अठारह

मियां आज़ाद एक दिन चले जाते थे, तो देखते क्या हैं, एक चौराहे के नुक्कड़ पर भंग वाले की दूकान है और उस पर उनके एक लंगोटिये यार बैठे डींग की ले रहे हैं—हमने जो खर्च कर डाला, वह किसी को पैदा करना भी नसीब न हुआ होगा, लाखों कमाये, करोड़ों लुटाये, किसी के देने में न लेने में। आज़ाद ने झुक कर कान में कहा—वाह भई उस्ताद, क्यों न हो, अच्छी लंतरानियां हैं। बाबा तो आपके उम्र भर बर्फ़ बेचा किये और दादा जूते की दूकान रखते-रखते बूढ़े हुए। आपने कमाया क्या, लुटाया क्या? याद है, एक दफ़ा साढ़े छह रुपये की मुहर्रिरी पायी, मगर उससे भी निकाले गये। उसने कहा—आप भी निरे गावदी हैं। अरे मियां, अब ग़प उड़ाने से भी गये? भंग वाले की दूकान पर ग़प न मारूं, तो और कहां जाऊं? फिर इतना तो समझो कि यहां हमको जानता कौन है। मियां आज़ाद तो एक सैलानी आदमी थे ही, एक तिपाई पर टिक गये। देखते क्या हैं, एक दरख्त के तने सिरकी का छप्पर पड़ा है, एक तख्त बिछा है, भंग वाला सिल पर रगड़े लगा रहा है। लगे रगड़ा, मिटे झगड़ा। दो-चार बिगड़े-दिल बैठे गुल मचा रहे हैं—दाता तेरी दूकान पर हुन बरसे, ऐसी चकाचक पिला, जिसमें जूती खड़ी हो। थोड़ा-सा धतूरा भी रगड़ दो जिसमें खूब रंग जमे। इतने में मियां आज़ाद के दोस्त बोल उठे—उस्ताद, आज तो दूधिया डलवाओ। पीते ही ले उड़ें। चुल्लू में उल्लू हो जायें। दूकान

वाले उन्हे मीठी केवड़े से बसी हुई भंग पिलवायी। आप पी चुके, तो अपने दोस्त हरभज को भंग का एक गोला खिलाया और फिर वहां से सैर करने चले। इन्हे मुटापे के सबब से लोग भदभद कहा करते थे। चलते-चलते हरभज ने पूछा—क्यों यार, यह कौन मुहल्ला है?

भदभद—चीनी बाजार।

हरभज—वाह, कही हो न, यह चिनिया बाजार है।

भदभद—चिनिया बाजार कैसा, चीनी बाजार क्यों नही कहते।

हरभज—हम गली-गली, कूचे-कूचे से वाक़िफ़ है, आप हमें रास्ता बताते है? चिनिया बाजार तो दुनिया कहती है, आप कहने लगे चीनी बाजार है।

भदभद—अच्छा तो खबरदार, मेरे सामने अब चिनिया बाजार न कहियेगा।

हरभज—अच्छा किसी तीसरे आदमी से पूछो।

आजाद ने दोनो को समझाया—क्यो लड़े मरते हो। मगर सुनता कौन था। सामने से एक आदमी चला आता था। आजाद ने बढ़कर पूछा—भाई, यह कौन मुहल्ला है? उसने कहा—चिनिया बाजार। अब हरभज और भदभद ने उसे दिक करना शुरु किया। चीनी बाजार है कि चिनिया बाजार, यही पूछते हुए आध कोस तक उसके साथ गये। उस बेचारे को इन भगड़ो से पीछा छुड़ाना मुश्किल हो गया। बार-बार कहता था कि भई, दोनों सही है। मगर ये एक न सुनते थे। जब सुनते-सुनते उसके कान पक गये तो वह बेचारा चुपके से एक गली मे चला गया।

तीनो आदमी फिर आगे चले। मगर वह मसला हल न हुआ। दोनों एक दूसरे को बुरा-भला कहते थे; पर दो मे से एक को भी यह तसकीन न होती थी कि चिनिया बाजार और चीनी बाजार मे कौन-सा बड़ा फ़र्क़ है।

हरभज—जानते भी हो, इसका नाम चिनिया बाजार क्यो पड़ा।

भदभद—जानता क्यो नही। पहले यहां दिसावर से चीनी आकर बिका करती थी!

हरभज—तुम्हारा सिर? यहां चीन के लोग आकर आबाद हो गये थे, जभी से यह नाम पड़ा!

भदभद—गावदी हो!

इस पर दोनों गुथ गये। इसने उसको पटका, उसने इसको पटका। भदभद मोटे थे, खूब पिटे।

आजाद ने उन दोनों को यही छोड़ा और खुद घूमते-घामते जौहरी बाज़ार की तरफ़ जा निकले। देखा, एक लड़का झुका हुआ कुछ लिख रहा है। आजाद ने लिफ़ाफ़ा दूर से देखते ही खत का मजमून भांप लिया। पूछा—क्यों भई इस गांव का क्या नाम है?

लड़का—दिन को रतौंधी तो नही होती? यह गांव है या शहर?

आजाद—हां, हां वही शहर। मै मुसाफ़िर हूं, सराय का पता बता दीजिये।

लडका—सराय किसलिए जाइयेगा? क्या किसी भठियारी से रिश्तेदारी है?

आजाद—क्यों साहब, मुसाफ़िरों से भी दिल्लगी! हम तरजुमा करते है! खत हो, अर्जी हो, दरख्वास्त हो, उसका वह तरजुमा कर दें कि पढने वाला दंग रह जाये।

लड़का—तब तो जनाब, आप बड़े काम के आदमी हे। लो, हमारी इस अर्ज़ी का तरजुमा कर दो। एक चवन्नी दूगा।

आजाद—खैर, लाइये, बोहनी कर लूं। अर्जी पढिये।

लडका—आप ही पढ़ लीजिये।

आजाद—(अर्ज़ी पढ़कर) सुभान-अल्लाह, यह अर्ज़ी है या घर का दुखड़ा। भला

तुम्हारे कितने लड़के-लड़कियां होंगी ?

लड़का—अजी, अभी यहां तो शादी ही नहीं हुई ।

आज़ाद—तो फिर यह क्या लिख मारा कि सारे कुनवे का भार मेरे सिर है। और नौकरी भी क्या मांगते हो कि ज़माने भर कूड़ा साफ करना पड़े ? तड़का हुआ और वंपुलिस झांकने लगे, कभी भंगियों से तकरार हो रही है; कभी भंगिनों से चख-चख चल रही है । अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है, पढ़ो-लिखो, जमकर मेहनत करो, नौकरी की तुम्हें फ़िक्र है ?

लड़का—आप अर्ज़ी लिखते हैं कि सलाह वताते हैं ? मैं तो आपसे सलाह नहीं पूछता ।

आज़ाद—मियां, पढ़ने-लिखने का यह मतलव नहीं है कि नौकरी ही करे । और नहीं, तो वंपुलिस का दरोग़ा ही सही । खासे जौहरी बने हो, ऐसी कौन-सी मुसीवत आ पड़ी है कि इस नौकरी पर जान देते हो ?

इतने में एक लाला साहव क़लमदान लिये, ऐनक लगाये, आकर बैठ गये ।

आज़ाद—कहिये, आपको भी कुछ तरजुमा करना है ?

लाला—जी हां, इस अर्ज़ी का तरजुमा कर दीजिये । मेरे बुढ़ापे पर तरस खाइये।

आज़ाद—अच्छा, अपनी अर्ज़ी पढ़िए ।

लाला—सुनिये—

"ग़रीवपरवर सलामत,

अपना क्या हाल कहूं, कोई दो दर्जन तो वाल-वच्चे हैं । आख़िर, उन्हें सेर-सेर भर आटा चाहिए या नहीं । जोड़िये कितना हुआ । और जो यह कहिये कि सेर भर कोई लड़का नहीं खा सकता, तो जनाव, मेरे लड़के वच्चे नहीं हैं, कई-कई वच्चों के वाप हैं। इस हिसाव से 80 रु० का तो आटा ही हुआ । 10 रु० की दाल रखिये । वस, मैं और कुछ नहीं चाहता । मगर जो यह कहिये कि इससे कम में गुज़र करूं, तो जनाव, यह मेरे किये न होगा । रोटियों में ख़ुदा का भी साझा नहीं ।

"मेरे लियाक़त का आदमी इस दुनिया में तो आपको मिलेगा नहीं, हां शायद उस दुनिया में मिल जाये । वच्चे मैं खिला सकता हूं, वाज़ार से सौदे ला सकता हूं, वनिये के कान कतर लूं, तो सही । किस्से-कहानियों का तो मैं खजाना हूं । नित्य नयी कहानियां कहूं । मौक़ा आ पड़े, तो जूते साफ़ कर सकता हूं; मेम साहव और वावा लोगों को गाकर ख़ुश कर सकता हूं । ग़रज़, हरफ़न-मौला हूं । पढ़ा-लिखा भी हूं । वदनसीवी से मिडिल पास तो नहीं हूं; लेकिन अपने दस्तखत कर लेता हूं । जी चाहे इम्तहान ले लीजिये ।

"अव रही ख़ानदान की वात । तो जनाव, कमतरीन के वुज़ुर्ग हमेशा वड़े-वड़े ओहदों पर रहे । मेरे वड़े भाई की वीवी जिसे फूफी कहते हैं और जिससे मज़ाक का भी रिश्ता है, उसके वाप के ससुर के चचेरे भाई नहर के मोहकमे में 20 रु० महीने पर दारोगा थे । मेरे वावाजान म्युनिसिपैलिटी में सफ़ाई के जमादार थे और 10 रु० महीना मुशहरा पाते थे । चूंकि सरकार का हुक्म है कि अच्छे ख़ानदान के लोगों की परवरिश की जाये, इसलिए दो-एक वुज़ुर्गों का ज़िक्र कर दिया । वरना यहां तो सभी ओहदेदार थे । कहां तक गिनाऊं ।

'अव तो अर्ज़ी में और कुछ लिखना नहीं वाक़ी रहा । अपनी ग़रीवी का ज़िक्र कर ही दिया । लियाक़त की भी कुछ थोड़ी-सी चर्चा कर दी और अपने ख़ानदान का भी कुछ ज़िक्र कर दिया ।

"अव अर्ज़ है कि हुज़ूर, जो हमारे आक़ा हैं, मेरी परवरिश करें । अगर मुझ पर हुज़ूर की निगाह न हुई, तो मजवूर होकर मुझे अपने वाल-वच्चों को मिर्च के टापू में

भरती करना पड़ेगा।"

मियां आजाद ने जो यह अर्जी सुनी तो लोटने लगे। इतना हंसे कि पेट मे बल पड़-पड़ गये। जब जरा हंसी कम हुई, तो पूछा—लाला साहब, इतना और बता दीजिये कि आप है कौन ठाकुर?

लाला—जी, बंदा तो अग्निहोत्री है।

आजाद—फिर आपके शरीफ़-खानदान होने मे क्या शक है। मियां आदमी बनो। जाकर बाप-दादों का पेशा करो। भाड़ झोंकने मे जो आराम है, वह गुलामी करने मे नही। मुझसे आपकी अर्जी का तरजुमा न होगा।

उन्नीस

एक दिन मियां आजाद सांड़नी पर सवार हो घूमने निकले, तो एक थिएटर में जा पहुंचे। सैलानी आदमी तो थे ही, थिएटर देखने लगे, तो वक़्त का खयाल ही न रहा। थिएटर बन्द हुआ, तो बारह बज गये थे। घर पहुंचना मुश्किल था। सोचा, आज रात को सराय ही में पड़ रहें। सोये, तो घोड़े बेचकर। भठियारी ने आकर जगाया—अजी, उठो, आज तो जैसे घोड़े बेचकर सोये हो! ऐ लो, वह आठ का गजर बजा। अंगड़ाइयों पर अंगड़ाइया ले रहे हैं, मगर उठने का नाम नही लेते।

एक चंडूबाज भी बैठे हुए थे। बोले—तो तुमको क्या पड़ी है? सोने नही देती। क्या जाने, किस मौज में पड़े है। लहरी आदमी तो हई है। मगर सच कहना, कैसा धावत सैलानी है। दूसरा इतना घूमे, तो हलकान हो जाये। और जो जगाना ही मंजूर है, तो लोटे की टोंटी से जरा-सा पानी कान में छोड़ दो। देखो, कैसे कुलबुला कर उठ बैठते है।

भठियारी ने चुल्लू से मुंह पर छीटे देने शुरू किये। दस ही पांच बूदे गिरी थी कि आजाद हांय-हांय करते उठ खड़े हुए और बोले—यह क्या दिल्लगी है! कैसी मीठी नीद सो रहा था, लेके जगा दिया!

भठियारी—इतनी रात तक कहां घूमते रहे कि अभी नीद ही नही पूरी हुई?

आजाद—कहीं नही, जरा थिएटर देखने लगा था।

चंडूबाज—सुना, तमाशा बहुत अच्छा होता है। आज हमें भी दिखा देना। भई तुम्हारी बदौलत थिएटर तो देख लें। कै बजे शुरू होता है?

आजाद—यही कोई नौ बजे।

चंडूबाज—तो फिर मै चल चुका। नौ बजे शुरू हो, बारह बजे खत्म हो। कहीं एक बजे घर पहुंचें। मुहल्ले भर मे आग ढूंढ़ें, हुक्क़ा भरें, तवा जमायें, घण्टा भर गुड़गुड़ायें। पलंग पर जायें, तो नीद उचाट। करवटों पर करवटे लें, तब कही चार बजते बजते आंख लगे। फिर जो भलेमानुस चार बजे सोये, वह दोपहर तक उठने का नाम न लेगा। लीजिये, दिन यों गया। रात यों गयी। अब इंसान चंडू कब पिये, दास्तान कब सुने, पीनक के मजे कब उड़ाये? कौन जाय! क्या गुलाबो-शिताबो के तमाशे से अच्छा होता होगा? रीछवाले ही का तमाशा न देखे? मियां ऐंठा सिंह के मजे न उड़ाये, बकरे पर तने बैठे हैं, छीक पड़ी और खट से फुंदनीदार टोपी अलग। भई, कोई बेधा हो, जो वहां जाये। और फिर रुपये किसके घर से आयें? जब से अफीम सोलह रुपये सेर हो गई तब से तो ग़रीबों का और भी दिवाला निकल गया। और चंडू के ठेकों ने तो सत्यानाश ही कर दिया। सैलानी तो शहर का चूहा-चूहा है, मगर टिकट का नाम न हो। और भई साफ़ तो यों है कि हम लोग मुफ़्त के तमाशा देखनेवालों में से हैं। मेला-ठेला तो कों

छूटने ही नहीं पाता। सावन भर ऐशबाग़ के मेले न छोड़े; कभी इमलियों में झूल रहे हैं, कभी बंदरों की सैर देख रहे हैं। बहुत किया, तो एक गंडे के पौंड़े लिये। दो पैसे बढ़ाये और साक़िन की दूकान पर दम लगाया। चलिये, पांच-छः पैसे में मेला हो गया। सबसे बड़ी मुसीबत तो यह है कि वहां नादिरी हुक्म है कि कोई धुआं न उड़ाये, नहीं तो हम सोचे थे कि चंडू का सामान लेते चलेंगे और मज़े से किसी कोने में लेटे हुए उड़ाते जायेंगे। इसमें किसी के बाप का क्या इजारा!

भठियारिन—भई, टिकट माफ़ हो जाये, तो मैं भी चलूं।

आज़ाद—उनको क्या पड़ी है भला, जो बम्बई से अंगड़-खंगड़ लेकर इतनी दूर बेगार भुगतने आयें! वही बेठिकाने बात कहती हो, जिसके सिर न पैर।

चंडूबाज़—अच्छा, तो तुम्हारी ख़ातिर ही सही। तुम भी क्या याद करोगी। एक दिन हम भी चवन्नी गलायेंगे। तमाशा होता कहां है?

आज़ाद—यही छतरमंज़िल में, दस क़दम पर।

चंडूबाज़—दस क़दम की एक ही कही। तुम्हारी तरह यहां किसी के पांव में सनीचर तो है नहीं। सात बजे से चलना शुरू करें, तो दस बजे पहुंचें। बग्घी किराये पर करें, तो एक रुपया आने का और एक रुपया जाने का और ठुक जाय। 'मुफ़लिसी में आटा गीला।'

आज़ाद—अजी, मेरी सांड़नी पर बैठ लेना।

भठियारिन—मुझे भी उसी पर बिठा लेना। रात का वक़्त है, कौन देखता है।

शाम हुई, तो मियां आज़ाद ने सांड़नी कसी और सराय से चले। भठियारिन भी पीछे बैठ गई। मगर चंडूबाज़ ने सांड़नी की सूरत देखी, तो बैठने की हिम्मत न पड़ी। जब सांड़नी ने तेज़ चलना शुरू किया, तो भठियारिन बोली—इस मुई सवारी पर ख़ुदा की संवार! अल्लाह की क़सम, मारे हिचकोलों के नाक में दम आ गया। आज़ाद को शरारत सूझी, तो एक एड़ लगायी, वह और भी तेज़ हुई। तब तो भठियारिन आग भभूका हो गयी—यह दिल्लगी रहने दीजिये; मुझे भी कोई और समझे हो? मैं लाखों सुनाऊंगी। ले बस, सीधी तरह चलना हो तो चलो; नहीं मैं चीखती हूं। पेट का पानी तक हिल गया। ऐसी सवारी को आग लगे। मियां आज़ाद ने ज़रा लगाम को खींचा, तो सांड़नी बलबलाने लगी। बी भठियारी तो समझीं कि अब जान गयी। देखो, यह छेड़छाड़ अच्छी नहीं। हमें उतार ही दो। लो, और सुनो, ज़रा से हिचकोले में मुंह के बल आ रहूं, तो चकनाचूर ही हो जाऊं। तुम मुस्टंडों को इसका क्या डर! रोको, रोको, रोको। हाय, मेरे अल्लाह, मैं किस बला में फंस गयी! मियां, अपने ख़ुदा से डरो, बस हमें उतार ही दो। इत्तफ़ाक़ से सांड़नी एक दरख़्त की परछाईं देखकर ऐसी भड़की कि दस क़दम पीछे हट आयी। उसका बिचकना था कि बी भठियारिन धम से ज़मीन पर गिर पड़ी। ख़ुदा की मार! वह तो कहो, पक्की सड़क न थी। नहीं तो हड्डी-पसली चूर-चूर हो जाती।

चंडूबाज़—शाबाश है तेरी मां को, पटखनी भी खायी, मगर वही तेवर। दूसरी हयादार होती, तो लाख बरस तक सवार होने का नाम न लेती। सवारी क्या है, जनाजा है।

भठियारिन—चलिये, आपकी जूती की नोक से। हम बेहया ही सही। क्या झांसे देने आये हैं, जिसमें मैं उतर पड़ूं और आप मज़े से जम जायें। मुंह धो रखिये, हमने कच्ची गोलियां नहीं खेली हैं।

मगर इस झमेले में इतनी देर हो गयी कि जब थियेटर पहुंचे, तो तमाशा ख़त्म हो गया था। तमाशाई लोग बाहर निकल रहे थे।

आज़ाद—लीजिये, सारा मज़ा किरकिरा हो गया। इसी से मैं तुम लोगों को

साथ न ले आता था।

चंडूबाज़—औरतों को तो मेले-ठेले में ले ही न जाना चाहिए। हमेशा अलसेट होती है।

भठियारिन—जी हां, और क्या। मेले-ठेले तो आप जैसे खुर्राटों ही के लिए होते हैं। आज़ाद तमाशाइयों की बातें सुनने लगे—

एक—यार, इनके पास तो सामान खूब लैस है।

दूसरा—वाह, क्या कहना, पर्दे तो ऐसे कि देखे न सुने। बस, यही यक़ीन होता है कि बारहदरी का फ़ाटक है या परीख़ाना! जंगल का सामान दिखाया, तो वही बेल-बूटे, वही दूब, वही पेड़, वही झाड़ियां, बस, बिलकुल सुन्दरवन मालूम होता है।

तीसरा—और सब्ज़परी की तारीफ़ ही न करोगे?

चौथा—हज़रत, वह कहीं लखनऊ में छह महीने भी तालीम पाये, तो फिर आफ़त ही ढाये। लाखों लूट ले जाये, लाखों।

दूसरी तरफ़ गये, तो दो आदमी और ही तरह की बातें कर रहे थे—

एक—अजी, धोखा है, धोखा, और कुछ नहीं।

दूसरा—हां, टन-टन की आवाज़ तो आती है, बाक़ी ख़ैर-सल्लाह।

अब आज़ाद यहां बैठकर क्या करते। सोचा, आओ, सांड़नी पर बैठें और चलकर सराय में मीठी नींद के मज़े लें। मगर बाहर आकर देखते हैं, तो सांड़नी ग़ायब। थिएटर के अहाते में एक दरख़्त से बांध दिया था। मालूम नहीं, तड़पकर भागी या कोई चुरा ले गया। बहुत देर तक इधर-उधर ढूंढ़ा किये, मगर सांड़नी का पता न लगा। उधर और सवारियां भी तमाशाइयों को ले-लेकर चली गयीं। तब आज़ाद ने भठियारिन से कहा—अब तो पांव-पांव चलने की ठहरेगी।

भठियारिन—ना साहब, मुझसे पांव-पांव न चला जायेगा।

चंडूबाज़—देखिये, कहीं कोई सवारी मिले, तो ले आइये। यह बेचारी पांव-पांव कहां तक चलेगी?

आज़ाद—तो तुम्हीं क्यों नहीं लपक जाते?

भठियारिन (अलारक्खी)—ऐ हां, और क्या? चढ़ने को तो सबसे पहले तुम्हीं दौड़ोगे। तुम्हें बातचीत करने की भी तमीज़ नहीं।

आज़ाद—सवारी न मिलेगी, ठण्डे-ठण्डे घर की राह लो, बातचीत करते-करते चले चलेंगे।

दूसरे दिन आज़ाद ने सांड़नी के खोने की थाने में रपट कर दी। मगर जिस आदमी को भेजा था, उसने आकर कहा—हुजूर, थानेदार ने रपट नहीं लिखी और आपको बुलाया है।

आज़ाद—कौन, थानेदार? हमसे थानेदार से क्या वास्ता? उनसे कहो कि आपको खुद मियां आज़ाद ने याद किया है, अभी हाज़िर हों।

अलारक्खी—ले, बस बैठे रहो। बहुत उजड्डपना अच्छा नहीं होता। वाह, कहने लगे, हम न जायेंगे। बड़े वह बने हैं। आख़िर सांड़नी की रपट लिखवायी है कि नहीं? फिर अब दौड़ो-धूपोगे नहीं, तो बनेगी क्योंकर? और वहां तक जाते क्या चूड़ियां टूटती हैं, या पांव की मेंहदी गिर जायेगी?

आज़ाद—भई, हमसे थानेदार से एक दिन चख़ चल गयी थी। ऐसा न हो, कोतवाली के चबूतरे पर बैठकर जोम में आ जायें तो फिर मैं ले ही पड़ूंगा। इतना लेना, मैं आधी बात सुनने का रवादार नहीं। सांड़नी मिले या जहन्नुम में जाये, इसकी परवाह नहीं, मगर कोई ऐंड़ा-बेंड़ा फ़िक़रा सुनाया और मैंने कुर्सी के नीचे पटका। क्या

सुनें, चोर नही कि कोतवाल से डरूं, जुवाड़ी नहीं कि प्यादे की सूरत देखते ही जान निकले, वदमाश नहीं कि मुंह छिपाऊं, मरियल नहीं कि दो वातें सह जाऊं। कोई वोला और मैंने तलवार निकाली; फिर वह नहीं या मैं नहीं।

अलारक्खी—अरे, वह वेचारा तो एक हंसमुख आदमी है। लड़ाई क्यों होने लगी।

आज़ाद—ख़ैर, तुम्हारी ख़ुशी है, तो चलता हूं। मगर चलो तुम भी साथ, रास्ते में दो घड़ी दिल्लगी ही होगी।

आख़िर मियां आज़ाद और अलारक्खी दोनों थाने चले। एक कांस्टेवल भी साथ था। राह में एक आदमी अकड़ता हुआ जा रहा था। आज़ाद उसका अकड़ना देखकर आग हो गये। क़रीव जाकर एक धक्का जो दिया, तो उसने पचास लुढ़कनियां खायीं। थोड़ी दूर और चले थे कि एक आदमी चादर विछाये, उस पर जड़ी-वूटी फैलाये वैठा ग़प उड़ा रहा था। इस वूटी से अस्सी वरस का वूढ़ा जवान हो जाये, इस जड़ी को पानी में घिसकर एक तोला पिये; तो शेर का पंजा फेर दे। आज़ाद उसकी तरफ़ झुक पड़े—कहो भाई खिलाड़ी, यह क्या स्वांग रचा है? आज कितने अक़्ल के अंधे, गांठ के पूरे जाल में फंसे? यह कहकर एक ठोकर जो मारी; तो सारी वूटियां, पत्तियां, जड़ें एक में मिल गयीं। और आगे चले, तो गुल-गपाड़े की आवाज़ आयी। एक हलवाई ग्राहक से तकरार कर रहा था।

हलवाई—खाली भजिया नाहीं विकत है हमरी दुकान पर, कस-कस देई भला।

ग्राहक—अवे, मैं कहता हूं, कहीं एक गुद्दा न दूं।

आज़ाद—गुद्दा तो पीछे दीजियेगा, मैं एक गुद्दा कहीं आपकी गुद्दी पर न जमाऊं।

ग्राहक—आप कौन हैं वोलने वाले?

आज़ाद—उस वेचारे हलवाई को तुम क्यों ललकारते हो?

अलारक्खी—ऐ है, मियां, तुम कोई ख़ुदाई फ़ौजदार हो? किसी के फटे में तुम कौन हो पांव डालने वाले?

कांस्टेवल—भइयो, हो वड़े लड़ाका, वस काव कहो।

यहां से चले, तो थाने आ पहुंचे।

कांस्टेवल—हुज़ूर, ले आया, वह खड़े हैं।

थानेदार—अख़्ख़ाह! अलारक्खी भी हैं। मैं तो चाल ही से समझ गया था। कुछ वैठने को दो इन्हें, कोई है? सच कहना, तुम्हारी चाल से कैसे पहचान लिया?

आज़ाद—अपने-अपनों को सभी पहचान लेते हैं।

थानेदार—यह कौन वोला? कौन है भई?

अलारक्खी—ऐ, वस चलो, देख लिया। मुंह देखे की मुहव्वत है। घर की थानेदारी और अव तक मुई सांड़नी न मिली। तुमसे तो वड़ी-वड़ी उम्मीदें थीं।

थानेदार—(आज़ाद से) कहो जी, वह सांड़नी तुम्हारी है न?

आज़ाद—'तुम' का जवाव यहां नहीं देते; 'आप' कहिये; मैं कोई चरकटा हूं।

भठियारिन—हाय मेरे अल्लाह, मैं क्या करूं? यह तो जहां जाते हैं, दंगा मचाते हैं।

थानेदार—क्या कुछ इनसे सांठ-गांठ है? सच कहना, तुम्हें क़सम है अपने शेख सद्दू की।

अलारक्खी—लो, तुम्हें मालूम ही नहीं। अच्छी थानेदारी करते हो। मैं तो इनके घर पड़ गयी हूं न।

थानेदार—तो यह कहिये, लाओ भई, सांड़नी कांजी-हाउस से निकलवाओ ?

साडनी आ मौजूद हुई। मियां आज़ाद सवार हुए। भठियारिन भी पीछे वैठी।

आजाद—आज तुम कई आदमियो के सामने हमे अपना मिया वना चुकी हो। मुकर न जाना।

अलारक्खी—जरा चोच संभाले हुए; कही सांड़नी पर से ढकेल न दू।

अलारक्खी को यक़ीन हो गया कि आजाद मुझ पर रीझ गये। अब निकाह हुआ ही चाहता हे। यो ही बहुत नखरे किया करती थी, अव और भी नखरे बघारने लगी। नौ का अमल हो गया था। चारपाई पर धूप फैली हुई थी, मगर मक्कर किये पड़ी हुई थी। इतने मे चंडूबाज आये। आते ही पुकारा—मियां आज़ाद, मियां आजाद ! अलारक्खी ! यह आज क्या है यहां, खुदा ही खैर करे। दस का अमल और अभी तक खटिया ही पर पड़े है। कल रात को तमाशा भी तो न था। (दरख़्त की तरफ़ देखकर और सांड़नी बंधी हुई पाकर) जभी खुश-खुश सो रहे है। अरे मियां, क्या सांप सूंघ गया ? यह माजरा क्या है ? हां, अल्लाह कहकर उठ तो बैठ मेरे शेख़।

आजाद—(अंगड़ाई लेकर) अरे, क्या सुबह हो गयी ?

चंडूवाज—सुबह गयी खेलने, आंख तो खोलो, अव कोई दम में बारह की तोप दग़ा चाहती हे दन से। देखना, आज दिन भर सुस्ती न रहे तो कहना। वह तो जहा आदमी जरा देर करके उठा और हाथ-पांव टूटने लगे। अब एक काम करो, सिर से नहा डालो।

आजाद—क्या बक-बक लगायी है, सोने नही देता।

अलारक्खी चुपके-चुपके सब सुन रही है, मगर उठती नही। चंडूबाज उसकी चारपाई की पट्टी पर जा वैठे और वोले—ऐ उठ अल्लाह की वंदी, ऐसा सोना भी क्या ? यह कहकर आपने उसके बिखरे हुए वाल, जो जमीन पर लटक रहे थे, समेटकर चारपाई पर रखे। उधर मिया आजाद की आंख खुल गयी।

चंडूबाज—(गुदगुदाकर) उठो, मेरी जान की क़सम, वह हंसी आयी, वह मुसकरायी।

आजाद—ओ गुस्ताख़, अलग हटकर वैठ, हमारे मामने यह वेअदबी !

चंडूबाज—उह-उह, वड़े वारिस अली खां वन वैठे ! भई, आख़िर तुमको भी तो जगाया था, अब इनको जगाना शुरू किया, तिनगते क्यो हो भला ? मै तो सीधा-सादा, भोला-भाला आदमी हूं।

आजाद—जी हां, हमें तो कन्धा पकड़कर जगाया। यह मालूम हुआ कि चारपाई को जूडी चढ़ी या भूचाल आ गया और उन्हें गुदगुदा कर जगाते हो। क्यो वचा ?

अलारक्खी जागी तो थी ही, खिलखिलाकर हंस पड़ी—ऐ हट मरदुए, यह पलंग पर आकर वैठ जाना क्या; मुझे कोई वह समझ रखा है ?

चंडूवाज ने तैश खाकर कहा—वाह-वाह, पलंग की अच्छी कही। 'रहे झोपडो मे और ख़्वाब देखें महलो का।' कभी वावाराज ने भी पलग देखा था।

अलारक्खी—मियां, मुझसे यह जली-कटी बाते न कीजियेगा जरी। वाह, हम झोंपड़ो ही में रहती है सही; अव तो एक भलेमानस के घर पड़नेवाले है। क्यो मिया आज़ाद, है न, देखो, मुकर न जाना।

आजाद—वाह, मुकरने की एक ही कही, 'नेकी और पूछ-पूछ ?'

अलारक्खी—तिस पर भी तुम्हें शर्म नहीं आती कि इस उचक्के ने मुझे हाथ लगाया और तुम मुलुर-मुलुर देखा किये। दूसरा होता, तो महनामथ मचा देता।

चंडूवाज़—क्यों लड़वाती हो भला मुफ़्त मे ? हमे क्या मालूम था कि यहां निकाह

की तैयारियां हो रही हैं।

मियां आज़ाद हाथ-मुंह धोने बाहर गये, तो चंडूबाज़ और अलारक्खी में यों बातें होने लगीं।

चंडूबाज़—यार, फांसा तो बड़े मुड्ढ को? अब जाने न देना? ऐसा न हो, निकल जाये। भई, क़सम ख़ुदा की, औरत क्या, विष की गांठ है तू।

अलारक्खी—मगर तुम भी कितने बेशहूर हो, उसके सामने आपने गुदगुदाना शुरू किया। अब वह खटके कि न खटके? तुम्हारी जो बात है, दुनिया से अनोखी। ताड़-सा क़द बढ़ाया, मगर तमीज छू नहीं गयी।

चंडूबाज़—अब तुमसे झगड़े कौन? मैं किसी के दिल की बात थोड़े ही पढ़ा हूं। मगर भई, पक्की कर लो।

अलारक्खी—हां, पक्की-पोढ़ी होनी चाहिए। किसी अच्छे वकील से सलाह लो। वह कौन वकील हैं, जो कुम्मैत घोड़े की जोड़ी पर निकलते हैं—अजी वही, जो गबरू से हैं अभी।

चंडूबाज़ —वकीलों की न पूछो, तेरह सौ साठ हैं। किसी के पास ले चलेंगे।

अलारक्खी—नहीं, वाह, किसी बूढ़े वकील के यहां तो मैं न जाऊंगी। ऐसी जगह चलो, जो जवान हो, अच्छी सलाह दे।

चंडूबाज़—अच्छा, आज इतवार है। शाम को मियां आज़ाद से कहना कि हमें अपनी बहन के यहां जाना है। बस, हम फाटक के उस तरफ़ दुबके खड़े रहेंगे, तुम आना। हम-तुम चलकर सब मामला भुगता देंगे।

अलारक्खी—अच्छा-अच्छा, तुम्हें खूब सूझी।

इतने में आज़ाद मुंह-हाथ धोकर आये; तो अलारक्खी ने कहा—हमें तो आज बहन के यहां न्योता है, कोई कच्ची दो घड़ी में आ जाऊंगी।

आज़ाद—ज़रा साली की सूरत हमें भी तो दिखा दो। ऐसा भी क्या पर्दा है, कहो तो हम भी साथ-साथ चले चलें।

अलारक्खी—वाह मियां, तुम तो उंगली पकड़ते ही पहुंचा पकड़ने लगे! यह कहकर अलारक्खी कोठरी में गयी और सोलह सिंगार करके निकली, तो आज़ाद फड़क गये। पटियां जमी हुईं, गोरी-गोरी नाक में काली-काली लौंग, प्यारे-प्यारे मुखड़े पर हल्का-सा घूंघट, हाथों में कड़े, पांव में छड़े, छम-छम करती चली।

चंडूबाज़—उनके सामने चमक-चमक के बातें करना, यह नहीं कि झेंपने लगो।

अलारक्खी—मुझे और आप सिखायें! चमकना भी कुछ सिखाने से आता है। मेरी तो बोटी-बोटी यों ही फड़का करती है। तुम चलो तो, जो मेरी बातों और आंखों पर लट्टू न हो जायें, तो अलारक्खी नहीं। कुछ ऐसा करूं कि वह भी निकाह पर रजामन्द हो जायें, तो उनसे और आज़ाद से ज़रा जूती चले।

वकील साहब अपने बाग़ में तख़्त पर बैठे दोस्तों के साथ बातें कर रहे थे कि खिदमतगार ने आकर कहा—हुज़ूर, एक औरत आयी है। कहती है, कुछ कहना है।

दोस्त—कैसी औरत है भई? जवान है या खप्पट?

ख़िदमतगार—हुज़ूर, यह तो देखने से मालूम होगा, मुल है अभी जवान।

वकील—कहो, सुबह आये।

दोस्त—वाह-वाह, सुबह की एक ही कही। अजी, बुलाओ भी। हमारे सिर की क़सम, बुलाओ। कहो, टोपी तुम्हारे क़दमों पर रख दें।

अलारक्खी छड़ों को छम-छम करती, अजब मस्तानी चाल से इठलाती, बोटी-बोटी फड़काती हुई आयी। जिसने देखा, फड़क गया। सब रंगीले, बिगड़े दिल, बेफ़िक्रे

जमा थे। एक साहब नवाब थे, दूसरे साहब मुंशी। आपस में मज़ाक होने लगा—

नवाब—वंदगी अर्ज़ है ! ख़ुदा की क़सम, आप एक ही न्यारिये हैं।

मुंशी—भई, सूरत से तो भलेमानस मालूम होते थे, लेकिन एक ही रसिया निकले।

वकील—भई, अब हम कुछ न कहेंगे। और कहें क्या, छा गयी। बी साहिबा, आप किसके पास आयी हैं ? कहां से आना हुआ ?

अलारक्खी—अब ऐसी अजीरन हो गयी।

वकील—नहीं-नहीं, वाह बैठो, इधर तख़्त पर आओ।

अलारक्खी—हां, बनाइए, हम तो सीधे-सादे हैं साहब।

नवाब—आप भोली हैं, बजा है !

वकील—औरत हैं या परिस्तान की परी !

नवाब—रीझे-रीझे, लो बी, अब पौ-बारह हैं।

अलारक्खी—हुज़ूर, हम ये पौ-बारह और तीन-काने तो जानते नहीं, हमारा मतलब निकल जाये, तो आप सब साहबों का मुंह मीठा कर देंगे।

दोस्त—आपकी बातें ही क्या कम मीठी हैं !

इतने में चंडूबाज़ भी आ पहुंचे।

चंडूबाज़—हुजूर तो इन्हें जानते न होंगे, ये अलारक्खी हैं। इनका नाम दूर-दूर तक रोशन है।

वकील—इनका क्या इनके सारे खानदान का नाम रोशन है।

चंडूबाज़—सराय में एक आज़ाद नामी जवान आकर ठहरे हैं। वह इनके ऊपर जान देते हैं और यह उन पर मरती हैं। कई आदमियों के सामने वह क़बूल चुके हैं कि इनके साथ निकाह करेंगे। मगर आदमी हैं रंगीले, ऐसा न हो कि इनकार कर जायें। बस, इनकी यही अर्ज़ है कि हुज़ूर कोई ऐसी तदबीर बतायें कि वह निकल न सकें।

अलारक्खी—मुझ ग़रीबनी से कोई छप्पन टके तो आपको मिलने नही है। रहा, इतना सवाब कीजिये, जिसमें यह शिकंजे में जकड़ जायें।

मुंशी—अगर निकाह ही करने का शौक़ है तो हम क्या बुरे हैं ?

वकील—एक तुम्हीं क्या, यहां सब झंडे-तले के शोहदे छटे हुए लुच्चे जमा हैं ! जिसको यह पसन्द करें, उसी के साथ निकाह हो जाये।

अलारक्खी—हुज़ूर, लोग तो मुझसे दिल्लगी करते हैं।

वकील—अच्छा, कल आओ तो हम तुम्हें वह तरक़ीब बतायें कि तुम भी याद करो।

अलारक्खी—मगर बंदी ने कभी सरकार-दरबार की सूरत देखी नहीं। आप वकालत कीजियेगा ?

मुंशी—हां जी हां, इसमें मिन्नत ही क्या है। मगर जानती हो, ये वकील तो रुपये के आशना हैं।

अलारक्खी—वाह, रुपया यहां अल्लाह का नाम है। हम हैं, चाहे बेच लो।

वकील—अच्छा, कल आओ, पहले देखो तो वह क्या कहते हैं।

अलारक्खी अब यहां से उठना चाहती थी, मगर उठे कैसे। कनखियों से चंडूबाज़ की तरफ़ देखा कि अब यहां से चलना चाहिए। वह भी उसका मतलब समझ गये, बोले ऐ हुज़ूर, जरा घड़ी को तकलीफ़ दीजियेगा, देखिए तो, कै बजे हैं।

अलारक्खी—मैं अटकल से कहती हूं, कोई बारह बजे होंगे।

चंडूबाज़—मैं भी कहूं, यह जम्हाइयों पर जम्हाइयां क्यों आ रही हैं। नशे का

वक़्त टल गया। हलवाइयों की दूकानें भी बढ़ गयी होंगी। मलाई से भी गये। हुज़ूर, अब तो रुख़सत कीजिये। अब तो चंडू की लौ लगी है, आज सवेरे-सवेरे आज़ाद की मनहूस सूरत देखी थी, जभी यही हाल हुआ।

अलारक्खी—ले ख़बरदार, अबकी कहा तो कहा, अब आज़ाद का नाम लिया, तो मुझसे बुरा कोई नहीं; ज़बान खींच लूंगी। नाहक किसी पर छुद्दा रखना अच्छा नहीं।

नवाब—अरे भई, कोई है, देखो, दूकानें बढ़ न गयी हों, तो इनको यही चंडू पिलवा दें। ज़रा दो घड़ी और बी अलारक्खी से सोहबत गरमायें।

ख़िदमतगार—जाने को कहिए मैं जाऊं, मुल दुकानें कब की बढ़ गयी हैं; बाज़ार भर में सन्नाटा पड़ा है; चिड़ियां चुनगुन तक सो रही हैं; अब कोई दम में चक्कियां चलेंगी।

अलारक्खी—ऐं, क्या आधी रात ढल गयी ? ले, अब तो बंदी रुखसत होती है।

मुंशी—वाह, इस अंधेरी रात में ठोकरें खाती कहां जाओगी !

अलारक्खी—नहीं हुज़ूर, अब आंखें बन्द हुई जाती हैं। बस, अब रुख़सत। हुज़ूर, भूलिएगा नहीं। इतनी देर मज़े से बातें की हैं। याद रखियेगा लौंडी को।

मुंशी—वह हंसते आये, यहां से हमें रुलाके चले;
न बैठे आप मगर दर्द-दिल उठा के चले।

वकील—दिखाके चांद-सा मुखड़ा छिपाया ज़ुल्फ़ों में;
दुरंगी हमको ज़माने की वह दिखाके चले।

नवाब—न था जो कूचे में अपना क़याम मद्दे-नजर;
तो मेरे बाद मेरी ख़ाक भी उड़ाके चले।

ख़ुदा के लिए इतना तो इकरार करती जाओ कि कल ज़रूर मिलेंगे, हाथ पर हाथ मारो।

अलारक्खी—आप लोगों ने क्या जादू कर दिया; अब रुख़सत कीजिए।

वकील—यह भी कोई हंसी है कि रुख़सत का लेके नाम;
सौ बार बैठे-बैठे हमें तुम रुला चले।

नवाब—आंखों-आंखों में ले गये वह दिल;
कानों-कानों हमें ख़बर न हुई।

अलारक्खी यहां से चली, तो राह में डींग मारने लगी—क्यों, सब-के-सब हमारी छवि पर लोट गये न ? यहां तो फ़क़ीर की दुआ है कि जिस महफ़िल में बैठ जाऊं, वहीं कटाव होने लगे।

दोनों सराय में पहुंचे, तो देखा, आज़ाद जाग रहे हैं।

अलारक्खी—आज क्या है कि पलक तक न झपकी ? यह किसकी याद में नींद उचाट है ?

आज़ाद—हां, हां, जलाओ, दो-दो बजे तक हवा खाओ और हमसे आकर बातें बनाओ।

अलारक्खी—ऐ वाह, यह शक, तब तो मीज़ान पट चुकी। अब इनके मारे कोई भाई-बहन छोड़ दे। अब यह बताओ कि निकाह को कौन दिन ठीक करते हो ? हम आज सबसे कह आये कि मियां आजाद के घर पड़ेंगे।

आज़ाद—क्या सचमुच तुम सबसे कह आयीं ? कहीं ऐसा करना भी नहीं। मैं दिल्लगी करता था। ख़ुदा की क़सम फ़क़त दिल्लगी ही थी। मैं परदेशी आदमी, शादी-ब्याह करता फिरूंगा, और भठियारिन से ? माना कि तुम हो परी, मगर फिर भठियारिन ही तो ! चार दिन के लिए सराय में आकर टिके, तो यहां से यह बला ले जायें !

अलारक्खी—ऐ, चोंच संभाल मरदुए ! और सुनियेगा, हम बला है, जिस पर सारे शहर की निगाह पड़ती है ? दूसरा कहता, तो खून-खराब कर डालती। मगर करूं क्या, क़ौल हार चुकी हूं। बिरादरी भर में कलंक का टीका लगेगा। बला की अच्छी कही; तुम्हारे मुंह से मेरी एड़ी गोरी है, चाहे मिला लो।

आजाद—तो बी साहिबा, सुनिए, किसकी शादी और किसका ब्याह !

अलारक्खी—इन बातों से न निकलने पाइयेगा। कल ही तो मै नालिश दाग़ती हूं। इकरार करके मुकर जाना क्या खाला जी का घर है ? मियां, मैं तो अपनी वाली पर आयी, तो बड़ा घर ही दिखाऊंगी। किसी और भरोसे न भूलना। मुझसे बुरा कोई नही।

आजाद—ख़ुदा की पनाह, मै अब तक समझता था कि मै ही बड़ा घाघ हूं, मगर इस औरत ने मेरे भी कान काटे। भुला दी सारी चौकड़ी। ख़ुदा, तड़का जल्दी से हो, तो मैं दूसरी कोठरी लूं।

अलारक्खी—(नाक पर उंगली रखकर) रो दे, रो दे। इससे छोकरी ही हुए होते, तो किसी भलेमानस का घर बसता। भला मजाल पड़ी है कि कोई भठियारी टिकाये ?

आजाद—तो सारे शहर भर में आपका राज है कुछ ?

अलारक्खी—हुई है, हुई है, क्या हंसी-ठट्ठा है ? कल-परसों तक आटे-दाल का भाव मालूम हो जायेगा ?

आजाद—चलिये, आपकी बला से !

चंडूबाज—बला-बला के भरोसे न रहियेगा। दो-चार दिन ताथेइया मचेगी।

आजाद—जरी आप चुपके बैठे रहियेगा। यह तो कामिनी है, लेकिन तुम्हारी मुफ़्त में शामत आ जायेगी।

चंडूबाज—मेरे मुह न लगियेगा, इतना कहे देता हूं !

आजाद ने उठकर दो-चार चांटे जड़ दिये। अलारक्खी ने बीच-बचाव कर दिया।

अल्लाह करे, हाथ टूटें, लेके गरीब को पीट डाला।

चंडूबाज—मेरी भी तो दो-एक पड गयी जी !

अलारक्खी—ऐ चुप भी रह, बोलने को मरता है।

इस तरह लड़-झगड़कर तीनों सोये।

बीस

दूसरे दिन सवेरे आजाद की आंख खुली, तो देखा, एक शाह जी उनके सिरहाने खड़े उनकी तरफ देख रहे है। शाह जी के साथ एक लड़का भी है, जो अलारक्खी को दुआएं दे रहा है। आजाद ने समझा, कोई फ़क़ीर है, झट उठकर उनको सलाम किया। फ़क़ीर ने मुसकरा कर कहा—हुजूर, मेरा इनाम हुआ। सच कहिएगा, ऐसे बहुरुपिये कम देखे होंगे। आजाद ने देखा गच्चा खा गये, अब बिना इनाम दिये गला न छूटेगा। बस, अलारक्खी की भड़कीली दुलाई उठाकर दे दी। बहुरुपिये ने दुलाई ली, झुककर सलाम किया और लंबा हुआ। लौंडे ने देखा कि मै ही रहा जाता हूं ! बढकर आजाद का दामन पकड़ा। हुजूर, हमें कुछ भी नही ? आजाद ने जेब से एक रुपया निकालकर फेंक दिया। तब अलारक्खी चमककर आगे बढी और बोली—हमें ?

आजाद तुम्हारे लिए जान हाजिर है।

चंडूबाज—यह सब जबानी दाखिल है। बीवी को यह खबर ही नही कि दुलाई

इनाम में चली गयी। उलटे चली हैं मांगने। यह तो न हुआ कि चांदी के छड़े बनवा देते, या किसी दिन हमी को दो-चार रुपये दे डालते। जाओ मियां, बस, तुमको भी देख लिया। गौं के यार हो, 'चमड़ी जाय दमड़ी न जाय।'

अलारक्खी– कहीं तेरे सिर गरमी तो नहीं चढ़ गयी। जरा चंदिया के पट्टे कतरवा डाल। यह चमड़ी और दमड़ी का कौन मौक़ा था। यह बताइए, अब निकाह की कब तैयारियां हैं?

आज़ाद—अभी निकाह की उम्मेद आपको है? वल्लाह, कितनी भोली हो!

अलारक्खी—तो क्या आप निकल भी जाएंगे? ऐ, मैं तो चढ़ूंगी अदालत! कह-कहकर मुकर जाना क्या हंसी-ठट्ठा है!

आज़ाद—तो क्या नालिश कीजिएगा?

अलारक्खी—क्यों, क्या कोई शक भी है! हम क्या किसी के दबैल हैं?

चंडूबाज़—और गवाह को देख रखिए। दुलाई क्या झप से उठा दी। पराई दुलाई के आप कौन देनेवाले थे? अजी, मैं तो वह-वह सवाल-जवाब करूंगा कि आपके होश उड़ जायंगे।

आज़ाद—अच्छी बात है, यह शौक़ से नालिश करें आप गवाही दें। इन्हें तो क्या कहूं, पर तुम्हें समझूंगा।

चंडूबाज़—मुझसे ऐसी बातें न कीजिएगा, नहीं मैं फिर गुद्दा ही दूंगा।

अलारक्खी—चल, हट, बड़ा आया वहां से गुद्दा देनेवाला। अभी मैं चिमट जाऊं, तो चीखने लगे, उस पर गुद्दा देंगे।

आज़ाद—तो फिर जाइए वकील के यहां, देर हो रही है।

अलारक्खी—तो क्या सचमुच तुम्हें इनकार है? मियां, आंखें खुल जायंगी। जब सरकार का प्यादा आयेगा, तो भागने को जगह न मिलेगी।

चंडूबाज़—यह हैं शोहदे, यों नहीं मानने के। चलो चलें, दिन चढ़ता आता है। अभी कंघी-चोटी में तुम्हें घंटों लगेंगे और वह सरकारी-दरबारी आदमी ठहरे। मुवक्किल सुबह-शाम घेरे रहते हैं। जब देखो, बग्घियां, टमटम, फिटन, जोड़ी, गाड़ी, हाथी, घोड़े, पालकी, इक्के, तांगे, याबू, फिनस, म्याने दरवाज़े पर मौजूद।

आज़ाद—क्या और किसी सवारी का नाम याद नहीं था? आज सरूर खूब गठे हैं।

चंडूबाज़—अजी, यहां अलारक्खी की बदौलत रोज ही सरूर गठे रहते हैं।

अलारक्खी ने कोठरी में जाकर सिंगार किया और निखर कर चली, तो आज़ाद की निगाह पड़ ही गयी। आंखें चार हुई, तो दोनों मुस्करा दिये। चंडूबाज़ ने यह शेर पढ़ा—

उनको देखो तो यह हंस देते हैं;
आंख छिपती ही नहीं यारी की।

अलारक्खी एक हरी-हरी छतरी लगाये छम-छम करती चली। बिगड़े-दिल आवाज़ें कसते थे, पर वह किसी तरफ आंख उठाकर न देखती थी। चंडूबाज़ 'हटो, बचो' करते चले जाते थे। जरी हट जाना सामने से। ऐं, क्या छकड़ा आता है, क्यों हट जायं? अख्खाह, यह कहिए, आपकी सवारी आ रही है। लो साहब, हट गये। एक रसिया ने पीछा किया। ये लोग आगे-आगे चले जा रहे हैं और मियां रसिया पीछे-पीछे ग़ज़लें पढ़ते चले आ रहे हैं। चंडूबाज़ ने देखा कि यह अच्छे बिगड़े दिल मिले। साथ जो हुआ, तो पीछा ही नहीं छोड़ते। आप हैं कौन? या आगे बढ़िए या पीछे चलिए। किसी भलेमानस को सताते क्यों हैं? इस पर अलारक्खी ने चंडूबाज़ के कान में चुपके से कहा—यह भी तो शक़्ल-सूरत से भलेमानस मालूम होते हैं। हमें इनसे कुछ कहना है।

चंडूबाज़—आप तो वकील के पास चलती थीं, कहां इस सिड़ी-सौदई से सांठ-गांठ करने की सूझी? सच है, हसीनों के मिज़ाज का ठिकाना ही क्या। बोले—अजी साहब, जरी इधर गली में आइयेगा, आपसे कुछ कहना है।

रसिया—वाह, 'नेकी और पूछ-पूछ!'

तीनों गली में गये, तो अलारक्खी ने कहा—कहीं तुम्हारे मकान भी है? यहां इस गलियारे में क्या कहूं, कोई आवे, कोई जाय, खड़े-खड़े बातें हुआ करती हैं?

चंडूबाज़ ने सोचा कि दूसरा गुल खिला चाहता है। पूछा—मियां, तुम्हारा मकान यहां से कितनी दूर है। जो काले कोसों हो, तो मैं लपककर बग्घी किराया कर लूं। इनसे इतनी दूर न चला जायगा। इनको तो मारे नज़ाकत के छतरी ही का संभालना भारी है।

रसिया—नहीं साहब, दूर नहीं है। बस, कोई दस क़दम आइए। रसिया ने छतरी ले ली और ख़िदमतगार की तरह छतरी लगाकर साथ-साथ चलने लगे। चंडूबाज़ ने देखा, अच्छा गावदी मिला। खुद भी छतरी के साये में रईस बने हुए चलने लगे। थोड़ी देर में रसिया के मकान पर आ पहुंचे।

रसिया— वह आयें घर में हमारे, खुदा की क़ुदरत है,
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं।

यहां तो सच्चे आशिक़ हैं। जिसको दिल दिया, उसको दिया। जान जाय, माल जाय, इज्जत जाय; सब मंजूर है।

चंडूबाज़—अच्छा, अब इनका मतलब सुनिए। यह बेचारी अभी अठारह-उन्नीस बरस की होंगी? अभी कल तो पैदा हुई हैं। अब सुनिए कि इनके मियां इनसे लड़-झगड़कर हैदराबाद भाग गये। वहां किसी को घर में डाल लिया। अब यह अकेली हैं, इनका जी घबराता है, इतने में एक शौक़ीन रईस सराय में उतरे, बड़े ख़ूबसूरत कल्ले-छल्ले के जवान हैं।

अलारक्खी—मियां, आंखें तो ऐसी रसीली कि देखी न सुनी।

चंडूबाज़—ऐ, तो मुझी को अब कहने दो। तुम तो बात काटे देती हो। हां, तो मैं कहता था कि इनकी-उनकी आंखें चार हुईं, तो इधर यह, उधर वह, दोनों घायल हो गये। पहले तो आंखों ही आंखों में बातें हुआ की। फिर खुल के साफ़ कह दिया कि हम तुमको व्याहेंगे। फिर न जाने क्या समझकर मुकर गये। अब इनका इरादा है कि उन पर नालिश ठोंक दें।

रसिया—अजी, उनको भाड़ में झोंको। जो व्याह ही करना है, तो हमसे निकाह पढ़वाओ। उनको धता बताओ।

अलारक्खी—सच कहूं, तुम मर्दों का हमें एतबार दमड़ी भर भी नहीं रहा। अब जी नहीं चाहता कि किसी से दिल मिलायें।

रसिया—तुमने अभी हमें पहचाना ही नहीं। पांचों उंगलियां बराबर नहीं होतीं। हम शरीफ़जादे हैं।

अलारक्खी—लोग यही समझते हैं कि अलारक्खी बड़ी खुशनसीब है। मगर मियां, मैं किससे कहूं, दिल का हाल कोई क्या जाने।

चंडूबाज़—यही देखिए, अर्जीदावा है।

रसिया—अरे, यह किस पागल ने लिखा है जी? ऐसा भला कहीं हो सकता है कि सरकार आजाद से तुम्हारा निकाह करवा ही दे? हां, इतना हो सकता है कि हरजा दिलवा दे। पर उसका सबूत भी ज़रा मुश्किल है।

अलारक्खी—अजी, होगा भी, मसौदा फाड़ डालो। आजाद से अब मतलब ही

क्या रहा ?

रसिया—हम वतायें, नालिश तो दाग दो। हरजा मिला तो हर्ज ही क्या है। वाक़ी व्याह किसी के अख़्तियार में नहीं। उधर तुमने मुक़दमा जीता, इधर हम वरात लेकर आये।

अलारक्खी—तो चलो, तुम भी वकील के यहां तक चले चलो न।

रसिया—हां, हां, चलो।

तीनों आदमी वकील के यहां पहुंचे। लेकिन वड़ी देर तक वाहर ही टापा किये। यह रईस आये, वह अमीर आये। कभी कोई महाजन आया। वड़ी देर के वाद इनकी तलवी हुई; मगर वकील साहव जो देखते हैं, तो अलारक्खी का मुंह उतरा हुआ है, न वह चमक-दमक है, न वह मुसकराना और लजाना। पूछा—आखिर, माजरा क्या है ? आज इतनी उदास क्यों हो ? कहां वह छवि थी, कहां यह उदासी छायी हुई है ? अलारक्खी ने इसका तो जवाव कुछ न दिया, फूट-फूटकर रोने लगी। आंसू का तार वंध गया। वकील सन्नाटे में। आज यह क्या माजरा है, इनकी आंखों में आंसू !

चंडूवाज़—हुज़ूर, यह वड़ी पाकदामन हैं। जितनी ही चंचल हैं, उतनी ही समझदार। मेरा ख़ुदा गवाह है, वुरी राह चलते आज तक नहीं देखा। इनकी पाकदामनी की क़सम खानी चाहिए। अव यह फ़रमाइए, मुक़दमा कैसे दायर किया जाय।

रसिया—जी हां, कोई अच्छी तदवीर वताइए। ज़वरदस्ती शादी तो हो नहीं सकती। अगर कुछ हरजाना ही मिल जाय, तो क्या वुरा ? भागते भूत की लंगोटी ही सही। कुछ तो ले ही मरेंगी।

चंडूवाज़—मरें इनके दुश्मन, आप भी कितने फूहड़ हैं, वाह !

वकील—अच्छा, यह तो वताइए कि वह रईस कहां से आयेंगे, जो कहें कि हमसे और इनसे व्याह की ठहरी थी ?

रसिया—अव वता ही दूं। वंदा ही कहेगा कि हमसे महीनों से वातचीत है, आज़ाद वीच में कूद पड़े। वल्लाह, वह-वह जवाव दूं कि आप भी ख़ुश हो जायं।

वकील—वाह तो फिर क्या पूछना। हम आपको दो-एक चुटकुले वता देंगे, कि आप फर्राटे भरने लगिएगा। मगर दो-एक गवाह तो ठहरा लीजिए।

चंडूवाज़—एक गवाह तो मैं ही वैठा हूं, फर्राटेवाज़।

ख़ैर तीनों आदमी कचहरी पहुंचे। जिस पेड़ के नीचे जाकर वैठे, वहां मेला-सा लग गया। कचहरी भर के आदमी टूटे पड़ते हैं। धक्कमधक्का हो रहा है। चंडूवाज़ वारिस अलीखां वने वैठे हुक़्क़ा गुड़ागुड़ा रहे हैं। जाओ भई, अपना काम करो, आख़िर यहां क्या मेला है, क्या भेड़िया-धसान है।

एक—आप लाये ही ऐसी हैं।

दूसरा—अच्छा, हम खड़े हैं, आपका कुछ इजारा है ? वाह, अच्छे आये।

तीसरा—भाई, जरी हंस-वोल लें, आखिर मरना तो है ही।

जव एक वजा, तो वी अलारक्खी इठलाती हुई सवाल देने चलीं। चंडूवाज़ एक हाथ में हुक़्क़ा लिये हैं, दूसरे में छतरी। ख़िदमतगार वने चले जाते हैं। लोग इधर-उधर झुंड के झुंड खड़े हैं; पर कोई वताता नहीं कि अर्ज़ी कहांदी जाती है। एक कहता है, दाहिने हाथ जाओ। दूसरा कहता है, नहीं-नहीं वायें। वड़ी मुश्किल से इजलास तक पहुंची।

उधर आज़ाद पड़े-पड़े सोच रहे थे कि इस वेफ़िक्री का कहीं ठिकाना है ? जो कहीं नवाव के आदमी छूटें तो चोर के चोर वनें और उल्लू के उल्लू वनाये जायें। किसी को मुंह दिखाने लायक न रहें। आवरू पर पानी फिर गया। अभी देखिए, क्या क्या होता

है—कहां-कहां ठोकरे खाते है !

इतने मे सराय मे लेना-लेना का गुल मचा। यह भी भड़-भड़ाकर कोठरी से वाहर निकले, तो देखते है कि सांड़नी ने रस्सी तोड़-ताड़कर फेंक दी है और सराय भर मे उचकती फिरती है। पहले एक मुसाफ़िर के टट्टू की तरफ़ झुकी और उसको मारे पुस्तों के बौखला दिया। मुसाफ़िर वेचारा एक लग्गा लिये खटाखट हाथ साफ़ कर रहा है। फिर जो वहां से उछली, तो दो-तीन वैलों का कचूमर ही निकाल डाला। गाड़ीवान हांय-हांय कर रहा है; लेकिन इस हांय-हांय से भला ऊंट समझा किये है। यहां से झपटी, तो तीन-चार इक्कों के अंजर-पंजर अलग कर दिये। आजाद तोवड़ा दिखा रहे है और आवाजें कर रहे है। लोग तालियां बजा देते है, तो वह और भी बौखला जाती है। वारे बडी मुश्किल से नकेल उनके हाथ मे आयी। उसे बांधकर कही जाने की तैयारी कर रहे थे कि अलारक्खी और चंडूवाज अदालत के एक मजकूरी के साथ आ पहुंचे। आजाद ने मुंह फेर लिया और मीठे सुरों में गाने लगे—

ठानी थी दिल मे, अब न मिलेगे किसी से हम;
पर क्या करें कि हो गये लाचार जी से हम।

मजकूरी—हुजूर, सम्मन आया है।

आजाद—तुम मेरे पास होते हो गोया;
जब कोई दूसरा नही होता।

मजकूरी—सम्मन आया है, गाने को तो दिन भर पड़ा है, लीजिए, दस्तखत तो कर दीजिए।

आजाद—धो दिया अश्के-नदामत को गुनाहों ने मेरे;
तर हुआ दामन, तो वारे पाक-दामन हो गया।

मजकूरी—अजी साहब, मेरी भी सुनिएगा ?

आजाद—क्या हमसे कहते हो ?

मजकूरी—और नही तो किससे कहते है ?

आजाद—कैसा सम्मन, लाओ, जरा पढ़ें तो। लो, सचमुच ही नालिश जड़ दी।

मजकूरी ने सम्मन पर दस्तखत कराये और अलारक्खी को घेरा। आज तो हाथ गरमाओ, एक चेहराशाही लाओ। अलारक्खी ने कहा—ऐ, तो अभी सूत न कपास, इनाम-विनाम कैसा ? मुक़दमा जीत जायं, तो देते अच्छा लगे।

मजकूरी—तुम जीती दाखिल हो बीवी। अच्छा, कल आऊंगा।

मियां आजाद के पेट में चूहे कूदने लगे कि यह तो वेढव हुई। मैने जरा दिल-वहलाव के लिए दिल्लगी क्या कर दी कि यह मुसीवत गले आ पड़ी। अब तो ख़ैरियत इसीमें है कि यहां से मुंह छिपाकर भाग खड़े हों। बी अलारक्खी चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगी—अब तो चांदी है। जीते, तो घी के चिराग जलायेंगे। एक ने कहा—यह न कहा, मुह मीठा कराएंगे, गुलगुले खिलायेंगे। दूसरी ने कहा—न खिलायेगी, तो निकाह के दिन ढोलक कौन बजायेगा ? आजाद मौक़े की ताक मे थे ही, अलारक्खी की आंख चूकते ही झट से काठी कसी और भागे। नाके तक तो उनको किसी ने न टोका, मगर जब नाके से कोई गोली भर के टप्पे पर वाहर निकल गये तो मियां चंडूवाज से आंखें चार हुई। अरे ! ग़जब हो गया, अब धर लिये गये।

चंडूवाज—ऐ बड़े भाई, किधर की तैयारियां है ? यह भाग जाना हंसी-ठट्ठा नही है कि काठी कसी और चल खड़े हुए। आंखों में ख़ाक झोककर चले आये होगे। ले बस, उतर पड़ो, आओ, जरी हुक़्क़ा तो पी लो।

आजाद—इस दम में हम न आयेंगे। ये फ़िकरे किसी गंवार को दीजिए। आप

अपना हुक़्क़ा रहने दें। बस, अब हम खूब पी चुके। नाकों दम कर दिया बदमाशों ने! चले थे मुक़दमा दायर करने। किस मज़े से कहते हैं कि हुक़्क़ा पिये जाओ। ऐसे ही तो आप बड़े दोस्त हैं!

चंडूबाज़—नेकी का ज़माना ही नहीं। हमने तो कहा, इतने दिन मुलाक़ात रही है, आओ भाई, कुछ ख़ातिर कर दें, अब ख़ुदा जाने, कब मिलना हो।

आज़ाद—ख़ुदा न करे, तुम जैसे मनहूसों की सूरत ख्वाब में भी नज़र आये।

चंडूबाज़ ने गुल मचाना शुरू किया—दौड़ो, चोर है, लेना, चोर, चोर! मियां आज़ाद ने चंडूबाज़ पर सड़ाक से कोड़ा फटकारा और सांडनी को एक एड़ लगायी। वह हवा हो गयी। शहर से बाहर हुए, तो राह में दो मुसाफ़िरों को यों बातें करते सुना—

पहला—अरे मियां, आजकल लखनऊ में एक नया गुल खिला है। किसी न्यारिये ने करोड़ों रुपये के जाली स्टाम्प बनाये और लंदन तक में जाकर कूड़े किये। सुना, काबुल में दो जालिये पकड़े गये, मुश्कें कस ली गयीं और रेल में बंद करके यहां भेज दिये गये। अल्लाह जानता है, ऐसा जाल किया कि जौ भर भी फ़र्क़ मालूम हो, तो मूंछें मुड़वा लो! सुना है, कोई डेढ़-सौ दो सौ बरस से बेचते थे और कुछ चोरी-छिपे नहीं, खुल्लमखुल्ला।

दूसरा—वाह, दुनिया में भी कैसे-कैसे काइयां पड़े हैं। ऐसों के तो हाथ कटवा डालें।

पहला—वाह, वाह, क्या क़दरदानी की है! उन्होंने तो वह काम किया कि हाथ चूम लें, जागीरें दें।

आज़ाद को पहले मुसाफ़िर की गपोड़ेबाज़ी पर हंसी आ गयी। क्या झप से जालियों को काबुल तक पहुंचा दिया और हिंदुस्तान के स्टाम्प लंदन में बिकवाये। पूछा—क्यों साहब, कितने जाली स्टाम्प बेचे?

मुसाफ़िरों ने समझा, यह कोई पुलिस अफ़सर है, टोह लेने चले हैं, ऐसा न हो कि हमको भी गिरफ़्तार कर लें। बगलें झांकने लगे।

आज़ाद—आप अभी कहते न थे कि जालिये गिरफ़्तार किये गये हैं?

मुसाफ़िर—कौन? हम? नहीं तो!

आज़ाद—जी, आप बातें नहीं कर रहे थे कि स्टाम्प किसी ने बनाये और डेढ़-दो सौ बरस से बेचते चले आये?

मुसाफ़िर—हुज़ूर, हमको तो कुछ मालूम नहीं।

आज़ाद—अभी बताओ सुअर, नहीं हम तुमको बड़ा घर दिखायेगा और बेड़ी पहनायेगा।

मियां आज़ाद तो उनकी चितवनों से ताड़ गये थे दोनों के दोनों चोंगा हैं, मारे डर के स्टाम्प का लफ़्ज़ जबान पर नहीं लाते। जैसे ही उन्होंने डांट बतायी, एक तो बगटुट पश्चिम की तरफ़ भागा और दूसरा खड़भड़ करता हुआ पूरब की तरफ़। मियां आज़ाद आगे बढ़े। राह में देखा, कई मुसाफ़िर एक पेड़ के साये में बैठे बातें कर रहे हैं—

एक—कोई ऐसी तदबीर बताइए कि लू न लगे। आजकल के दिन बड़े बुरे हैं।

दूसरा—इसकी तरक़ीब यह है कि प्याज़ की गट्ठी पास रखे। या दो-चार कच्चे आम तोड़ लो, आमों को पहले भून लो, जब पिलपिले हों, तो गूदा निकाल कर छिलका फेंक दो और ज़रा सी शकर पानी में घोल कर पी जाओ।

पहला—कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न करना! पानी में तो बरफ़ डालनी ही न चाहिए। पानी का गिलास बरफ़ में रख दो, जब खूब ठंडा हो जाय, तब पियो। बरफ़

का पानी नुक़सान करता है।

दूसरा—वाह, लाखों आदमी पीते है।

पहला—अजी, लाखों आदमी झक मारते है। लाखों चोरियां भी तो करते है, फिर इससे मतलब? हमने लाखों आदमियों को देखा है कि गढ़ों और तालाबों का पानी सफ़र में पीते है। आप पीजिएगा? हजारो आदमी धूप में चलकर खड़े-खड़े तीन-चार लोटे पानी पी जाते है। मगर यह कोई अच्छी बात थोड़े ही है।

और आगे बढ़े, तो एक भड्डुरी आ निकला। वह आजाद को पहचानता था। देखते ही बोला—तुम्हारी नवाब साहब के यहां बड़ी तलाश है जी। तुम गायब कहां हो गये थे ऊंट लेकर? अब मै जाकर कहूंगा कि मैने प्रश्न देखा, तो निकला, आजाद पांच कोस के अंदर ही अंदर हैं। जब तुम लुपदेनी पहुंच जाओगे, तो फिर हमारी चढ़ती कला होगी। तुमको भी आधोआध बांट देगे। मगर भंडा न फोड़ना। चढ़ बाजी है।

आजाद—वल्लाह, क्या सूझी है। मंजूर है।

भड्डुरी ने पोथी संभाल अपनी राह ली और नवाब के यहां धर धमके।

ख़ोजी—अजी, जाओ भी, तुम्हारी एक बात भी ठीक न निकली।

नवाब—बरसों हमारा नमक तुमने खाया है, बरसों। एक-दो दिन नही बरसों। अब इस वक़्त कुछ परशन-वरशन भी देखोगे, या बातें ही बनाओगे? हमको तो मुसलमान भाई तुम्हारी वजह से काफ़िर कहने लगे और तुम कोई अच्छा-सा हुक्म नही लगाते।

भड्डुरी—वह हुक्म लगाऊं कि पट ही न पड़े!

खोजी—अजी, डीगिये हो ख़ासे। कही किसी रोज़ मै क़रौली न भोंक दूं। सिवा बे-पर की उड़ाने के, बात सीखी ही नही। भले आदमी, साल भर में एक दफ़े तो सच बोला करो।

झम्मन—वाह, सच बोलते, तो क़साई के कुत्ते की तरह फूल न जाते।

नवाब—यह क्या वाहियात बात?

भड्डुरी—हुजूर, हमसे-इनसे हंसी होती है। यह हमें कहते हैं, हम इन्हें। अब आप कोई फूल मन में लें।

नवाब—ये ढकोसले हमको अच्छे नहीं मालूम होते। हमें साफ़-साफ़ बता दो कि मियां आजाद कब तक आयेंगे?

भड्डुरी ने उंगलियों पर कुछ गिन-गिना कर कहा—पानी के पास है।

झम्मन—वाह उस्ताद, पानी के पास एक ही कही। लड़की न लड़का, दोनों तरह अपनी ही जीत।

भड्डुरी—यहां से कोई तीन कोस के अंदर है।

दुन्नी—हुजूर, यह बड़ा फ़ैलिया है। आप पूछते है; आजाद कब आयेंगे। यह कहता है, तीन कोस के अन्दर ही अन्दर है। सिवा झूठ, सिवा झूठ।

भड्डुरी—अच्छा, जाकर देख लो। जो नाके के पास आजाद आते न मिलें, तो नाक कटा डालूं, पोथी जला दूं। कोई दिल्लगी है?

नवाब—चाबुक-सवार को बुला कर हुक्म दो कि अभी सरपट जाय और देखे, मियां आजाद आते हैं या नही। आते हों, तो इस भड्डुरी का आज घर भर दूं। बस, आज मे इसका कलमा पढ़ने लगूं।

चाबुक-सवार ने बांका मुडासा बांधा और सुरंग घोड़ी पर चढ़ चला। मगर पचास ही क़दम गया होगा कि घोड़ी भड़की और तेजी में दूसरे नाके की राह ली। चाबुक सवार बहुत अकड़े बैठे हुए थे; मगर रोक न सके, धम से मुंह के बल नीचे आ रहे। खोजी ने नवाब साहब से कहा—हुजूर, घोड़ी ने नाजिरअली को दे पटका, और क्या जाने

किस तरफ़ निकल गयी।

नवाब—चलो, खैर समझा जायगा। तुम टांघन कसवाओ और दौड़ जाओ।

खोजी—हुज़ूर, मैं तो बूढ़ा हो गया और रही-सही सकत अफ़ीम ने ले ली। टांघन है वला का शरीर। कहीं फेंक-फाक दे, हाथ-पांव टूटें, तो दीन-दुनिया दोनों से जाऊं। आज़ाद खुद भी गये और हम सबको भी वला में डाल गये।

इधर चाबुक-सवार ने पटकनी खायी उधर लौंडों ने तालियां बजायीं। मगर शह-सवार ने गर्द झाडी, एक दूसरा कुम्मैत घोड़ा कसा और कड़कड़ा दिया। हवा से बातें करते जा रहे हैं। बगिया में पहुंचे, तो देखा, सांड़िनी की काकरेजी झूल झलक रही है और ऊंटनी गरदन झुकाये चौतरफ़ा मटक रही है। जाकर आज़ाद के गले से लिपट गये।

आज़ाद—कहिए, नवाब के यहां तो खैरियत है?

सवार—जी हां, खैर-सल्लाह के ढेर हैं। मगर आपकी राह देखते-देखते आंखें पथरा गयीं। ओ मियां; कुछ और भी सुना? उस बटेर की क़ब्र बनायी गयी है। सामने जो बेल-बूटों से सजा हुआ मक़बरा दिखायी देता है, वह उसी का है।

आज़ाद—यह कहिए, यार लोगों ने क़ब्र भी बनवा दी! वल्लाह, क्या-क्या फ़िक़रेबाज़ हैं।

सवार—बस, तुम्हारी ही कसर थी। कहो, हमने सुना, खूब गुलछर्रे उड़ाये। चलो, पर अब नवाब ने याद किया है।

आज़ाद—एं, उन्हें हमारे आने की कहां से खबर हो गयी?

सवार—अजी, अब यह सारी दास्तान राह में सुना देंगे।

आज़ाद—अच्छा, तो पहले आप हमारा खत नवाब के पास ले जायं। फिर हम शान के साथ चलेंगे।

यह कहकर आज़ाद ने खत लिखा—

'आज क़लम की बांछें खिली जाती हैं; क्योंकि मियां सफ़शिकन की सवारी आती है हुज़ूर के नाम की क़सम, इधर पाताल तक और उधर सातवें आसमान तक हो आया, तब जाके खोज पाया। शाह जी साहब रोज ढाढ़ें मार-मार कर रोते हैं। कल मैंने बड़ी खुशामद की और आपकी याद दिलायी, तो ठंडी आह खींचकर रह गये। बड़ी-बड़ी दलीलें छांटते थे। पहले फ़रमाया—दरों बज्म रह नेस्त बेगाना रा, मैंने छूटते ही जवाब दिया—कि परवानगी दाद परवाना रा।

'खिल खिलाकर हंस पड़े, पीठ ठोंकी और फ़रमाया—शाबाश बेटे, नवाब साहब की सोहबत में तुम बहुत बर्क़ हो गये। पूरे दो हफ़्ते तक मुझसे रोज़ बहस रही। आखिर मैंने कहा—आप चलिए, नहीं मैं ज़हर खा कर मर जाऊंगा। मुझे समझाया कि ज़िंदगी बड़ी न्यामत है। खैर, तुम्हारी खातिर से चलता हूं। लेकिन एक शर्त यह है कि जब मैं वहां पहुंचूं, तो नवाब के सामने खोजी पर बीस जूते पड़ें। मैंने क़ौल दिया, तब कहीं आये।'

सवार यह खत लेकर हवा की तरह उड़ता हुआ नवाब साहब के यहां पहुंचा।

नवाब—कहो, बेटा कि बेटी? जल्दी बोलो। यहां पेट में चूहे कूद रहे हैं!

सवार—हुज़ूर, गुलाम ने राह में दम लिया हो, तो जरमाना दूं।

खोजी—कितने बेतुके हो मियां! 'कहें खेत की, सुने खलिहान की।' भला अपनी कारगुजारी जताने का यह मौक़ा है? मारे मशीखत के दुबले हुए जाते हैं!

सवार ने आज़ाद का खत दिया। मुंशी जी पढ़ने के लिए बुलाये गये। खोजी घबराये कि आजाद ने यह कब की कसर ली। बोले—हुज़ूर, यह मियां आज़ाद की शरारत है। शाह साहब ने यह शर्त कभी न की होगी। बंदे से तो कभी गुस्ताखी नहीं

नही हुई।

नवाब—खैर, आने तो दो। क्यों भाई मीर साहब, रम्माल ने तो बयान किया था कि सफ़शिकन के दुश्मन जन्नत मे दाखिल हुए। यह मियां आजाद को कहां से मिल गये।

मीर साहब—हुजूर, खुदा का भेद कौन जान सकता है?

भड़ुरी—मेरा प्रश्न कैसा ठीक निकला जो है सो, मानो निशाने पर तीर खट से बैठ गया।

इतने मे अन्दर छोटी बेगम को खबर हुई। बोली—इनके जैसा पोगा आदमी खुदाई भर मे न होगा। जरी-सा तो बटेर और पाजियो ने उसका मकबरा बनवा दिया। रोज कहां तक बकू।

लौंडी—बीवी, बुरा मानो या भला, तुम्हे वे राहे ही नही मालूम कि मियां क़ाबू में आ जाय।

बेगम—मेरी जूती की नोक को क्या ग़रज़ पड़ी है कि उनके बीच में बोले। मै तो आप ही डरा करती हू कि कोई मुझी पर तूफान न बांध दे!

उधर नवाब ने हुक्म दिया कि सफ़शिकन की सवारी धूम से निकले। इतना इशारा पाना था कि खोजी और मीरसाहब लगे जुलूस का इन्तज़ाम करने। छोटी बेगम कोठे पर खड़ी-खड़ी ये तैयारियां देख रही थी और दिल मे हंस रही थी। उस वक़्त कोई खोजी को देखता, दिमाग नही मिलते थे। इसको डांट,उसको डपट, किसी पर धौल जमायी, किसी के चांटा लगाया; इसको पकड़ लाओ, उसको मारो। कभी मसालची को गालियां दी, कभी पंशाखेवाले पर बिगड़ पड़े। आगे-आगे निशान का हाथी था। हरी-हरी झूल पड़ी हुई। मस्तक मे सेंदुर से गुल-बूटे बने हुए। इसके बाद हिंदोस्तानी बाजा कक्कड़-झय्यम! इसके पीछे फूलों के तख्त—चमेली खिला ही चाहती है, कलियां चिटकने ही को है। चडूबाजों के तख्त ने तो कमाल कर दिया। दो-चार पीनक मे है, दस-पांच ऊंघे पड़े हुए। कोई चडूबाजाना ठाट से पौड़ा छील रहा है एक गंडेरी चूस रहा है। शिकार का वह समां बांधा कि वाह जी वाह। एक शिकारी बंदूक छतियाये, घुटना टेके, आंख दबाये निशाना लगा रहा है। बस, दांय की आवाज आया ही चाहती है। हिरन चौकड़ियां भरते जाते है। इसके बाद अंग्रेजी बाजा। इसके बाद घोड़ो की कतार—कुम्मैत, कुछ सुरंग, नुकरा, सब्जा, अरबी, तुर्की, वैलर छम-छम करते जा रहे है। घोड़े दुलहिन बने हुए थे। इसके बाद फिर अरगन बाजा; फिर तामदान; पालकी नालकी सुखपाल। इसके बाद परियों के तख्त एक से एक बढकर। सबके पीछे रोशनचौकी वाले थे। रोशनी का इतजाम भी चौकस था। पंशाखे और लालटेने झक-झक कर रही थी। इस ठाट से जुलूस निकला। सारा शहर यह बरात देखने को फटा पड़ता था। लोग चक्कर में थे कि अच्छी बरात है, दूल्हे का पता ही नही। बरात क्या गोरख-धंधा है।

जब जुलूस बगिया में पहुंचा तो आजाद हाथी पर सवार होकर सफशिकन को काबुक में बिठाये हुए चले।

खोजी—मसल मशहूर है—'सौ बरस के बाद घूरे के भी दिन बहुरते हे।' हमारे दिन आज बहुरे कि आप आये और शाह जी को लाये। नवाब के यहां सन्नाटा पड़ा हुआ था। सफ़शिकन के गम मे सब पर मुर्दनी छायी हुई थी। बस, लोग यही कहते थे कि आजाद सांडनी लेकर लंबे हुए। एक मै ही तुम्हारी हिमायत किया करता था।

मीर साहब—जी हां, हम भी आप ही की तरफ़ से लड़ते थे; हम और यह दोनों।

आजाद—भई, कुछ न पूछो। खुदा जाने, किन-किन जंगलों की खाक छानी,

तव कहीं यह मिले।

ख़ोजी—यहां लोग गप उड़ा रहे थे। किसी ने कहा—भांड़ों के यहां नौकरी कर ली। कोई तूफ़ान वांधता था कि किसी भठियारी के घर पड़ गये। मगर मैं यही कहे जाता था कि वह शरीफ़ आदमी हैं। इतनी वेहयाई कभी न करेंगे।

ख़ोजी और मीर साहव, दोनों आज़ाद को मिलाना चाहते थे, मगर वह एक ही उस्ताद। समझ गये कि अव नवाव के यहां हमारी भी तूती वोलेगी, तभी ये सव हमारी ख़ुशामद कर रहे हैं। वोले—अजी रात जाती है या आती है? अव देर क्यों कर रहे हो? पंशाख़े चढ़ाओ। घोड़े चलाओ। जव जुलूस तैयार हुआ, तो आज़ाद एक हाथी पर जा डटे। वटेर की कावुक को आगे रख लिया। खोजी और मीर साहव को पीछे विठाया और जुलूस चला। चौक में तो पहले ही से हुल्लड़ था कि नवाववाला वटेर वड़ी शान से आ रहा है। लाखों आदमी चौक में तमाशा देखने को डटे हुए थे, छतें फटी पड़ती थीं। वाजे की आवाज़ जो कानों में पड़ी, तो तमाशाई लोग उमड़ पड़े। निशान का हाथी झंडे का फुरेरा उड़ाता सामने आया। लेकिन ज्यों ही चौक में पहुंचा, वैसे ही दीवानी के दो मज़कूरियों ने डांट कर कहा—हाथी रोक ले। आज़ाद के नाम वारंट आया है।

लोगों के होश उड़ गये। फ़ीलवान ने जो देखा कि सरकारी आदमी लाल-लाल पगिया वांधे, काली-काली वरदी डाटे, खाकी पतलून पहने, चपरास लटकाये हाथी रोके खड़े हैं, तो सिटपिटा गया और हाथी को जिधर उन्होंने कहा उधर ही फेर दिया। जुलूस में हुल्लड़ मच गया। कोई तख़्त लिये भागा जाता है, कोई झंडे लिये दवका फिरता है। घोड़े थान पर पहुंचे। तामदान और पालकियों को छोड़कर कहार अड्डे पर हो रहे। वाजे वाले गलियों में घुस गये।

आज़ाद और खोजी मजकूरियों के साथ चले, तो शहर के वाहर जा पहुंचे। एका-एक हाथी जो गरजा, तो खोजी और मीर साहव पीनक में चौंक पड़े।

ख़ोजी—एं, पंशाखे चढ़ाओ, पंशाखे! अवे, यह क्या अंधेर मचा रखा है! जरी यों ही आंख झपक गयी, तो सारी की-कराई मिहनत ख़ाक में मिला दी। अव मैं उतर कर कोड़े फटकारूंगा, तव मानेंगे। लातों के आदमी कहीं वातों से मानते हैं!

मीर साहव—हैं, हैं! ओ फ़ीलवान! यह हाथी क्या आतशवाज़ी से भड़कता है? वढ़ा ले चलो। मील-मील, धत-धत। अरे भई ख़ोजी, यह किस मैदान में आ निकले? आखिर यह माजरा क्या है भाई?

खोजी—पंशाख़े चढ़ाओ, पंशाख़े। और इन वाजेवालों को क्या सांप सूंघ गया है? ज़रा ज़ोर-जोर से छेड़े जाओ। अव तो विहाग का वक़्त है, विहाग का।

मीर साहव—अजी, आंखें तो खोलिए, रोशनी का चिराग़ गुल हो गया। मुसीवत में आ फंसे। आप वही वेवक़्त की शहनाई वजा रहे हैं। इस जंगल में आपको विहाग की धुन समायी है।

ख़ोजी—पंशाख़े चढ़ाओ, पंशाख़े। नहीं, मैं कच्चा पैसा तो दूंगा नहीं। झप से चढ़ाना तो पंशाख़े। शावाश है वेटा!

मीर साहव तो जले-भुने वैठे ही थे; खोजी ने जव कई वार पंशाख़ों की रट लगायी तो वह झल्ला उठे। ख़ोजी को हाथी पर से नीचे ढकेल ही तो दिया। अरा-रा-रा धम। कौन गिरा? जरी टोह तो लेना, कौन गिरा?

आज़ाद—तुम गिरे, तुम। आप ही तो लुढ़के हैं, टोह क्या लें?

खोजी—अरे, मैं! यह तो कहिए, हड्डी-पसली वच गयीं? यारो, जरी देखना तो, हमारा सिर वचा या नहीं?

मज़कूरी—वचा है, वचा। नाहीं फूट। पहिरि लिहिन सुथना, और चले फ़ारसी

छांटे । ई बोझ उठाव ।

खोजी—हांय-हांय, कोई मजदूर समझा है ! शरीफ़ और पाजी को नही पहचानता ? ले, अब उतारता है बोझ, या नाले मे फेंक दू ? ओ गीदी ! लाना तो मेरी क़रौली । क्या मै गधा हूं ?

मीर साहब—गधे नही, तो और हो कौन ?

मजकूरी—तैं को हस रे ? अरे तैं को हस ? उतर हाथी पर से । उतरत है कि हम आवन फिर, तैं अस न मनि है

मीर साहब—कहता किससे है ? कुछ बेधा तो नही है ? कुछ नाविर है, हम, लो आये ।

मजकूरी—अच्छा, तो यह बोझ उठा। थरिया-लोटिया रख मूड़े पर और अगुवा ।

मीर साहब ने नीचे उतर कर देखा तो सरकारी प्यादा वरदी डाटे खड़ा हे। लगे थर-थर कापने । चुपके से बोझ उठाया और मचल-मचल कर चलने लगे। दोनो मज़कूरी हाथी पर जा बैठे । खोजी और मीर साहब, दोनो लदे-फदे गिरते-पड़ते जाने लगे।

खोजी—वाह री किस्मत । क्यो जी मीर साहब, हम तो खुदा की याद मे थे, तुमको क्या हुआ था ?

मीर साहब—जहा आप थे, वही मै भी था । यह सारी शरारत आजाद की है।

आजाद—जरी चोच सम्हाले हुए, नही मै उतरता हूं ।

चलते-चलते तड़का हो गया । खोजी बोले—लो भाई, हमारा तो भोर ही हो गया । अब जो बोझ उठाकर ले चले, उसकी सत्तर पुश्त पर लानत। यह कहकर बोझ फेंक दिया । जव जरा दिन चढा, तो गोमती के किनारे पहुंचे । एक मजकूरी ने कहा—ओ फ़ीलवान, हाथी रोक दे, नहाय लेई ।

फ़ीलवान—अरे, तो नहा लेना, कैसे गंवरदल हो ?

आजाद—कहो खोजी, नहाओगे ?

खोजी—यो ही न गला घोट डालो !

नदी के पार पहुचे, तो चंडूवाज की सूरत नजर पड़ी ।

चंडूबाज—बड़े भाई, सलाम । कहो खैर सल्लाह ? आखे तुमको ढूढती थी, देखने को तरस गये । अब कहो, क्या इरादे है ? अलारक्खी ने यह खत दिया है, पढ़कर चुपके से जवाब लिख दो ।

आजाद ने खत खोला और पढा—

'क्यो जी, इसी मुंह से कहते थे कि तुमसे व्याह करूगा ? तुम तो चकमा देकर सिधारे और यहां दिल कराहा करता है । नहा-धोकर कुरानशरीफ पर हाथ धरो कि व्याह का वादा नही किया था ? क्यो नाहक इंसाफ़ का गला कद छुरी से रेतते हो ? इस खत का जवाब लिखना, नही मै अपनी जान दे दगी ।'

आजाद ने जवाब लिखा—

'सुनो बीबी, हम कोई उठाईगीरे नही है । हम ठहरे शरीफ़, तुम हो भठियारी। भला, फिर हमसे क्योकर वने । अब उस खयाल को दिल से निकाल दो । तुम्हारे कारण मजकूरियो की कैद मे हू । तुम्हे मुह न लगाता, तो इतना जलील क्यो होता ?'

चंडूवाज तो खत लेकर रवाना हुए, उधर का किस्सा सुनिए । नवाब झूम-झूम कर बगीचे मे टहल रहे थे, आंखे फाड़-फाड़कर देखते थे कि जुलूस अब आया, और अब आया । एकाएक चोबदार ने आकर कहा—खुदावद, लुट गये ! लुट गये ! वह देखो साहब तुम्हारे, लुट गये ।

नवाव—अरे कुछ मुंह से कहेगा भी, क्या ग़ज़ब हो गया ?

चोवदार—ख़ुदावंद, वरात को उठाईगीरों ने लूट लिया !

नवाव—वरात ? वरात किसकी ? कही शाह जी की सवारी से तो मतलव नही है ? उफ़्, हाथों के तोते उड़ गये।

चोवदार—वह देखो साहव तुम्हारे, वारात चली आ रही थी। तमाशाई इतने जमा थे कि छतें फटी पड़ती थी। देखो साहव तुम्हारे, जैसे वादशाह की सवारी हो। मुदा जैसे ही चौक में पहुंचे कि देखो साहव तुम्हारे, दो चपरासियों ने हाथी को फेर दिया। वस साहव तुम्हारे, सारी वरात तितर-वितर हो गयी। कहां तो वाजे वज रहे थे, कहां साहव तुम्हारे, सन्नाटा छा गया।

नवाव—भला शाह जी कहां है ?

चोवदार—हुज़ूर, शाह जी को लिये फिरते हैं। यहां देखो साहव तुम्हारे—

नवाव—कोई है, इधर आना, इसके कल्ले पर खड़े हो, जितनी वार इसके मुंह से 'वह देखो साहव तुम्हारे' निकले, उतने जूते इस पर पड़ें। गधा एक वात कहता है, तो तीन सौ साठ दफ़े 'ओ देखो साहव तुम्हारे।'

चावुक-सवार—हुज़ूर, इस वक़्त ग़ुस्से का मौक़ा नहीं, कोई ऐसी फ़िक्र कीजिए कि शाह जी तो छूट आयें।

नवाव—ऐं, क्या वह भी गिरफ़्तार हो गये ?

सवार—जी, आज़ाद, खोजी, हाथी, सव-के-सव पकड़ लिये गये ?

नवाव—तो यह कहिए, वेड़े का वेड़ा गया है। हमें यह क्या मालूम था भला, नहीं तो एक गारद साथ कर देते। आखिर, कुछ मालूम भी हुआ कि यह धर-पकड़ कैसी थी ? सच तो यों है कि इस वक़्त मेरे हाथ-पांव फूल गये। रुपये हमसे लो, और दौड़-धूप तुम लोग करो।

मुसाहवों की वन आयी। अव क्या पूछना है ! आपस में हंड़िया पकने लगी। वल्लाह, ऐसा मौक़ा फिर तो हाथ आयेगा नही। जो कुछ लेना हो, ले लो, और उम्र-भर चैन करो। इस वक़्त यह वौखलाया हुआ है। जो कुछ कहोगे, वेधड़क दे निकलेगा। लेकिन, एक काम करो, दस-पांच आदमी मिल-जुलकर वातें वनाओ। एक आदमी के किये कुछ न होगा। कही भड़क गया, तो ग़जव ही हो जायगा। खुदा करे रोज इसी तरह वारंट जारी रहे। मगर इतना याद रखिएगा कि कहीं अंदर खवर हुई, तो वेगम साहिवा छछूंदर की तरह नाचेंगी। फिर करते-धरते कुछ न वन पड़ेगा।

मुवारकक़दम दरवाज़े के पास खड़ी सव सुन रही थी। लपक कर गयी और छोटी वेगम को वुला लायी। जरी जल्दी-जल्दी क़दम उठाइए, ये सव जाने क्या वाही-तवाही वक रहे हैं। मुंह झुलस दे पकड़ के। वेगम साहिवा दवे पांव गयीं, तो सुनकर मारे ग़ुस्से के लाल हो गयीं और नवाव को अंदर वुलाया।

मुवारकक़दम—ये हुजूर के मुसाहव, अल्लाह जानता है, एक ही अड़ीमार हैं, जिनके काटे का मंतर ही नही। जो है, वह झूठों का सरदार। मगर हुज़ूर उनको क्या जाने क्या समझते हैं। पछुआ हवा चलती, तो ठंडा पानी पीते, अव दिन भर शोरे का झला पानी मिलता है पीने को, और ख़ुदा ने न्यामत खाने को दी। फिर उन्हें दूर की न सूझे, तो किसे सूझे।

वेगम—ऐसे ही झूठे खुशामदियों ने तो लखनऊ का सत्यानाश कर दिया।

नवाव—यह आज क्या है, क्या ?

वेगम—है क्या ? तुम्हारे मुसाहव मुंह पर तो तुम्हारी झूठी तारीफ़ें करते हैं और पीठ पीछे तुम्हें गालियां सुनाते हैं। इन सवको दुत्कार क्यों नहीं देते ?

इधर तो ये बातें हो रही थी, उधर मज़कूरियों ने आजाद को एक बाग़ मे उतारा।

ख़ोजी—मियां फ़ीलबान, जरी जीना लगा देना।

फ़ीलबान—अब आपके लिए जीना बनवाऊं, ऐसे तो ख़ूबसूरत भी नही है आप?

मीर साहब—जीना क्या ढूंढ़ते हो, हाथी पर से कूदना कौन-सी बड़ी बात है।

यह कह कर मीर साहब बहुत ही अकड़ कर दुम की तरफ़ से कूदे, तो सिर नीचे और पांव ऊपर। रोक-रोक, हत्त तेरे फ़ीलबान की! सच है, गाड़ीवान, शुतुरबान, कोचवान जितने बान है, सब शरीर। लाख बचे, मगर औंधे हो गये। हमारा कल्ला ही जानता है। खट से बोला। वह तो कहिए, मै ही ऐसा बेहया हूं कि बातें करता हूं, दूसरा तो पानी न मांगता।

ख़ोजी खिलखिलाकर हंस पड़े। अब कहिए, हमने जो जीना मांगा, तो हमे बनाने लगे।

मीर साहब—मियां, उतरते हो कि दूं धक्का।

ख़ोजी बेचारे जान पर खेल कर जैसे ही उतरने को थे कि हाथी उठ खड़ा हुआ। या अली, या अली, बचाइयो, ख़ुदा, मैं बड़ा गुनहगार हूं।

इतना कह चुके थे कि अररर-धम, ज़मीन पर आकर ढेर हो गये।

मीर साहब ने कहा—शाबाश मेरे पट्ठे, ले झपाके से उठ तो जा।

ख़ोजी—यहां हड्डी-पसली का पता नही, आप फ़रमाते है, उठ तो जा! कितने बेदर्द हो!

दो आदमी वही बैठे कुछ इधर-उधर की बातें कर रहे थे। ख़ोजी और मीर साहब तो लकड़ियां खोजने लगे कि और नही तो सुलफ़ा ही उड़े और आजाद इन दोनों अजनबियों की बातें सुनने लगे—

एक—भई, आख़िर मुंह फुलाये क्यों बैठे हो? क्या मुहर्रम के दिनों में पैदा हुए थे?

दूसरा—हां यार, क्यों न कहोगे। यहां जान पर बनी है, आप मुहर्रम लिये फिरते हैं। हमने बी अलारक्खी से कई रुपये महीने भर के वादे पर लिये थे। उसको दो साल होने आये। अब वह कहती है, या हमारे रुपये दो, या हमारे मुक़दमे में गवाह हो जाओ। नही तो हम दाग़ देंगे और बड़ा घर दिखायेंगे। वहां चक्की पीसनी होगी। सोचते हैं, गवाही दें, तो किस बिरते पर। मियां आजाद की तो सूरत ही नही देखी और न दें, तो वह नालिश जड़े देती है। बस, यही ठान ली है कि आज शाम को झप से चल खड़े हों। रेल को ख़ुदा सलामत रखे कि भागूं तो पता भी न मिले।

दूसरा—अरे मियां, वह तरक़ीब बताऊं, जिसमें 'सांप मरे न लाठी टूटे।' तुम मियां आजाद से मिल जाओ; उधर अलारक्खी से भी मिले रहो। गवाही में गोल-मोल बातें कहो और मूंछों पर ताव देते हुए अदालत से आओ। बचा, तुम हो किस भरोसे पर चार-चार गंडे मे तुमको गवाह मिलते है, जो तड़ से झूठा क़ुरान या झूठी गंगा उठा लें। हमको कोई दो ही रुपये दे, क़ुरान उठवा ले। जो चाहे कहवा ले। फिर वाही हो, ख़ासे दस मिलते हैं, दस! तुम्हें झूठ-सच से मतलब? सच वही है, जिसमें कुछ हाथ लगे। भई, यह तो कलयुग है। इसमें सच बोलना हराम है। और जो कुत्ते ने काटा हो, तो सच ही बोलिए।

पहला—हजरत, सुनिए, सच फिर सच है, और झूठ फिर झूठ। इतना याद रखिएगा।

दूसरा—अबे जा, लाया वहां से झूठ फिर झूठ है। अरे नादान, इस जमाने मे

झूठ ही सच है। एक ज़रा-सा झूठ बोलने में दस चेहरेशाही आये गये होते हैं। ज़रा ज़बान हिला दी, और दस रुपये हज़म। दस रुपये कुछ थोड़े नही होते। हमें किसी से तुम दो गंडे ही दिलवा दो। देखो, हलफ़ उठा लेते है या नहीं।

आज़ाद—क्यों भई, और जो अपनी वात से फिर जाय, तो फिर कैसी हो? औरत की वात का एतवार क्या? वेहतर है कि अलारक्खी से स्टाम्प के काग़ज़ पर लिखवा लो।

पहला—वल्लाह, क्या सूझी है।

दूसरा—कैसा स्टाम्प जी? हम क्या जानें क्या चीज़ है, वातें कर रहे हैं, आप आये वहां से स्टाम्प पर लिखवा लो! क्या हम कोई चोर हैं!

दोनों मजकूरियों ने उपले जलाये और खाना पकाने लगे। आज़ाद ने देखा, भागने का अच्छा मौक़ा है। दोनों की आंख वचाकर चल दिये, चट से स्टेशन पर जा कर टिकट ले लिया और एक दर्जे में जा वैठे। दो-तीन स्टेशनों के वाद रेल एक वड़े स्टेशन पर ठहरी। मियां आज़ाद ने असवाव को वग्घी पर लादा और चल खड़े हुए। खट से सराय में दाखिल। एक कोठरी में जा डटे और विछौना विछा, खूव, लहरा-लहरा कर गाने लगे—

वहशत अयां है खाक से मुझ खाकसार की,
भड़के हिरन भी सूंघ के मिट्टी मजार की।

एकाएक एक शाह साहव फ़ालसई तहमत वांधे, शरवती का केसरिया कुरता पहने, मांग निकाले, आंखों में सुरमा लगाये, एक जवान, चंचल हसीन औरत के साथ आकर आजाद की चारपाई पर डट गये और वोले—वावा, हमारा नाम क़ुदमी शाह है। हसीनों पर जान देना हमारा खास काम है। इस वक़्त आपने जो यह शेर पढ़ा, तो तवियत फड़क गयी। मगर विना शराव के गाने का लुत्फ़ कहां? शौक़ हो, तो निकालं प्याला और वोतल, खूव रंग जमे और सरूर गठे।

आजाद—मै तो तौवा कर चुका हूं।

शाह जी—वच्चा, तौवा कैसी? याद रख, तौवा तोड़ने के लिए और क़सम खाने के लिए है।

यह कहकर शाह जी ने झोली से सौंफ की विलायती मीठी शराव निकाली और वोले—

सब्ज़ वोतल में लाल-लाल शराव;
खैर ईमान का खुदा हाफ़िज़।
शाह जी मैकदे में वैठे हैं;
इस मुसलमान का खुदा हाफ़िज़।

यह कहकर उस जवान औरत की तरफ़ देखकर शराव को प्याले में ढालने का इशारा किया। नाजनीन एक अदा से आकर आज़ाद की चारपाई पर डट गयी और शराव का प्याला भरने लगी। भठियारी ने जो यह हाल देखा, तो विजली की तरह चमकती हुई आयी और कड़ककर वोली—ऐ वाह मियां, अठारह-अठारह संडों को लेकर खटिया पर वैठते हो, और जो पाटी खट से टूट जाय, तो किसके माथे? ऐसे मुसाफ़िर भी नहीं देखे। एक तो खुद ही दुवले-पतले हैं, दूसरे दस-दस को ले कर वैठते है। ने चारपाई खाली कीजिए, हम ऐसे किराये से वाज़ आये! आज़ाद की तो भठियारियों के नाम से रूह कांपती थी, चुपके से चारपाई ख़ाली कर दी और ज़मीन पर दरी विछवा कर आ वैठे। नाज़नीन ने प्याला आज़ाद की तरफ़ वढ़ाया। पहले तो वहुत नहीं-नहीं करते रहे, लेकिन जव उसने क़समें खिला दी, तो मजवूर होकर प्याला लिया और चढ़ा गये। दौर चलने लगा। वह भर-भरके जाम पिलाती जाती थी और आज़ाद के ज़िस्म में

नयी जान आती जाती थी। अब तो वह मज़े में आकर खुल खेले, ख़ूब पी। 'मुफ़्त की शराब क़ाज़ी को भी हलाल है।' यहां तक कि आंखें झपकने लगीं, ज़बान लड़खड़ाने लगी। बहकी-बहकी बातें करने लगे और आख़िर नशे में चूर होकर धड़ से गिरे। शाह जी तो इस घात में आये ही थे, झपाक से कपड़े बांधे, जमा-जथा ली और चलता धंधा किया। औरत भी उसे उनके साथ-साथ लंबी हुई। मियां आज़ाद रात भर बेहोश पड़े रहे। तड़के आंख खुली, तो हाल पतला। न वह शाह साहब हैं, न वह औरत, न दरी। ज़मीन पर पड़े लोट रहे हैं। प्यास के मारे गले में कांटे पड़े जाते हैं। उठे, तो लड़खड़ाकर गिर पड़े, फिर उठे, फिर मुंह के बल गिरे। बारे बड़ी मुश्किल से खड़े हुए, पानी लाकर मुंह-हाथ धोये और ख़ूब पेट भर कर पानी पिया, तो दिल को तसकीन हुई। एकाएक चारपाई पर निगाह पड़ी। देखा सिरहाने एक ख़त रखा हुआ है। खोल कर पढ़ा—

"क्यों बचा! और पियो! अब पियोगे, तो जियोगे भी नहीं। कितने बड़े पियक्कड़ हो, बोतल की बोतल मुंह से लगा ली। अब अपनी क़िस्मत को रोओ। धत् तेरे की! क्या मज़े से माशूक़ के पास बैठे हुए गट-गट उड़ा रहे थे। गठरी घूम गयी न! भई, हमारी ख़ातिर से एक जाम तो लो। कहो, तो उसी के हाथ भेजूं। ले, अब हम जताये देते हैं, ख़बरदार, मुसाफ़िर का एतबार न करना, और सफ़र में तो किसी पर भरोसा रखना ही नहीं। देखो, आख़िर हम ले-दे कर चल दिये। उम्र भर सफ़र किया मगर आदमी न बने।'

वह ख़त पढ़कर मियां आज़ाद पर सैकड़ों घड़े पड़ गये। बहुत कुछ गुल-गपाड़ा मचाया, सराय भर को सिर पर उठाया, भठियारे को दो-चार चपतें लगायीं, मगर माल न मिला, न मिला। लोगों ने सलाह दी कि जाओ, थाने पर रपट लिखाओ। गिरते-पड़ते थाने में पहुंचे, तो क्या देखते हैं, थानेदार साहब बैठे हांफ रहे हैं—मैंने फलां गांव में अठारह डाकुओं से मुक़ाबला किया और चौंतीस बरस की चोरी बरामद की। सिपाही हां-में-हां मिलाते और भर्रे देते जाते थे कि आप ऐसे और आप वैसे, और आप डबल पैसे हुए इतने में आज़ाद पहुंचे। सलाम-बंदगी हुई।

थानेदार—कहिए, मिज़ाज कैसे हैं?

आज़ाद—मिज़ाज फिर पूछ लेना, अब गठरी दिलवाओ उस्ताद जी!

थानेदार—उस्तादजी किस भकुए का नाम है; और गठरी कैसी? आप भंग तो नहीं पी गये?

आज़ाद—ज़रा जबान संभाल कर बातें कीजिएगा। मैं टेढ़ा आदमी हूं।

थानेदार—अच्छे-अच्छे टेढ़ों को तो हमने सीधा बनाया, आप हैं किस खेत की मूली? कोई है? वह हुलिया तो मिलाओ, हम तो इन्हें देखते ही पहचान गये।

ज्ञानसिंह ने हुलिया जो मिलाया, तो बाल का भी फ़र्क नहीं। पकड़ लिये गये, हवालात में हो गये। मगर एक ही छटे हुए आदमी थे। कानिस्टिबल को वह भर्रे दिये, बातों-बातों में दोस्ती पैदा कर ली कि वह भी उनकी दम भरने लगा। अब उसे फ़िक्र हुई कि इनको हवालात से टहला दे। आख़िर रात को पहरेदार की आंख बचाकर हवालात का दरवाज़ा खोल दिया। आज़ाद चुपके से खिसक गये। दायें-बायें देखते दबे-पांव जाने लगे। ज़रा आहट हुई, और इनके कान खड़े हुए। बारे ख़ुदा-ख़ुदा करके रास्ता कटा। सराय में पहुंचे और भठियारी को किराया देकर स्टेशन पर जा पहुंचे।

इक्कीस

मियां आज़ाद रेल पर वैठकर नाविल पढ़ रहे थे कि एक साहब ने पूछा—जनाव, दो-एक दम लगाइए, तो पेचवान हाज़िर है। वल्लाह, वह धुंआधार पिलाऊं कि दिल फड़क उठे। मगर याद रखिए, दो दम से ज़्यादा की सनद नहीं। ऐसा न हो, आप भैंसिया-जोंक हो जाएं।

आज़ाद ने पीछे फिर कर देखा, तो एक विगड़े-दिल मज़े से वैठे हुक़्क़ा पी रहे हैं। वोले, यह क्या अंधेर है भाई? आप रेल ही पर गुड़गुड़ाने लगे; और हुक़्क़ा भी नहीं, पेचवान। जो कहीं आग लग जाय, तो?

विगड़े दिल—और जो रेल ही टकरा जाय, तो? आसमान ही फट पड़े, तो? इस 'तो' का तो जवाव ही नहीं है। ले, पीजिएगा, या वातें वनाइएगा?

आज़ाद—जी, मुझे इसका शौक नही है।

यह कहकर फिर नाविल पढ़ने लगे। थोड़ी देर के वाद एक स्टेशन पर रेल ठहरी, तो खरवूज़े और आम पटे हुए थे। खैंचियां-की-खैंचियां भरी रखी थीं। वोले—क्यों भई, स्टेशन है या आम की दूकान? या ख़रवूज़े की खान? आमपुर है या ख़रवूज़ानगर?

एक मुसाफ़िर वोला—अजी हज़रत, नजर न लगाइए। अव की फ़सल तो खा लेने दीजिए। इसी पर तो ज़िंदगी का दार-मदार है। खेत में वेल वढ़ी और यहां कच्चे घड़े की चढ़ी। आम वाज़ार में आये और ई जानिव वौराये। आम और ख़रवूज़े पर उधार खाये वैठे हैं। कपड़े वेच खायें, वरतन नख़ास में पटील लायें, वदन पर लत्ता न रहे, चूल्हे पर तवा न रहे, उधार लें, सुथना तक गिरवी रखें, वगड़ा करें, झगड़ा करें, मगर ख़रवूज़े पर छुरी जरूर चले। तड़का हुआ, चाकू हाथ में लिया और ख़रवूज़े की टोह में चला। वाज़ार है कि महक रहा है, ख़रीदार हैं कि टूटे पड़ते हैं। रसीली खटकिन जवानी की उमंग में अच्छे-अच्छों को डांट वताती है। मियां, अलग रहो, खैंची पर न गिरे पड़ो। वस, दूर ही से भाव-ताव करो। लेना एक न देना दो, मुफ़्त का झंझट। ई जानिव ने एक तराशा, दूसरा तराशा, तीसरा तराशा, खूव चखे। आंख चूकी, तो दो-चार फांकें मुंह में दवायीं और चलते-फिरते नज़र आये। आदमी क्या, वंदर हो गये। उधर ख़रवूज़े गये और आम की फ़सल आयी, मुंह मांगी मुराद पायी। जिधर देखिए, ढेर-के-ढेर चुने हैं। यहां तनक सवार हो गयी। देखा और झप से उठाया; तराशा और खाया। माल-असवाव के कूड़े किये और वेगिनती लिये। खाने वैठे, तो दो दाढ़ी खा गये चार दाढ़ी खा गये।

आज़ाद—यह दाढ़ी खाने के क्या माने?

मुसाफ़िर—अजी हज़रत, आम इतने खाये कि गुठली और छिलके दाढ़ी तक पहुंचे।

मुसाफ़िर वह डींग हांक ही रहे थे कि रेल ठहरी और एक चपरासी ने आकर पूछा—फलां आदमी कहां है?

आज़ाद—इस कमरे में इस नाम का कोई आदमी नहीं है।

मुसाफ़िर ने चपरासी की सूरत देखी, तो चादर से मुंह लपेट कर खिड़की की दूसरी तरफ़ झांकने लगे। चपरासी दूसरे दर्जे में चला गया।

आज़ाद—उस्ताद, तुमने मुंह जो छिपाया, तो मुझे शक होता है कि कुछ दाल में काला ज़रूर है। भई, और किसी से न कहो, यारों से तो न छिपाओ।

मुसाफ़िर—मुंह क्यों छिपाऊं जनाव, क्या किसी का क़र्ज़ खाया है, या माल मारा है, या कहीं ख़ून करके आये हैं?

आज़ाद—आप बहुत तीखे हूजिएगा, तो धरवा ही दूंगा। ले बस, कच्चा चिट्ठा कह सुनाओ, वरना मैं पुकारता हूं फिर।

मुसाफ़िर—अरे, नहीं-नहीं ऐसा राज़ब भी न करना। साफ़-साफ़ बता दें? हमने अबकी फ़सल में ख़रबूजे और आम खूब छककर चखे, मगर टका क़सम को पास नहीं। पूछो, लायें किसके घर से? यहां पहले तो क़र्ज़ लिया, फिर एक दोस्त का मकान अपने नाम से पटील डाला। अब नालिश हुई है, सो हम भागे जाते हैं।

आज़ाद—ऐसे आम खाने पर लानत! कैसे नादान हो?

मुसाफ़िर—देखिए, नादान-वादान न बनाइएगा। वरना बुरी ठहरेगी।

आज़ाद—अच्छा बुलाऊं चपरासी को?

मुसाफ़िर—जनाब, दस गालियां दे लीजिए, मगर जान तो छोड़ दीजिए।

इतने में एक मुसाफ़िर ने कई दर्जे फांदे, यह उचका, यह आया, यह झपटा और धम से मियां आज़ाद के पास हो रहा।

मुसाफ़िर—ग़रीबपरवर!

आज़ाद—किससे कहते हो? हम ग़रीबपरवर नहीं अमीरपरवर हैं, ग़रीबपरवर हमारे दुश्मन हों।

मुसाफ़िर—अच्छा साहब, आप अमीर के बाप-परवर, दादा-परवर सही। हमारा आपसे एक सवाल है।

आज़ाद—सवाल स्कूल के लड़कों से कीजिए, या वकालत के उम्मीदवारों से।

मुसाफ़िर—दाता, ज़रा सुनो तो।

आज़ाद—दाता भंडारी को कहते हैं। दाता कहीं और रहते होंगे।

मुसाफ़िर—एक रुपया दिलवाओ, तो हज़ार दुआएं दूं।

आज़ाद—दुआ के तो हम क़ायल ही नहीं।

मुसाफ़िर—तो फिर गालियां सुनाऊं?

आज़ाद—गालियां दो, तो बत्तीसी पेट में हो।

मुसाफ़िर—अरे ग़ज़ब, लो स्टेशन क़रीब आ गया। अब बेइज़्ज़त होंगे।

आज़ाद—यह क्यों?

मुसाफ़िर—क्यों क्या, टिकट पास नहीं, घर से दो रुपये लेकर चले थे, रास्ते में लंगड़े आम दिखायी दिये। राल टपक पड़ी। आव देखा न ताव, दो रुपये टेंट से निकाले और आम पर छुरी तेज की। अब गिरह में कौड़ी नहीं, 'पास न लत्ता, पान खायें अलबत्ता।'

आज़ाद—वाह रे पेटू! भला यहां तक आये क्योंकर?

मुसाफ़िर—इसकी न पूछिए। जहां सैकड़ों ही अलसेटें याद हैं।

इतने में रेल स्टेशन पर आ पहुंची। टिकट-बाबू की काली-काली टोपी और सफ़ेद चमकती हुई खोपड़ी नज़र आयी। टिकट! टिकट! टिकट निकालो। मियां आज़ाद तो टिकट देकर लंबे हुए; बाबू ने इनसे टिकट मांगा, तो लगे बग़लें झांकने। वेल, तुम्हारा टिकट कहां?

मुसाफ़िर—बाबू जी, हम पर तो अब की साल टिकस-विकस नहीं बंधा।

बाबू—यू फूल! तुम बेटिकट के चलता है उल्लू!

मुसाफ़िर—क्या आदमी भी उल्लू होते हैं? इधर तो देखने में नहीं आया, शायद आपके बंगाल में होता हो।

टिकट-बाबू ने कानिस्टिबिल को बुलाकर इनको हवालात भिजवाया। आम खाने का मज़ा मिला, मार और गालियां खायी, सो घाटे में।

घटाटोप अंधेरा छाया है, काला मतवाला बादल झूम-झूम कर पूरब की तरफ़ से आया है। वह घनेरी घटा कि हाथ मारा न सूझे। अंधेरे ने कुछ ऐसी हवा बांधी कि चांद का चिराग़ गुल हो गया। यह रात है कि सिपहकारों का दिल? हर एक आदमी जरीब टेकता चल रहा है, मगर कलेजा दहल रहा है कि कहीं ठोकर न खायें, कहीं मुंह के बल ज़मीन पर न लुढ़क जायें। मियां आज़ाद स्टेशन से चले, तो सराय का पता पूछने लगे। एकाएक किसी आदमी से सिर टकरा गया। वह बोला—अंधा हुआ है क्या? रास्ता बचा के चल, पतंग रखे हुए हैं, कहीं फट न जायें।

आज़ाद—ऐं, रास्ते में पतंग कैसे? अच्छी बेपर की उड़ायी।

पतंगबाज़—भई वल्लाह, क्या-क्या बिगड़े-दिलों से पाला पड़ जाता है। हम तो नरमी से कहते हैं कि मियां जरी दबा कर जाओ, और आप तीखे हुए जाते हैं।

आज़ाद—अरे नादान, यहां हाथ-मारा सूझता ही नहीं, पतंग किस भकुए को सूझेंगे।

पतंगबाज़—क्या रतौंधी आती है?

आज़ाद—क्या पतंग बेचने जा रहे हो?

पतंगबाज़—अजी, पतंग बेचें हमारे दुश्मन। हम खुद घर के अमीर हैं। यहां से चार कोस पर एक क़स्बा है, वहां के रईस हमारे लंगोटिये यार हैं! उनसे हमने पतंगों का मैदान बदा था। हम अपने यारों के साथ बारहदरी के कोठे पर थे और वह अपने दीवानखाने की छत पर। कोई सात बजे से इधर भी कनक़व्वे छपके, उधर भी बढ़े। खूब लमडोरे लड़े। पांच रुपये फ़ी पेच बदा था। यार, एक पतंग खूब लड़ा। हमारा मांगदार बढ़ा था और उधर का गोल-दुपन्ना। दस-बारह मिनट दांव घात के बाद पेच पड़ गये। पहले तो हमारे कन्ने नथ गये, हाथों के तोते उड़ गये; समझें, अब कटे और अब कटे; मगर वाह रे उस्ताद, ऐसे कन्ने छुड़ाये कि वाह जी वाह! फिर पेच लड़ गये। पंसेरियों डोर पिला दी, कनकव्वा आसमान से जा लगा। जो कोई दम और ठहरता तो वहीं जल-भुनकर खाक हो जाता। उतने में हमने गोता देकर एक भवका जो दिया, तो वह काटा। अब कोई कहता है कि हत्थे पर से उखड़ गया; कोई कहता है, डोर उलझ गयी थी। एक कनकव्वे से हमने कोई नौ-दस काटे। मगर उनकी तरफ़ कोई उस्ताद आ गया—उसने खींच के वह हाथ दिखाये कि खुदा की पनाह! हाथ ही टूटें मरदूद के! छक्के छुड़ा दिये। कभी सड़-सड़ करता हुआ नीचे से खींच गया! कभी ऊपर से पतंग पर छाप बैठा। आखिर मैंने हिसाब जो लगाया, तो पचास रुपये के पेटे में आ गया। मगर यहां टका पास नहीं। हमने भी एक माल तक लिया है, घर के सोने के कड़े किसी के हाथ पटीलेंगे, कोई दस तोले के होंगे, चुपके से उड़ा दूंगा, किसी को कानों-कान खबर भी न होगी।

आज़ाद—आपके वालिद क्या पेशा करते हैं?

पतंगबाज़—ज़मींदार हैं। मगर मुझे ज़मींदारी से नफ़रत है! ज़मींदार की सूरत से नफ़रत है, इस पेशे के नाम से नफ़रत है! शरीफ़ आदमी और लट्ठ लिये हुए मेड़-मेड़ घूम रहे हैं। हमसे यह न होगा। हम कोई मज़दूर तो हैं नहीं। यह गंवारों ही को मुबारक रहे।

आज़ाद—हुज़ूर ने तालीम कहां तक पायी है? आप तो लंदन के अजायबखाने में रखने लायक हैं।

पतंगबाज़—यहीं के तहसीली स्कूल में कुछ दिन तक घास छीली है।

आज़ाद—क्या घसियारा बनने का शौक़ चर्राया था?

पतंगबाज़—जनाब, कोई छह-सात बरस पढ़े; मगर गंडेदार पढ़ाई, एक दिन हाज़िर तो दस दिन नागा। पहले दर्जे का इम्तिहान दिया, मगर लुढ़क गये। अब्बाजान

ने कहा, अब हम तुम्हें नहीं पढ़ायेंगे। खैर, इस झंझट से छुट्टी पायी तो पेशकार साहब के लड़के से दोस्ती बढ़ायी। तब तक हम निरे जंगली ही थे। हद यह कि हुक़्क़ा पीना तक नहीं जानते थे। तो वजह क्या ? अच्छी सोहबत में कभी बैठे ही न थे। छोटे मिर्ज़ा बेचारे ने हमें हुक्का पीना सिखाया। फिर तो उनके साथ चंडू के छींटे उड़ने लगे। पहले आप मुझे देखते तो कहते, क़ब्र में एक पांव लटकाये बैठा है। बदन में गोश्त का नाम नहीं, हड्डी-हड्डी गिन लीजिए। जब से छोटे मिर्ज़ा की सोहबत में ताड़ी पीने लगा, तब से जरा हरा हूं। पहले हम निरे गावदी ही थे। यह पतंग लड़ाना तो अब आया है। मगर अबकी पचास के पेटे में आ गये। छोटे मिर्ज़ा से हमने तदबीर पूछी, तो वल्लाह, तड़ से बतलाया कि जब बहन या भावज या बीवी की आंख चूके, तो कोई सोने की अदद साफ उड़ा दो। भई, जिला-स्कूल में पढ़ता, तो ऐसी अच्छी सोहबत न मिलती।

आजाद—वल्लाह, आप तो खराद पर चढ़ गये, 'सब गुन पूरे, तुम्हें कौन कहे लंडूरे !'

पतंगबाज़—आप यहां कहां ठहरेंगे ? चलिए, इस वक़्त ग़रीबखाने ही पर खाना खाइए, सराय में तो तकलीफ़ होगी। हां, जो कोई और बात हो, तो क्या मुज़ायक़ा, (मुस्कराकर) सच कहना उस्ताद, कुछ लसरका है ?

आज़ाद—मियां, यहां दिल ही नहीं है पास, मुहब्बत करेंगे क्या ! चलिए, आप ही के यहां मेहमान हों—यहां तो बेफ़िक्री के हाथ बिक गये हैं। मगर उस्ताद, इतना याद रहे कि बहुत तकलीफ़ न कीजिएगा ।

पतंगबाज़—वल्लाह, यह तो वही मसल हुई कि बस, एक दस सेर का पुलाव तो बनवाइएगा, मगर तकल्लुफ़ न कीजिएगा ! मानता हूं आपको।

आज़ाद और पतंगबाज़ इक्के पर बैठे। इक्का हवा से बातें करता चला, तो खट से मकान पर दाखिल। अंदर से बाहर तक खबर हो गयी कि मंझले मियां आ गये। मियां आज़ाद और वह दोनों उतरे। इतने में एक लौंडी अन्दर से आकर बोली—चलिए, बड़े साहब ने आपको याद किया है।

पतंगबाज़—ऐ है, नाक में दम कर दिया, आते देर नहीं हुई और बुलाने लगे। चलो, आते हैं। आपके लिए हुक़्क़ा भर लाओ। हज़रत, कहिए तो जरी वालिद से मिल आऊं ? गाना-वाना सुनिए, तो बुलाऊं किसी को ? इधर लौंडी अन्दर पहुंची, तो बड़े मियां से बोली—उनके पास तो उनके कोई दोस्त मसनद-तकिया लगाये बैठे हैं।

मियां—उनके दोस्तों की न कहो। शहर भर के बदमाश, चोर-मक्कार, झूठों के सरदार उनके लंगोटिये-यार हैं। भले मानस से मिलते-जुलते तो उन्हें देखा ही नहीं।

लौंडी—नहीं मियां, शकल-सूरत से तो शरीफ़ भलेमानुस मालूम होते हैं।

खैर, रात को आज़ाद और मंझले मियां ने मीठी नींद के मज़े उठाये, सुबह को हवाली-मवाली जमा हुए।

एक—हुजूर, कल तो खूब-खूब पेंच लड़े, और हवा भी अच्छी थी।

पतंगबाज़—पेंच क्या लड़े, पचास के माथे गयी। खैर, इसका तो यहां ग़म नहीं, मगर किरकिरी बड़ी हुई।

दूसरा—वाह हुजूर, किरकिरी की एक ही कही। क़सम ख़ुदा की, वह लमडोरा पेंच निकाला कि देखनेवाले दंग रह गये। ज़माना भर यही कहता था कि भई, पेंच क्या काटा, कमाल किया। कुछ इनाम दिलवाइए, खुदावंद ! आपके क़दमों की क़सम, आज शहर भर में उस पेंच की धूम है। चालीस-पचास रुपयों की भी कोई हक़ीक़त है !

शाम के वक़्त आज़ाद और मियां पतंगबाज़ बैठे गप-शप कर रहे थे कि एक मौलवी साहब लटपटी दस्तार खोपड़ी पर जमाये, कानी आंख को उसके नीचे छिपाये, दूसरी में

बरेली का सुरमा लगाये कमरे में आये। उन्होंने अलेकसलेम के बाद जेब से एक इश्तिहार निकाल कर आज़ाद के हाथ में दिया। आज़ाद ने इश्तिहार पढ़ा, तो फड़क गये। एक मुशायरा होनेवाला था। दूर-दूर से शायर बुलाये गये थे। एक तरह का मिसरा था—

"हमसे उस शोख़ ने ऐयारी की।"

मौलवी साहब तो उलटे पांव लंबे हुए, यहां मुशायरे की तारीख़ जो देखते हैं, तो इकतीस फ़रवरी लिखी हुई है। हैरत हुई कि फ़रवरी का तो अट्ठाईस और कभी उनतीस ही दिन का महीना होता है, यह इकतीस फ़रवरी कौन सी तारीख है! बारे मालूम हुआ कि इसी वक़्त मुशायरा था। ख़ैर, दोनों आदमी बड़े शौक़ से पता पूछते हुए गुलाबी बारहदरी में दाख़िल हुए। वहां बड़ी रौनक़ थी। नई-नई वज़ा, नये-नये फ़ैशन के लोग जमा हैं। किसी का दिमाग़ ही नहीं मिलता; जिसे देखो, तानाशाह बना बैठा है, दुनिया की बादशाहत को जूती की नोक पर मारता है। शायरी के शौक़ीन उमड़े चले आते हैं। कहीं तिल रखने की जगह नहीं। जब रात भीगी और चांदनी खूब निखरी, तो मुशायरा शुरू हुआ। शायरों ने चहकना शुरू किया। मजलिस के लोग एक-एक शेर पर इतना चीखे-चिल्लाये कि होंठ और गले सूखकर कांटा हो गये। ओहो हो-हो आहा, हा-हा वाह-वाह सुभान अल्लाह के दौंगरे बरस रहे थे। शायर ने पूरा शेर पढ़ा भी नहीं कि यार लोग ले उड़े! वाह हज़रत, क्यों न हो! क़सम खुदा की! क़लम तोड़ दिया! वल्लाह, आज इस लखनऊ में आपका कोई सानी नहीं! एक शायर ने यह ग़ज़ल पढ़ी—

हमको देखा, तो वह हंस देते हैं;
आंख छिपती ही नहीं यारी की।

महफ़िल के लोगों ने पूरा शेर तो सुना नहीं, यारी को गाड़ी सुन लिया। गाड़ी की, वाह-वाह, क्या शेर फ़रमाया, गाड़ी की! अब जिसे देखिए, गुल मचा रहा है—गाड़ी की, गाड़ी की। मगर गुलगपाड़े में सुनता कौन है। शायर बेचारा चीखता है कि हज़रत, गाड़ी की नहीं, यारी की; पर यार लोग अपना ही राग अलापे जाते हैं। तब तो मियां आज़ाद ने झल्लाकर कहा—साहबो, अगाड़ी न पिछाड़ी, चौपहिया न पालकी-गाड़ी, खुदा के वास्ते पहले शेर तो सुन लो, फिर तारीफ़ के पुल बांधो। गाड़ी की नहीं, यारी की। आंख छिपती ही नहीं यारी की।

दूसरे शायर ने यह शेर पढ़ा—

उम्मीद रोज़े-वस्ल थीं किस बदनसीब को;
क़िस्मत उलट गयी मेरे रोज़े-सियाह की।

हाज़िरीन—निगाह की, सुभान-अल्लाह। निगाह की, हज़रत, यह आप ही का हिस्सा है।

शायर—निगाह नहीं, रोज़े-सियाह। निगाह से तो यहां कुछ माने ही न निकलेंगे।

यह कहकर उन्होंने फिर उसी शेर को पढ़ा और सियाह के लफ़्ज़ पर खूब ज़ोर दिया कि कोई साहब फिर निगाह न कर उठें।

आधी रात तक हू-हक़ मचता रहा। कान-पड़ी आवाज़ न सुनायी देती थी। पड़ोसियों की नींद हराम हो गयी। एक-एक शेर पढ़ने की चार-चार दफ़े फ़रमाइश हो रही और बीस मरतबा उठा-बैठी, सलाम पर सलाम और आदाब पर आदाब; अच्छी क़वायद हुई। लाला खुशवक़्तराय और मुंशी ख़ुर्सेदराय तीन-तीन सौ शेरों की ग़ज़लें कह लाये थे, जिनका एक शेर भी दुरुस्त नहीं। एक बजे से पढ़ने बैठे, तो तीन बजा दिये। लोग कानों में उंगलियां दे रहे हैं, मगर वे किसी की नहीं सुनते।

वहां से मियां आज़ाद और उनके दोस्त घर आये। तड़का हो गया था। आज़ाद तो थोड़ी देर सो कर उठ गये, मगर मियां पतंगबाज़ ने दस बजे तक की ख़बर ली।

आजाद—आज तो आप बड़े सवेरे उठे। अभी तो दस ही बजे है। भई, बड़े सोनेवाले हो !

पतंगबाज—जनाब, तड़का तो मुशायरे ही मे हो गया था। जब आदमी सुबह को सोयेगा, तो दस बजे से पहले क्या उठेगा। और, सच तो यों है कि अभी और सोने को जी चाहता है। कुछ मुशायरे के झगड़े का भी हाल सुना ? आप तो कोई चार बजे सो रहे थे। हमने सारी दास्तान सुनी। बडी चख-चल गयी। मौलवी बदर और मुशी फ़िशार मे तो लकड़ी चलते-चलते रह गयी। जो मियां रंगीन न हों, तो दोनों मे जूती चल जाय।

आजाद—यह क्यों, किस बात पर ?

पतंगबाज़—कुछ नही, यो ही। मै तो समझा, अब लकड़ी चली।

आजाद—तो मुशायरा क्या पाली थी ? पूछिए, शायरी को लकड़ी और बांक से क्या वास्ता ? कलम का ज़ोर दिखाना चाहिए कि हाथ का। किसी तरह बदर और फ़िशार मे मिलाप करा दीजिए।

पतंगबाज़—ऐ तौबा। मिलाप, मिलाप हो चुका। बदर का यह हाल है कि बात की और गुस्सा आ गया। और मियां फ़िशार उनके भी चचा है। बात पीछे करते है, चांटा पहले ही जमाते हैं।

आजाद—आखिर बखेड़े का सबब क्या ?

पतंगबाज—सिवा हसद के और क्या कहूं। हुआ यह कि फ़िशार ने पहले पढा। इस पर मौलवी बदर बिगड खड़े हुए कि हमसे पहले इन्हे क्यो पढने दिया गया। इनमे क्या बात है। हम भी तो उस्ताद के लड़के है। इस पर फ़िशार बोले—अभी बच्चे हो, हिज्जे करना जानते नही। शायरी क्या जानो। कुछ दिन उस्ताद की जूतियां सीधी करो, तो आदमी बनो। बदर ने आस्तीनें उलट ली और चढ दौड़े। फ़िशार के शागिर्दों ने भी डंडा सीधा किया। इस पर लोगो ने दौड़ कर बीच-बचाव कर दिया।

शाम के वक़्त मियां आज़ाद ने कहा—भई, अब तो बैठे-बैठे जी घबराता है। चलिए, जरा चार-पाच कोस सैर तो कर आयें। पतंगबाज ने चार-पांच कोस का नाम सुना, तो घबराये। यह बेचारे महीन आदमी, आध-कोस भी चलना कठिन था, दस कदम चले और हांफने लगे। कही गये भी तो टांघन पर। भला दस मील कौन जाता ? बोले—हजरत, मै इस सैर से बाज आया। आपको तो डाक के हरकारों मे नौकरी करनी चाहिए। मुझे क्या कुत्ते ने काटा है कि बेसबब पंचकोसी चक्कर लगाऊं और आदमी से ऊंट बन जाऊं ? आप जाते है, तो जाइए, मगर जल्द आइएगा। सच कहते है, लंबा आदमी अक़्ल का दुश्मन होता है। यह गप उडाने का वक़्त है, या जंगल मे घूमने का ?

एक मुसाहिब—आप बजा फ़रमाते है, भलेमानसो को कभी जंगल की धुन समायी ही नही। और, हुजूर के यहां घोड़ा-बग्घी सब सवारियां मौजूद है। जूतियां चटखाते हुए आपके दुश्मन चले।

आजाद—जनाब, यह नजाकत नही है, इसको तपेदिक कहते है। आप पांच कोस न चलिए, दो ही कोस चलिए, आध ही कोस चलिए।

पतंगबाज—नही जनाब, माफ़ फ़रमाइए।

आज़ाद लंबे-लंबे डग बढाते पश्चिम की तरफ़ रवाना हुए।

बाईस

मियां आजाद के पाव मे तो सनीचर था। दो दिन कही टिक जायं तो तलवे खुजलाने लगे। पतंगबाज के यहां चार-पाच दिन जो जम गये, तो तबीयत घबराने लगी लखनऊ

की याद आयी। सोचे, अब वहां सब मामला ठंडा हो गया होगा। बोरिया-बंधना उठाया और शिक़रम-गाड़ी की तरफ़ चले। रेल पर बहुत चढ़ चुके थे, अब की शिक़रम पर चढ़ने का शौक़ हुआ। पूछते-पूछते वहां पहुंचे। डेढ़ रुपये किराया तय हुआ, एक रुपया बयाना देया। मालूम हुआ, सात बजे गाड़ी छूट जाएगी, आप साढ़े-छह बजे आ जाइए। आज़ाद ने असबाब तो वहां रखा, अभी तीन ही बजे थे, पतंगबाज़ के यहां आकर गप-शप करने लगे। बातों-बातों में पौने सात बज गये। शिक़रम की याद आयी, बचा-खुचा असबाब मज़दूर के सिर पर लादकर लदे फंदे घर से चल खड़े हुए। राह में लंबे-लंबे डग धरते, मज़दूरों को ललकारते चलेआते हैं कि तेज़ चलो, क़दम जल्द उठाओ। जहां सन्नाटा देखा, वहां थोड़ी दूर दौड़ने भी लगे कि वक़्त पर पहुंचें; ऐसा न हो कि गाड़ी छूट जाय। वहां ठीक सात बजे पहुंचे, तो सन्नाटा पड़ा हुआ। आदमी न आदमज़ाद। पुकारने लगे, अरे मियां चपरासी, मुंशी जी, अजी मुंशी जी ! क्या सांप सूंघ गया? बड़ी देर के बाद एक चपरासी निकला। कहिए, क्या डाक कीजिएगा?

आज़ाद—और सुनिए। डाक कीजिएगा की एक ही कहीं। मियां, बयाने का रुपया भी दे चुके।

चपरासी—अच्छा, तो इस घास पर बिस्तर जमाइए, ठंडी-ठंडी हवा खाइए, या ज़रा बाज़ार की सैर कर आइए।

आज़ाद—ऐं, सैर कैसी? डाक छूटेगी आखिर किस वक़्त?

चपरासी—क्या मालूम, देखिए, मुंशी जी से पूछूं।

आज़ाद ने मुंशी जी के पास जाकर कहा—अरे साहब, सात बजे बुलाया था, जिसके साढ़े सात हो गये। अब और कब तक बैठा रहूं?

मुंशी जी—जनाब, आज तो आप ही आप हैं, और कोई मुसाफ़िर ही नहीं। एक आदमी के लिए चालान थोड़े छोड़ेंगे।

आज़ाद—कहीं इस भरोसे न रहिएगा ! बयाना दे चुका हूं।

मुंशी—अच्छा, तो ठहरिए।

आठ बज गये, नौ बज गये, दस बज गये, कोई ग्यारह बजे तीन मुसाफ़िर आये। तब जाकर शिक़रम चली। कोई आध कोस तक तो दोनों घोड़े तेजी के साथ गये, फिर सुरंग बोल गया। यह गिरा, वह गिरा। कोचवान ने कोड़े पर कोड़े जमाना शुरू किया; पर घोड़े ने भी ठान ली कि टलूंगा ही नहीं। कोचमैन, घसियारा, बारगीर, सब के सब ठोक रहे थे; मगर वह खड़ा हांफता है। बारे बड़ी मुश्किल से फूंक-फूंक कर क़दम रखता हुआ दूसरी चौकी तक आया।

दूसरी चौकी में एक टट्टू दुबला-पतला, दूसरा घोड़ा मरा हुआ-सा था; हड्डियां-हड्डियां गिन लीजिए। यह पहले ही से रंग लाये। कोचमैन ने खूब कोड़े जमाये, तब कहीं चले। मगर दस क़दम चले थे कि फिर दम लिया। साईस ने आंखें बंद करके रस्सी फटकारनी शुरू की। फिर दस-बीस क़दम आहिस्ता-आहिस्ता बढ़े, फिर ठहर गये। खुदा-खुदा करके तीसरी चौकी आयी।

तीसरी चौकी में एक दुबला-पतला मुश्की रंग का घोड़ा और दूसरा नुक़रा था। पहले ज़रा चीं-चप्पड़, फिर चले। एक-आध कोस गये थे कि कीचड़ मिली, फिर तो क़यामत का सामना था। घोड़े थान की तरफ़ भागते थे, कोचमैन रास थामे टिकटिक करता जाता था, बारगीर पहियों पर जोर लगाते थे। मुसाफ़िरों को हुक्म हुआ कि उतर आइए; ज़रा हवा खाइए। बेचारे उतरे। आध कोस तक पैदल चले। घोड़े क़दम-क़दम पर मुंह मोड़ देते थे। वह चिल्ल-पों मची हुई थी कि खुदा की पनाह। आध कोस के बाद हुक्म हुआ कि अपना-अपना बोझ उठाओ, गाड़ी भारी है। चलिए साहब, सबने गठरियां

संभाली ! सिर पर असबाब लादे चले आते है। तीन घंटे में कही चौकी तय हुई, मुसाफिर का दम टूट गया, कोचमैन और साईस के हाथ कोड़े मारते-मारते और पहियो पर जोर लगाते-लगाते बेदम हो गये।

चौथी चौकी की जोड़ी देखने मे अच्छी थी। लोगों ने समझा था, तेज जाएगी, मगर जमाली खरबूजों की तरह देखने ही भर की थी। कोचवान और बारगीरों ने लाख-लाख जोर लगाया, मगर उन्होने जरा कान तक न हिलाये, कनौती तक न बदली। बुत बने खड़े है, मैदान मे अड़े है। कोई तो घास का मुट्ठा लाता है, कोई दूर से तोबड़ा दिखाता है, कोई पहिये पर जोर लगाता है, कोई ऊपर से कोड़े जमाता है। आखिर मुसाफ़िरो ने भी उतरकर जोर लगाया, मगर टांय-टाय फिस। आखिर घोड़ो के एवज बैल जोते गये।

पाचवी चौकी मे बाबा आदम के वक़्त का एक घोड़ा आया। घोड़ा क्या, खच्चर था। आंखे मांग रहा था। मक्खियां भिन-भिन करती थी। रात को भी मक्खियो ने इसका पीछा न छोड़ा।

आजाद—अरे भई, अब चलो न ! आखिर यहां क्या हो रहा है ? रास्ता चलने ही से कटता है।

कोचमैन—ऐ लो साहब, घोड़े का तो बंदोबस्त कर ले। एक ही घोड़ा तो इस चौकी पर है।

आजाद—अजी, दूसरी तरफ़ भैंस जोत देना।

एक मुसाफ़िर—या हम एक सहल तदबीर बतायें। मुसाफ़िरों से कहिए, उतर पड़े, बोझ अपना-अपना सिर पर लादें और जोर लगाकर बग्घी को एक चौकी तक ढकेल ले जायं।

इतने मे एक भठियारा अपने टट्टू को टिक-टिक करता चला आता था। कोचवान ने पूछा—कहो भाई, भाडा करते हो ? जो चाहे सो मांगो, देगे। नक़द दाम लो और बग्घी पर बैठ जाओ। एक चौकी तक तुम्हारे टट्टू को बग्घी में जोतेगे।

भठियारा—वाह, अच्छे आये ! टटुआ कभी गाड़ी में जोता भी गया है ? मुर्गी के बराबर टट्टू, और जोतने चले है शिक़रम में। यो चाहे पीठ पर सवार हो लो, मुदा डाकगाड़ी मे कैसे चल सकता है ?

कोचमैन—अरे भई, तुमको भाड़े से मतलब है, या तकरीर करोगे ? हम तो अपनी तरकीब से जोत लेंगे।

आजाद ने भठियारे से कहा—रुपया टेंट मे रखो और कहो, अच्छा जोतो। कुछ थक-थका कर आप ही हार जायेगे। रुपया तुम्हारे बाप का हो जायगा ! वह भी राजी हो गया। अब कोचमैन ने टट्टू को जोतना चाहा, मगर उसने सैकड़ों ही बार पुश्त उछाली, दुलत्तियां झाड़ी और गाड़ी के पास न फटका। इस पर कोचवान ने टट्टू को एक कोड़ा मारा। तब तो भठियारा आग हो गया। ऐ वाह, मियां, 'अच्छे मिले, हमने पहले ही कह दिया था कि हमारा जानवर बग्घी में न चलेगा। आपने जबरदस्ती की। अब गधे की तरह गद-गद पीटने लगे'।

वह तो टट्टू को बगल में दाब लंबा हुआ, यहां शिकरम मैदान में पडी हुई है। मुसाफ़िर जम्हाइया ले रहे है। साईस चिलम पर चिलम उड़ाते है। सब मुसाफ़िरों ने मिल कर क़सम खायी कि अब शिकरम पर न बैठेंगे। ख़ुदा जाने, क्या गुनाह किया था कि यह मुसीबत सही। पैदल आना इससे कही अच्छा।

पांचवी चौकी के आगे पहुंचे, तो एक मुसाफ़िर ने, जिसका नाम पलटू था, ठर्रे की बोतल निकाली और लगा कुज्जी-पर-कुज्जी उड़ाने। मियां आजाद का दिमाग़ मारे बदबू

के परेशान हो गया। मज़हब से तो उन्हें कोई वास्ता न था, क्योंकि ख़ुदा के सिवा और किसी को मानते ही न थे, लेकिन बदबू ने उन्हें बेचैन कर दिया। एक दूसरे मुसाफ़िर रिसालदार थे। उनकी जान भी आज़ाब में थी। वह शराब के नाम पर लाहौल पढ़ते और उसकी बू से कोसों भागते थे। जब बहुत दिक़ हो गये, तो मियां आज़ाद से बोले—हज़रत, यह तो बेढब हुई। अब तो इनसे साफ़-साफ़ कह देना चाहिए कि ख़ुदा के वास्ते इस वक़्त न पीजिए। थोड़ी देर में हमको और आपको गालियां न देने लगें, तो कुछ हारता हूं। ज़रा आंख दिखा दीजिए जिसमें बहुत बढ़ने न पायें।

आज़ाद—ख़ुदा की क़सम, दिमाग़ फटा जाता है। आप डपटकर ललकार दीजिए। न माने तो मैं कान गरमा दूंगा।

रिसालदार—कहीं ऐसा ग़ज़ब न कीजिएगा! पंजे झाड़ कर लड़ने को तैयार हो जायगा। शराबी के मुंह लगना कोई अच्छी बात थोड़े है।

दोनों में यही बातें हो रही थीं कि लाला पलटू ने हांक लगायी—हरे-हरे बाग़ में गोला बोला पग आगे, पग पीछे। यह बेतुकी कहकर हाथ जो छिड़का, तो रिसालदार की दोनों टांगों पर शराब के छींटे पड़ गये। हांय-हांय, बदमाश, अलग हट! उठ जा यहां से। नहीं तो दूंगा एक लप्पड़।

पलटू—*बरसो राम झड़ाके से; रिसालदार की बुढ़िया मर गयी फ़ाके से। हमारा* बाप गधा था!

रिसालदार—चुप, खोस दूं बांस मुंह में?

पलटू—अजी, तो हंसी-हंसी में रोये क्यों देते हो? वाह, हम तो अपने बाप को बुरा कहते हैं।

आज़ाद—क्या तुम्हारे बाप गधे थे?

पलटू—और कौन थे? आप ही बताइए। उमर भर डोली उठायी, मगर मरते दम तक न उठानी आयी।

रिसालदार—क्या कहार था?

पलटू—और नहीं तो क्या चमार था, या बेलदार था? या आपकी तरह रिसालदार था?

आज़ाद—है नशे में तो क्या, बात पक्की कहता है।

पलटू—अजी, इसमें चोरी क्या है? हम कहार, हमारा बाप कहार।

आज़ाद—कहिए आपकी महरी तो ख़ैरियत से है।

पलटू—चल शिक़रम, चल घोड़े, बिगुल बजे भोंपू-भोंपू। सामने कांटा, दुकान में आटा, कबड़िये के यहां भांटा, रिसालदार के लगाऊं चांटा।

रिसालदार—ऐसा न हो कि मैं नशा-वशा सब हिरन कर दूं। ज़बान को लगाम दे।

पलटू—अच्छा साईस है।

आज़ाद—अबे, साईसी इल्म दरियाव है।

पलटू—तेरा सिर नाव है, तू बनबिलाव है।

रिसालदार—कोचमैन, बग्घी ठहराओ।

पलटू—कोचमैन, बग्घी चलाओ।

मियां आज़ाद ने देखा, रिसालदार का चेहरा मारे ग़ुस्से के लाल हो गया, तो उन्होंने बात टाल दी और पूछा—क्यों पलटू महाराज, सच कहना तुमने तो कभी डोली नहीं उठायी? पलटू बोले—नहीं, कभी नहीं। हां, बरतन मांजे हैं। मगर होश संभालते ही मदरसे में पढ़ने लगे और अब तार-घर में नौकर हैं। रिसालदार जी, लो, पीते हो?

रिसालदार के मुह के पास कुज्जी ले जाकर कहा—पियो, पियो। इतना कहना था कि रिसालदार जल-भुनके खाक हो गये, तड़ से एक चांटा रसीद किया, दूसरा और दिया फिर तीन-चार और लगाये। पलटू मजे से बैठे चपते खाया किये। फिर कहकहा लगाकर बोले—अबे जा, बड़ा रिसालदार बना है। नाम बड़ा, दरसन थोड़े। एक जू भी न मरी रिसालदारी क्या खाक करते हो ? चलो, अब तो एक कुज्जी पियो। दू फिर ?

रिसालदार—भई, इसने तो नाक में दम कर दिया। पीटते-पीटते हाथ थक गये।

कोचमैन—रिसालदार साहब, यह क्या गुल मच रहा है ?

आजाद—बड़ी बात कि तुम जीते तो बचे ! हम समझते थे कि सांप सूंघ गया। यहां मार-धाड़ भी हो गयी, तुम्हे खबर ही नही।

कोचमैन—मार-धाड़ ! यह मार-धाड कैसी ?

रिसालदार—देखो यह सुअर शराब पी रहा है और सबको गालिया देता है। मैंने खूब पीटा, फिर भी नही मानता।

पलटू—झूठे हो ! किसने पीटा ? कब पीटा ? यहां तो एक जूं भी न मरी।

कोचमैन—लाला, थोडी-सी हमको भी पिलाओ।

पलटू और कोचमैन, दोनो कोच-बक्स पर जा बैठे और कुज्जियों का दौर चलने लगा। जब दोनो बदमस्त हुए, तो आपस मे धौलधप्पा होने लगा। इसने उसके लप्पड लगाया, उसने इसके एक टीप जड़ी। कोचमैन ने पलटू को ढकेल दिया। पलटू ने गिरते ही पांव पकड़ कर घसीटा, तो कोचमैन भी धम से गिरे। दोनों चिमट गये। एक ने कूल्हे पर लादा, दूसरा बगली डूबा। मुक्का चलने लगा। कोचमैन ने झपट के पलटू की टगडी ली, पलटू ने उसके पट्टे पकड़े। रिसालदार को गुस्सा आया, तो पलटू के वेभाव की चपतें लगायी। एक, दो, तीन करके कोई पचास तक गिन गये आजाद ने देखा कि मै खाली हू। उन्होने कोचमैन को चपतियाना शुरू किया।

आजाद—क्यो बचा, पियोगे शराब ? सुअर, गाड़ी चलाता है कि शराब पीता है ?

रिसालदार—तोड़ दू सिर, पटक दू बोतल सिर पर !

पलटू—तो आप क्या अकड रहे है ? आपकी रिसालदारी को तो हमने देख लिया। देखो, कोचमैन के सिर पर आधे बाल रह गये, यहां बाल भी न बाका हुआ।

रिसालदार—बस भई अब हम हार गये।

इस झंझट मे तडका हो गया। मुसाफ़िर रात भर के जगे हुए थे, झपकियां लेने लगे। मालूम नही, कितनी चौकियां आयी और गयी। जब लखनऊ पहुंचे, तो दोपहर ढल चुकी थी।

तेईस

मियां आजाद शिकरम पर से उतरे, तो शहर को देखकर बाग-बाग हो गये। लखनऊ मे घूमे तो बहुत थे, पर इस हिस्से की तरफ़ आने का कभी इत्तिफ़ाक न हुआ था। सड़कें साफ़, कूड़े-करकट से काम नही, गंदगी का नाम नही, वहां एक रंगीन कोठी नजर आयी, तो आंखों ने वह तरावट पायी कि वाह जी, वाह ! उसकी बनावट और सजावट ऐसी भायी कि सुभान-अल्लाह। बस, दिल मे खूब ही तो गयी। रविशे दुनिया से निराली, पौदों पर वह जोबन कि आदमी बरसो घूरा करे।

मियां आजाद ने एक हरे-भरे दरख्त के साये मे आसन जमाया। टहनिया हवा के झोंको से झूमती थी, मेवे के बोझ से जमीन को बार-बार चूमती थीं। आजाद ठंडे-ठंडे

हवा के झोकों का मजा ले रहे थे कि एक मुसाफ़िर उधर से गुज़रा। आज़ाद ने पूछा—क्यों साहव, इस कोठी में कौन रईस रहता है?

मुसाफ़िर—रईस नहीं, एक रईसा रहती हैं! बड़ी मालदार हैं। रात को रोज वजरे पर दरिया की सैर को निकलती है। उनकी दोनों लड़कियां भी साथ होती हैं।

आज़ाद—क्यों साहव, लड़कियों की उम्र क्या होगी?

मुसाफ़िर—अव उमर का हाल मुझे क्या मालूम। मगर सयानी हैं, वड़ी तमीज़दार हैं और वुढ़िया तो आफ़त की पुड़िया।

आज़ाद—शादी अभी नहीं हुई?

मुसाफ़िर—अभी शादी नही हुई, न कहीं वातचीत है। दोनों वहनों को पढ़ने-लिखने और सैर करने के सिवा कोई काम नहीं। सफ़ाई का दोनों को ख़्याल है। ख़ुदा करे, उनकी शादी अच्छे घरों में हो।

आज़ाद—आपने तो वह खवर सुनायी कि मुझे उन लड़कियों को सैर करते हुए देखने का शौक़ हो गया।

मुसाफ़िर—तो फिर इसी जगह विस्तर जमा रखिए।

आज़ाद—आप भी आ जायं, तो मज़ा आये।

मुसाफ़िर—आ जाऊंगा।

आज़ाद—ऐसा न हो कि आप न आयें और मुझे भेड़िया उठा ले जाय।

मुसाफ़िर—आप वड़े दिल्लगीवाज़ मालूम होते हैं। यहां अपने वादे के सच्चे हैं। वस, शाम हुई और वंदा यहां पहुंचा।

यह कहकर हज़रत तो चलते हुए और आज़ाद दरख़्तों से मेवे तोड़-तोड़कर खाने लगे। फिर चिड़ियों का गाना सुना। फिर दरिया की लहरें देखीं। कुछ देर तक गाते रहे। यहां तक कि शाम हो गयी और वह मुसाफ़िर न आया। आज़ाद दिल में सोचने लगे, शायद हज़रत झांसा दे गये। अव शाम में क्या वाक़ी है। आना होता, तो आ न जाते। शायद आज वेगम साहिवा वजरे पर सैर भी न करेंगी। सैर करने का यही तो वक़्त है। इतने में मियां मुसाफ़िर ने आकर पुकारा।

आज़ाद—ख़ैर, आप आये तो! मैं तो आपके नाम को रो चुका था।

मुसाफ़िर—ख़ैर, अव हंसिए। देखिए, वह हाथी आ रहा है। दोनों पालकियां भी साथ हैं।

आज़ाद—कहां—कहां? किधर?

मुसाफ़िर—ईंट की ऐनक लगाओ! इतनी वड़ी पालकी नही देख सकते! हाथी भी नहीं दिखायी देता! क्या रतौंधी आती है?

आज़ाद—आहा हा! वह देखिए। ऐं, वह तो दरख़्त के साये में रुक रहा।

मुसाफ़िर—घवराइए नहीं, यहीं आ रही हैं। अव कोई और ज़िक्र छोड़िए, जिसमें मालूम हो कि दो मुसाफ़िर थक कर खड़े वातें कर रहे हैं!

आज़ाद—यह आपको खूव सूझी! हां साहव, अवकी आम की फ़सल खूव हुई। जिधर देखो, पटे पड़े हैं; मंडी जाइए, खांचियों की खांचियां। तरवूज़ को देख आइए, कोई टके को नहीं पूछता। और आम के सामने तरवूज़ को कौन हाथ लगाये!

ये वातें हो ही रही थीं कि वजरा तैयार हुआ। दोनों वहनें और वेगम साहिवा उसमें वैठीं। एकाएक पूरव की तरफ़ से काली मतवाली घटा झूमती हुई उठी और विजली ने चमकना शुरू किया। मल्लाह ने वजरे को खूंटे से वांध दिया। दोनों लड़कियां हाथी पर वैठीं और घर की तरफ़ चलीं। आज़ाद ने कहा—यह वुरा हुआ! तूफ़ान ने हत्थे ही पर टोंक दिया, नहीं तो इस वक़्त वजरे की सैर देखकर दिल की कली खिल जाती।

आख़िर दोनों आदमी घूमते-घामते एक बाग़ में पहुंचे, तो मियां मुसाफ़िर बोले—हजरत, अब की आम इतनी कसरत से पैदा हुआ कि टके सेर नहीं, टके हज़ार लग गये ! लेकिन बग़ीचे वाले का यह हाल है कि जहां किसी भलेमानस ने राह चलते कोई आम उठा लिया और बस, चिमट पड़ा। अभी परसों ही की तो बात है। यहां से कोई चार कोस पर एक मुसाफ़िर मैदान में चला जाता था। एक काना खुतरा आम टप से ज़मीन पर टपक पड़ा। मुसाफ़िर को क्या मालूम कि कौन इधर-उधर ताक रहा है, चुपके से आम उठा लिया। उठाना था कि दो गंवारदल लट्ठ कंधे पर रखे, मार सारे का, मार सारे का करते निकल आये। मुसाफ़िर ने आम झट ज़मीन पर पटक दिया। लेकिन एक गंवार ने आते ही गालियां देनी शुरू कीं और दूसरे ने घूंसा ताना। मुसाफ़िर भी क्षत्रिय आदमी था, आग हो गया। मारे ग़ुस्से के उसका बदन थर-थर कांपने लगा। बढ़के जो एक चांटा देता है, तो एक गंवार लड़खड़ाके धम से ज़मीन पर। दूसरे ने जो यह हाल देखा, तो लट्ठ ताना। राजपूत बग़ली डूब कर जा पहुंचा, एक आंटी जो देता है, तो चारों खाने चित। हम भी कल एक बाग़ मे फंस गये थे। शामत जो आयी, तो एक दरख़्त के साये में दोपहरिया मनाने बैठ गये। बैठना था कि एक ने तड़ से गाली दी। अब सुनिए कि गाली तो दी हमको, लेकिन एक पहलवान भी क़रीब ही बैठा था। सुनते ही चिमट गया और चिमटते ही कूल्हे पर लादा। गिरे मुंह के बल। पहलवान छाप बैठा, हफ्ते गांठ लिये, हलसीगड़ा बांध कर आसमान दिखा दिया और अपने शागिर्दों से कहा—चढ़ जाओ पेड़ पर, और आम, पत्ते, बौर, टहनी जो पाओ, तोड़-तोड़कर फेंक दो, पेड़ नोच डालो। लेकिन लोगों ने समझाया कि उस्ताद, जाने दो; गाली देना तो इनका काम है। यह तो इनके सामने कोई बात ही नहीं, ये इसी लायक़ है कि खूब धुने जायं।

आज़ाद—क्यों साहब, धुने क्यों जायं ? ऐसा न करें, तो सारा बाग़ मुसाफ़िरों ही के लिए हो जाय। लोग पेड़ का पेड़, जड़ और फुनगी तक चट कर जायं। आप तो समझे कि यह एक आम के लिए कट मरा, मगर इतना नहीं सोचते कि एक ही एक करके हज़ार होते है। इस ताकीद पर तो यह हाल है कि लोग बाग़ के बाग़ लूट खाते हैं; और जो कही इतनी तू-तू मैं-मैं न हो तो न जाने क्या हो जाय।

मियां मुसाफ़िर कल आने का वादा करके चले गये। आज़ाद आगे बढ़े, तो क्या देखते हैं कि एक आदमी अपने लड़के को गोदी में लिये थपकी दे दे कर सुला रहा है—'आ जा री निंदिया, तू आ क्यों न जा; मेरे बाले को गोद सुला क्यों न जा।' आजाद एक दिल्लगीबाज़ आदमी, जाकर उससे पूछते क्या है—किसका पिल्ला है ? वह भी एक ही काइयां था, बोला—दूर रह, क्यों पिला पड़ता है ? आज़ाद यह जवाब सुनकर ख़ुश हो गये। बोले—उस्ताद, हम तो आज तुम्हारे मेहमान होंगे। तुम्हारी हाजिरजवाबी से जी ख़ुश हो गया। अब रात हो गयी है, कहां जायं ? उस हंसोड़ आदमी ने इनकी बड़ी ख़ातिर की, खाना खिलाया और दोनों ने दरवाजे पर ही लंबी तानी। तड़के मियां आज़ाद की नींद खुली। हंसोड़ को जगाने लगे। क्यों हजरत, पड़े सोया ही कीजिएगा या उठिएगा भी; वाह रे माचा-तोड़ ! बारे बहुत हिलाने-डुलाने पर मियां हंसोड़ उठे और फिर लेट गये; मगर पैताने की तरफ़ सिर करके। इतने में दो-चार दोस्त और आ गये। वाह भई, वाह, हम दो कोस से आये और यहां अभी खाट ही नहीं छोड़ी ? भई, बड़ा सोनेवाला है। हमने मुंह-हाथ धोया, हुक़्क़ा पिया, बालों में तेल 'डाला चपातियां खायी, कपड़े पहने और टहलते हुए यहां तक आये; मगर यह अभी तक पड़े ही हुए हैं। आख़िर एक आदमी ने उनके कान में पानी डाल दिया। तब तो आप कुलबुलाये। देखो, हैं-हैं नही मानते ! वाह, अच्छी दिल्लगी निकाली है।

एक दोस्त—जरा आंखें तो खोलिए।

हंसोड़—नहीं खोलते। आपका कुछ इजारा है?

दोस्त—देखिए, यह मियां आज़ाद तशरीफ़ लाये हैं, इधर मौलवी साहब खड़े हैं। इनसे तो मिलिए, सो-सो कर नहूसत फैला रखी है।

मौलवी—अजी हज़रत!

हंसोड़—भई, दिक़ न करो, हमें सोने दो। यहां मारे नींद के बुरा हाल है, आपको दिल्लगी सूझती है।

आजाद—भाई साहब!

हंसोड़—और सुनिए। आप भी आये वहां से जान खाने। सवेरे-सवेरे आपको बुलाया किस गधे ने था? भलेमानस के मकान पर जाने का यह कौन वक्त है भला? कुछ आपका क़र्ज़ तो नहीं चाहता? चलिए, बोरिया-बंधना उठाइए। (आंखें खोलकर) अख्खा आप, हैं? माफ़ कीजिएगा। मैंने आपकी आवाज़ नहीं पहचानी।

मौलवी—कहिए, खाकसार की आवाज़ तो पहचानी? या कुछ मीन-मेख है?

हंसोड़—अख्खा, आप हैं। माफ़ कीजिएगा, मैं अपने आपे में न था।

मौलवी—हज़रत, इतना भी नींद के हाथ बिक जाना भला कुछ बात है! आठ बजा चाहते हैं और आप पड़े सो रहे हैं। क्या कल रतजगा था? ख़ैर, मैं तो रुख़सत होता हूं; आप हकीम साहब के नाम ख़त लिख भेजिएगा। ऐसा न हो कि देर हो जाय। कहीं फिर न लुढ़क रहिएगा। आपकी नींद से हम हारे।

हंसोड़—अच्छा मियां आजाद, और बातें तो पीछे होंगी, पहले यह बतलाइए कि खाना क्या खाइएगा? आज मामा बीमार हो गयी है और घर में भी तबीयत अच्छी नहीं है। मैंने रोज़े की नीयत की है। आप भी रोज़ा रख लें। फ़ायदे का फ़ायदा और सवाब का सवाब।

आज़ाद—रोज़ा आपको मुबारक रहे। अल्लाह मियां हमें यों ही बख़्श देंगे। यह दिल्लगी किसी और से कीजिएगा।

हंसोड़—दिल्लगी के भरोसे न रहिएगा। मैं खरा आदमी हूं। हां, ख़ूब याद आया। मौलवी साहब ख़त लिखने को कह गये हैं। दो पैसे का ख़ून और हुआ। कल भी रोजा रखना पड़ा।

आजाद—दो पैसे क्यों ख़र्च कीजिएगा? अब तो एक पैसे के पोस्टकार्ड चले हैं।

हंसोड़—सच? एक डबल में! भई अंगरेज बड़े हिकमती हैं। क्यों साहब, वह पोस्टकार्ड कहां बिकते हैं?

आज़ाद—इतना भी नहीं जानते? डाकखाने में आदमी भेजिए।

हंसोड़—रोशनअली, डाकखाने से जाकर एक आने के पोस्टकार्ड ले आओ।

रोशन—मियां, मैं देहाती आदमी हूं। अंगरेजी नहीं पढ़ा।

हंसोड़—अरे भई, तुम कहना कि वह लिफ़ाफ़े दीजिए, जो पैसे-पैसे में बिकते हैं। जा झट से, कुत्ते की चाल जाना और बिल्ली की चाल आना।

रोशन—अजी, मुझसे कहिए, तो मैं गधे की चाल जाऊं और बिसखोपड़े की चाल आऊं। मुल डाकवाले मुझे पागल बनायेंगे। भला आज तक कहीं पैसे में लिफ़ाफ़ा बिका है?

हंसोड़—अबे, तुझे इस हुज्जत से क्या वास्ता? डाकखाने तक जायगा भी, या यहीं बैठे-बैठे दलीलें करेगा?

रोशन डाकखाने गया और पोस्टकार्ड ले आया। मियां हंसोड़ झपटकर क़लम-दावात ले आये और ख़त लिखने बैठे। मगर पुराने ज़माने के आदमी थे तारीफ़ के इतने

लंबे-लंबे जुमले लिखने शुरू किये कि पोस्टकार्ड भर गया और मतलब खाक न निकला। बोले—अब कहां लिखें ?

आज़ाद—दो टप्पी बातें लिखिए।—आप तो लगे अपनी लियाक़त बघारने। दूसरा लीजिए।

हंसोड़ ने दूसरा पोस्टकार्ड लिखना शुरू किया—'जनाब, अब हम थोड़े में बहुत-सा हाल लिखेंगे। देखिए, बुरा न मानिएगा। अब वह ज़माना नहीं रहा कि वह बीघे-भर के आदाब लिखे जायें। वह लंबी-चौड़ी दुआएं दी जायें। वह घर का कच्चा-चिट्ठा कह सुनाना अब रिवाज़ के खिलाफ़ है। अब तो हमने क़सम खायी है कि जब क़लम उठायेंगे, दस-सतरों से ज्यादा न लिखेंगे इसमें चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाए। अब आप भी इस फ़ैशन को छोड़ दीजिए।' अरे, यह ख़त भी गया। अब तो तिल रखने की भी जगह नहीं। लीजिए, बात करते-करते दो पैसे का खून हो गया। इससे तो पैसे का टिकट लाते तो खर्रे का खर्रा लिख डालते।

आजाद—देखूं तो; आपने क्या लिखा है। वाह-वाह इस पंवाड़े का कुछ ठिकाना है। अरे साहब, मतलब-से-मतलब रखिए। बहुत वेहूदा न बकिए। खैर, अब तीसरा कार्ड लीजिए। मगर क़लम को रोके हुए। ऐसा न हो कि आप फिर वाही-तबाही लिखने लगे।

हंसोड़—अच्छा साहब, यों ही सही। बस, ख़ास-ख़ास बातें ही लिखूंगा।

यह कह कर उन्होंने यह ख़त लिखा—'जनाब फ़ज़ीलतमआब मौलाना साहब, आप यह पैसलूचा लिफ़ाफ़ा देखकर घबरायेंगे कि यह क्या बला है। डाकखानेवालों ने यह नयी फुलझड़ी छोड़ी है। आप देखते हैं, इसमें कितनी जगह है। अगर मुख्तसर न लिखूं तो क्या करूं। लिखनी तो बहुत-सी बातें हैं. पर इस लिफ़ाफ़े को देखकर सब आरजूएं दिल में रही जाती हैं। देखिए, अभी लिखा कुछ भी नहीं, मगर कागज़ को देखता हूं, तो एक तरफ़ सब-का-सब लिप गया। दूसरी तरफ़ लिखूं, तो पकड़ा जाऊं।' लो साहब, यह पोस्टकार्ड भी ख़तम हुआ ! मियां आज़ाद, ये तीनों पैसे आपके नाम लिखे गये। आप चाहे दें टका नहीं, लेकिन सलाह आप ही ने दी थी।

आज़ाद—मैंने यह कब कहा था कि आप ख़त में अपनी ज़िंदगी की दास्तान लिख भेजें ? यह खत है या रांड़ का चर्खा ? इतने बड़े हुए, ख़त लिखने की लियाक़त नहीं। समझा दिया, सिखला दिया कि बस, मतलब-से-मतलब रखो। मगर तुम कब मानने लगे खुदा की क़सम, तुम्हारी सूरत से नफ़रत हो गयी। बस, बेतुकेपन की हद हो गयी।

हंसोड़—वाह री क़िस्मत ! तीन पैसे गिरह से गये और उल्लू के उल्लू बने। भला आप ही लिखिए, तो जानें। देखें तो सही, आप इस जरा से कागज पर कुल मतलब क्योंकर लिखते हैं। इसके लिए तो बड़ा भारी उस्ताद चाहिए, जो पिस्ते पर हाथी की तसवीर बना दे।

आज़ाद—आप अपना मतलब मुझसे कहिए, तो अभी लिख दूं।

हंसोड़—अच्छा सुनिए—मौलवी जामिनअली आपकी खिदमत में पहुंचे होंगे। उनको वह तीस रुपयेवाली जगह दिला दीजिएगा। आपका उम्र भर एहसान होगा। बस, इसी को खूब बढ़ा दीजिए।

आज़ाद—फिर वही झक ! बढ़ा क्यों दूं ? यह न कहा कि बस, यही मेरा मतलब है, इसको बढ़ा दीजिए। लाओ पोस्टकार्ड, देखो, यों लिखते हैं—

'हज़रत सलामत, मौलवी जामिनअली पहुंचे होंगे। वह तीस रुपयेवाला ओहदा उनको दिलवा दीजिए, तो एहसान होगा। उम्मेद है कि आप खैरियत से होंगे।'

लो, देखो, इतनी-सी बात को इतना बढ़ाया कि तीन-तीन खत लिखे और फाड़े।

हंसोड़—खूब; यह तो अच्छा दुम-कटा खत है! अच्छा, अब पता भी तो लिखिए।

आज़ाद ने सीधा-सादा पता लिखकर हंसोड़ को दिखलाया, तो आप पूछने लगे—क्यों साहब, यह तो शायद वहां तक पहुंचे ही नहीं। कहीं इतना ज़रा-सा पता लिखा जाता है? इसमें मेरा नाम कहां है, तारीख कहां है?

आज़ाद—आपका नाम बेवकूफ़ों की फ़ेहरिस्त में है और तारीख डाकखाने में।

हंसोड़—अच्छा लाइए, दो-चार सतरें मैं भी बढ़ा दूं।

हज़रत ने जो लिखना शुरू किया, तो पते की तरफ़ भी लिख डाला।—थोड़े लिखने को बहुत समझिएगा। आपका पुराना गुलाम हूं। अब कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ती।

आज़ाद—हैं-हैं! ग़ारत किया न इसको भी?

हंसोड़—क्यों, जगह बाक़ी है, पूरा पैसा तो वसूल करने दो।

आज़ाद—जी, पैसा नहीं, एक आना वसूल हो गया? एक ही तरफ़ मतलब लिखा जाता है, दूसरी तरफ़ सिर्फ़ पता। आपसे तो हमने पहले ही कह दिया था।

यह बातें हो ही रही थीं कि कई लड़के स्कूल से निकले उनमें एक बड़ा शरीर था। किसी पर धप जमायी, किसी के चपत लगायी, किसी के कान गरमा दिये। अपने से ड्योढ़े-दूने तक को चपतियाता था। आज़ाद ने कहा—देखो, यह लौंडा कितना बदमाश है! अपने दूने तक की खबर लेता है।

हंसोड़—भई, खुदा के लिए इसके मुंह न लगना। इसके काटे का मंतर ही नहीं। यह स्कूल भर में मशहूर है। हज़रत दो दफ़े चोरी की इल्लत में धरे गये। इनके मारे महल्ले भर का नाकों दम है। एक क़िस्सा सुनिए। एक दफ़े हज़रत को शरारत का शौक़ चर्राया, फिर सोचने की ज़रूरत न थी। फ़ौरन सूझती है। शरारत तो इसकी खमीर में दाखिल है। एक पांव का जूता निकालकर हज़रत ने एक आलमारी पर रख दिया। जूते के नीचे एक किताब रख दी। थोड़ी देर बाद एक लड़के से बोले—यार, ज़रा वह किताब उतारो; तो कुछ देख-दाख लूं; नहीं तो मास्टर साहब बेतरह ठोकेंगे। सीधा-सादा लड़का चुपके से वह किताब उठाने गया। जैसे ही किताब उठायी, वैसे ही जूती मुंह पर आयी। सब लड़के खिलखिलाकर हंस पड़े। मास्टर साहब अंग्रेज थे। बहुत ही झल्ला कर पूछा—यह किसकी जूती का पांव है? अब आप बैठे चुपचाप पढ़ रहे हैं। गोया इनसे कुछ वास्ता ही न था। मगर इनका तो दर्जा भर दुश्मन था। किसी लड़के ने इशारे से जड़ दी। मास्टर ने आपको बुलाया और पूछा—वेल, दूसरा पांव कहां तुम्हारा? दूसरा पांव किडर?

लड़का—पांव दोनों ये हैं।

मास्टर—वेल, जूती, जूती?

लड़का—जूती को खावे तूती।

मास्टर—बेंच पर खड़ा हो।

लड़का—यह सजा मंजूर नहीं; कोई और सजा दीजिए।

मास्टर—अच्छा, कल के सबक को सौ बार लिख लाना।

लड़का—वाह-वाह, और सबक याद कब करूंगा?

मास्टर—अच्छा, आठ आना जुर्माना।

दूसरे दिन आप आठ आने लाये, तो मोटे पैसे खट-खट करके मेज़ पर डाल दिये। मास्टर ने पूछा—अठन्नी क्यों नहीं लाया? बोले—यह शर्त नहीं थी।

इसी तरह एक बार एक भलेमानस के यहां कह आये कि तुम्हारे लड़के को स्कूल

में हैज़ा हुआ है। उनके घर में रोना-पीटना मच गया। लड़के का बाप, चचा, भाई, मामू, सब दौड़ते हुए स्कूल पहुंचे। औरतों ने आठ-आठ आंसू रोना शुरू किया। वे लोग जो स्कूल गये, तो क्या देखते हैं, लड़का मजे से गेद खेलता है। अजी, और क्या कहें, इसने अपने बाप को एक बार नमक के धोखे मे फिटकरी खिला दी, और उस पर तुर्रा यह कि कहा, क्यों अब्बाजान, कैसा गहरा चकमा दिया ?

शाम के वक़्त बूढ़े मियां आजाद के पास आकर बोले—चलिए, उधर बजरा तैयार है ! आजाद तो उनकी ताक में बैठे ही थे, हंसोड़ को लेकर उनके साथ चल खड़े हुए। नदी के किनारे पहुचे, तो देखा, बजरे लहरो पर फर्राटे से दौड़ रहे हैं। एक दरख़्त के साये में छिपकर यह बहार देखने लगे। उधर उन दोनों हसीनों ने बजरे पर से किनारे की तरफ़ देखा, तो आजाद नजर पड़े। शरम से दोनों ने मुंह फेर लिये लेकिन कनखियों से ताक रही थी। यहां तक कि बजरा निगाहों से ओझल हो गया।

थोड़ी देर के बाद आजाद उन्ही बूढ़े मियां के साथ उस कोठी की तरफ़ चले, जिसमें दोनों लड़कियां रहती थी। क़दम-क़दम पर शेर पढ़ते थे, ठंडी सांसें भरते थे और सिर धुनते थे। हालत ऐसी खराब थी कि क़दम-क़दम पर उनके गिर पड़ने का खौफ़ था। हंसोड़ ने जो यह कैफ़ियत देखी, तो झपटकर मियां आजाद का हाथ पकड़ लिया और समझाने लगे : इस रोने-धोने से क्या फ़ायदा ? आखिर यह तो सोचो कि कहां जा रहे हो ? वहां तुम्हें कोई पहचानता भी है ? मुफ़्त में शरमिंदा होने की क्या जरूरत ?

आज़ाद—भई, अब तो यह सिर है और वह दर। बस, आजाद है और उन बुतों का कूचा।

हंसोड़—यह महज नादानी है; यही हिमाक़त की निशानी है। मेरी बात मानो, बूढ़े मियां को फंसाओ, कुछ चटाओ, फिर उनकी सलाह के मुताबिक़ काम करो, बेसमझे-बूझे जाना और अपना-सा मुंह लेकर वापस आना हिमाक़त है।

ये बातें करते हुए दोनों आदमी कोठी के क़रीब पहुंचे। देखा, बूढ़े मियां इनके इंतजार में खड़े हैं। आजाद ने कहा—हजरत, अब तो आप ही रास्ता दिखायें, तो मंजिल पर पहुंच सकते हैं; वर्ना अपना तो हाल खराब है।

बूढ़ें मियां—भई, हम तुम्हारे सच्चे मददगार और पक्के तरफ़दार है। अपनी तरफ़ से तुम्हारे लिए कोई बात उठा न रखेंगे। लेकिन यहां का बाबाआलम ही निराला है। यहां परिंदों के पर जलते हैं। हवा का भी गुजर होना मुश्किल है। मगर दोनों मेरी गोद की खिलायी हुई हैं, मौक़ा पाकर आपका जिक्र जरूर करूंगा। मुश्किल यही है कि एक ऊंचे घर से पैग़ाम आया है, उनकी मां को शौक चर्राया है कि वहीं ब्याह हो।

आजाद—यह तो आपने बुरी खबर सुनायी ! क़सम खुदा की, मेरी जान पर बन जाएगी।

बूढ़े मियां—सब्र कीजिए, सब्र। दिल को ढारस दीजिए। अब इस वक़्त जाइए, सुबह आइएगा।

आजाद रुखसत होने ही वाले थे, तो क्या देखते हैं, दोनों बहनें झरोखों से झांक रही हैं। आज़ाद ने यह शेर पढ़ा —

हम यही पूछते फिरते हैं ज़माने भर से;
जिनकी तक़दीर बिगड़ जाती है, क्या करते हैं ?

झरोखे में से आवाज़ आयी—

जीना भी आ गया मुझे, मरना भी आ गया;
पहचानने लगा हूं तुम्हारी नज़र को मै।

इतना सुनना था कि मियां आज़ाद की आंखें मारे ख़ुशी के डबडबा आयीं। झरोखे की तरफ़ फिर जो ताका, तो वहां कोई न था। चकराये कि किसने यह शेर पढ़ा। छलावा था, टोना था, जादू था, आखिर था क्या? इतने में बूढ़े मियां ने इशारे से कहा कि बस, अब जाओ और तड़के आओ।

दोनों दोस्त घर की तरफ़ चले, तो मियां हंसोड़ ने कहा—हज़रत, ख़ुदा के वास्ते मेरे घर पर कूद-फांद न कीजिएगा, बहुत शेर न पढ़िएगा, कहीं मेरी बीबी को खबर हो गयी, तो जीना मुश्किल हो जायगा।

आज़ाद—क्या बीवी से आप इतना डरते हैं! आखिर ख़ौफ़ काहे का?

हंसोड़—आपको इस झगड़े से क्या मतलब? वहां ज़रा भले आदमी की तरह बैठिएगा, यह नहीं कि गुल मचाने लगे। जो सुनेगा, वह समझेगा कि कहां के शोहदे जमा हो गये हैं।

आज़ाद—समझ गया, आप बीबी के गुलाम हैं। मगर हमें इससे क्या वास्ता। आम खाने से मतलब कि पेड़ गिनने से?

दोनों आदमी घर पहुंचे, तो लौंडी ने अन्दर से आकर कहा—बेगम साहबा आपको कोई बीस बेर पूछ चुकी हैं। चलिए, बुलाती हैं। मियां हंसोड़ ने ड्योढ़ी पर क़दम रखा ही था कि उनकी बीबी ने आड़े हाथों ही लिया। यह दिन-दिन भर आप कहां ग़ायब रहने लगे? अब तो आप बड़े सैलानी हो गये। सुबह के निकले-निकले शाम को खबर ली। चलो, मेरे सामने से जाओ। आज खाना-वाना ख़ैर-सल्लाह है। हलवाई की दूकान पर दादा जी का फ़ातिहा पढ़ो, तंदूरी रोटियां उड़ाओ। यहां किसी को कुत्ते ने नहीं काटा कि वक़्त-बे-वक़्त चूल्हे का मुंह काला किया जाय। भले आदमी दो-एक घड़ी के लिए कहीं गये तो गये; यह नहीं कि दिन-दिन भर पता ही नहीं। अच्छे हथकंडे सीखे हैं।

हंसोड़ ने चुपके से कहा—ज़रा आहिस्ता-आहिस्ता बातें करो। बाहर एक भला-मानस टिका हुआ है। इतनी भी क्या बेहयाई?

इस पर वह चमककर बोली—बस, बस, ज़बान न खुलवाओ बहुत। तुम्हें जो दोस्त मिलता है, वही गंवार-सवार, जिसके घर न द्वार, जाने कहां के उल्फ़ती इनको मिल जाते हैं, कभी किसी शरीफ़ आदमी से दोस्ती करते नहीं देखा। चलिए, अब दूर हूजिए, नहीं हम बुरी तरह पेश आयेंगे। मुझसे बुरा कोई नहीं।

मियां हंसोड़ बेचारे की जान अज़ाब में कि घर में बीबी कोसने सुना रही है, बाहर मियां आज़ाद आड़े हाथों लेंगे कि आपकी बीबी ने आपको तो ख़ैर जो कुछ कहा, वह कहा ही मुझे क्यों ले डाला? मैंने उनका क्या बिगाड़ा था? अपना-सा मुंह लेकर बाहर चले आये और आज़ाद से कहा—यार, आज रोज़े की नीयत कर लो। बीबी-जान फ़ौजदारी पर आमादा हैं। बात हुई और तिनक गयीं। महीनों ही रूठी रहती हैं। मगर क्या करूं, अमीर की लड़की हैं, नहीं तो मैं एक झल्ला हूं। मुझे यह मिज़ाज कहां पसंद। इसलिए भई, आज फ़ाक़ा है।

आज़ाद—फ़ाक़ा करें आपके दुश्मन। चलिए, किसी नानबाई हलवाई की दुकान पर। मज़े से खाना खाएं!

हंसोड़—अरे यार, इतने ही होते तो बीबी की क्यों सुनते! टका पास नहीं, हलवाई क्या हमारा मामू है?

आज़ाद—इसकी फ़िक्र न कीजिए। आप हमारे साथ चलिए और मज़े से मिठाई चखिए। वह तदबीर सूझी है कि कभी पट ही न पड़े।

दोनों आदमी बाज़ार पहुंचे। आज़ाद ने रास्ते में हंसोड़ को समझा-बुझा दिया। हंसोड़ तो हलवाई की दुकान पर गये और आज़ाद ज़रा पीछे रह गये। हंसोड़ ने जाते-

ही-जाते हलवाई से कहा—मियां आठ आने के पैसे दो और आठ आने की पंचमेल मिठाई। हलवाई ने ताज़ी-ताज़ी मिठाई तौल दी और आठ आने पैसे भी गिन दिये। हंसोड़ ने पैसे तो गांठ मे बांधे और मिठाई उसी की दूकान पर चखने लगे। इतने मे मियां आजाद भी पहुंचे और बोले—भई लाला, जरा हमे बेसन के लड्डू तो एक रुपये के तौल देना। उसने एक रुपये के बेसन के लड्डू चगेर उनके हाथ मे दी। इतने मे मियां हंसोड़ ने लकड़ी उठायी और अपनी राह चले। हलवाई ने ललकारा—मियां, चले कहां? पहले रुपया तो देते जाओ।

हंसोड़—रुपया! अच्छा मजाक है! अबे, क्या तूने रुपया नही पाया। यहा पहले रुपया देते, पीछे सौदा लेते है। अच्छे मिले! क्या दो-दो दफ़े रुपया लोगे? कही मैं थाने में रपट न लिखवा दूं! मुझे भी कोई गंवार समझे हो! अभी चेहरेशाही दे चुका हूं। अब क्या किसी का घर लेगा?

अब हलवाई और हंसोड़ मे तकरार होने लगी। बहुत से आदमी जमा हो गये। कोई कहता है, लाला घास तो नही खा गये हो; कोई कहता है, मियां एक रुपये के लिए नीयत डांवाडोल न करो; ईमान सलामत रहेगा, तो बहुत रुपये मिलेगे।

आजाद—लाला, कही इसी तरह मेरा भी रुपया न भूल जाना।

हलवाई—क्या, आपका रुपया? आपने रुपया किसको दिया?

अब जो सुनता हे, वही हलवाई को उल्लू बनाता है। लोगों ने बहुत कुछ लानत-मलानत की कि शरीफ आदमी को बेइज्जत करते हो। इतने मे उस हलवाई का बुड्ढा बाप आया, तो देखता क्या हे कि दुकान पर भीड़ लगी हुई है। पूछा, क्या माजरा है। क्या दुकान लुट गयी? एक बिगड़े-दिल ने कहा—अजी, लुट तो नही गयी मगर अब तुम्हारी दुकान की साख जाती रही! अभी एक भलेमानस ने खन से रुपया फेंका। अब कहता है कि हमने रुपया पाया ही नही। उसको छोड़ा, तो दूसरे शरीफ़ का दामन पकड़ लिया कि तुमने रुपया नही दिया; हालांकि वह बेचारे सैंकडो क़समें खाते है कि मै दे चुका हूं। हलवाई बडा तीखा बुड्ढा था, सुनते ही आग हो गया। झल्लाकर अपने लड़के की खोपड़ी पर तान के एक चपत लगायी और बोला—कहता हूं कि भंग न खाया कर, मानता ही नही। जाकर बैठा दुकान पर।

मियां आजाद और हंसोड़ ने मजे से डेढ रुपये की मिठाई बांध ली, और आठ आने के पैसे घाते में। जब घर पहुंचे, तो खूब मिठाई चखी। बची-बचायी अंदर भेज दी। हंसोड़ ने कहा—यार, इसी तरह कही से रुपया दिलवाओ, तो जाने। आजाद ने कहा—यह कितनी बड़ी बात है? अभी चलो। मगर किसी से मांग-मूंग कर कुछ अशर्फ़ियां बांध लो। मियां हंसोड़ ने अपने एक दोस्त से शाम को लौटा देने के वादे पर कुछ अशर्फ़ियां ली! दोनो ने रोशनअली को साथ लिया और बाजार चले। पहले एक महाजन को अशर्फियां दिखायी और परखवायी। बेचते है, खरी-खोटी देख लीजिए। महाजन ने उनको खूब कसौटी पर कसा और कहा—उन्नीस के हिसाब से लेंगे। तब हंसोड़ दूसरी दुकान पर पहुंचे। वहां भी अशर्फियां गिनवायी और परखवायी। इसके बाद आज़ाद ने तो अशर्फिया लेकर घर की राह ली और मियां हंसोड़ एक कोठी मे पहुंचे। वहां कहा कि हमको दो सौ अशर्फियां ख़रीदनी है। महाजन ने देखा, आदमी शरीफ़ है, फ़ौरन दो सौ अशर्फियां उनके सामने ढेर कर दी। बीस रुपये की दर बतायी। हंसोड़ ने महाजन के मुनीम से एक पर्चे पर हिसाब लिखवाया और अशर्फियां बांधकर कोठी के बाहर पहुंचे। गुल मचा—हाय-हाय, लेना-लेना, कहां-कहां! मियां हंसोड़ पैतरा बदल सामने खड़े हो गये। बस, दूर ही से बातचीत हो। सामने आये और मैने तुला हाथ दिया।

महाजन—ऐ साहब, रुपये तो दीजिए?

हंसोड़ –कैसे रुपये ? हम नहीं वेचते।

महाजन—क्या कहा, नहीं वेचते ? क्या अर्शफियां आपकी हैं ?

हंसोड़—जी, और नहीं तो क्या आपके वाप की हैं ? हम नहीं वेचते, आपका इजारा है कुछ ? आप हैं कौन ज़वर्दस्ती करनेवाले ?

इतने में आज़ाद भी वहां आ पहुंचे। देखा, तो महाजन और उनके मुनीम जी गुल मचा रहे हैं—तुम अर्शफियां लाये कव थे ? और हंसोड़ कह रहे हैं, हम नही वेचते। सैकड़ों आदमी जमा थे। पुलिस का एक जमादार भी आ मौजूद हुआ।

जमादार—यह क्या झगड़ा है लाला चुन्नामल ? वह नहीं वेचते, तो जवर्दस्ती क्यों करते हो ? अपने माल पर सवको अख़्तियार है।

महाजन—अच्छी पंचायत करते हो जमादार ! यहां चार हज़ार रुपये पर पानी फिरा जाता है, आप कहते हैं, जाने भी दो। ये अर्शफियां तो हमारी है। यह मियां खरीदने आये थे, हमने गिन दीं। वस, वांध-वूंध कर चल खड़े हुए।

एक आदमी—वाह, भला कोई वात भी है ! यह अकेले, आप दस। जो ऐसा होता, तो यह कोठी के वाहर भी आने पाते ? आप सब मिलकर इनका अचार न निकाल लेते ? इतने वड़े महाजन, और दो सौ अर्शफियों के लिए ईमान छोड़े देते हो !

जमादार—बुरी वात !

हंसोड़—देखिए, आप वाज़ार भर में दरियाफ़्त कर लें कि हमने कितनी दुकानों में अशर्फ़ियां दिखलायीं और परखवायी हैं ? वाज़ार भर गवाह है, कुछ एक-दो आदमी वहां थोड़े थे ? इसको भी जाने दीजिए। यह पर्चा पढ़िए। अगर यह वेचते होते, तो वीस की दर से हिसाव लगाते, या साढ़े उन्नीस से ? मुफ़्त में एक शरीफ़ के पीछे पड़े हैं, लेना एक न देना दो।

आखिर यह तय हुआ कि वाज़ार में चलकर तहक़ीक़ात की जाय। मियां हंसोड़ साहूकार, उनके मुनीम, जमादार और तमाशाई सव मिलकर वाज़ार चले। वहां तहक़ी-क़ात की; तो दल्लाओं और दुकानदारों ने गवाही दी कि वेशक इनके पास अशर्फ़ियां थी और इन्होंने परखवायी भी थीं। अभी-अभी यहां से गये थे।

जमादार—लाला साहव, अव खैर इसी में है कि चुपके रहिए; नहीं तो वेढव ठहरेगी। आपकी साख जायगी और मुनीम की शामत आ जायगी।

महाजन—क्या अंधेर है ! चार हजार रुपयों पर पानी पड़ गया, इतने रुपये कभी उम्र भर में नहीं जमा किये थे, और जो है, हमी को उल्लू वनाता है। खैर साहव, लीजिए; हाथ धोये !

तीनों आदमी घर पहुंचे, तो वांछें खिली जाती थीं। जाते ही दो सौ अशर्फ़ियां खन-खन करके डाल दीं।

आज़ाद—देखा, यों लाते हैं। अव ये अर्शफियां हमारी भाभीजान के पास रखो।

हंसोड़—भाई, तुम एक ही उस्ताद हो। आज से मैं तुम्हारा शागिर्द हो गया।

आजाद—ले, भाभी से तो खुश-खवरी कह दो। वहुत मुंह फुलाये वैठी थीं।

मियां हंसोड़ ने घर में जाकर कहा—कहां हो ! क्या सो रहीं ?

वीवी—क्या कमाई करके लाये हो, डपट रहे हो ?

हंसोड़—(अर्शफ़ियां खनका कर) लो, इधर आओ, वहुत मिज़ाज न करो। ये लो, दस हज़ार रुपये की अशर्फ़ियां।

वीवी—ये वुत्ते किसी और को दीजिएगा ! ये तो वही हैं, जो अभी मिर्ज़ा के यहां से मगवायी थीं।

हंसोड़—वह यह हैं, इधर।

बीबी—देखूं, (खिलखिलाकर) किसी के यहां फांदे थे क्या? आख़िर लाये किसके घर से? बस, चुपके से हमारे संदूकचे में रख दो।

हंसोड़—क्यों न हो, मार खायें ग़ाजी मियां, माल खायें मुजाबिर।

बीबी—सच बताओ, कहां मिल गयी? तुम्हें हमारी क़सम!

हंसोड़—यह उन्ही की करामात है, जिन्हें तुम शोहदा और लुच्चा बताती थी।

बीबी—मियां, हमारा कुसूर माफ़ करो। आदमी की तबीयत हमेशा एक-सी थोड़े ही रहती है। मै तो तुम्हारी लौडी हूं।

आजाद—(बाहर से) हम भी सुन रहे है भाभी साहब! अभी तो आपने हमारे भाई बेचारे को डपट लिया था, घर से बाहर कर दिया था; हमको जो गालियां दी, सो घाते में। अब जो अशर्फियां देखी, तो प्यारी बीबी बन गयी। अब इनके कान न गरमाइएगा; यह बेचारे बेबाप के हैं।

बीबी ने अन्दर से कहा—आप हमारे मेहमान है। आपको क्या कहूं, आपकी हंसी सिर आंखों पर।

चौबीस

बड़ी बेगम साहिबा पुराने जमाने की रईसजादी थी, टोने टोटके में उन्हें पूरा विश्वास था। बिल्ली अगर घर मे किसी दिन आ जाय, तो आफ़त हो जाय,। उल्लू बोला और उनकी जान निकली। जूते पर जूता देखा और आग हो गयी। किसी ने सीटी बजायी और उन्होंने कोसना शुरू किया। कोई पांव पर पांव रखकर सोया और आपने ललकारा। कुत्ता गली में रोया और उनका दम निकल गया। रास्ते मे काना मिला और उन्होने पालकी फेर दी। तेली की सूरत देखी और ख़ून सूख गया। किसी ने जमीन पर लकीर बनायी और उसकी शामत आयी। रास्ते में कोई टोक दे, तो उसके सिर हो जाती थी। सावन के महीने में चारपाई बनवाने की क़सम खायी थी। जब देखा कि लड़कियां सयानी हो गयी तो शादी की फ़िक्र हुई। ऊंचे-ऊंचे घरों से पैग़ाम आने लगे। बड़ी लड़की हुस्न-आरा की शादी एक रईस के लड़के से तय हो गयी। हुस्नआरा पढ़ी-लिखी औरत थी। उसे यह कब मंजूर हो सकता था कि बिना देखे-भाले शादी हो जाय। जिसकी सूरत ख़्वाब में भी नही देखी, जिसकी लियाक़त और आदत की जरा भी ख़बर नही, उसके साथ हमेशा के लिए बाध दी जाऊंगी। सहेलियां तो उसे मुबारकबाद देती थी और उसकी जान पर बनी हुई थी। या ख़ुदा, किससे अपने दिल का दर्द कहूं? बोलूं; तो अड़ोस-पड़ोस की औरते ताने दें कि यह लड़की तो सवार को खड़े-खड़े घोड़े पर से उतार ले। दिल ही दिल में बेचारी कुढ़ने लगी। अपनी छोटी बहन सिपहआरा से अपना दु:ख कहती थी और दोनों बहनें गले मिलकर रोती थी।

एक दिन दोनों बहनें बैठी हुई अख़बार पढ़ रही थी। उसमें एक शरीर लड़के की दास्तान छपी हुई थी। पढने लगी—

"यह हजरत दो बार क़ैद भी रह चुके है, और अफ़सोस तो यह है कि एक रईस के साहबजादे है। परसों रात को आपने यह शरारत की कि एक रईस के यहां कूदे और कोठरी का ताला तोड़कर अन्दर घुसने लगे। महाजन की लड़की ने जो आहट पायी तो कुलबुला कर उठ खड़ी हुई और अपनी मां को जगाया। जरी जागो तो, बिल्ली ने तेल का घड़ा गिरा दिया; बिल-बिल! उसकी मां गडबड़ा कर जो उठी तो, आप कोठरी के बाहर एक चारपाई के नीचे दबक रहे। उसने अपने लड़के को जगाया। वह जवान ताल ठोक कर चारपाई पर से कूदा, चोर का कलेजा कितना? आप चारपाई के नीचे से घबरा कर

निकले। महाजन का लड़का भी उनकी तरफ़ झपट पड़ा और उन्हें उठाकर दे मारा। तव उस वदमाश ने कमर से छुरी निकाली और उस महाजन के पेट में भोंक दी। आनन-फ़ानन जान निकल गयी। पड़ोसी और चौकीदार दौड़ पड़े और उस शरीफ़ज़ादे को गिरफ़्तार कर लिया। अब वह हवालात में है। अफ़सोस की वात तो यह है कि उसकी शादी नवाव फरेदूंजंग की लड़की से करार पायी थी जिसका नाम हुस्नआरा है।"

यह लेख पढ़कर हुस्नआरा आठ-आठ आंसू रोने लगी। उसकी छोटी वहन उसके गले से चिमट गयी और उसको वहुत कुछ समझा-वुझा कर अपनी बूढ़ी मां के पास गयी। अख़वार दिखाकर वोली—देखिए, क्या गजव हो गया था, आपने वेदेखे-भाले शादी मंजूर कर ली थी। बूढ़ी वेगम ने यह हाल सुना, तो सिर पीट कर वोली—वेटी, आज तड़के जव मैं पलंग से उठी, तो पट से किसी ने छींका और मेरी वायी आंख भी फड़कने लगी। उसी दम पांव-तले मिट्टी निकल गयी। मैं तो समझती ही थी कि आज कुछ अस-गुन होगा। चलो, अल्लाह ने वड़ी ख़ैर की। हुस्नआरा को मेरी तरफ़ से छाती से लगाओ और कह दो कि जिसे तुम पसंद करोगी, उसी के साथ निकाह कर दूंगी।

सिपहआरा अपनी वहन के पास आयी, तो वांछें खिली हुई थीं। आते ही वोली—वहन, अव तो मुंह-मांगी मुराद पायी? अव उदास क्यों वैठी हो? ख़ुदा-क़सम, वह ख़ुश-ख़वरी सुनाऊं कि जी ख़ुश हो जाय।

हुस्नआरा—ऐ है, तो कुछ कहोगी भी। यहां क्या जाने, इस वक़्त किस ग़म में वैठे हैं, यह ख़ुशी का कौन मौक़ा है?

सिपहआरा—ऐ वाह, हम यों वता चुके। विना मिठाई लिये न वतावेंगे। अम्मा-जान ने कह दिया कि आप जिसके साथ जी चाहे, शादी कर लें। वह अव दख़ल न देंगी। हां, शरीफ़ज़ादा और कल्ले-ठल्ले का जवान हो।

हुस्नआरा—ख़ूवसूरती औरतों में देखी जाती है, मरदों को इससे क्या काम? हां, काला-कलूटा न हो, वस।

सिपहआरा—यह आप क्या कहती हैं। "आदमी-आदमी अंतर, कोई हीरा कोई कंकर।" क्या चांद में गरहन लगाओगी?

हुस्नआरा—ऐ, तो सूत न कपास, कोरी से लठम-लठा!

इतने में वुड्ढे मियां पीरवख़्श ने आवाज़ दी—वेटी, कहां हो, मैं भी आऊं?

सिपहआरा—आओ, आओ, तुम्हारी ही तो कसर थी। आज सवेरे-सवेरे कहां थे? कल तो वजरा ऐसा डांवाडोल होता था, जैसे तिनका वहा चला जाता है। कलेजा धक-धक करता था।

पीरवख़्श—तुमसे कुछ कहना है वेटी! देखो, तुम हमारी पोतियों से भी छोटी हो। तुम दोनों को मैंने गोदियों खिलाया है, और तुम्हारी मां हमारे सामने व्याह आयी हैं। तुम दोनों को मैं अपने वेटे से ज़्यादा चाहता हूं। मैं जो कहूं, उसे कान लगा कर सुनना। तुम अव सयानी हुई। अव मुझे तुम्हारी शादी की फ़िक्र है। पहले तुमसे सलाह ले लूं, तो वेगम साहव से अर्ज़ करूं। यों तो कोई लड़की आज तक विन व्याही नहीं रही; लेकिन वर उन्हीं लड़कियों को अच्छा मिलता है, जो ख़ुशनसीव हैं। तुम्हारी मां हैं तो पुरानी लकीर की फ़क़ीर, मगर यह मेरा ज़िम्मा कि जिसे तुम पसंद करो, उसे वह भी मंजूर कर लेंगी। आजकल यहां एक शरीफ़ नौजवान आकर ठहरे हैं। सूरत शाहज़ादों की सी, आदत फ़रिश्तों की सी, चलन भलेमानसों का-सा, वदन छरहरा, दाढ़ी-मूंछ का नाम नहीं। अभी उठती जवानी है। शेर कहने में, वोलचाल में, इल्म व कमाल में अपना सानी नहीं रखते। तसवीर ऐसी खींचें कि वोल उठे। वाक-पटे में अच्छे-अच्छे वांकों के दांत खट्टे कर दिये। उनकी नस-नस में ख़ूवियां कूट-कूटकर भरी हैं। अगर हुस्नआरा के

साथ उनका निकाह हो जाय, तो खूब हो। पहले तुम देख लो। अगर पसंद आयें, तो तुम्हारी मां से ज़िक्र करूं। हां, यह वही जवान हैं, जो वजरे के साथ तुम देखते हुए बाग़ में जा रहे थे। याद आया?

हुस्नआरा—वहां तो बहुत से आदमी थे, क्या जाने, किसको कहते हो। बेदेखे-भाले कोई क्या कहे।

सिपहआरा—मतलब यह कि दिखा दो। भला देखें तो, हैं कैसे!

पीरबख्श—ऐसे जवान तो हममें आज तक कभी देखे न थे। वह नूर है कि निगाह नहीं ठहरती। क़सम खुदा की, जो बात करे, रीझ जाय।

हुस्नआरा—हम बतावें, जब हम बजरों पर हवा खाने चलें तो उन्हें भी वहां लाओ? हम उनको देख लें, तब तुम अम्मा से कहो।

यहां ये बातें हो रही थी, उधर मियां आज़ाद अपने हंसोड़ दोस्त के साथ इसी कोठी की तरफ़ टहलते चले आ रहे थे। रास्ते में आठ-दस गधे मिले। गधेवाला उन सबों पर कोड़े फटकार रहा था। आजाद ने कहा—क्यों भई, आखिर इन गधों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, जो पीटते जाते हो? कुछ खुदा का भी खौफ़ है, या नहीं? गधेवाले ने इसका तो कुछ जवाब न दिया, गद से एक और जमायी। तब तो मियां आज़ाद आग हो गये। बढ़कर गधे वाले के कई चांटे लगाये, अबे आखिर इनमें जान है या नहीं? अगर न चलते, तो हम कहते—खैर यों ही सही; ख़ासे जा रहे हैं खटाखट, और आप पीट रहे हैं।

हंसोड़—आप कौन होते हैं बोलने वाले? उसके गधे हैं, जो चाहता है, करता है।

आज़ाद—भई, हमसे तो यह नहीं देखा जाता कि किसी बेज़बान पर कोई आदमी जुल्म करे और हम बैठे देखा करें।

कोई दस ही क़दम आगे बढ़े होंगे कि देखा, एक चिड़ीमार कंपे में लासा लगाये, टट्टी पर पत्ते जमाये चिड़ियों को पकड़ता फिरता है। मियां आज़ाद आग भभूका हो गये। इतने में एक तोता जाल में आ फंसा। तब तो मियां आज़ाद बौखला गये। गुल मचाकर कहा—ओ चिड़ीमार, छोड़ दे इस तोते को, अभी-अभी छोड़। छोड़ता है या आऊं? चिड़ीमार हक्का-बक्का हो गया। बोला—साहब, यह तो हमारा पेशा है। आख़िर इसको छोड़ दें, तो करें फिर क्या? आज़ाद बोले—भीख मांग, मज़दूरी कर, मगर यह पेशा छोड़ दे। यह कहकर आपने झोला, कंपा, जाल, सब छीन-छान लिया। झोले को जो खोला तो, सब जानवर फुर्र से उड़ गये। इतना ही नहीं, कंपे को काट-कूट कर फेंका, जाल को नोच-नाच कर बराबर किया। तब जेब से निकाल कर दस रुपये चिड़ीमार को दिये और बड़ी देर तक समझाया।

हंसोड़—यार, तुम बड़े बेढब आदमी हो। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि तुम सनक गये हो।

आजाद—भई, तुम समझते ही नहीं कि मेरा असल मतलब क्या है?

हंसोड़—आप अपना मतलब रहने दीजिए। मेरा-आपका साथ न होगा। कहीं आप किसी बिगड़े-दिल से भिड़ पड़े, तो आपके साथ मेरी भी शामत आ जायगी।

आज़ाद—अच्छा, गुस्से को थूक दीजिए। चलिए हमारे साथ।

हंसोड़—अब तो रास्ते में न लड़ पड़िएगा?

आज़ाद—कह तो दिया कि नहीं।

दोनों आदमी आगे चले, तो क्या देखते हैं, राह में एक गाड़ीवान बैल की दुम ऐंठ रहा है। आज़ाद ने ललकारा—अबे तो गाड़ीवान, खबरदार, जो आज से बैल की दुम ऐंठी।

हंसोड़—फिर वही बात ! इतनी जल्दी भूल गये ?

आज़ाद चुप हो गये। दोनों आदमी चुपचाप चलने लगे। थोड़ी देर में कोठी के क़रीब जा पहुंचे। एकाएक बूढ़े मियां पीरबख्श आते दिखाई दिये। अलेकसलेम के बाद बातें होने लगीं।

आज़ाद—कहिए, उधर भी गये थे ?

पीरबख्श—हां साहब, गया क्यों न था। सवेरे-सवेरे जा पहुंचा और आपकी इतनी तारीफ़ की कि पुल बांध दिये। और फिर आप जानिए, गोकि बंदा आलिम नहीं, फ़ाज़िल नहीं, मुंशी नहीं, लेकिन बड़े-बड़े आलिमों की आंखें तो देखी हैं, ऐसी लच्छेदार बातें कीं कि आपका रंग जम गया। अब आपको देखने को बेक़रार हैं। हां, एक बुरी पख यह है कि आपका इम्तिहान लेंगी। ऐसा न हो कि वह कुछ पूछ बैठें और आप बगलें झांकने लगें।

हंसोड़—भई, इम्तिहान का तो नाम बुरा। शायद रह गये, तो फिर ?

आज़ाद—फिर आपका सिर ! रह जाने की एक ही कही। इम्तिहान के नाम से आप जैसे गौखों की जान निकलती है या मेरी ?

पीरबख्श—तो मैं जाकर कह दूं कि वह आये हैं।

यह कहकर पीरबख्श घर में गये और कहा—वह आये हैं, कहो, तो बुला लाऊं।

सिपहआरा ने कहा—अजनबी का खट से घर में चला आना बुरा। पहले उनसे कहिए, चलकर बाग़ की सैर करें।

पीरबख्श बाहर गये और मियां आज़ाद को लेकर बाग़ में टहलने लगे। दोनों बहनें झरोखों से देखने लगीं। सिपहआरा बोली—बहन, सचमुच यह तो तुम्हारे लायक हैं। अल्लाह ने यह जोड़ी अपने हाथों से बनायी है।

हुस्नआरा—ऐ वाह, कैसी नादान हो ! भला शादी-ब्याह भी यों हुआ करते हैं ?

सिपहआरा—मैं एक न मानूंगी।

हुस्नआरा—मुझसे क्यों झगड़ती हो, अम्मांजान से कहो।

सिपहआरा—अच्छा, तो मैं अम्मांजान के यहां जाती हूं; मगर देखिए, मुकर न जाइएगा।

यह कहकर सिपहआरा बड़ी बेगम के पास पहुंची और आज़ाद का जिक्र छेड़ कर बोली—अम्मांजान, मैंने तो आज तक ऐसा खूबसूरत आदमी देखा ही नहीं। शरीफ़, हंसमुख और पढ़े-लिखे। आप भी एक दफ़े देख लें।

बड़ी बेगम ने सिपहआरा को छाती से लगाया और हंसकर कहा—तू मुझसे उड़ती है ? यह क्यों नहीं कहती कि सिखायी-पढ़ायी आयी हूं।

सिपहआरा—नहीं अम्मांजान, आप उन्हें ज़रूर बुलायें।

बेगम—हुस्नआरा से भी पूछा ? वह क्या कहती हैं ?

सिपहआरा—वह तो कहती हैं, अम्मांजान जिसे चाहें, उससे करें। मगर दिल उनका आया हुआ है।

बेगम—अच्छा, बुलवा लो।

सिपहआरा वहां से लौटी, तो मारे खुशी के उछली पड़ती थी। फ़ौरन पीरबख्श को बुलाकर कहा—आप मियां आज़ाद को अन्दर लाइए। अम्मांजान उन्हें देखना चाहती हैं।

ज़रा देर में पीरबख्श मियां आज़ाद को लिये हुए बेगम के पास पहुंचे।

आज़ाद—आदाब बजा लाता हूं।

बेगम—जीते रहो बेटा ! आओ, इधर आकर बैठो। मिजाज तो अच्छे हैं ?

सिपहआरा तुम्हारी बड़ी तारीफ़ करती थी, और बेशक तुम हो इस लायक। तुमको देख कर तबीयत बहुत खुश हुई।

आज़ाद—आपकी जियारत का बहुत दिनों से शौक़ था। सच है, बड़े-बूढ़ों की क्या बात है!

बेगम—क्यों बेटा, हाथी को ख्वाब में देखे, तो कैसा?

आज़ाद—बहुत बुरा। मगर हां अगर हाथी किसी पर अपनी सूंड़ फेर रहा हो, तो समझना चाहिए कि आयी हुई बला टल गयी।

बेगम—शाबाश, तुम बड़े लायक़ हो।

बेगम साहिबा ने मियां आज़ाद को बड़ी देर तक बिठाया और साथ ही खाना खिलाया। आज़ाद हां में हां मिलाते जाते थे और दिल ही दिल मे खिलखिलाते थे। जब शाम हुई, तो आज़ाद रुख़सत हुए।

आसमान पर बादल छाये हुए थे, तेज हवा चल रही थी, मगर दोनों बहनों को बजरे पर सैर करने की धुन समायी। दरिया के किनारे आ पहुंची। पीरबख्श ने बजरा खोला और दोनों बहनों को बिठाकर सैर कराने लगे। बजरा बहाव पर फर्राटे से बहा जाता था। ठंडी-ठंडी हवाएं, काली-कली घटाएं, सिपहआरा की प्यारी-प्यारी बातें बूदों का गिरना, लहरों का थिरकना अजब बहार दिखाता था। इतने में हवा ने वह जोर बांधा कि मेघा उछलने लगा। अब बजरे कि यह हालत है कि डांवाडोल हो रहा है। यह डूबा वह डूबा। पीरबख्श था तो खुर्राट, लेकिन उसके भी हाथ-पांव फूल गये, सैर-दरिया की कहानियां सब भूल गये। दोनों बहनें कांपने लगी। एक-दूसरे को हसरत की निगाह से देखने लगी। दोनों की दोनों रो रही थीं। मियां आजाद अभी तक दरिया के किनारे टहल रहे थे। बजरे को पानी में चक्कर खाते देखा, तो होश उड़ गये। इतने में एक दफ़े बिजली चमकी। सिपहआरा डरकर दौड़ी, मगर मारे घबराहट के नदी में गिर पड़ी। डूबते ही पहले गोता खाया और लगी हाथ-पांव फटफटाने। ज़रा देर के बाद फिर उभरी और फिर गोता खाया। आजाद ने यह कैफ़ियत देखी, तो झटपट कपड़े उतारकर धम से कूद ही तो पड़े। पहली डुबकी मारी, तो सिपहआरा के बाल हाथ में आये। उन्होंने झप से ज़ुल्फ़ को पकड़कर खींचा, तो वह उभरी। यह वही सिपहआरा है, जो किसी अनजान आदमी को देख कर मुंह छिपा लेती और फुर्ती से भाग जाती थी। मियां आज़ाद उसे साथ लिये, मल्लाही चीरते और खड़ी लगाते बजरे की तरफ चले। लेकिन बजरा हवा से बातें करता चला जाता था। पानी बल्लियों उछलता था। आजाद ने जोर से पुकारा—ओ मियां पीरबख्श, बजरा रोको, खुदा के वास्ते रोको, पीरबख्श के होश-हवाश उड़े हुए थे। बजरा खुदा की राह पर जिधर चाहता था, जाता था। मियां आजाद बहुत अच्छे तैराक थे; लेकिन बरसों से आदत छूटी हुई थी। दम फूल गया। इत्तिफ़ाक़ से एक भंवर में पड़ गये। बहुत जोर मारा, मगर एक न चल सकी। उस पर एक मुसीबत यह और हुई कि सिपहआरा छूट गयी। आज़ाद की आंखों से आंसू निकल पड़े। फिर बड़ी फुर्ती से झपटे, लाश को उभारा और लादकर चले। मगर अब देखते हैं, तो बजरे का कहीं पता ही नहीं। दिल में सोचे, बजरा डूब गया और हुस्नआरा लहरों का लुक़मा बन गयी। अब मैं सिपहआरा को लादे-लादे कहां तक जाऊं। लेकिन दिल में ठान ली कि चाहे बचूं, चाहे डूबूं, सिपहआरा को न छोड़ूंगा। फिर चिल्लाये—यारो, कोई मदद को आओ। एक बुड्ढा आदमी किनारे पर खड़ा यह नजारा देख रहा था। आजाद को इस हालत में देखकर आवाज दी—शाबाश! बेटा, शाबाश! मैं अभी आता हूं। यह कहकर उसने कपड़े उतारे और लंगोट बांधकर धम से कूद ही तो पड़ा। उसकी आवाज़ का सुनना था कि मियां आज़ाद को ढाढ़स हुआ, वह तेजी के साथ चलने लगे। बुड्ढे आदमी ने दो ही हाथ खड़ी के लगाये थे कि सांस

फूल गयी और पानी ने इस ज़ोर से थपेड़ा दिया कि पचास गज़ के फ़ासले पर हो रहा। अब न आज़ाद को वह सूझता है और न उसको आज़ाद नजर आते हैं। मल्लाह ने बजरे पर से बुड्ढे को देख लिया। समझा कि मियां आज़ाद हैं। पुकारा—अरे! भाई आज़ाद, ज़ोर करके इधर आओ। बुड्ढे ने बहुत हाथ-पैर मारे, मगर न जा सका। तब पीरबख्श ने डांड़ संभाले और बुड्ढे की तरफ चले। मगर अफसोस, दो-चार ही हाथ रह गया था कि एक मगर ने भाड़-सा मुंह खोलकर बुड्ढे को निगल लिया। मल्लाह ने सिर पीटकर रोना शुरू किया—हाय आजाद, तुम भी जुदा हुए, बेचारी सिपहआरा का साथ दिया, यह आवाज़ मियां आज़ाद के कानों में भी पड़ी। समझे, वही बुड्ढा, जो टीले पर से कूदा था, चिल्ला रहा है। इतने में बजरा नज़र आया तो बाग़-बाग़ हो गये अब यह बिलकुल बेदम हो चुके थे; लेकिन बजरे को देखते ही हिम्मत बंध गयी। ज़ोर से खड़ी लगानी शुरू की। बजरे के क़रीब आये, तो पीरबख्श ने पहचाना। मारे ख़ुशी के तालियां बजाने लगे। आजाद ने सिपहआरा को बजरे में लिटा दिया और दोनों ने मिलकर उसके पेट से पानी निकाला। फिर लिटाकर अपने बैग में से कोई दवा निकाली और उसे पिला दी। अब हुस्नआरा की फ़िक्र हुई। वह बेचारी बेहोश पड़ी हुई थी। आज़ाद ने उसके मुंह पर पानी के छींटे दिये, तो ज़रा होश आया। मगर आंखें बंद। होश आते ही पूछा—प्यारी सिपहआरा कहां है? आज़ाद जीते बचे? पीरबख्श ने पुकार कर कहा—आज़ाद तुम्हारे सिरहाने बैठे हैं और सिपहआरा तुम्हारे पास लेटी हैं। इतना सुनना था कि हुस्नआरा ने आंख खोलीं और आज़ाद को देखकर बोली—आज़ाद, मेरी जान अगर तुम पर से फ़िदा हो जाय, तो इस वक़्त मुझे उससे ज्यादा खुशी हो, जितनी सिपहआरा के बच जाने से हुई। मैं सच्चे दिल से कहती हूं, मुझे तुमसे सच्ची मुहब्बत है।

इतने में दवा का असर जो पहुंचा, तो सिपहआरा भी आहिस्ता से उठ बैठी। दोनों बहनें गले मिलकर रोने लगीं। हुस्नआरा बार-बार आज़ाद की बलाएं लेती थी। मैं तुम पर वारी हो जाऊं, तुमने आज वह किया, जो दूसरा कभी न करता। हवा बंध गयी थी, बजरा आहिस्ता-आहिस्ता किनारे पर आ लगा। आज़ाद ने घास पर लेटकर कहा। उफ़, मर मिटे!

हुस्नआरा—बेशक सिपहआरा की जान बचायी, मेरी जान बचायी, इस बेचारे बुड्ढे की जान बचायी। इससे बढ़कर अब और क्या होगा!

पीरबख्श—मियां आज़ाद, खुदा तुमको ऐसा बुड्ढा करे कि तुम्हारे परपोते मुझसे बड़े हो-होकर तुम्हारे सामने खेलें। मैंने कुछ और ही समझा था। एक आदमी तैरता हुआ जाता था। मैंने समझा, तुम हो।

आज़ाद—हां, हां, मैं तो उसे भूल ही गया था। फिर वह कहां गया?

पीरबख्श—क्या कहूं, उसको तो एक मगर निगल गया।

आज़ाद—अफ़सोस! कितना दिलेर आदमी था। मुझे मुसीबत में देखकर धम से कूद पड़ा।

सिपहआरा—मुझ नसीबों-जली के कारण उस बेचारे की जान मुफ़्त में गयी। मेरी आंखों में अंधेरा-सा छाया हुआ है। इस दरिया का सत्यानाश हो जाय! जिस वक़्त मैं अपना गिरना और गोते लगाना याद करती हूं, तो रोएं खड़े हो जाते हैं। पहले तो मैंने खूब हाथ-पांव मारे, मगर जब नीचे बैठ गयी तो मुंह में पानी जाने लगा। मैंने दोनों हाथों से मुंह बंद कर लिया। फिर मुझे कुछ याद नहीं।

हुस्नआरा—बड़े गाढ़े वक़्त काम आये।

पीरबख्श—अब आप ज़रा सो रहिएगा, तो थकावट कम हो जायगी।

तीनों आदमी थककर चूर हो गये थे। वहीं हरी-हरी घास पर लेटे, तो तीनों की

आंख लग गयी। चार घंटे तक सोते रहे। जब नींद खुली, तो घर चलने की ठहरी। पीरबख्श ने कहा—इस वक़्त तो बजरे पर सवार होना हिमाक़त है। सड़क-सड़क चलें।

आज़ाद—अजी, तो क्या हरदम तूफ़ान आया करता है!

दोनों बहनों ने कहा—हम तो इस वक़्त बजरे पर न चढ़ेंगे, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय।

आज़ाद ने कहा—जो इस वक़्त झिझक गयीं, तो उम्र भर ख़ौफ़ लगता रहेगा।

हुस्नआरा—चलिए, रहने दीजिए, अब तो मारे थकावट के आपके बदन में इतनी ताक़त भी नहीं रही होगी कि किसी की लाश को दो क़दम भी ले चलिए। ना साहब, बंदी नहीं जाने की। बजरे की सूरत देखने से बदन कांपता है। हम तुम्हें भी न जाने देंगे।

सिपहआरा—आप बजरे पर बैठे, और हम इधर दरिया में फांद पड़े!

आख़िर यह तय हुआ कि पीरबख्श बजरा लायें और तीनों आदमी ऊपर-ऊपर घर की तरफ़ चलें।

आज़ाद ने मौक़ा पाया, तो बोले—अब तो हमसे कभी परदा न होगा? हम आपको अपना दिल दे चुके। हुस्नआरा ने कुछ जवाब न दिया, शरमा कर सिर झुका लिया।

रात बहुत ज़्यादा बीत गयी थी। आज़ाद पीरबख्श के साथ सोये। सुबह को उठे, तो क्या देखते है, हुस्नआरा के साथ उनकी दो फुफेरी बहनें छमाछम करती चली आती हैं। एक का नाम जहानआरा था, दूसरी का गेतीआरा। दोनों बहनों ने आज़ाद को झरोखे से देखा। तब जहानआरा हुस्नआरा से बोली—बहन, तुम्हारी पसंद की मैं क़ायल हो गयी। ऐसा बांका जवान हमारी नज़र से नहीं गुज़रा।

सिपहआरा—हम कहते न थे कि मियां आज़ाद-सा तरहदार जवान कम होगा। फिर, मेरी तो उन्होंने जान ही बचायी है। जब तक जिऊंगी, तब तक उनका दम भरूंगी।

इतने में पीरबख्श भी आ पहुंचे। जहानआरा ने उनसे कहा—क्यों जी, इन सन से सफ़ेद बालों में ख़िज़ाब क्यों नहीं लगाते? अब तो आप कोई दो सौ से ऊपर होंगे। क्या मरना बिलकुल भूल बैठे? तुम्हें तो मौत ने भी सांड़ की तरह छोड़ दिया!

पीरबख्श—बेटी, बहुत कट गयी, थोड़ी बाक़ी है! यह भी कट जाएगी। ख़िज़ाब लगाकर रूसियाह कौन हो!

सिपहआरा—आज़ाद से तो अब कोई परदा है नहीं। उन्हें भी न बुला लें?

गेतीआरा—कभी की जान-पहचान होती, तो मुज़ायक़ा न था।

आज़ाद ने सामने से आकर कहा—फ़क़ीरों से भी जान-पहचान की ज़रूरत! फ़क़ीरों से कैसा परदा?

गेतीआरा—यह फ़क़ीर आप कब से हुए?

आज़ाद—जब से हसीनों की सोहबत हुई।

गेतीआरा—आप शायर भी तो हैं! अगर तबीयत हाज़िर हो, तो इस मिसरे पर एक ग़ज़ल कहिए—

मरज़े-इश्क लादवां देखा।

आज़ाद—तबीयत की तो न पूछिए, हर वक़्त हाज़िर रहती है; रहा दिमाग़, वह अपने में नहीं। फिर भी आपका हुक्म कैसे टालूं। सुनिए—

शेख़, काबे में तूने क्या देखा;
हम बुतों से मिले; ख़ुदा देखा।

सोज़-नाला ने कुछ असर न किया;
हमने यह साज़ भी बजा देखा।
आह ने मेरी कुछ न काम किया;
हमने यह तीर भी लगा देखा।
हर मरज़ की दवा मुक़र्रर है;
मरज़े-इश्क लादवा देखा।
शक्ले नाखुन है गरचे अवरुए-यार;
पर न इसको गिरहकुशा देखा।
हमने देखा न आशिक़े आज़ाद;
और जो देखा तो मुब्तिला देखा !

गेतीआरा—माशा-अल्लाह, कैसी हज़िर तवीयत !

आज़ाद—इन्साफ के तो यह माने हैं कि मैंने आपको खुश किया, अब आप मुझको खुश करें।

गेतीआरा—आप कुछ फ़र्माएं, मैं कोशिश करूंगी।

आज़ाद—यह तो मेरी सूरत ही से ज़ाहिर है कि अपना दिल हुस्नआरा को दे चुका हूं।

गेतीआरा—क्यों हुस्नआरा, मान क्यों नहीं जातीं ? यह वेचारे तुम्हें अपना दिल दे चुके।

हुस्नआरा—वाह, क्या सिफ़ारिश है ! क्यों मान लें, शादी भी कोई दिल्लगी है ? मैं वेसमझे-बूझे हां न करूंगी। सुनिए साहव, मैं आपकी अदा, आपकी वफ़ा, आपकी चाल-ढाल, आपकी लियाक़त और शराफ़त पर दिल और जान से आशिक़ हूं; मगर यह याद रखिए, मैं ऐसा काम नहीं करना चाहती, जिससे पढ़ी-लिखी औरत वदनाम हों। हमें ऐसा चाल-चलन रखना चाहिए, जो औरों के लिए नमूना हो। इस शहर की सव औरतें मुझे देखती रहती हैं कि यह किस तरफ़ को जाती है। आपको कोई यहां जानता नहीं। आप पहले यहां शरीफ़ों में इज्ज़त पैदा कीजिए, आपके यहां पन्द्रहवें दिन मुशायरा हो और लोग आपको जानें। कोई कोठी किराये पर लीजिए और उसे खूब सजाइए, ताकि लोग समझें कि सलीक़े का आदमी है और रोटियों को मुहताज नहीं। शरीफ़ज़ादों के सिवा ऐरों-ग़ैरों से सोहवत न रखिए और हर रोज़ जुमा की नमाज़ पढ़ने के लिए मसजिद जाया कीजिए ! लेकिन दिखावा भी ज़रूरी है। एक सवारी भी रखिए और सुवह-शाम हवा खाने जाइए, अगर इन वातों को आप मानें, तो मुझे शादी करने में उज्र नहीं। यों तो मैं आपके एहसान से दवी हुई हूं, लेकिन आप समझदार आदमी हैं, इसलिए मैंने साफ़-साफ़ समझा दिया।

आज़ाद—ऐसे समझदार होने से वाज़ आये ! हम गंवार ही सही। आपने जो कुछ कहा, सब हमें मंजूर है; लेकिन आप भी मुझे कभी-कभी यहां तक आने की इजाज़त दीजिए और आपकी ये वहनें मुझसे मिला करें।

गेतीआरा—जरी फिर तो कहिएगा ! आपको अपनी हुस्नआरा से काम है, या उनकी वहनों से ? हुस्नआरा ने आपसे जो कुछ कहा, उसको ग़ौर कीजिए। अभी जल्दी न कीजिए। आप शराव तो नहीं पीते ?

आजाद—शराव की सूरत और नाम से नफ़रत है।

हुस्नआरा—फिर आपके पास वजरे पर कहां से आयी, जो आपने सिपहआरा को पिलायी।

आज़ाद—वाह; वह तो दवा थी।

जहानआरा—ऐ बाजी, भैया कब से सो रहा है। जरा जगा दो। दो घड़ी खेलने को जी चाहता है।

गेतीआरा—ना, कहीं ऐसा ग़जब भी न करना। बच्चे जब सोते हों, तो उनको जगाना न चाहिए। उनको जगाना उनकी बाढ़ को रोकना है।

हुस्नआरा—इस वक़्त हवा बड़े जोर-से चल रही है और तुमने भैया को बारीक शरबती पहना दी है। ऐ दिलबहार, फलालेन का कुर्ता नीचे पहना दो। यह रुपया कौन भैया के हाथ मे दे गया? और जो खेलते-खेलते मुह मे ले जाय तो?

दिलबहार—ऐ हुजूर, छीन तो लू, जब वह दे भी। वह तो रोने लगता है।

हुस्नआरा—देखो, हम किस तरक़ीब से ले लेते है, भला रोवे तो, (चुमकार कर) भैया, (तालियां बजाकर) भैया, ला, तुझे चीज मंगा दूं।

यह कहकर हुस्नआरा ने लड़के को गुदगुदाया। लड़का हंस पड़ा और रुपया हाथ से अलग।

दिलबहार—मौसी को कैसे चुपचुपाते रुपया दे दिया और हमने हाथ ही लगाया था कि गुल मचाने लगा।

गेतीआरा—उम्र भर तुमने लड़के पाले, मगर पालना न आया। बच्चो का पालना कुछ हसी-खेल थोड़े ही है।

दिलबहार—अभी मेरा सिन ही क्या है कि ये बाते जानूं।

गेतीआरा—देखो, रात को दरख़्त के तले बच्चे को न सुलाया करो। बच्चा बीमार हो जाता है।

दिलबहार—हां, सुना है, लड़के भूत-प्रेत के झपेट मे आ जाते हैं।

हुस्नआरा—झपेट और भूत-प्रेत सब ढकोसला है। रात को दरख्त के नीचे सोना इसलिए बुरा है कि रात को दरख़्त से जहरीली हवा निकलती है।

इधर तो ये बातें हो रही थीं, औरतों की तालीम का जिक्र छिड़ा हुआ था, हुस्नआरा औरतों की तालीम पर जोर दे रही थी, उधर मियां पीरबख्श को बाल बनवाने का शौक जो चर्राया, तो हज्जाम को बुलवाया। हज्जाम बाल बनाते-बनाते कहने लगा—हुजूर, एक दिन मै सराय में गया था, तो वहां यह भी टिके हुए थे—यही जो जवान से है, गोरे-गोरे, बजरे पर सैर करने गए थे—हां, याद आ गया, मियां आज़ाद, वह भी वहां मिले। वह साहब तुम्हारे, उस सराय की भठियारी से शादी करने को थे, मुल फिर निकल गये। उसने इन पर नालिश जड़ दी, तो वहां से भागे। उस भठियारी को ऊंट पर सवार करके रात को लिये फिरते थे। पीरबख्श ने यह क़िस्सा सुना, तो सन्नाटे में आ गये। बोले—खबरदार, और किसी से न कहना।

पच्चीस

मियां आजाद हुस्नआरा के यहां से चले, तो घूमते-घामते हंसोड के मकान पर पहुचे और पुकारा। लौंडी बोली—वह तो कही गये है, आप बैठिए।

आजाद—भाभी साहब से हमारी बंदगी कह दो और कहो, मिजाज पूछते हैं।

लौंडी—बेगम साहिबा सलाम कहती है और फर्माती है कि कहां रहे?

आजाद—इधर-उधर मारा-मारा फिरता था।

लौंडी—वह कहती है, हमसे बहुत न उड़िए। यहां कच्ची गोलियां नही खेली। कहिए, आपकी हुस्नआरा तो अच्छी है। यह बजरे पर हवा खाना और यहां आकर बुत्ते

बताना।

आज़ाद—आपसे यह कौन कच्चा चिट्ठा कह गया?

लौंडी—कहती हैं कि मुझसे भी परदा है? इतना तो बता दीजिए कि बारात किस दिन चढ़ेगी? हमने सुना है, हुस्नआरा आप पर बेतरह रीझ गयीं। और, क्यों न रीझें, आप भी तो माशाअल्लाह गबरू जवान हैं।

आज़ाद—फिर भाई किसके हैं, जैसे वह खूबसूरत, वैसे हम।

लौंडी—फ़र्माती हैं कि धांधली रहने दीजिए।

आज़ाद—भाभी साहब, यह घूंघट कैसा? हमसे कैसा परदा?

इतने में किसी ने पीछे से मियां आज़ाद की आंखें बंद कर लीं।

आज़ाद चिल्ला उठे—भाई साहब।

हंसोड़—वहां तो आपने खूब रंग जमाया।

आज़ाद—अजी, आपकी दुआ है, मैं भला क्या रंग जमाता। मगर दोनों बहनें एक से एक बढ़ कर हैं। हुस्नआरा की दो बहनें और आयी थीं। वल्लाह, खूब मज़े रहे।

हंसोड़—खुशनसीब हो भाई, जहां जाते हो, वहीं पौ-बारह होते हैं। वल्लाह मान गया।

आज़ाद—मगर भाई, एक ग़लती हो गयी। उन्होंने किसी तरह भांप लिया कि मैं शराब भी पीता हूं।

हंसोड़—बड़े अहमक़ हो भई. कोई ऐसी हरक़त करता है। तुम्हारी सूरत से नफ़रत हो गयी।

आज़ाद—अजी, मुझे तो अपनी सूरत से आप नफ़रत हो गयी। मगर अब कुछ तदबीर तो बताओ?

हंसोड़—उसी बुड्ढे को सांटो, तो काम चले।

इस वक़्त दोनों आदमी खाना खा कर लेटे। जब शाम हुई, तो दोनों हुस्नआरा की तरफ़ चले। भरी बरसात के दिन, कोई गोली के टप्पे पर गये होंगे कि पश्चिम की तरफ़ से मतवाली काली घटा झूमती हुई आयी और दम के दम में चारों तरफ़ अंधेरा छा गया। दुकानदार दुकानें झटपट बंद करने लगे। खोंचेवालों ने खोंचा संभाला और लंबे हुए। कोई टट्टू को सोंटे पर सोंटा लगाता है; किसी का बैल दुम दबाये भागा जाता है। कहार पालकी उठाये, क़दम जमाये उड़े जाते हैं, दाएं जंगी, बायें चरखा—हूं-हूं-हूं। पैदल चलनेवाले तेज़ क़दम उठाते हैं, पांयचे चढ़ाते हैं। किसी ने जूतियां बगल में दबायीं और सरपट भागा। किसी ने कमर कसी और घोड़े को एंड़ दी। अंधेरा इस गजब का है कि राह सूझती ही नहीं, एक पर एक भद-भद करके गिरता है और मियां आज़ाद क़हक़हे लगाते हैं। क्यों हज़रत, पूछना न पाछना और धमाक से लुढ़क जाना!

आज़ाद—बस, और थोड़ी दूर रह गया है।

हंसोड़—आपको थोड़ी दूर होगा, यहां तो क़दम भर चलना मुश्किल हो रहा है। ज़री देख-भाल कर क़दम उठाइएगा। उफ्, हवा ने क्या ज़ोर बांधा, मैं तो वल्लाह, कांपने लगा। अगर सलाह हो; घर पलट चलें। वह लीजिए, बूंदें भी पड़ने लगीं। किसी भले-मानुस के पास जाने का भला यह कौन मौक़ा है।

आज़ाद—अजी, ये बातें उससे कीजिए, जो अपने होश में हो। यहां तो दीवानापन सवार है।

इतने में बड़ी बेगम का महल नज़र पड़ा। आज़ाद ने मारे खुशी के टोपी उछाल दी। तब तो हंसोड़ ने बिगड़कर उसे एक अन्धे कुएं में फेंक दिया और कहा—बस, तुममें यही तो ऐब है कि अपने आपे में नहीं रहते। 'ओछे के घर तीतर, बाहर रखूं कि

भीतर।'

आजाद—या तंग न कर नासेह नादां, मुझे इतना,
या लाके दिखा दे दहन ऐसा, कमर ऐसी।

तुम रूखे-फीके आदमी, चेहरे पर भूसा उड़ रहा है। तुम ये मुहब्बत की बातें क्या जानो?

जब महल के क़रीब पहुंचे, तो चौकीदार ने ललकारा—कौन? मियां हंसोड़ तो झिझके, मगर, आजाद ने बढ़कर कहा—हम है, हम।

चौकीदार—अजी, हम का नाम तो फ़र्माइए, या ठंडी-ठंडी हवा खाइए।

आजाद—हम? हमारा नाम मियां आजाद है। तुम दिलबहार को इत्तिला कर दो।

खैर, किसी तरह आजाद अन्दर पहुंचे। हुस्नआरा उस वक़्त सो रही थी और सिपहआरा बैठी एक शायर का दीवान पढ़ रही थी। आजाद की ख़बर सुनते ही बोली—कहां है कहां, बुला लाओ। मियां आजाद मकान में दाखिल हुए।

सिपहआरा—वह आयें घर में हमारे
खुदा की कुदरत है;
कभी हम उनको, कभी
अपने घर को देखते है।

आजाद—यह रूखी ख़ातिरदारी कब तक होगी? हमें दूल्हा भाई कब से कहिएगा?

सिपहआरा—ख़ुदा वह दिन दिखाये तो।

आजाद—आपकी बाजी कहां हैं?

सिपहआरा—आज कुछ तबीयत नासाज है। दिलबहार, जगा दो। कहो मियां आजाद आये है।

हुस्नआरा अंगड़ाई लेती अठखेलियां करती चली और आजाद के क़रीब आकर बैठ गयी।

आजाद—इस वक़्त हमारे दिल की कली खिल गयी।

सिपहआरा—क्यों नही, फिर मुंह-मांगी मुराद भी तो मिल गयी।

आजाद—आख़िर अब हम कब तक तरसा करें? आज मैं बेकबुलवाये उठूं, तो आज़ाद नहीं।

हुस्नआरा—हमारा तो इस वक़्त बुरा हाल है। नींद उमड़ी चली आती है। अब हमें सोने जाने दीजिए।

आजाद—(दुपट्टा पांव से दबाकर) हां, जाइए, आराम कीजिए।

हुस्नआरा—शरारत से आप बाज नहीं आते। दामन तो दबाये है और कहते है, जाइए-जाइए, क्योंकर जायं?

आजाद—दुपट्टे को फेंक जाइए।

हुस्नआरा—बजा है, यह किसी और को सिखाइए, (बैठकर) अब साफ़ कह दूं।

आजाद—जरूर; मगर आपके तेवर इस वक़्त बेढब है, खुदा ही खैर करे! जो कुछ कहना हो कह डालिए। ख़ुदा करे, मेरे मतलब की बात मुह से निकले!

हुस्नआरा—आप लायक़ है, मगर एक परदेसी आदमी, ठौर न ठिकाना, घर न बार। किसी से आपका जिक्र करूं, तो क्या कहूं? किसके लड़के है? किसके पोते हैं?

किस ख़ानदान के हैं? शहर भर में यही ख़बर मशहूर हो जायगी कि हुस्नआरा ने एक परदेसी के साथ शादी कर ली। मुझे तो इसकी परवाह नहीं; लेकिन डर यह है कि कहीं इस निकाह से लोग पढ़ी-लिखी औरतों को नीची नजर से न देखने लगें। वात वह करनी चाहिए कि धव्वा न लगे। मैं पहले भी कह चुकी हूं और अव फिर कहती हूं कि शहर में नाम पैदा कीजिए, इज्जत कमाइए, चार भले आदमियों में आपकी क़दर हो।

आज़ाद—कहिए, आग में फांद पड़ूं?

हुस्नआरा—माशा-अल्लाह, कही भी तो निराली? अगर आप आग में फांद पड़ें, तो लोग आपको सिड़ी समझेंगे।

सिपहआरा—कोई किताव लिखिए।

हुस्नआरा—नहीं; कोई वहादुरी की वात हो कि जो सुने, वाह-वाह करने लगे, और फिर अच्छी-अच्छी रईसज़ादियां चाहें कि उनके साथ मियां आज़ाद का व्याह हो जाय। इस वक़्त मौक़ा भी अच्छा है। रूम और रूस में लड़ाई छिड़नेवाली है। रूम की मदद करना आपका फ़र्ज़ है। आप रूम की तरफ़ से लड़िए और ज़वांमर्दी के जौहर दिखाइए, तमगे लटकाये हुए आइए, तो फिर हिंदोस्तान भर में आप ही की चर्चा हो।

आज़ाद—मंजूर, दिलोजान से मंजूर। जाऊं और वीच खेत जाऊं। मरे, तो सीधे जन्नत में जायेंगे। वचे, तो तुमको पायेंगे।

सिपहआरा—मेरे तो लड़ाई के नाम से होश उड़े जाते हैं। (हुस्नआरा से चिमट कर) वाजी, तुम कैसी वेदर्द हो, कहां काले कोसों भेजती हो। तुम्हें ख़ुदा की क़सम, इस ख़याल से वाज़ आओ। आज़ाद जायेंगे; तो फिर उनकी सूरत देखने को तरस जाओगी। दिन-रात आंसू वहाओगी। क्यों मुफ़्त में किसी की जान की दुश्मन हुई हो?

किनारे दरिया पहुंच के पानी
पिया नहीं एक वूंद तिस पर,
चढ़ी है मौजों की हमसे त्योरी
हुवाव आंखें वदल रहे हैं।

यह कहते-कहते सिपहआरा की आंखों से गोल-गोल आंसू की वूंदें गिरने लगीं।

हुस्नआरा—हैं-हैं, वहन, यह मुफ्त का रोना-धोना अच्छा स्वांग है, वह मुवारक दिन मेरी आंखों के सामने फिर रहा है, जव आज़ाद तमग़े लटकाये हुए हमारे दरवाज़े पर खड़े होंगे।

मियां आज़ाद पर इस वक़्त वह जोवन था कि ओहोहो, जवानी फटी पड़ती थी, आंखें सुर्ख़, जैसे कवूतर का ख़ून; मुखड़ा गोरा, जैसे गुलाव का फूल; कपड़े वह वांके पहने थे कि सिर से पांव तक एक-एक अंग निखर गया था; टोपी वह वांकी कि वांकपन भी लोट जाय; कमर से दोहरी तलवारें लटकी हुई। हुस्नआरा को उनका चांद-सा मुखड़ा ऐसा भाया कि जी चाहा, इसी वक़्त निकाह कर लूं; मगर दिल पर ज़व्त किया।

आज़ाद—आज हम घर से मौत की तलाश में ही निकले थे—

जव से सुना कि मरने का है नाम ज़िंदगी;
सिर से कफ़न को वांधे क़ातिल को ढूंढ़ते हैं।

सिपहआरा—प्यारे आज़ाद, ख़ुदा के वास्ते इस ख़याल से वाज़ आओ।

आज़ाद—या हाथ तोड़ जायेंगे, या खोलेंगे नक़ाव। हुस्नआरा-सी वीवी पाना दिल्लगी नहीं। अव हम फिर शादी का हर्फ़ भी ज़वान पर लायें, तो जवां मर्द नहीं। अव हमारी-इनकी शादी उसी रोज होगी, जव हम मैदान से सुर्ख़रू होकर लौटेंगे। हम

सिर कटवायें, जख्म पर जख्म खायेंगे मगर मैदान से क़दम न हटायेंगे।

सिपहआरा—जो आपने दालान तक भी क़दम रखा तो हम रो-रोकर जान दे देंगे।

आज़ाद—तुम घबराओ नहीं, जीते बचे, तो फिर आयेंगे। हमारे दिल से हुस्नआरा की और तुम्हारी मुहब्बत जाती रहे, यह मुश्किल है। तुम मेरी खातिर से रोना-धोना छोड़ दो। आखिर क्या लड़ाई में सब के सब मर ही जाते हैं?

सिपहआरा—इतनी दूर जाकर ऐसी ही तक़दीर हो, तो आदमी लौटे। अब मेरी जिंदगी मुहाल है। मुझे दफ़ना के जाना। अल्लाह जाने, किन-किन जंगलों में रहोगे, कैसे-कैसे पहाड़ों पर चढ़ना होगा, कहां-कहां लड़ना-भिड़ना होगा। एक ज़रा-सी गोली तो हाथी का काम तमाम कर देती है, इनसान की कौन कहे। तुम वहां गोलियां खाओगे और हम दिन-रात बैठे-बैठे कुढ़ा करेंगे। एक-एक दिन एक-एक वर्ष हो जाएगा! और फिर क्या जाने, आओ न आओ, लड़ाई-चढ़ाई पर जाना कुछ हंसी थोड़े ही है। यह तो तुम्हीं मर्दों का काम है। हम तो यहीं से नाम सुन-सुनकर कांपते हैं।

हुस्नआरा—मेरी प्यारी बहन, ज़रा सब्र से काम लो।

सिपहआरा—न मानूंगी, न मानूंगी।

हुस्नआरा—सुन तो लो।

सिपहआरा—जी, बस, सुन चुकी। खून कीजिए, और कहिए, सुन तो लो।

हुस्नआरा—यह क्या बुरी-बुरी बातें मुंह से निकालती हो। हमें बुरा मालूम होता है। मैं उनको जबरदस्ती थोड़े ही भेजती हूं। वह तो आप जाते हैं।

सिपहआरा—समुंदर-समुंदर जाना पड़ेगा। कोई तूफ़ान आ गया, तो जहाज ही डूब जायेगा।

आज़ाद—अब रात ज्यादा आयी, आप लोग आराम करें, हम कल रात को यहां से कूच करेंगे।

सिपहआरा—इस तरह जाना था, तो हमारे पास दिल दुखाने आये क्यों थे? (हाथ पकड़ कर) देखूं, क्योंकर जाते है।

आज़ाद—दिलोजिगर खून हो चुके हैं।
हवास तक अपने जा चुके है।
वही मुहब्बत का हौसला है,
हज़ार सदमे उठा चुके हैं।।

हुस्नआरा—हाय, किस ग़जब में जान पड़ी। हाथ-पांव टूटे जाते हैं; आंखें जल रही हैं। आजाद, अगर मुझे दुनिया मे किसी की चाह है, तो तुम्हारी। लेकिन दिल से लगी है कि तुम रूसियों को नीचा दिखाओ। मरना-जीना मुक़द्दर के हाथ है। कौन रहा है, और कौन रहेगा!

ताज में जिनके टंकते थे गौहर;
ठोकरें खाते हैं वह सर-ता-सर।
है न शीरीं न कोहकन का पता;
न किसी जा है नल-दमन का पता।
यही दुनिया का कारखाना है;
यह उलट फेर का जमाना है।

आज़ाद—हम तो जाते हैं, तुम सिपहआरा को समझाती रहना। नहीं तो राह में मेरे क़दम न उठेंगे। कल रात को मिलकर कूच करूंगा।

हुस्नआरा—बहन, इनको जाने दो, कल आयेंगे।

सिपहआरा—जाइए, मैं आपको रोकने वाली कौन?

आज़ाद यहां से चले कि सामने से मियां चंडूबाज़ आते हुए मिल गये। गले से लिपट कर बोले—वल्लाह, आंखें आपको ढूंढ़ती थीं। सूरत देखने को तरस गये। वह जो चलते वक़्त आपने तान कर चाबुक जमाया था, उसका निशान अब तक बना है। बारे मिले खूब। बी अलारक्खी तो मर गयी, बेचारी मरते वक़्त ख़ुदा की क़सम, अल्लाह-अल्लाह कहा की और दम तोड़ने के पहले तीन दफ़ा आज़ाद-आज़ाद कह कर चल बसीं।

आज़ाद ने चंडूबाज़ की सूरत देखी, तो हाथ-पांव फूल गये। रूस का जाना और तमग़े लटकाना भूल गये। सोचे, अब इज्ज़त ख़ाक में मिली। लेकिन जब चंडूबाज़ ने बयान किया कि अलारक्खी चल बसीं और मरते वक़्त तक मेरे ही नाम की रट लगाती रही, तो बड़ा अफ़सोस हुआ। आंखों से आंसू बहने लगे। बोले—भाई, तुमने बुरी ख़बर सुनायी। हाय, मरते वक़्त दो बातें भी न करने पाये।

चंडूबाज़—क्या अर्ज करूं, क़सम ख़ुदा की, इस प्यार और इस हसरत से तुम्हें याद किया कि क्या कहूं। मेरी तो रोते-रोते हिचकी बंध गयी। ज़रा सा भी खटका होता तो कहतीं—आज़ाद आये। आप अपना एक रूमाल वहां भूल आये हैं, उसको हर रोज़ देख लिया करती थीं, मरते वक़्त कहा कि हमारी कब्र पर यह रूमाल रख देना।

आज़ाद—(रोकर) उफ़्, कलेजा मुंह को आता है। मुझे क्या मालूम था कि उस ग़रीब को मुझसे इतनी मुहब्बत थी।

चंडूबाज़—एक गुलदस्ता अपने हाथ से बना कर दे गयी हैं कि अगर मियां आज़ाद आ जायें, तो उनको दे देना और कहना, अब हश्र में आपकी सूरत देखेंगे।

आज़ाद—भई, इसी वक़्त दो। ख़ुदा के वास्ते अभी लाओ। मैं तो मरा बेमौत। लाओ, गुलदस्ता ज़रा चूम लूं। आंखों से लगाऊं, गले से लगाऊं।

चंडूबाज़—(आंसू बहाकर) चलिए, मैं सराय में उतरा हुआ हूं। गुलदस्ता साथ है। उसको जान से भी ज्यादा प्यार करता हूं।

दोनों आदमी मिलकर चले, राह मे अलारक्खी के रूप-रंग और भोली-भोली बातों का जिक्र रहा। चलते-चलते दोनों सराय में दाखिल हुए। मियां आज़ाद जैसे ही चंडूबाज़ की कोठरी में घुसे, तो क्या देखते हैं कि बी अलारक्खी बगुले के पर जैसा सफ़ेद कपड़ा पहने खड़ी हैं। देखते ही मियां आज़ाद का रंग फ़क़ हो गया। चुप, अब हिलते हैं न बोलते हैं।

अलारक्खी—(तालियां बजाकर) आदाब अर्ज़ करती हूं। जरी इधर नज़र कीजिए! यह कोसों की राह तय करके हम आप ही की ज़ियारत के लिए आये हैं और आपको हमसे ऐसी नफ़रत कि आंख तक नहीं मिलाते! वाह री क़िस्मत! अब ज़रा सिर तो हिलाइए, गर्दन तो उठाइए, वह चांद-सा मुखड़ा तो दिखाइए! हाय, क्या जुल्म है, जिन पर हम जान देते हैं, वह हमारी सूरत से बेज़ार है! कहिए, आपकी हुस्नआरा तो अच्छी है! ज़रा हमको तो उनका जोबन दिखाओ। हमने सुना, कभी-कभी बज़रों पर दरिया की सैर को जाती हैं, कभी हमजोलियों को लेकर जश्न मनाती हैं। क्यों हज़रत, हम बक रहे हैं? हमारा ही लहू पिये, जो इधर न देखे।

आज़ाद—ख़ुदा की क़सम, सिर्फ़ तुम्हीं को देखने आया हूं।

चंडूबाज़—भई, आज़ाद की रोते-रोते हिचकी बंध गयी थी। क़सम ख़ुदा की, मैंने जो यह फ़िक़रा चुस्त किया कि अलारक्खी ने मरते वक़्त आज़ाद-आज़ाद कह के दम

तोड़ा, तो यह बेहोश होकर गिर पड़े।

अलारक्खी—खैर, इतनी तो ढाढस हुई कि मरने के बाद भी हमको कोई पूछेगा। लेकिन—

आये तुरबत पे बहुत रोये, किया याद मुझे;
खाक उड़ाने लगे, जब कर चुके बरबाद मुझे।

आजाद—अलारक्खी, अब हमारी इज्जत तुम्हारे हाथ है। अगर तुम्हें हमसे मुहब्बत है, तो हमे दिक न करो। नही हम संखिया खाकर जान दे देंगे। अगर हम जिलाना चाहती हो, तो हमें आजाद कर दो।

अलारक्खी—सुनो आज़ाद, हम भी शरीफ़जादी हैं, मगर अल्लाह को यही मंजूर था कि हम भठियारी बनकर रहे। याद है, हमारे बूढ़े मियां ने तुम्हें ख़त देकर हमारे मकान पर भेजा था और तुम कई दिन तक हमारे घर का चक्कर लगाते रहे थे? हम दिन-रात कुढा करते थे। आखिर वह तो कब्र मे पांव लटकाये बैठे ही थे, चल बसे। उस दिन हमने मसजिद मे घी के चिराग़ जलाये। मुक़द्दर खींचकर यहां लाया। लेकिन अल्लाह जानता है, जो मेरी आंखें किसी से लड़ी हों। तुमसे व्याह करने का बहुत शौक़ था, लेकिन तुम राजी न हुए। अब हमने सुना है कि हुस्नआरा के साथ तुम्हारा निकाह होने वाला है। अल्लाह मुबारक करे। अब हमने आपको इजाजत दे दी, ख़ुशी से व्याह कीजिए; लेकिन हमे भूल न जाना। लौडी बनकर रहूंगी, मगर तुमको न छोड़ूंगी।

आजाद—उफ़, तुम वह हो, जिसका उस बूढ़े से व्याह हुआ था? यह भेद तो अब खुला। मगर हाय, अफ़सोस, तुमने यह क्या किया। तुम्हारी मां ने बड़ी ही बेवक़ूफी की, जो तुम जैसी कामिनी का एक बुड्ढे के साथ व्याह कर दिया।

अलारक्खी—अपनी तक़दीर!

कुछ देर तक आजाद बैठे अलारक्खी को तसल्ली देते रहे। फिर गला छुड़ाकर, चकमा देकर निकल खड़े हुए। कुछ ही दूर आगे बढ़े थे कि तबले की थपक कानों मे आयी। घर का रास्ता छोड़ महफ़िल मे जा पहुंचे। देखा, वहां खूब धमा-चौकड़ी मच रही है। एक ने ग़जल गायी, दूसरी ने ठुमरी, तीसरी ने टप्पा। आजाद एक ही रसिया, वहीं जम गया। अब इस सनक को देखिए कि ग़ैर की महफ़िल और आप इंतजाम करते है, किसी हुक़्क़े की चिलम भरवाते है, किसी गुड़गुड़ी को ताजा करवाते है। कभी ठुमरी की फर्माइश की, कभी ग़जल की। दस-पंद्रह गवारों ने जो गाने की आवाज सुनी, तो धंस पड़े। मियां आज़ाद ने उन्हें धक्के देकर बाहर किया। मालिक मकान ने जो देखा कि एक शरीफ़ नौजवान आदमी इन्तजाम कर रहे हैं, तो इनको पास बुलाया, तपाक से बिठाया, खाना खिलाया। यही बहार देखते-देखते आजाद ने रात काट दी। वहां से उठे, तो तड़का हो गया था।

मियां आजाद को आज ही रूम के सफ़र की तैयारी करनी थी। इसी फ़िक्र में बदहवास होते जा रहे थे। क्या देखते है, एक बाग़ में झूले पड़े हैं; कई लड़कियां हाथ-पांव में मेंहदी रचाये, गले में हार डाले पेंग लगा रही है और सब की सब सुरीली आवाज से लहरा-लहरा कर यों गा रही है—

नदिया-किनारे बेला किसने बोया, नदिया-किनारे;
बेला भी बोया, चमेली भी बोयी बिच-
बिच बोया रे गुलाब, नदिया-किनारे।

आजाद को यह गीत ऐसा भाया कि थोड़ी देर ठहर गये। फिर ख़ुद झूले पर जा

बैठे और पेंग लगाने लगे। कभी-कभी गाने भी लगते, इस पर लड़कियां खिलखिला कर हंस पड़ती थीं। एकाएक क्या देखते हैं कि एक काला-कलूटा मरियल सा आदमी खड़ा लड़कियों को घूर रहा है। आज़ाद ने कई बार यह कैफ़ियत देखी, तो उनसे रहा न गया, एक चपत जमा ही तो दी। टीप खाते ही वह झल्ला उठा और गालियां देकर कहने लगा—न हुई विलायती इस वक़्त पास, नहीं तो भुट्टा-सा सिर उड़ा देता। और जो कहीं जवान होता, तो खोदकर गाड़ देता। और जो कहीं भूखा होता, तो कच्चा ही खा जाता। और जो कहीं नशे की चाट होती, तो घोल के पी जाता।

आज़ाद पहचान गये, यह मियां खोजी थे। कौन खोजी? नवाव के मुसाहिव। कौन नवाव? वही वटेरवाज़, जिनके सफ़शिकन को ढूंढ़ने आज़ाद निकले थे। बोले—अरे, भाई खोजी हैं? वहुत दिनों के वाद मुलाक़ात हुई। मिज़ाज तो अच्छा है?

खोजी—जी हां, मिजाज तो अच्छा है लेकिन खोपड़ी भन्ना रही है। भला हमने तुम्हारा क्या विगाड़ा था। वह तो कहिए मैं तुम्हें पहचान गया; नहीं तो इस वक़्त जान से मार डालता।

आज़ाद—इसमें क्या शक, आप हैं ही ऐसे दिलेर। आप इधर कैसे आ निकले?

खोजी—आप ही की तलाश में तो आया था।

आज़ाद—नवाव तो अच्छे हैं?

खोजी—अजी वह गये चूल्हे में। यहां सर भन्ना रहा है। ले अव चलो, तुम्हारे साथ चलें। कुछ तो खिलवाओ यार। मारे भूख के वेदम हुए जाते हैं।

आज़ाद—हां, हां चलिए खूव शौक़ से।

दोनों मिलकर चले, तो आज़ाद ने खोजी को शराव की दुकान पर ले जाकर इतनी शराव पिलायी कि वह टें हो गये, उन्हें वहीं छोड़ मियां हंसोड़ के घर जा पहुंचे।

मियां हंसोड़ वहुत नाराज हुए कि मुझे तो ले जाकर हुस्नआरा के मकान के सामने खड़ा कर दिया और आप अंदर हो रहे। आधी रात तक तुम्हारी राह देखता रहा। यह आख़िर आप रात को थे कहां?

आज़ाद अभी कुछ जवाव देने वाले ही थे कि एक तरफ़ से मियां पीरवख्श को आते देखा और दूसरी तरफ़ से चंडूवाज़ को। आप दूर ही से वोले—अजीव तरह के आदमी हो मियां! वहां से कहकर चले कि अभी आता हूं, पल भर की भी देर न होगी, और तव के गये-गये अव तक सूरत नहीं दिखायी, अलारक्खी वेचारी ढाढ़ें मार-मारकर रो रही हैं। चलिए उनके आंसू तो पोंछिए।

मियां पीरवख्श ने वातें सुनीं, तो उनके कान खड़े हुए। हज्ज़ाम के मुंह से तो यह सुन ही चुके थे कि मियां आज़ाद किसी सराय में एक भठियारिन पर लट्टू हो गये थे, पर अव तक हुस्नआरा से उन्होंने यह वात छिपा रखी थी। इस वक़्त जो फिर वही ज़िक्र सुना, तो दिल में सोचने लगे कि यहां तो लड़कियों को रात-रात भर नींद नहीं आती; हुस्नआरा तो किसी क़दर ज़ब्त भी करती हैं, मगर सिपहआरा वेचारी फूट-फूटकर रोती है; और यहां यह है कि कान पर जूं तक नहीं रेंगती। वोले—आप चल रहे हैं, या यहां वैठे हुए वी अलारक्खी के दुखड़े सुनिएगा? अगर कहीं दोनों वहनें सुन लें, तो कैसी हो? वस, अव भलमंसी इसी में है कि मेरे साथ चले चलिए; नहीं तो हुस्नआरा से हाथ धोइएगा और फिर अपनी फूटी क़िस्मत को रोइएगा।

चंडूवाज़—मियां, होश की दवा करो? भला मजाल है कि यह अलारक्खी को छोड़कर यहां से जाएं। क्या खूव, हम तो सैकड़ों कुएं झांकते यहां आये, आप वीच में वोलने वाले कौन?

आज़ाद—अजी, इन्हें वकने भी दो, हम तुम्हारे साथ अलारक्खी के पास चलेंगे,

उस मुहब्बत की पुतली को दग़ा न देंगे। तुम घबराते क्यों हो? खाना तैयार है, आज मीठा पुलाव पकवाया है; तुम ज़रा बाज़ार से लपक कर चार आने की बालाई ले लो। मज़े से खाना खायं। क्यों उस्ताद, है न मामले की बात, लाना हाथ।

चंडूबाज़ बालाई का नाम सुनते ही खिल उठे। झप से पैसे लिये और लुढ़कते हुए चले बालाई लाने। मियां आज़ाद उन्हें बुत्ता देकर पीरबख़्श से बोले—चलिए हज़रत, हम और आप चलें। रास्ते में बातें होती जायेंगी।

दोनों आदमी वहां से चले। आज़ाद तो डबल चाल चलने लगे, पर मियां पीर-बख़्श पीछे रह गये। तब बोले—अभी, ज़रा क़दम रोके हुए चलिए। किसी ज़माने में हम भी जवान थे। अब यह फ़रमाइए कि यह अलारक्खी कौन है? जो कहीं हुस्नआरा सुन पायें, तो आपकी सूरत न देखें; बड़ी बेगम तो तुमको अपने महल के एक मील इधर-उधर फटकने न दें। आप अपने पांव में आप कुल्हाड़ी मार रहे हैं। अब शादी-वादी होना ख़ैर-सल्लाह है। सोच लीजिए कि अगर वहां इनकी बात चली, तो क्या जबान दीजिएगा।

आज़ाद—जनाब, यहां सोचने का मर्ज़ नहीं। उस वक़्त जो ज़बान पर आयेगा, कह जाऊंगा। ऐसी वकालत करूं कि आप भी दंग हो जायें—ज़बान से फुलझड़ी छूटने लगे।

इतने में कोठी सामने नज़र आयी और ज़रा देर में दोनों आदमी महल में दाखिल हुए। सिपहआरा तो आज़ाद से मिलने दौड़ी, मगर हुस्नआरा अपनी जगह से न उठी। वह इस बात पर रूठी हुई थी कि इतना दिन चढ़ आया और मियां आज़ाद ने सूरत न दिखायी।

हुस्नआरा—बहन, इनसे पूछो कि आप क्या करने आये हैं?

आज़ाद—आप खुद पूछिए। क्या मुंह नहीं है या मुंह में जबान नहीं है!

सिपहआरा—यह अब तक आप कहां गायब रहे?

हुस्नआरा—अजी, हमें इनकी क्या परवा। कोई आये या न आये, हम किसी के हाथ बिके थोड़े ही हैं।

सिपहआरा—बाजी की आंखें रोते-रोते लाल हो गयीं।

हुस्नआरा—पूछो, आखिर आप चाहते क्या हैं?

आज़ाद—पूछे कौन, आखिर आप खुद क्यों नहीं पूछतीं—

कहूं क्या मैं तुझसे कि क्या चाहता हूं,
जफ़ा हो चुकी, अब वफ़ा चाहता हूं।
बहुत आशना हैं ज़माने में, लेकिन—
कोई दोस्त दर्द-आशना चाहता हूं।

हुस्नआरा—इनसे कह दो, यहां किसी की वाही-तबाही बकवाद सुनने का शौक नहीं है। मालूम है, आप बड़े शायर की दुम हैं?

सिपहआरा—बहन, तुम लाख बनो, दिल की लगी कहीं छिपाने से छिपती है।

हुस्नआरा—चलो, बस, चुप भी रहो। बहुत कलेजा न पकाओ। हमारे दिल पर जो गुज़र रही है, हम जानते हैं। चलो, हम और तुम कमरा खाली कर दें, जिसका जी चाहे बैठे, जिसका जी चाहे जाये। हयादार के लिए एक चुल्लू काफ़ी है।

यह कहकर हुस्नआरा उठी और सिपहआरा भी खड़ी हुई। मियां आज़ाद ने सिपहआरा का पहुंचा पकड़ लिया। अब दिल्लगी देखिए कि मियां आज़ाद तो उसे अपनी तरफ़ खींचते हैं और हुस्नआरा अपनी तरफ़ घसीटती हुई कह रही हैं—हमारी बहन का हाथ कोई पकड़े, तो हाथ ही टूटे। जब हमने टका-सा जवाब दे दिया, तो फिर यहां आने

वाला कोई कौन ! वाह, ऐसे हयादार भी नहीं देखे !

आज़ाद—साहव, आप इतना खफ़ा क्यों होती हैं ? खुदा के वास्ते ज़रा वैठ जाइए। माना कि हम खतावार हैं, मगर हमसे जवाव तो सुनिए ! ख़ुदा गवाह है, हम वेकसूर हैं।

हुस्नआरा—वस वस, ज़वान न खुलवाइए। वस अव रुख़्सत। आप अव छह महीने के बाद सूरत दिखाइएगा, हम भी कलेजे पर पत्थर रख लेंगे।

यह कह कर हुस्नआरा तो वहां से चली गयी और मियां आजाद अकेले वैठे-वैठे सोचने लगे कि इसे कैसे मनाऊं। आखिर उन्हें एक चाल सूझी। अरगनी पर से चादर उतार ली और मुंह ढांप कर लेट रहे। चेहरा वीमारों का-सा वना लिया और कराहने लगे। इत्तिफ़ाक़ से मियां पीरवख्श उस कमरे में आ निकले। आजाद की सूरत जो देखी, तो होश उड़ गये। जाकर हुस्नआरा से वोले—जल्द पलंग विछवाओ, मियां आज़ाद को वुखार हो आया है।

हुस्नआरा—है है, यह क्या कहते हो ! पांव-तले से मिट्टी निकल गयी।

सिपहआरा—कलेजा धड़-धड़ करने लगा। ऐसी सुनानी अल्लाह सातवें दुश्मन को भी न सुनाये।

हुस्नआरा—हाय मेरे अल्लाह मैं क्या करूं ! मैंने अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारी।

ज़रा देर में पलंग विछ गया। हुस्नआरा, उसकी वहन, पीरवख्श और दिलवहार चारपाई के पास खड़े होकर आंसू वहाने लगे।

दिलवहार—मियां, किसी हकीम जी को वुलाओ।

सिपहआरा—चेहरा कैसा ज़र्द हो गया !

पीरवख्श—मैं अभी जाकर हकीम साहव को लाता हूं।

हुस्नआरा—हकीम जी का यहां क्या काम है ? और, यों आप चाहे जिसको वुलायें।

मियां पीरवख्श तो वाहर गये और हुस्नआरा पलंग पर जा वैठी, मियां आज़ाद का सिर अपने जानू पर रखा। सिपहआरा फूलों का पंखा झलने लगी।

हुस्नआरा—मेरी ज़वान कट पड़े। मेरी ही जली-कटी वातों ने यह वुख़ार पैदा किया।

यह कहकर उसने आहिस्ता-आहिस्ता आखाद की पेशानी को सहलाना शुरू किया। आज़ाद ने आंखें खोल दीं और वोले—

मेरे जनाज़े को उनके कूचे में
नाहक़ अहवाव लेके आये;
निगाहे हसरत से देखते हैं
वह रुख से परदा हटा-हटा कर
सहर है नज़दीक, शव है आख़िर,
सरा से चलते हैं हम मुसाफ़िर;
जिन्हें है मिलना, वे सव हैं हाज़िर,
जरस से कह दो, कोई सदा कर।

हुस्नआरा—क्यों हज़रत, यह मक्कारी ! ख़ुदा की पनाह, मेरी तो वुरी गत हो गयी।

आजाद—जरा उसी तरह इन नाजुक हाथों से फिर माथा सहलाओ।

हुस्नआरा—मेरी बला जाती है, वह वक़्त ही और था।

आजाद—मैंने कहा जो उनसे कि शब को यही रहो;
आंखे झुकाये बोले कि किस एतबार पर ?

हुस्नआरा—आपने आख़िर यह स्वांग क्यो रचा ? छिपाइए नही, साफ़-साफ़ बताइए।

आजाद—अब कहती हो कि तुम मेरी
महफ़िल मे आये क्यों;
आता था कौन, कोई
किसी को बुलाये क्यों ?
कहता हूं साफ़-साफ़
कि मरता हूं आप पर;
जाहिर जो बात हो,
उसे कोई छिपाये क्यो ?

यहां मारे बुख़ार के दम निकल रहा है, आप मक्र समझती है।

यहां दोनों मे यही नोकझोक हो रही थी, इतने मे मियां ख़ोजी पता पूछते हुए आ पहुंचे।

खोजी—मिया हो, जरा आजाद को तो बुलाओ।

दरवान—किससे कहते हो ? आये कहां से ? हो कौन ?

खोजी—ऐ, यह तो कुछ बातूनी-सा मालूम होता है। अबे, इत्तला कर दे कि ख़्वाजा साहब आये है।

दरवान—ख़्वाजा साहब ? हमें तो जुलाहे से मालूम होते हो। भलेमानसों की सूरत ऐसी ही हुआ करती है ?

आजाद ने ये बातें सुनी, तो बाहर निकल आये और ख़ोजी को बुला लिया।

खोजी—भाई, जरा आईना तो मंगवा देना।

आजाद—यह आईना क्या होगा, बंदगी न सलाम, बात न चीत, आते ही आते आईना याद आया। बन्दर के हाथ मे आईना भला कौन देने लगा !

खोजी—अजी मंगवाते हो या दिल्लगी करते हो। दरवान से हमसे झौड़ हो गयी। मरदूद कहता है, तुम्हारी सूरत भलेमानसों की-सी नही। अब कोई उससे पूछे, फिर क्या चमार की-सी है, या पाजी की-सी।

आजाद—भई अगर सच पूछते हो, तो तुम्हारी सूरत से एक तरह का पाजीपन बरसता है। ख़ुदा चाहे पाजी बनाये, मगर पाजी की सूरत न बनाये। पर अब उसका इलाज ही क्या ?

खोजी—वाह, इसका कुछ इलाज ही नही ? डॉक्टरो ने मुरदे तक के जिला लेने का तो बन्दोबस्त कर लिया है; आप फ़रमाते है, इलाज ही नही। अब पाजी न बनेंगे, पाजी बनके जिये तो क्या।

आजाद—कल हम रूम जाने वाले है, चलते हो साथ ?

खोजी—न चले, उस पर भी लानत, न ले चले, उस पर भी लानत !

आजाद—मगर वहां चंडू न मिलेगा, इतना याद रखिए।

खोजी—अजी अफ़ीम मिलेगी कि वह भी न मिलेगी बस, तो फिर हम अपना

चंडू वना लेंगे। हमें ज़रूर ले चलिए।

आज़ाद अन्दर जाकर वोले—हुस्नआरा, अव रुख़सत का वक़्त क़रीव आता जाता है; हंसी-ख़ुशी रुख़सत करो; ख़ुदा ने चाहा तो फिर मिलेंगे।

हुस्नआरा की आंखों से टप-टप आंसू गिरने लगे। वोली—हाय, अंदरवाला नहीं मानता। उसको भी तो समझाते जाओ। यह किसका होकर रहेगा?

आज़ाद—तुम्हारी यह हालत देखकर मेरे क़दम रुक जाते हैं। अब हमें जाने दो। ज़िंदगी शर्त है, हम फिर मिलेंगे और जश्न करेंगे। यह कहकर आज़ाद वाहर चले आये और खोजी के साथ चले। खोजी ने समझा था, रूम कहीं लखनऊ के आसपास होगा। अव जो सुना कि सात समुंदर पार जाना पड़ेगा, तो हक्का-वक्का हो गये। हाथ-पांव कांपने लगे। भई, हम समझते थे, दिल्लगी करते हो। यह क्या मालूम था कि सच-मुच तंग-तोवड़ा चढ़ा कर भागा ही चाहते हो। मियां, तुम लाख आलिम फ़ाज़िल सही, फिर भी लड़के ही हो। यह ख़याल दिल से निकाल डालो। एक ज़रा-सी चने के वरावर गोली पड़ेगी, तो टांय से रह जाओगे। आपको कभी मोरचे पर जाने का शायद इत्ति-फ़ाक़ नहीं हुआ। ख़ुदा भलेमानस को न ले जाए। ग़ज़व का सामना होता है। वह गोली पड़ी, यह मर गया। दांय-दांय की आवाज़ से कान के परदे फट जाते हैं। तोप का गोला आया और अठारह आदमियों को गिरा दिया। गोला फटा और वहत्तर टुकड़े हुए, और एक-एक टुकड़े ने दस-दस आदमियों को उड़ा दिया। जो कहीं तलवार चलने लगी, तो मौत सामने नज़र आती है, वेमौत जान जाती है। खटाखट तलवार चल रही है और हज़ारों आदमी गिरते जाते हैं। सो भई, वहां जाना कुछ ख़ाला जी का घर थोड़े ही है। ख़ुदा के लिए उधर रुख न करना। और, वन्दा तो अपने हिसाव, जाने वाले को कुछ कहता है। हम एक तरकीव वतायें, वह काम क्यों न कीजिए कि हुस्नआरा आपको ख़ुद रोकें और लाखों क़समें दें। आप अन्दर जाकर वैठिए और हमको चिक के पास विठाइए। फिर देखिए, मैं कैसी तक़रीर करता हूं कि दोनों वहनें कांप उठें, उनको यक़ीन हो जाय कि मियां आज़ाद गये और अंटागफ़ील हुए। मैं साफ़-साफ़ कह दूंगा कि भई आज़ाद ज़रा अपनी तसवीर तो खिचवा लो। आख़िर अव तो जाते ही हो। वल्लाह, जो कहीं यह तक़रीर सुन पायें, तो हश्र तक तुम्हें न जाने दें और झप से शादी हो जाये।

आज़ाद—वस, अव और कुछ न फ़रमाइयेगा। मरना-जीना किसी के अख़्ति-यार की वात तो है नहीं; लाखों आदमी कोरे आते हैं और हज़ारों राह चलते लौट जाते हैं। हुस्नआरा हमसे कहे कि टर्की जाओ और हम वातें वनायें, उसको धोखा दें! जिससे मुहव्वत की उससे फ़रेव! यह मुझसे हरगिज़ न होगा, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाये। आप मियां हंसोड़ के यहां जाइए और उनसे कहिए कि हम अभी आते हैं। हम पहुंचे और खाना खाकर लम्वे हुए। खोजी तो गिरते-पड़ते चले, मगर दो क़दम जाकर फिर पलटे। भई, एक वात तो सुनो। क्या-क्या पकवा रखूं? आज़ाद वहुत ही झल्लाये। अजव नासमझ आदमी हो! यह भी कोई पूछने की वात है भला! उनके यहां जो कुछ मुमकिन होगा, तैयार करेंगे। यह कहकर आज़ाद तो अपने दो-चार दोस्तों से मिलने चले, उधर मियां खोजी हंसोड़ के घर पहुंचे। जाकर गुल मचाना शुरू किया कि जल्द खाना तैयार करो, मियां आज़ाद अभी-अभी जानेवाले हैं। उन्होंने कहा है कि पांच सेर मीठे टुकड़े, सात सेर पुलाव, दस सेर फीरनी, दस ही सेर खीर, कोई चौदह सेर ज़रदा, कोई पांच सेर मुरव्वा और मीठे अचार की अचारियां जल्द तैयार हों। मियां हंसोड़ की वीवी खाना पकाने में वर्क़ थीं। हाथोंहाथ सव सामान तैयार कर दिया। मियां आज़ाद शाम को पहुंचे।

हंसोड़—कहिए, आज तो सफ़र का इरादा है। खाना तैयार है; कहिए, तो

निकलवाया जाये। वर्फ़ भी मंगवा रखी है।

आज़ाद—खाना तो हम इस वक़्त न खायेंगे, जरा भी भूख नहीं है।

हंसोड़—खैर, आप न खाइएगा, न सही। आपके और दोस्त कहां हैं? उनके साथ दो निवाले तुम भी खा लेना।

आज़ाद—दोस्त कैसे! मैंने तो किसी दोस्त के लिए खाना पकाने को नहीं कहा था!

हंसोड़—और सुनिएगा! क्या आपने अपने ही लिए दस सेर खीर, अठारह सेर मीठे टुकड़े और ख़ुदा जाने क्या-क्या अल्लम-गल्लम पकवाया है।

आज़ाद—आपसे यह कहा किस नामाकूल ने?

हंसोड़—ख़ोजी ने, और किसने? बैठे तो हैं, पूछिए न।

आज़ाद—ख़ोजी तुम मरभुखे ही रहे। यह इतनी चीज़ें क्या सिर पर लादकर ले जाओगे। लाहौल बिला कूवत।

खोजी—लाहौल काहे की? आप न खाइए, मैं तो डट कर चख चुका। रास्ते के लिए भी बांध रखा है।

आज़ाद—अच्छा, तो अब वोरिया-बंधना उठाइए, लादिए-फांदिए।

खोजी—जनाब, इस वक़्त तो यह हाल है जैसे चूहे को कोई पारा पिला दे। अब बन्दा लोट मारेगा। और यह तो बताओ, सवारी क्या है।

आज़ाद—इक्का।

खोजी—ग़ज़ब ख़ुदा का! तब तो मैं जा चुका। इक्के पर तो यहां कभी सवार ही नहीं हुए। और फिर खाना खाकर तो मर ही जाऊंगा।

ख़ैर, मियां आज़ाद ने झटपट खाना खाया और असबाब कसकर तैयार हो गये। ख़ोजी पड़े खर्राटे ले रहे थे; रोते-गाते उठे। बाहर जाकर देखते हैं, तो एक समंद घोड़ी पूरी, अधमरा मरियल टट्टू। आज़ाद घोड़ी पर सवार हुए और मियां हंसोड़ की बीवी से बोले—भाभी, भूल न जाइएगा। भाई साहब तो भुलक्कड़ आदमी हैं, आप याद रखिएगा। आपके हाथ का खाना उम्र भर न भूलूंगा। उन्होंने रुखसत करते हुए कहा—जिस तरह पी० दिखाते हो, ख़ुदा करे, उसी तरह मुंह भी दिखाओ। इनाम ज़ामिन को सौंपा।

अब सुनिए कि मियां ख़ोजी ने अपने मरियल टट्टू को जो देखा, तो घबराये। घोड़े पर कभी ज़िंदगी भर सवार न हुए थे। लाख चाहते हैं कि सवार हो जायें, मगर हिम्मत नहीं पड़ती। यार लोग डराते हैं—देखो, देखो, वह पुस्त उछाली, वह दुलत्ती झाड़ी, वह मुंह खोलकर लपका; मगर टट्टू खड़ा है, कान तक नहीं हिलाता। एक दफ़े आंख बन्द करके हज़रत ने चाहा कि लद लें, मगर यारों ने तालियां जो बजायीं; तो टट्टू भागा और मियां खोजी भद से ज़मीन पर। देखा, कहते न थे कि हम इस टट्टू पर न सवार होंगे। मगर आज़ाद ने घड़ी दिल्लगी देखने के लिए हमको उल्लू बनाया। वह तो कहो, हड्डी-पसली बच गयी, नहीं तो चुरमुर ही हो जाती। ख़ैर, दो आदमियों ने उनको उठाया और लादकर घोड़ी की पीठ पर रख दिया। उन्होंने लगाम हाथ में ली ही थी कि एक बिगड़े-दिल ने चाबुक जमा दिया। टट्टू दुम दबाकर भागा और मियां ख़ोजी लुढ़क गये। बारे आज़ाद ने आकर उनको उठाया।

खोजी—अब क्या रूम तक बराबर इस टट्टू ही पर जाना होगा?

आज़ाद—और नहीं क्या आपके वास्ते उड़नखटोला आयेगा?

खोजी—भला इस टट्टू पर कौन जायेगा?

आज़ाद—टट्टू, आप तो इसे टांघन कहते थे?

खोजी—भई, हमें आज़ाद कर दो। हम बाज़ आये इस सफ़र से ?

आज़ाद—अरे बेवकूफ़, रेल तक इसी पर चलना होगा। वहां से बम्बई तक रेल पर जायेंगे।

मियां आज़ाद और खोजी आगे बढ़े। थोड़ी देर में खोजी का टट्टू भी गरमाया और आज़ाद की घोड़ी के पीछे क़दम बढ़ाकर चलने लगा। चलते-चलते टट्टू ने शरारत की। बूट के हरे-भरे खेत देखे, तो उधर लपका। किसान ने जो देखा, तो लट्ठ लेकर दौड़ा और लगा बुरा-भला कहने। उसकी जोरू भी चमक कर लपकी और कोसने लगी कि पलवइया मर जाये, कीड़े पड़ें, अभी-अभी पेट फटै, दाढ़ीजार की लहास निकलै। और किसान भी गालियां देने लगा—अरे यो टट्टू कौन सार केर आय ? ससूर हमरे खेत में पैठाय दिहिस। मियां खोजी गालियां खाकर बिगड़ गये। उनमें एक सिफ़त यह थी कि बे-सोचे-समझे लड़ पड़ते थे; चाहे अपने से दुगुना-चौगुना हो, वह चिमट ही जाते थे। गुस्से की यह ख़ासियत है कि जब आता है, कमज़ोर पर। मगर मियां खोजी का गुस्सा भी निराला था, वह जब आता था, शहज़ोर पर। किसान ने उनके टट्टू को कई लट्ठ जमाये, तो मियां खोजी तड़ से उतर कर किसान से गुंथ गये। वह गंवार आदमी, बदन का करारा और यह दुबले-पतले महीन आदमी, हवा के झोंके में उड़ जायें। उसने इनकी गरदन दबोची और गद से ज़मीन पर फेंका। फिर उठे, तो उसकी जोरू इनसे चिमट गयी और लगी हाथापाई होने। उसने घूंसा जमाया और इनके पट्टे पकड़ कर फेंका, तो चारों खाने चित्त। दो थप्पड़ भी रसीद किये—एक इधर, एक उधर। किसान खड़ा हंस रहा है कि मेहरारू से जीत नाहीं पावत, यह मुसंडन से का लड़िहै भला ! किसान की जोरू तो ठोंक-ठांक कर चल दी, और आपने पुकारना शुरू किया—क़सम अब्बाजान की, जो कहीं छुरा पास होता, तो इन दोनों की लाश इस वक़्त फड़कती होती। वह तो कहिए, ख़ुदा को अच्छा करना मंजूर था, कि मेरे पास छुरा न था, नहीं तो इतनी क़रौलियां भोंकता कि उमर भर याद करते। खड़ा तो रह ओ गीदी ! इस पर गांव वालों ने खूब क़हक़हा उड़ाया। एक ने पूछा—क्यों मियां साहब, छुरी होती, तो क्या भोंकत्र /. मर जाते ? इस पर मियां खोजी और भी आग हो गये।

मियां आज़ाद कोई दो गोली के टप्पे पर निकल गये थे। जब खोजी को पीछे न देखा, तो चकराये कि माजरा क्या है ? घोड़ी फेरी और आकर खोजी से बोले—यहां खेत में कब तक पड़े रहोगे ? उठो, गर्द झाड़ो।

खोजी—क़रौली न हुई पास, नहीं तो इस वक़्त दो लाशें यहां फड़कती हुई देखते।

आज़ाद—अजी, वह तो जब देखते तब देखते, इस वक़्त तो तुम्हारी लोथ देख रहे हैं।

उन्होंने फिर खोजी को उठाया और टट्टू पर सवार कराया। थोड़ी देर में फिर दोनों आदमियों में एक खेत का फ़ासला हो गया। खोजी से एक पठान ने पूछा कि शेख़ जी, आप कहां रहते हैं ? हज़रत ने झट से एक कोड़ा जमाया और कहा—अबे, हम शेख़ नहीं, ख़्वाजा हैं। वह आदमी गुस्से से आग हो गया और टांग पकड़ कर घसीटा, तो खोजी खट से ज़मीन पर। अब चारों खाने चित्त पड़े हैं, उठने का नाम नहीं लेते। आज़ाद ने जो पीछे फिरकर देखा, तो टट्टू आ रहा है, मगर खोजी नदारद। पलटे, देखें, अब क्या हुआ। इनके पास पहुंचे, तो देखा, फिर उसी तरह ज़मीन पर पड़े क़रौली की हांक लगा रहे हैं।

आज़ाद—तुम्हें शर्म नहीं आती ! कमज़ोरी मार खाने की निशानी। दम नहीं है, तो कटे क्यों मरते हो ? मुफ़्त में जूतियां खाना कौन जवांमरदी है ?

खोजी—वल्लाह, जो क़रौली कहीं पास हो, तो चलनी ही कर डालूं। वह तो कहिए, ख़ैरियत हुई कि क़रौली न थी, नहीं तो इस वक़्त क़ब्र खोदनी पड़ती।

आजाद—अब उठोगे भी, या परसों तक यों ही पड़े रहोगे। तुमने तो अच्छा नाक में दम कर दिया।

खोजी—अजी, अब न उठेंगे, जब तक क़रौली न ला दोगे, बस अब बिना क़रौली के न बनेगी।

आजाद—बस, अब बेहूदा न बको; नहीं तो मैं अबकी एक लात जमाऊंगा।

ख़ैर, दोनों आदमी यहां से चले तो खोजी बोले—यहां जोड़-जोड़ में दर्द हो रहा है। उस किसान की मुसंढी औरत ने तो कचूमर ही निकाल डाला। मगर कसम है ख़ुदा की, जो कहीं क़रौली हाथ होती, तो ग़जब ही हो जाता। एक को तो जीता छोड़ता ही नहीं।

आजाद—ख़ुदा गंजे को पंजे नहीं देता। क़रौली की आपको हमेशा तलाश रही, मगर जब आये, पिट ही के आये जूतियां ही खायीं। ख़ैर, यह दुखड़ा कोई कहां तक रोये, अब यह बताओ कि हम क्या करें? जी मतला रहा है, बन्द-बन्द टूट रहा है, आंखें भी जलती हैं।

खोजी—लैनडोरी आ गयी। अब हजरत भी आते होंगे।

आजाद—यह लैनडोरी कैसी? और हजरत कौन? मैं कुछ नहीं समझा। ज़रा बताओ तो?

खोजी—अभी लड़के न हो, बुखार की आमद है। आंखों की जलन, जी का मतलाना, बदन का टूटना, सब उसी की अलामतें हैं। इस वक़्त घोड़े पर सवार होकर चलना बुरा है। अब आप घोड़े से उतर पड़िए और चलकर कहीं लेट रहिए, कहना मानिए।

आजाद—यहां कोई अपना घर है, जो उतर पड़ूं? किसी से पूछो तो कि गांव कितनी दूर है। ख़ुदा करे, पास ही हो, नहीं तो मैं यहीं गिर पड़ूंगा और क़ब्र भी यहीं बनेगी।

खोजी—अजी, जरा दिल को संभालो। कोई इतना घबराता है? क़ब्र कैसी जरा दिल को ढारस दीजिए।

आजाद—वल्लाह, फुंका जाता हूं, बदन से आग निकल रही है।

खोजी—वह गांव सामने ही है, जरा घोड़ी को तेज कर दो।

आजाद ने घोड़ी को जरा तेज किया, तो वह उड़ गयी। ख़ोजी ने भी कोड़े पर कोड़ा जमाना शुरू किया। मगर लद्दू टट्टू कहां तक जाता? आखिर खोजी ने झल्लाकर एक एड़ दी, तो टट्टू अगले पांव पर खड़ा हो गया और मियां खोजी संभल न सके, धम से जमीन पर आ रहे। अब टट्टू पर बिगड़ रहे हैं कि न हुई करौली इस वक़्त, नहीं तो इतनी भोंकता कि बिलबिलाने लगता। ख़ैर, किसी तरह उठे, टट्टू को पकड़ा और लदकर चले। दो-चार दिल्लगीबाज आदमियों ने तालियां बजायीं और कहना शुरू किया—लदा है, लदा है, लेना, जाने न पाये। खोजी बिगड़ खड़े हुए। हटो सामने नहीं तो हंटर जमाता हूं। मुझे भी कोई ऐसा-वैसा समझे हो? मैं सिपाही आदमी हूं। नवाबी में दो-दो तलवारें कमर से लगी रहती थीं। अब लाख कमजोर हो गया हूं, मगर अब भी तुम जैसे पचास पर भारी हूं। लोगों ने खूब हंसी उड़ायी। जी हां, आप ऐसे जवां मर्द हैं। ऐसे सूरमा होते कहां हैं।

खोजी—उतरूं घोड़े से, आऊं?

यारों ने कहा—नहीं साहब, ऐसा गजब न कीजियेगा! आप ठहरे .... और सिपाही आदमी, कहीं मार डालिए आकर तो कोई क्या करेगा।

इस तरह गिरते-पड़ते एक सराय में पहुंचे और अन्दर जाकर कोठरियां देखने लगे। सराय भर में चक्कर लगाये, लेकिन कोई कोठरी पसन्द न आयी। भठियारियां पुकार रही हैं कि मियां मुसाफ़िर इधर आओ, इधर देखो, खासी साफ़-सुथरी कोठरी है। टट्टू बांधने की जगह अलग। इतना कहना था कि मियां खोजी आग हो गये। क्या कहा, टट्टू है, यह पीगू का टांघन है। एक भठियारी ने चमककर कहा—टांघन है या गधा? तब तो खोजी झल्लाये और छुरी और क़रौली की तलाश करने लगे। इस पर सराय भर की भठियारियों ने उन्हें बनाना शुरू किया। आख़िर आप इतने दिक़ हुए कि सराय के बाहर निकल आये और बोले—भई, चलो, आगे के गांव में रहेंगे। यहां सब-के-सब शरीर हैं। मगर आज़ाद में इतना दम कहां कि आगे जा सकें। सराय में गये और एक कोठरी में उतर पड़े। खोजी ने भी वहीं बिस्तर जमाया। साईस तो कोई साथ था नहीं, खोजी को अपने ही हाथ से दोनों जानवरों के खरेरा करना पड़ा। भठियारी ने समझा, यह साईस है।

भठियारी—ओ साईस भैया, ज़रा घोड़ी को उधर बांधो।

खोज़ी—किसे कहती है री, साईस कौन है?

भठियारी—ऐ तो बिगड़ते क्यों हो मियां साईस नहीं, चरकटे सही।

आज़ाद—चुप रहो, यह हमारे दोस्त हैं।

भठियारी—दोस्त हैं, सूरत तो भलेमानसों की-सी नहीं है।

खोजी—भई आज़ाद, ज़रा आईना तो निकाल देना। कई आदमी कह चुके। आज मैं अपना चेहरा ज़रूर देखूंगा। आखिर सबब क्या कि जिसे देखो, यही कहता है।

आज़ाद—चलो, वाहियात न बको, मेरा तो बुरा हाल है।

भठियारी ने चारपाई बिछा दी और आज़ाद लेटे।

खोजी ने कहा—अब तबीयत कैसी है?

आज़ाद—बुरी गत है; जी चाहता है, इस वक़्त ज़हर खा लूं।

खोजी—ज़रूर, और उसमें थोड़ी संखिया भी मिला लेना।

आज़ाद—मर कमबख़्त, दिल्लगी का यह मौक़ा है?

खोजी—अब बूढ़ा हुआ, मरूं किस पर। मरने के दिन तो आ गये। अब तुम ज़रा सोने का ख़याल करो। दो-चार घड़ी नींद आ जाये, तो जी हल्का हो जाये।

इतने में भठियारी ने आकर पूछा—मियां कैसे हो?

आज़ाद—क्या बताऊं, मर रहा हूं।

भठियारी—किस पर?

आज़ाद—तुम पर।

भठियारी—ख़ुदा की संवार।

आज़ाद—किस पर?

भठियारी ने खोजी की तरफ़ इशारा करके कहा—इन पर।

खोजी—अफ़सोस, न हुई क़रौली!

आज़ाद—होती, तो क्या करते?

खोजी—भोंक लेते अपने पेट में।

आज़ाद—भई, अब कुछ इलाज करो, नहीं तो मुफ़्त में दम निकल जायेगा।

भठियारी—एक हकीम यहां रहते हैं। मैं बुलाये लाती हूं।

यह कहकर वी भठियारी जाकर हकीम जी को बुला लायी। मियां आज़ाद देखते तो अजब ढंग के आदमी—धोती बांधे, गाढ़े की मिरज़ई पहने, चेहरे से देहातीपन बरस रहा है, आदमियत छू ही नहीं गयी।

आज़ाद—हकीम साहब, आदाब।

हकीम—नाहीं, दबवाव नाही। बुखार में दाबे नुक़सान होत है।

आज़ाद—आपका नाम?

हकीम—हमारा नाम दांगलू।

आज़ाद—दांगलू या जांगलू?

हकीम—नुस्खा लिखूं?

आजाद—जी नहीं, माफ़ कीजिये। बस, यहां से तशरीफ़ ले जाइये।

हकीम—बुखार मे अक-बक करत है, चांद के पट्टे कतरवा डालो।

खोजी—कुछ बेधा तो नही हुआ! न हुई क़रौली, नही तो तोंद पर रख देता।

हकीम—भाई, हमसे इनका इलाज न हो सकिहै। अब एक होय. तो इलाज करें। यो पागल को है हो? हमका अलई का पलवा बकत है ससुर।

आखिर खोजी ने झल्लाकर उनको उठा दिया और यह नुस्खा लिखा—

आलूबुखारा दो दाना, तमरहिंदी छह माशा, अर्क़ गावजबां दो तोला।

आजाद—यह नुस्खा तो आप कल पिलायेंगे, यहां तो रात-भर मे काम ही तमाम हो जायेगा।

खोजी—इस वक़्त बंदा कुछ नही देने का। हां, आलू का पानी पीजिये, पांच दाने भिगोये देता हूं। खाना इस वक़्त कुछ न खाना।

आजाद—वाह, खाना न मिला, तो मैं आप ही को चट कर जाऊंगा। इस भरोसे न रहिएगा।

खोजी—वल्लाह, एक दाना भी आपके पेट में गया और आप बरस भर तक यों ही पड़े रहे। आलू का पानी भी घूंट-घूट करके पीना। यह नही कि प्याला मुंह से लगाया और गट-गट पी गये।

यह कहकर खोजी ने चंदन घिसकर आज़ाद की छाती पर रखा। पालक के पत्ते चारपाई पर बिछा दिये। खीरा काटकर माथे पर रखा और जरा-सा नमक बारीक पीसकर पांव में मला। तलवे सहलाये।

आज़ाद—यहां तो कोई हकीम भी नही।

खोजी—अजी, हम खुद इलाज करेंगे। हकीम न सही, हकीमों की आंखें तो देखी है।

आजाद—इलाज तक मुजायका नही, मगर मार न डालना भाई! हां, जरा इतना एहसान करना।

आज़ाद की बेचैनी कुछ कम हुई, तो आंख लग गयी। एकाएक पड़ोस की कोठरी से शोरगुल की आवाज आयी। आजाद चौंक पड़े और पूछा—यह कैसा शोर है? भठियारी, तुम ज़रा जाकर उनको ललकारो।

खोजी—कहो कि एक शरीफ़ आदमी बुखार में पड़ा हुआ है। खुदा के वास्ते ज़रा खामोश हो जाओ।

भठियारी—मियां, मैं ठहरी औरतजात और वे मरदुए। और फिर अपने आपे मे नही। जो मुझी पर पिल पड़े, तो क्या करूंगी? हां, भठियारे को भेजे देती हूं।

भठियारे ने जाकर जो उन शराबियों को डांटा, तो सब-के-सब उस पर टूट पड़े और चपतें मार-मारकर भगा दिया। इस पर भठियारी तैश में आकर उठी और उगलियां मटकाकर इतनी गालियां सुनायी कि शराबियों का नशा हिरन हो गया। वे इतना डरे कि कोठरी का दरवाजा बन्द कर लिया।

लेकिन थोड़ी देर मे फिर शोर हुआ और आज़ाद की नींद उचट गयी। खोजी

की जो शामत आयी, तो शराबियों की कोठरी के दरवाज़े को इस ज़ोर से धमधमाया कि चूल निकल आयी। सब शराबी झल्लाकर बाहर निकल आये और खोजी पर बेभाव की पड़ने लगी। उन्होंने इधर-उधर छुरी और क़रौली की बहुत कुछ तलाश की, मगर ख़ूब पिटे। इसके बाद वे सब सो गये, रात भर कोई न मिनका। सुबह को उस कोठरी से रोने की आवाज़ आयी। खोजी ने जाकर देखा, तो एक आदमी मरा पड़ा है और बाक़ी सब खड़े रो रहे हैं। पूछा, तो एक शराबी ने कहा—भाई, हम सब रोज़ शराब पिया करते हैं। कल की शराब बहुत तेज़ थी। हमने बहुत मना किया; पर बोतल-की-बोतल खाली कर दी। रात को हम लोग सोये, तो इतना अलबत्ता कहा कि कलेजा फुंका जा रहा है। अब जो देखते हैं, तो मरा हुआ है। आप तो जान से गया और हमको भी क़त्ल कर गया।

खोजी—ग़ज़ब हो गया ! अब तुम धरे जाओगे और सज़ा पाओगे !

शराबी—हम कहेंगे कि सांप ने काटा था।

खोजी—कहीं ऐसी भूल भी न करना।

शराबी—अच्छा, भाग जायेंगे।

खोजी—तब तो ज़रूर ही पकड़े जाओगे। लोग ताड़ जायेंगे कि कुछ दाल में काला है।

शराबी—अच्छा, हम कहेंगे कि छुरी मारकर मर गया और गले में छुरी भी भोंक देंगे।

खोजी—यह बात हिमाक़त है, मैं जैसे कहूं, वैसे करो। तुम सब-के-सब रोओ और सिर पीटो। एक कहे कि मेरा सगा भाई था। दूसरा कहे कि मेरा बहनोई था; तीसरा उसे मामूं बताये। जो कोई पूछे कि क्या हुआ था, तो गुर्दे का दर्द बताना। ख़ूब चिल्ला-चिल्लाकर रोना। जो यों आंसू न आयें तो मिर्चें लगा लो। आंखों में धूल झोंक लो। ऐसा न हो कि गड़बड़ा जाओ और जेलख़ाने जाओ।

इधर तो शराबियों ने रोना-पीटना शुरू किया, उधर किसी ने जाकर थाने में जड़ दी कि सराय में कई आदमियों ने मिलकर एक महाजन को मार डाला। थानेदार और दस चौकीदार रप-रप करते आ पहुंचे। अरी ओ भठियारी, बता, वह महाजन कहां टिका हुआ था ?

भठियारी—कौन महाजन ? किसी का नाम तो लीजिए।

थानेदार—तेरा बाप, और कौन !

भठियारी—मेरा बाप ? उसकी तलाश है, तो क़ब्रिस्तान जाइए।

थानेदार—ख़ून कहां हुआ ?

भठियारी—ख़ून ! अरे तोबा कर बंदे ! ख़ून हुआ होगा थाने पर।

थानेदार—अरे इस सराय में कोई मरा है रात को ?

भठियारी—हां, तो यों कहिए। वह देखिए, बेचारे खड़े रो रहे हैं। उनके भाई थे। कल दर्द हुआ। रात को मर गये।

थानेदार—लाश कहां है ?

शराबी—हुज़ूर, यह रखी है। हाय, हम तो मर मिटे। घर में जाकर क्या मुंह दिखायेंगे, किस मुंह से अब घर जायेंगे। किसी डॉक्टर को बुलवाइए, ज़रा नब्ज तो देख लें।

थानेदार—अजी, अब नब्ज़ में क्या रखा है। बेचारा बुरी मौत मरा। अब इसके दफ़न-कफ़न की फ़िक्र करो।

थानेदार चला गया, तो मियां खोजी खब खिल-खिलाकर हंसे कि वल्लाह, क्या बात बनायी है। शराबियों ने उनकी ख़ूब आवभगत की कि वाह उस्ताद, क्या झांसा

दिया। आपकी बदौलत जान बची; नहीं तो न जाने किस मुसीबत में फंस जाते।

थोड़ी ही देर बाद किसी कोठरी से फिर शोर-गुल सुनायी दिया।

आज़ाद—अब यह कैसा गुल है भाई? क्या यह भी कोई शराबी है।

भठियारी—नही, एक रईस की लड़की है। उस पर एक परेत आया है। ज़रा सी लड़की, लेकिन इतनी दिलेर हो गयी है कि किसी के संभाले नही संभलती।

आजाद—यह सब ढकोसला है!

भठियारी—ऐ वाह, ढकोसला है। इस लड़की का भाई आगरे में था और वहां से पांच सौ रुपये अपने बाप की थैली से चुरा लाया। यहां जो आया, तो लड़की ने कहा कि तू चोर है, चोरी करके आया है।

आजाद—अजी, उस लड़के ने अपनी बहन से कह दिया होगा; नहीं तो भला उसे क्या खबर होती?

भठियारी—भला ग़जलें उसे कहां से याद है?

आजाद—इसमें अचरज की कौन-सी बात है? तुम्हें भी दो-चार ग़जले याद ही होंगी!

भठियारिन—मै यह न मानूंगी। अपनी आंखों देख आयी हूं।

आजाद तो खिचड़ी पकवाकर खाने लगे और मियां ख़ोजी घास लाने चले। जब घसियारिन ने बारह आने मांगे, तो आपने क़रौली दिखायी। इस पर घसियारिन ने गट्ठा इन पर फेंक दिया। बेचारे गट्ठे के बोझ से जमीन पर आ रहे। निकलना मुश्किल हो गया। लगे चीख़ने—न हुई क़रौली, नही तो बता देता। अच्छे-अच्छे डाकू मेरा लोहा मानते है। एक नही, पचासो को मैने चपरगट्टू किया है। यह घसियारिन मुझसे लड़े। अब उठाती है गट्ठा या आकर क़रौली भोंक दूं?

लोगों ने गट्ठा उठाया, तो मियां खोजी बाहर निकले। दाढ़ी-मूंछ पर मिट्टी जम गयी थी, लथ-पथ हो गये थे। उधर आज़ाद खिचड़ी खाकर लेटे ही थे कि क़ै हुई और फिर बुखार हो आया। तड़पने लगे। तब तो खोजी भी घबराये। सोचे, अब बिना हकीम के काम न चलेगा? भठियारिन से पूछकर हकीम के यहां पहुंचे।

हकीम साहब पालकी पर सवार होकर आ पहुंचे।

आजाद—आदाब बजा लाता हूं।

ख़ोजी—बेहद कमजोरी है। बात करने की ताक़त नही।

हकीम—यह आपके कौन है?

ख़ोजी—जी हुजूर, यह ग़ुलाम का लड़का है।

हकीम—आप मुझे मसख़रे मालूम होते है।

ख़ोजी—जी हां, मसखरा न होता, तो लड़के का बाप ही क्यों होता!

आजाद—जनाब, यह बेहया-बेशर्म आदमी है। न इसको जूतियां खाने का डर, न चपतियाये जाने का ख़ौफ़। इसकी बातों का तो खयाल ही न कीजिए।

ख़ोजी—हकीम साहब, मुझे तो कुछ दिनों से बवासीर की शिकायत हो गयी है।

हकीम—अजी, मै खुद इस शिकायत में गिरफ़्तार हूं। मेरे पास इसका आजमाया हुआ नुस्खा मौजूद है।

ख़ोजी—तो आपने अपने बवासीर का इलाज क्यों न किया?

आजाद—खोजी, तुम्हारी शामत आयी है। आज पिटोगे।

ख़ैर, हकीम साहब ने नुस्खा लिखा और रुखसत हुए। अब सुनिये कि नुस्खे में लिखा था—रोग़न-गुल। आपने पढा रोग़नगिल, यानी मिट्टी का तेल। आप नुस्खा बंधवाकर लाये और मिट्टी के तेल मे पकाकर आजाद को पिलाया, तो मिट्टी के तेल की

वदवू आयी। आज़ाद ने कहा—यह वदवू कैसी है ? इस पर मियां ख़ोजी ने उन्हें ख़ूब ही ललकारा। वाह, वड़े नाज़ुक-मिज़ाज हैं, अब कोई इत्र पिलाये आपको, वा केसर का खेत चराये, तव आप ख़ुश हों। आज़ाद चुप हो रहे, लेकिन थोड़ी ही देर वाद इतने ज़ोर का बुख़ार चढ़ा कि ख़ोजी दौड़े हुए हकीम साहव के पास गये और वोले—जनाव, मरीज़ वेचैन है। और क्यों न हो, आपने भी तो मिट्टी का तेल नुस्ख़े में लिख दिया।

हकीम—मिट्टी का तेल कैसा ? मैं कुछ समझा नहीं।

खोजी—जी हां, आप काहे को समझने लगे। आप ही तो रोगन-गिल लिख आये थे।

हकीम—अरे भले आदमी, क्या ग़ज़व किया ! कैसे जांगलुओं से पाला पड़ा है ! हमने लिखा रोग़न-गुल, और आप मिट्टी का तेल दे आये ! वल्लाह, इस वक़्त अगर आप मेरे मकान पर न आये होते, तो खड़े-खड़े निकलवा देता।

खोजी—आपके हवास तो ख़ुद ही ठिकाने नहीं। आपके मकान पर न आया होता, तो आप निकलवा कहां से देते ? जनाव, पहले फ़स्द खुलवाइए।

यह कहकर मियां खोजी लौट आये। आज़ाद ने कहा—भाई, हकीम को तो देख चुके, अव कोई डॉक्टर लाओ।

खोजी—डॉक्टरों की दवा गर्म होती है। वुखार का इलाज इन लोगों को मालूम ही नहीं।

आज़ाद—आप हैं अहमक ! जाकर चुपके से किसी डॉक्टर को वुला लाइये।

खोजी पता पूछते हुए अस्पताल चले और डॉक्टर को वुला लाये ?

डॉक्टर—ज़वान दिखाओ, ज़वान !

आज़ाद—वहुत ख़ूव !

डॉक्टर—आंखें दिखाओ ?

आज़ाद—आंखें दिखाऊं, तो घवराकर भागो।

डॉक्टर—क्या वक-वक करता है, आंख दिखा।

ख़ैर, डॉक्टर साहव ने नुस्ख़ा लिखा और फ़ीस लेकर चम्पत हुए। आज़ाद ने चार घण्टे उनकी दवा की, मगर प्यास और वेचैनी वढ़ती गयी। सेरों वर्फ़ पी गये, मगर तसकीन न हुई। उल्टे और पेचिश ने नाक में दम कर दिया। सुवह होते मियां खोजी एक वैद्यराज को वुला लाये। उन्होंने एक गोली दी और शहद के साथ चटा दी। थोड़ी देर में आज़ाद के हाथ-पांव अकड़ने लगे। खोजी वहुत घवराये और दौड़े वैद्य को वुलाने। राह में एक होम्योपैथिक डॉक्टर मिल गये। यह उन्हें घेर-घार कर लाये। उन्होंने एक छोटी-सी शीशी से दवा की दो वूंदें पानी में डाल दीं। उसके पीते ही आजाद की तवीयत और भी वेचैन हो गयी।

मियां आज़ाद ने दो-तीन दिन में इतने हकीम, डॉक्टर और वैद्य वदले कि अपनी ही मिट्टी पलीद कर ली। इस क़दर ताक़त भी न रही कि खटिया से उठ सकें। ख़ोजी ने अव उन्हें डांटना शुरू किया—और सोइए ओस में ! ज़रा-सी लुंगी वांध ली और तर विछौने पर सो रहे। फिर आप वीमार न हों, तो क्या हम हों। रोज़ कहता था कि ओस में सोना वुरा है; मगर आप सुनते किसकी हैं। आप अपने को तो जाली नूस समझते हैं और वाक़ी सवको गधा। दुनिया में वस, एक आप ही तो वुक़रात हैं।

भठियारी—ऐ, तुम भी अजीव आदमी हो ! भला कोई वीमार को ऐसे डांटता है ? जव अच्छे हो जायें, तो ख़ूव कोस लेना ! और जो ओस की कहते हो, तो मियां, यह तो आदत पर है। हम तो दस वरस से ओस ही में सोते हैं। आज तक ज़ुकाम भी जो हुआ हो, तो क़सम ले लो।

आज़ाद—कोसने दो। अब यहां घड़ी-दो-घड़ी के और मेहमान है। अब मरे। न जाने किस बुरी साइत घर से चले थे। हुस्नआरा के पास खत भेज दो कि हमको आकर देख जायें। आज इस वक़्त सराय में लेटे हुए बातें कर रहे हैं, कल-परसों तक क़ब्र में होंगे—

आग़ोश-लहद में जब कि सोना होगा;
जुज खाक, न तकिया, न बिछौना होगा।
तनहाई मे आह कौन होवेगा अनीस;
हम होवेंगे और क़ब्र का कोना होगा।

ख़ोजी—मैं डरता हूं कि कही तुम्हें सरसाम न हो जाये।

भठियारी—चुप भी रहो, आखिर कुछ अक़्ल भी है?

आजाद—मेरे दिन ही बुरे आये हैं। इनका कोई क़सूर नही।

भठियारी—आपने भी तो हकीम की दवा की। हकीम लटकाये रहते है।

आज़ाद—खुदा हकीमों से बचाये। मूंग की खिचड़ी दे-देकर मरीज को अधमरा कर डालते है। उस पर प्याले भर-भर दवा। अगर दो महीने मे भी खटिया छोड़ी, तो समझिए कि बड़ा खुशनसीब था।

ख़ोजी—जी हां, जब डॉक्टर न थे, तब तो सब मर ही जाते थे।

आज़ाद—खैर, चुप रहो, सिर मत खाओ। अब हमे सोने दो।

मियां आज़ाद की आंख लग गयी। खोजी भी ऊंघने लगे। एक आदमी ने आकर उनको जगाया और कहा—मेरे साथ आइये, आपसे कुछ कहना है। खोजी ने देखा, तो इनकी खासी जोड़ थी। उनसे अंगुल-दो-अंगुल दबते ही थे।

ख़ोजी—तो आप पिले क्यों पड़ते है? दूर ही से कहिए, जो कुछ कहना हो।

मुसाफ़िर—मियां आज़ाद कहां है?

खोजी—आप अपना मतलब कहिए। यहां तो आजाद-वाज़ाद कोई नही है। आप अपना खास मतलब कहिए।

मुसाफ़िर—अजी, आजाद हमारे बहनोई हैं। हमारी बहन ने भेजा है कि देखो कहां है।

ख़ोजी—उनकी शादी तो हुई नहीं, बहनोई क्योंकर बन गये?

मुसाफ़िर—कितने अक़्ल के दुश्मन हो! भला कोई बेवजह किसी को अपना बहनोई बनायेगा?

ख़ोजी—भला आज़ाद की बीवी कहां है? हमको तो दिखा दीजिए।

मुसाफ़िर—अजी, इसी सराय के उस कोने में। चलो, दिखा दें। तुमसे क्या चोरी है।

मियां ख़ोजी कोठरी के अन्दर गये। बालों मे तेल डाला। सफ़ेद कपड़े पहने। लाल फुंदनेदार टोपी दी। मियां आजाद का एक खाकी कोट डाटा और जब खूब बन-ठन चुके, तो आईना लेकर सूरत देखने लगे। बस, ग़जब ही तो हो गया। दाढ़ी के बाल ऊंचे-नीचे पाये, मूंछें गिरी पड़ीं। आपने कैंची लेकर बाल बराबर करना शुरू किया। कैंची तेज थी, एक तरफ़ की मूंछ बिलकुल उड़ गयी। अब क्या करते, अपने पांव में कुल्हाड़ी मारी। मजबूर होकर बाहर आये, तो मुसाफ़िर उन्हें देखकर हंस पड़ा। मगर आदमी था चालाक, जब्त किये रहा और ख़ोजी को साथ ले चला। जाकर क्या देखते हैं कि एक औरत, इत्र में बसी हुई, रंगीन कपड़े पहने चारपाई पर सो रही है। जुल्फ़ें काली नागिन की तरह लहराती हुई गर्दन के इर्द-गिर्द पड़ी हुई हैं। ख़ोजी लगे आंखें

सेकने। इतने में उस औरत ने आंखें खोल दीं और खोजी को देखकर ललकारा—तुम कौन हो ? यहां क्या काम ?

ख़ोजी—आपके भाई पकड़ लाये।

औरत—अच्छा, पंखा झलो, मगर आंखें वन्द करके। खवरदार, मुझे न देखना।

ख़ोजी पंखा झलने लगे और उस औरत ने झूठ-मूठ आंखें वन्द कर ली। ज़रा देर में आंख जो खोली, तो देखा कि खोजी आंखें फाड़-फाड़कर देख रहे हैं। उसका आंखें खोलना था कि मियां खोजी ने आंखें खूव ज़ोर से वन्द कर ली।

औरत—क्यों जी, घूरते क्यों हो ! वताओ, क्या सज़ा दूं ?

खोजी—इत्तिफ़ाक़ से आंख खुल गयी।

औरत—अच्छा वताओ, मियां आज़ाद कहां हैं ?

उधर मियां आज़ाद की आंख जो खुली, तो खोजी नदारद ! जब घण्टे हो गये और खोजी न आये, तो उनका माथा ठनका कि कमज़ोर आदमी हैं ही, किसी से टर्राये होंगे, उसने गर्दन नापी होगी। भठियारे को भेजा कि जाकर ज़रा देखो तो। उसने हंसकर कहा—जरी से तो आदमी हैं, भेड़िया उठा ले गया होगा। दूसरा वोला—आज हवा सन्नाटे की चलती है, कहीं उड़ गये होंगे। आखिर भठियारिन ने कहा कि उन्हें तो एक आदमी वुलाकर ले गया है। खोजी खूव वन-ठनकर गये हैं।

आज़ाद के पेट में चूहे दौड़ने लगे कि खोजी को कौन पकड़ ले गया। गिड़गिड़ा-कर भठियारिन से कहा—चाहे जो हो, खोजी को लाओ। किसी से पूछो-पाछो। आख़िर गये कहां ?

इधर मियां ख़ोजी उस औरत के साथ वैठे दस्तरख़्वान पर हत्थे लगा रहे थे खाते जाते थे और तारीफ़ें करते जाते थे। एक लुक़्मा खाया और कई मिनट तक तारीफ़ की। यह तो तारीफ़ ही करते रहे, उधर मियां मुसाफ़िर ने दस्तरख्वान साफ़ कर दिया। ख़ोजी दिल में पछताये कि हमसे क्या हिमाक़त हुई। पहले खूव पेट-भर खा लेते, फिर चाहे दिन भर वैठे तारीफ़ करते। उस औरत ने पूछा कि कुछ और लाऊं ? शरमाइएगा नहीं। ख़ोजी कुछ मांगने वाले ही थे कि मियां मुसाफ़िर ने कहा—नहीं जी, अब क्या हैजा कराओगी ? यह कहकर उसने दस्तरख़्वान हटा दिया और खोजी मुंह ताकते रह गये। खाना खाने के वाद पान की वारी आयी। दो ही गिलौरियां थी। मुसाफ़िर ने एक तो उस औरत को दी और दूसरी अपने मुंह में रख ली। खोजी फिर मुंह देखकर रह गये। इसके वाद मुसाफ़िर ने उनसे कहा—मियां होत, अरे भाई, तुमसे कहते हैं।

ख़ोजी—किससे कहते हो जी ? क्या कहते हो ?

मुसाफ़िर—यही कहते है कि ज़रा पलंग से उतर कर बैठो। क्या मज़े से वरावर जाकर डट गये ! उतरा कि मैं पहुंचूं ? और देखिएगा, आप पलंग पर चढ़कर वैठे हैं। अपनी हैसियत को नहीं देखता।

ख़ोजी—चुप गीदी, न हुई क़रौली, नही तो भोंक देता।

औरत—क़रौली पीछे ढूढ़िएगा, पहले जरा यहां से खिसक कर नीचे वैठिए।

ख़ोजी—वहुत अच्छा, अब वैठूं तो तोप पर उड़ा देना।

मुसाफ़िर—ले चलो, उठो, यह लो, झाड़ू। अभी झाड़ू दे डालो।

खोजी—झाड़ू तुम दो। हमको भी कोई भड़भूजा समझा है ? हम खानदानी आदमी हैं। रईसों से इस तरह वातें कहता है गीदी !

मुसाफ़िर—हमें तो नानवाई-सा मालूम होता है। चलिए उठिए, झाड़ू दीजिए। वड़े रईसजादे वनकर वैठे हैं। रईसों की ऐसी ही सूरत हुआ करती है ?

ख़ोजी ने दिल में सोचा कि जिससे मिलता हूं, वह यही कहता है कि भलेमानस

की ऐसी सूरत नहीं होती। और, इस वक़्त तो एक तरफ़ की मूंछ ही उड़ गयी है, भला-मानस कौन कहेगा। कुछ नहीं, अब हम पहले मुंह बनवायेंगे ! बोले– अच्छा, रुखसत।

मुसाफ़िर—वाह, क्या दिल्लगी है। बैठिए; चिलम भरके जाइएगा।

मियां खोजी ऐसे झल्लाये कि चिमट ही तो गये। दोनों में चपतबाज़ी होने लगी। दोनों का क़द कोई छह-छह बालिश्त का, दोनों मरियल, दोनों चंडूबाज। यह आहिस्ता से उनको चपत लगाते है, वह धीरे से इन पर धप जमाते हैं। उन्होंने इनके कान पकड़े इन्होंने उनकी नाक पकड़ी। उन्होंने इनको काट खाया, इन्होंने उनको नोच लिया। और मजा यह कि दोनों रो रहे हैं। मियां खोजी क़रौली की धुन बांधे हुए है। आख़िर दोनों हांप गये। न यह जीते, न वह। ख़ोजी लड़खड़ा कर गिरे, तो चारों खाने चित। उस हसीना ने दो-तीन धौल ऊपर से जमा दिये। इनका तो यह हाल हुआ, उधर मियां मुसाफ़िर ने चक्कर खाया और धम से ज़मीन पर। आख़िर हसीना ने दोनों को उठाया और कहा—बस, लड़ाई हो चुकी। अब क्या कट ही मरोगे ? चलो, बैठो।

ख़ोजी—न हुई क़रौली, नहीं तो भोंक देता। हत् तेरे की !

मुसाफ़िर—वह तो मैं हांप गया, नहीं तो दिखा देता आपको मज़ा। कुछ ऐसा-वैसा समझ लिया है। सैकड़ों पेच याद हैं।

हसीना—ख़बरदार, जो अब किसी की ज़बान खुली ! चलो, अब चलें मियां आज़ाद के पास। उनकी भी तो ख़बर लें, जिस काम के लिए यहां तक आये हैं।

शाम हो गयी थी। हसीना दोनों आदमियों के साथ आज़ाद की कोठरी में पहुंची, तो क्या देखती है कि आज़ाद सोये हैं और भठियारिन बैठी पंखा झल रही है। उसने चट आज़ाद का कंधा पकड़कर हिलाया। आज़ाद की आंखें खुल गयीं। आंख का खुलना था कि देखा, अलारक्खी सिरहाने खड़ी हैं और मियां चंडूबाज सामने खड़े पांव दबा रहे हैं। आजाद की जान-सी निकल गयी। कलेजा धड़-धड़ करने लगा, होश पैंतरे हो गये। या ख़ुदा, यहां यह कैसे पहुंची ? किसने पता बताया ? ज़रा बीमारी हलकी हुई, तो इस बला ने आ दबोचा—

एक आफ़त से तो मर-मरके हुआ था जीना;
पड़ गयी और यह कैसी, मेरे अल्लाह, नयी।

खोजी—हजरत, उठिए, देखिए, सिरहाने कौन खड़ा है। वल्लाह, फड़क जाओ तो सही।

आजाद—(अलारक्खी से) बैठिए-बैठिए, ख़ूब मिली ?

ख़ोजी—अजी, अभी हमसे और आपके साले से बड़ी ठांय-ठांय हो गयी। वह तो कहिए, क़रौली न थी, नही सालारजंग के पलस्तर बिगाड़ दिये होते।

आजाद ने खोजी, चंडूबाज़ और भठियारी को कमरे के बाहर जाने को कहा। जब दोनों अकेले रह गये, तो आजाद ने अलारक्खी से कहा—कहिए, आप कैसे तशरीफ़ लायी हैं ? हम तो वह आजाद ही नही रहे। वह दिल ही नहीं, वह उमंग ही नहीं। अब तो रूम ही जाने की धुन है।

अलारक्खी—प्यारे आज़ाद, तुम तो चले रूम को, हमें किस के सुपुर्द किये जाते हो ? न हो, जमीन ही को सौंप दो। अब हम किसके होकर रहें ?

आजाद—अब हमारी इज़्ज़त और आबरू आप ही के हाथ है। अगर रूम से जीते वापस आये, तो तुमको न भूलेंगे। अल्लाह पर भरोसा रखो, वही बेड़ा पार करेगा। मेरी तबीयत दो-तीन दिन से अच्छी नहीं है। कल तो नहीं, परसों ज़रूर रवाना हूंगा।

खोजी—(भीतर आकर) बी अलारक्खी अभी पूछ रही थीं कि मुझको किसके

सुपुर्द किये जाते हो; आपने इसका कुछ जवाब न दिया। जो कोई और न मिले, तो हमीं यह मुसीबत सहें। हमारे ही सुपुर्द कर दीजिए। आप जाइए, हम और वह यहां रहेंगे।

आजाद—तुम यहां क्यों चले आये ? निकलो यहां से।

अलारक्खी बड़ी देर तक आजाद को समझाती रही—हमारा कुछ खयाल न करो, हमारा अल्लाह मालिक है। तुम हुस्नआरा से कौल हारे हो, तो रूम जाओ और जरूर जाओ, खुदा ने चाहा तो सुर्खरू होकर आओ। मैं भी जाकर हुस्नआरा ही के पास रहूंगी। उन्हें तसल्ली देती रहूंगी। जरा जो किसी पर खुलने पावे कि मुझसे-तुमसे क्या ताल्लुक है। इतना खयाल रहे कि जहां-जहां डाक जाती हो, वहां-वहां से खत बराबर भेजते जाना। ऐसा न हो कि भूल जाओ। नहीं तो वह कुढ़-कुढ़ कर मर ही जायंगी। और, मेरा तो जो हाल है, उसको खुदा ही जानता है। अपना दुःख किससे कहूं ?

आज़ाद—अलारक्खी, खुदा की क़सम, हम तुमको अपना इतना सच्चा दोस्त नहीं जानते थे। तुमको मेरा इतना खयाल और मेरी इतनी मुहव्वत है, यह तो आज मालूम हुआ।

इस तरह दो-तीन घंटे तक दोनों ने बातें की। जब अलारक्खी रवाना हुई, तो दोनों गले मिलकर खूब रोये।

छब्बीस

आज़ाद ने सोचा कि रेल पर चलने से हिंदोस्तान की हालत देखने में न आयेगी। इसलिए वह लखनऊ के स्टेशन पर सवार न होकर घोड़े पर चले थे। एक शहर से दूसरे शहर जाना, जंगल और देहात की सैर करना, नये-नये आदमियों से मिलना उन्हें पसन्द था। रेल पर ये मौक़े कहां मिलते। अलारक्खी के चले जाने के एक दिन बाद वह भी चले। घूमते-घामते एक क़स्बे में जा पहुंचे। बीमारी से तो उठे ही थे, थककर एक मकान के सामने बिस्तर बिछाया और डट गये। मियां खोजी ने आग सुलगायी और चिलम भरने लगे। इतने में उस मकान के अन्दर से एक बूढ़े निकले और पूछा—आप कहां जा रहे हैं ?

आज़ाद—इरादा तो बड़ी दूर का करके चला हूं, रूम का सफ़र है, देखूं पहुंचता हूं या नहीं।

बूढ़े मियां—खुदा आपको सुर्खरू करे। हिम्मत करनेवाले की मदद खुदा करता है। आइए, आराम से घर में बैठिए। यह भी आप ही का घर है !

आज़ाद उस मकान में गये, तो क्या देखते हैं कि एक जवान औरत चिक उठाये मुसकरा रही है। आज़ाद ज्यों ही फ़र्श पर बैठे वह हसीना बाहर निकल आयी और बोली—मेरे प्यारे आज़ाद, आज बरसों के बाद तुम्हें देखा। सच कहना, कितनी जल्दी पहचान गयी। आज मुंह-मांगी मुराद पायी।

मियां आज़ाद चकराये कि यह हसीना कौन है, जो इतनी मुहव्वत से पेश आती है। अब साफ़-साफ़ कैसे कहें कि हमने तुम्हें नहीं पहचाना। उस हसीना ने यह बात ताड़ ली और मुसकरा कर कहा—

हम ऐसे हो गये अल्लाह-अकबर, ऐ तेरी कुदरत।
हमारा नाम सुनकर हाथ वह कानों पे धरते हैं।

आप और इतनी जल्द हमें भूल जायं ! हम वह हैं जो लड़कपन में तुम्हारे साथ खेला किये हैं। तुम्हारा मकान हमारे मकान के पास था। मैं तुम्हारे बाग में रोज़ फूल

चुनने जाया करती थी। अब समझे कि अब भी नहीं समझे ?

आज़ाद—आहाहा, अब समझा, ओफ् ओह ! बरसों बाद तुम्हें देखा। मैं भी सोचता था कि या ख़ुदा यह कौन है कि ऐसी बेझिझक होकर मिली। मगर पहचानते, तो क्यों कर पहचानते ? तब मे और अब मे जमीन-आसमान का फ़र्क़ है। सच कहता हूं जीनत, तुम कुछ और ही हो गयी हो।

जीनत—आज किसी भले का मुंह देखकर उठी थी। जब से तुम गये, जिन्दगी का मज़ा जाता रहा—

यह हसरत रह गयी किस-किस मजे से जिंदगी कटती;
अगर होता चमन अपना, गुल अपना, बाग़वां अपना।

आजाद—यहां भी बड़ी-बड़ी मुसीबतें झेली, लेकिन तुम्हें देखते ही सारी कुलफ़तें दूर हो गयी—

तब लुत्फ़े-जिंदगी है, जब अब्र हो, चमन हो;
पेशे-नजर हो साक़ी, पहलू में गुलबदन हो।

यहां अख्तर नहीं नज़र आती।

जीनत—है तो, मगर उसकी शादी हो गयी। तुम्हें देखने के लिए बहुत तड़पती थी। उस बेचारी को चचाजान ने जान-बूझ कर खारी कुएं में ढकेल दिया। एक लुच्चे के पाले पड़ी है, दिन-रात रोया करती है। अब्बाजान जब से सिधारे, इनके पाले पड़े हैं। जब देखो, सोटा लिये कल्ले पर खड़े रहते हैं। ऐसे शोहदे के साथ ब्याह दिया, जिसका ठौर न ठिकाना। मैं यह नहीं कहती कि कोई रुपयेवाला या बहादुरशाह के ख़ानदान का होता। ग़रीब आदमी की लड़की कुछ ग़रीबों ही के यहां ख़ुश रहती है। सबसे बड़ी बात यह है कि समझदार हो, चाल-चलन अच्छा हो; यह नही कि पढ़े न लिखे, नाम मुहम्मद फ़ाज़िल; अलिफ़ के नाम वे नही जानते, मगर दावा यह है कि हम भी हैं पांचवें सवारों में। हमारे नजदीक जिसकी आदत बुरी हो उससे बढ़कर पाजी कोई नही। मगर अब तो जो होना था, सो हुआ; तुम ख़ूब जानते हो आज़ाद कि साली को अपने बहनोई का कितना प्यार होता है; मगर क़सम लो, जो उसका नाम लेने को भी जी चाहता हो। बीबी का जेवर सब बेचकर चट कर गया—कुछ दांव पर रख आया, कुछ के औने-पौने किये। मकान-वकान सब इसी जुए के फेर में घूम गया। अब टके-टके को मुहताज है। डर मालूम होता है कि किसी दिन यहां आकर कपड़े-लत्ते न उठा ले जाय। चचा को उसका सब हाल मालूम था, मगर लड़की को भाड़ में झोंक ही दिया। आती होगी, देखना, कैसी घुल के कांटा हो गयी है। हड्डी-हड्डी गिन लो। ऐ अख्तरी, जरी यहां आओ। मियां आज़ाद आये है।

जरा देर में अख्तर आयी। आजाद ने उसको और उसने आज़ाद को देखा, तो दोनों बे अख्तियार खिल-खिला कर हंस पड़े। मगर जरा ही देर में अख्तर की आंखें भर आयीं और गोल-गोल आंसू टप-टप गिरने लगे। आजाद ने कहा—बहन, हम तुम्हारा सब हाल सुन चुके; पर क्या करें, कुछ बस नही। अल्लाह पर भरोसा रखो, वही सबका मालिक है। किसी हालत में आदमी को घबराना न चाहिए। सब्र करनेवालों का दर्जा बड़ा होता है।

इस पर अख्तर ने और भी आठ-आठ आंसू रोना शुरू किया।

ज़ीनत बोली—बहन, आज़ाद बहुत दिनो के बाद आये है। यह रोने का मौक़ा नही।

आज़ाद—अख्तर, वह दिन याद हैं, जब तुमको हम चिढ़ाया करते थे और तुम अंगूर की टट्टी में रूठ कर छिप रहती थीं; हम ढूंढ़ कर तुम्हें मना लाते थे और फिर चिढ़ाते थे ? हमको जो तुम्हारी दोनों की मुहब्बत है, इसका हाल हमारा ख़ुदा ही जानता है। काश, ख़ुदा यह दिन न दिखाता कि मैं तुमको इस मुसीबत मे देखता। तुम्हारी वह सूरत ही बदल गयी।

अख़्तर—भाई, इस वक़्त तुमको क्या देखा, जैसे जान में जान आ गयी। अब पहले यह बताओ कि तुम यहां से जाओगे तो नहीं ? इधर तुम गये, और उधर हमारा जनाज़ा निकला। बरसों बाद तुम्हें देखा है, अब न छोड़ूंगी।

इसी तरह बातें करते-करते रात हो गयी। आज़ाद ने दोनों बहनों के साथ खाना खाया। तब ज़ीनत बोली—आज पुरानी सोहबतों की बहार आंखों में फिर गयी। आइए, खाना खाकर चमन में चलें। बाग़ तो वीरान है; मगर चलिए, ज़रा दिल बहलायें। क़सम लीजिए, जो महीनों चमन का नाम भी लेती हों—

नज़र आता है गुल आजर्दा, दुश्मन बाग़बां मुझको;
बनाना था न ऐसे बोस्तां में आशियां मुझको।

खाना खाकर तीनों बाग़ की सैर करने चले।

आज़ाद—ओहोहो, यह पुराना दरख़्त है। इसी के साये में हम रात-रात बैठे रहते थे। आहाहा, यह वह रविश है, जिस पर हमारा पांव फिसला था और हम गिरे, तो अख्तर ख़ूब खिलखिलाकर हंसी। तुम्हारे यहां एक बूढ़ी औरत थी, जैनब की मां।

अख़्तर—थी क्यों, क्या अब नहीं है ? ऐ वह हमसे तुमसे हट्टी-कट्टी हैं; खासी कठौता-सी बनी हुई है।

आज़ाद—क्या वह बूढ़ी अभी तक जिन्दा है ? क्या आक़बत के बोरिये बटोरेगी ?

चलते-चलते बाग़ में एक जगह दीवार पर लिखा देखा कि मियां आज़ाद ने आज इस बाग़ की सैर की।

इतने में ज़ीनत के बूढ़े चचा आ पहुंचे और बोले—भई, हमने आज जो तुम्हें देखा, तो ख़याल न आया कि कहां देखा है। ख़ूब आये। यह तो बतलाओ, इतने दिन रहे कहां ? ज़ीनत तुम्हें रोज याद किया करती थी, उठते-बैठते तुम्हारा ही नाम जबान पर रहता था ? अब आप यहीं रहिए। ज़ीनत को जो तुमसे मुहब्बत है, वह उसका और तुम्हारा, दोनों का दिल जानता होगा। मेरी दिली आरज़ू है कि तुम दोनों का निकाह हो जाय। इसी बाग़ में रहिए और अपना घर संभालिए। मैं तो अब गोशे बैठकर ख़ुदा की बंदगी करना चाहता हूं।

मियां आज़ाद ये बातें सुनकर पानी-पानी हो गये ! 'हां' कहें, तो नहीं बनती, 'नही' कहें, तो शामत आये। सन्नाटे में थे कि कहें क्या। आखिर बहुत देर के बाद बोले—आपने जो कुछ फ़रमाया, वह आपकी मेहरबानी है। मैं तो अपने को इस लायक़ नहीं समझता। जिसका ठौर न ठिकाना, वह ज़ीनत के क़ाबिल कब हो सकता है ?

मियां आज़ाद तो यहां चैन कर रहे थे, उधर मियां खोजी का हाल सुनिए। मियां आज़ाद की राह देखते-देखते पीनक जो आ गयी, तो टट्टू एक किसान के खेत में जा पहुंचा। किसान ने ललकारा—अरे, किसका टट्टू है ? आप ज़रा भी न बोले। उसने ख़ूब गालियां दीं आप बैठे सुना किये। जब उसने टट्टू को पकड़ा और कांजीहाउस ले चला, तब आप उससे लिपट गये। उसने झल्ला कर एक धक्का जो दिया, तो आपने बीस लुढ़कनियां खायीं। वह टट्टू को ले चला। जब खोजी ने देखा कि वह हारी-जीती एक नहीं मानता, तो आप धम से टट्टू की पीठ पर हो रहे अब आगे-आगे किसान, पीछे-पीछे

टट्टू और टट्टू की पीठ पर ख़ोजी। राह चलते लोग देखते थे। ख़ोजी बार-बार क़रौली की हांक लगाते थे। इस तरह कांजीहाउस पहुंचे। अब कांजीहाउस का चपरासी और मुंशी बार-बार कहते है कि हजरत, टट्टू पर से उतरिए, इसे हम भीतर बंद करें; मगर आप उतरने का नाम नही लेते; ऊपर बैठे-बैठे करौली और तमंचे का रोना रो रहे है। आखिर मजबूर होकर मुशी ने ख़ोजी को छोड़ दिया। आप टट्टू लिये हुए मूंछों पर ताव देते घर की तरफ़ चले, गोया कोई क़िला जीत कर आये है।

उधर आजाद से अख्तर ने कहा—क्यों भाई, वे पहेलियां भी याद है, जो तुम पहले बुझवाया करते थे? बहुत दिन हुए, कोई चीसतां सुनने में नही आयी।

आजाद—अच्छा, बूझिए—
आं चीस्त दहन हजार दारद;
(वह क्या है जिसके सौ मुंह होते है)
दर हर दहने दो मार दारद;
(हर मुंह में दो सांप होते है)
शाहेस्त नशिस्ता वर सरे-तख्त।
(एक बादशाह तख्त पर बैठा हुआ है)
आं रा हमा दर शुमार दारद।
(उसी को सब गिनते है)

अख्तर—हज़ार मुंह। यह तो बड़ी टेढ़ी खीर है?

जीनत—गिनती कैसी?

आज़ाद—कुछ न बतायेंगे। जो ख़ुदा की बंदगी करते है, वह आप ही समझ जायंगे।

अख्तर—अहाहा, मैं समझ गयी। अल्लाह की क़सम, समझ गयी। तसबीह है; क्यों कैसी बूझी?

आज़ाद—हां। अच्छा, यह तो कोई बूझे—

राजा के घर आयी रानी,
औघट-घाट वह पीवे पानी।
मारे लाज के डूबी जाय,
नाहक़ चोट परोसी खाय।

जीनत—भई, हमारी समझ में तो नहीं आता। बता दो, बस, बूझ चुकी।

अख्तर—वाह, देखो, बूझते हैं। घड़ियाल है।

आजाद—वल्लाह, खूब बूझी। अब की बूझिए—

एक नार जब सभा में आवे,
सारी सभा चकित रह जावे।
चातुर चातुर वाके यार,
मूरख देखे मुंह पसार।

जीनत—जो इसको कोई बूझ दे, तो मिठाई खिलाऊं।

आज़ाद—यह इस वक़्त यहां है। बस, इतना इशारा बहुत है।

अख्तर—हम हार गये, आप बता दें।

आजाद—बता ही दूं 'यह पहेली है?

जीनत—अरे, कितनी मोटी बात पूछी और हम न बता सके!

अख्तर—अच्छा, बस एक और कह दीजिए। लेकिन अबकी कोई कहानी कहिए। अच्छी कहानी हो, लड़कों के बहलाने की न हो।

आज़ाद ने अपनी और हुस्नआरा की मुहब्बत की दास्तान बयान करनी शुरू की। बजरे पर सैर करना, सिपहआरा का दरिया मे डूबना और आज़ाद का उसको निकालना, हुस्नआरा का आज़ाद से रूम जाने के लिए कहना और आज़ाद का कमर बांध कर तैयार हो जाना, ये सारी बातें बयान कीं।

अख्तर—बेशक सच्ची मुहब्बत थी।

आज़ाद—मगर मियां आशिक़ वहां से चले, तो राह में नीयत डावांडोल हो गयी। किसी और के साथ शादी कर ली।

अख्तर—तोबा! तोबा! बड़ा बुरा किया! बस, जवानी दाखिला था!

ज़ीनत—सच्ची मुहब्बत होती, तो हूर पर भी आंख न उठाता। रूम जाता और फिर जाता। मगर बस कोई मक्कार आदमी था।

आज़ाद—वह आशिक़ मैं हूं और माशूक़ हुस्नआरा है। मैंने अपनी ही दास्तान सुनायी और अपनी ही हालत बतायी। अब जो हुक्म दो, वह मंजूर, जो सलाह बताओ वह कबूल। रूम जाने का वादा कर आया हूं, मगर यहां तुमको देखा, तो अब क़दम नहीं उठता। क़सम ले लो, जो तुम्हारी मर्जी के खिलाफ़ करूं।

इतना सुनना था कि अख्तर की आंखें डबडबा आयीं और ज़ीनत का मुंह उदास हो गया। सिर झुका कर रोने लगी।

अख्तर—तो फिर आये यहां क्या करने?

ज़ीनत—तुम तो हमारे दुश्मन निकले। सारी उमंगों पर पानी फेर दिया—

शिकवा नहीं है आप जो अब पूछते नहीं;
वह शक्ल मिट गयी, वह शबाहत नहीं रही।

अख्तर—बाजी, अब इनको यही सलाह दो कि रूम जायें। मगर जब वापस आयें, तो हमसे भी मिलें, भूल न जायें।

इतने में बाहर से आवाज़ आयी कि न हुई क़रौली, वर्ना खून की नदी बहती होती, कई आदमियों का खून हो गया होता। वह तो कहिए, खैर गुज़री। आज़ाद ने पुकारा—क्यों भाई खोजी, आ गये?

खोजी—वाह-वाह! क्या साथ दिया! हमको छोड़कर भागे, तो खबर भी न ली। यहां किसान से डंडा चल गया, कांजीहाउस में चौकीदार से लाठी-पोंगा हो गया; मगर आपको क्या।

आज़ाद—अजी चलो, किसी तरह आ तो गये।

खोजी—अजी, यही बूढ़े मियां राह में मिले, वह यहां तक ले आये। नहीं तो सचमुच घास खाने की नौबत आती।

मियां आज़ाद दूसरे दिन दोनों बहनों से रुखसत हुए। रोते-रोते ज़ीनत की हिचकियां बंध गयीं। आज़ाद भी नर्म-दिल आदमी थे। फूट-फूटकर रोने लगे। कहा—मैं अपनी तसवीर दिये जाता हूं, इसे अपने पास रखना। मैं खत बराबर भेजता रहूंगा। वापस आऊंगा, तो पहले तुमसे मिलूंगा, फिर किसी से। यह कहकर दोनों बहनों को पांच-पांच अशर्फ़ियां दीं। फिर ज़ीनत के चचा के पास जाकर बोले—आप बुजुर्ग हैं, लेकिन इतना हम ज़रूर कहेंगे कि आपने अख्तरी को जीते जी मार डाला। दीन का रखा न दुनिया का। आदमी अपनी लड़की का ब्याह करता है, तो देख लेता है कि दामाद कैसा है; यह नहीं कि शोहदे और बदमाश के साथ ब्याह कर दिया। अब आपको लाज़िम है कि

उसे किसी दिन बुलाइए, और समझाइए, शायद सीधे रास्ते पर आ जाय ।

बूढ़े मियां —क्या कहें भाई, हमारी क़िस्मत ही फूट गयी। क्या हमको अख़्तरी का प्यार नहीं है ? मगर करें क्या ? उस बदनसीब को समझाये कौन ? किसी की सुने भी।

आज़ाद—ख़ैर, अब ज़ीनत की शादी ज़रा समझ-बूझकर कीजिएगा। अगर ज़ीनत किसी अच्छे घर ब्याही जाय और उसी का शौहर चलन का अच्छा हो, तो अख़्तर के भी आंसू पुंछें कि मेरी बहन तो ख़ुश है, यही सही। चार दिन जो कही बहन के यहां जाकर रहेगी, तो जी खुश होगा, बड़ी ढाढ़स होगी। अब बंदा तो रुख़सत होता है, मगर आपको अपने ईमान और मेरी जान की क़सम है, जीनत की शादी देख-भालकर कीजिएगा।

यह कहकर आजाद घर से बाहर निकले, तो दोनों बहनों ने चिल्ला-चिल्लाकर रोना शुरू किया।

आज़ाद—प्यारी अख़्तर और प्यारी ज़ीनत, ख़ुदा गवाह है, इस वक़्त अगर मुझे मौत आ जाय, तो समझूं, जी उठा। मुझे ख़ूब मालूम है, मेरी जुदाई तुम्हें अखरेगी; लेकिन क्या करूं, किसी ऐसी-वैसी जगह जाना होता, तो ख़ैर, कोई मुज़ायक़ा न था, मगर एक ऐसी मुहिम पर जाना है, जिससे इनकार करना किसी मुसलमान को गंवारा नहीं हो सकता। अब मुझे हंसी-खुशी रुख़सत करो।

जीनत ने कलेजा थामकर कहा—जाइए। इसके आगे मुंह से एक बात भी न निकली।

अख़्तर—जिस तरह पीठ दिखायी, उसी तरह मुंह भी दिखाओ।

सत्ताईस

मियां आजाद और खोजी चलते-चलते एक नये क़स्बे मे जा पहुंचे और उसकी सैर करने लगे। रास्ते में एक अनोखी सज-धज के जवान दिखायी पड़े। सिर से पैर तक पीले कपड़े पहने हुए, ढीले पांयचे का पाजामा, केसरिये केचुल-लोट का अंगरखा, केसरिया रंगी दुपल्ली टोपी, कंधों पर केसरिया रूमाल, जिसमें लचका टका हुआ। सिन कोई चालीस साल का।

आज़ाद—क्यों भई खोजी, भला भांपो तो, यह किस देश के है।

खोजी—शायद काबुल के हों।

आज़ाद—काबुलियों का यह पहनावा कहां होता है।

खोजी—वाह, ख़ूब समझे ! क्या काबुल में गधे नहीं होते ?

आज़ाद—जरा हज़रत की चाल तो देखिएगा; कैसे कुंदे झाड़ते हुए चले जाते हैं। कभी जरी के जूते पर निगाह है, कभी रूमाल फड़काते है, कभी अंगरखा चमकाते है, कभी लचके की झलक दिखाते है। इस दाढ़ी-मूंछ का भी ख़याल नही। यह दाढ़ी और यह लचके गोट सुभान-अल्लाह !

खोजी—आपको ज़रा छेड़िए तो; दिल्लगी ही सही।

आज़ाद—जनाब, आदाब अर्ज हैं। वल्लाह, आपके लिबास पर तो वह जोबन है कि आंख नहीं ठहरती, निगाह के पांव फिसले जाते है।

ज़र्दपोश—(शरमा कर) जी, इसका एक ख़ास सबब है।

आज़ाद—वह क्या ? क्या किसी सरकार से वर्दी मिली है ? या सच कहना उस्ताद, किसी नाई से तो नहीं छीन लाये ?

ज़र्दपोश—(अपने नौकर से) रमज़ानी, ज़रा बता तो देना, हमें अपने मुंह से कहते हुए शरम आती है।

रमज़ानी—हुज़ूर, मियां का निकाह होनेवाला है। इसी पहनावे की रस्म है हुज़ूर!

आज़ाद—रस्म की एक ही कही। यह अच्छी रस्म है—दाढ़ी-मूंछवाले आदमी, और लचका, वन्नत पट्ठा लगाकर कपड़े पहनें! अरे भई, ये कपड़े दुलहिन के लिए हैं, या आप जैसे मुछक्कड़-फक्कड़वेग के लिए? खुदा के लिए इन कपड़ों को उतारो, मरदों की पोशाक पहनो।

इधर आज़ाद तो यह फटकार सुनाकर अलग हुए, उधर ख़िदमतगार ने मियां ज़र्दपोश को समझाना शुरू किया—मियां, सच तो कहते थे! जिस गली-कूंचे में आप निकल जाते हैं, लोग तालियां वजाते और हंसी उड़ाते हैं।

ज़र्दपोश—हंसने दो जी; हंसते ही घर वसते हैं।

ख़िदमतगार—मियां, मैं ज़ाहिल आदमी हूं, मुल वुरी वात वुरी ही है। हम ग़रीब आदमी हैं, फिर भी ऐसे कपड़े नहीं पहनते।

मियां आज़ाद उधर आगे वढ़े तो क्या देखते हैं, एक टुकड़ी सामने से आ रही है। उस पर तीन नौजवान रईस वड़े ठाट से वैठे हैं। तीनों ऐनकवाज़ हैं। आज़ाद वोले—यह नया फ़ैशन देखने में आया। जिसे देखो, ऐनकवाज़। अच्छी-ख़ासी आंखें रखते हुए भी अंधे वनने का शौक़!

मियां आज़ाद को यह क़स्वा ऐसा पसंद आया कि उन्होंने दो-चार दिन यहीं रहने की ठानी। एक दिन घूमते-घामते एक नवाव के दरवार में जा पहुंचे। सजी-सजायी कोठी, वड़े-वड़े कमरे। एक कमरे में गलीचे विछे हुए, दूसरे में चौकियां, मेज़, मसहरियां क़रीने से रखी हुई। खोजी यह ठाट-वाट देखकर अपने नवाव को भूल गये। जाकर दोनों आदमी दरवार में वैठे। खोजी तो नवावों की सोहवत उठाये थे, जाते ही जाते कोठी की इतनी तारीफ़की कि पुल वांध दिये—हुज़ूर, खुदा जानता है, क्या सजी-सजायी कोठी है। क़सम है हुसैन की, जो आज तक ऐसी इमारत नज़र से गुज़री हो। हमने तो अच्छे-अच्छे रईसों की मुसाहवत की है, मगर कहीं यह ठाट नहीं देखा। हुज़ूर वादशाहों की तरह हैं। हुज़ूर की वदौलत हज़ारों ग़रीवों शरीफ़ों का भला होता है। खुदा ऐसे रईस को सलामत रखे।

मुसाहव—अजी, अभी आपने देखा क्या है? मुसाहव लोग तो अव आ चले हैं। शाम तक सव आ जाएंगे। एक मेले का मेला रोज़ लगता है।

नवाव—क्यों साहव, यह फ्रीमेशन भी जादूगर है शायद? आखिर जादू नहीं, तो है क्या?

मुसाहव—हुज़ूर वजा फ़रमाते हैं। कुछ दिन हुए, मेरी एक फ्रीमेशन से मुलाक़ात हुई। मैं, आप जानिए, एक ही काइयां। उनसे खूव दोस्ती पैदा की। एक दिन मैंने उनसे पूछा, तो वोले—यह वह मज़हव है, जिससे वढ़कर दुनिया में कोई मज़हव ही नहीं। क्यों नहीं हो जाते फ्रीमेशन? मेरे दिल में भी आ गयी। एक दिन उनके साथ फ्रीमेशन हुआ। वहां हुज़ूर, करोड़ों लाशें थीं। सवकी सव मुझसे गले मिलीं और हंसीं। मैं वहुत ही डरा। मगर उन लोगों ने दिलासा दिया—इनसे डरते क्यों हो? हां, खवरदार, किसी से कहना नहीं; नहीं तो ये लाशें कच्चा ही खा जायंगी। इतने में खुदावंद, आग वरसने लगी और मैं जल-भुनकर ख़ाक हो गया। इसके वाद एक आदमी ने कुछ पढ़कर फूंका, तो हट्टा-कट्टा मौजूद! हुज़ूर, सच तो यों है कि दूसरा होता, तो रो देता, लेकिन मैं ज़रा भी न घवराया। थोड़ी देर के वाद एक देव जैसे आदमी ने मुझे एक हौज़ में ढकेल

दिया। मैं दो दिन और दो रात वहीं पड़ा रहा। जब निकाला गया, तो फिर टैया-सा मौजूद। सबकी सलाह हुई कि इसको यहां से निकाल दो। हुजूर, खुदा-खुदा करके बचे, नहीं तो जान ही पर बन आयी थी?

गप्पी—हुजूर, सुना है; कामरूप में औरतें मर्दों पर माश पढ़कर फूंकती और बकरा, बैल गधा, वग़ैरह बना डालती हैं। दिन भर बकरे बने, में-में किया किये, सानी खाया किये, रात को फिर मर्द के मर्द। दुनिया में एक से एक जादूगर पड़े हैं।

खुशामदी—हुजूर, यह मूठ क्या चीज़ है? कल रात को हुजूर तो यहां आराम फ़रमाते थे, मैं दो बजे के वक़्त क़ुरान पढ़कर टहलने लगा, तो हुज़ूर के सिरहाने के ऊपर रोशनी-सी हुई। मेरे तो होश उड़ गये।

मुसाहब—होश उड़ने की बात ही है।

खुशामदी—हुजूर, मैं रात भर जागता रहा और हुजूर के पलंग के इर्द-गिर्द पहरा दिया किया।

नवाब—तुम्हें क़ुरान की क़सम।

खुशामदी—हुजूर की बदौलत मेरे बाल-बच्चे पलते हैं; भला आपसे और झूठ बोलूं? नमक की क़सम, बदन का रोआं-रोआं खड़ा हो गया। अगर मेरा बाप भी होता; तो मै पहरा न देता; मगर हुजूर का नमक जोश करता था।

जमामार—हुजूर, यहां एक जोड़ी बिकाऊ है। हुजूर ख़रीदें, तो दिखाऊं। क्या जोड़ी है कि ओहोहोहो! डेढ़ हज़ार से कम में न देगा।

मुसाहब—ऐं, तो आपने ख़रीद क्यों न ली! इतनी तारीफ़ करते हो और फिर हाथ से जाने दी! हुजूर, इन्हें हुक्म हो कि बस, ख़रीद ही लायें! बादशाही मे इनके यहां भी कई घोड़े थे; सवार भी खूब होते हैं; और चाबुक-सवारी मे तो अपना सानी नही रखते।

नवाब—मुनीम से कहो, इन्हें दो हज़ार रुपये दें, और दो साईस इनके साथ जायें।

जमामार मुनीम के घर पहुंचे और बोले—लाला जवाहिरमल, सरकार ने दो हज़ार रुपये दिलवाये है, जल्द आइए।

जवाहिरमल—तो जल्दी काहे की है? ये रुपये होंगे क्या?

जमामार—एक जोड़ी ली जायेगी। उस्ताद, देखो, हमको बदनाम न करना। चार सौ की जोड़ी है। बाकी रहे सोलह सौ। उनमें से आठ सौ यार लोग खायेंगे बाक़ी आठ सौ में छह सौ हमारे, दो सौ तुम्हारे। है पक्की बात न?

जवाहिरमल—तुम लो छह सौ, और हम लें दो सौ! मियां भाई हो न! अरे यार, तीन सौ हमको दे, पांच सौ तू उड़ा। यह मामले की बात है?

जमामार—अजी, मियां भाई की न कहिए। मियां भाई तो नवाब भी हैं, मगर अल्लाह मियां की गाय। तुम तो लाखों खा जाओ, मगर गाढ़े की लंगोटी लगाये रहो। खाने को हम भी खायंगे, मगर शरबती के अंगरखे डाटे हुए, नवाब बने हुए, क़ोरमा और पुलाव के वग़ैर खाना न खायेंगे। तुम उबाली खिचड़ी ही खाओगे। ख़ैर, नहीं मानते, तो जैसी तुम्हारी मरजी।

मियां जमामार जोड़ी लेकर पहुंचे, तो दरबार में उसकी तारीफ़ें होने लगी। कोई उसके थूथन की तारीफ़ करता है, कोई माथे की, कोई छाती की। खुशामदी बोले—वल्लाह, कनौटियां तो देखिए, प्यार कर लेने को जी चाहता है।

ग़प्पी—हुजूर, ऐसे जानवर क़िस्मत से मिलते हैं। क़सम खुदा की, ऐसी जोड़ी सारे शहर में न निकलेगी।

मतलबी—हुज़ूर, दो-दो हज़ार की एक-एक घोड़ी है। क्या ख़ूबसूरत हाथ-पांव हैं। और मज़ा यह कि कोई ऐब नहीं।

नवाब—कल शाम को फिटन में जोतना। देखें कैसी जाती है।

गप्पी—हुज़ूर, आंधी की तरह जाय, क्या दिल्लगी है कुछ।

रात को मियां आज़ाद सराय में पड़ रहे। दूसरे दिन शाम को फिर नवाब साहब के यहां पहुंचे। दरबार जमा हुआ था, मुसाहब लोग गप्पे उड़ा रहे थे। इतने में मसजिद से अजान की आवाज़ सुनायी दी। मुसाहबों ने कहा—हुज़ूर, रोज़ा खोलने का वक़्त आ गया।

नवाब—क़सम क़ुरान की, हमें आज तक मालूम ही न हुआ कि रोज़ा रखने से फ़ायदा क्या होता है? मुफ़्त में भूखों मरना कौन-सा सवाल है? हम तो हाफ़िज़ के चेले हैं, वह भी रोज़ा-नमाज कुछ न मानते थे।

आज़ाद—हुज़ूर ने ख़ूब कहा—

दोश अज़ मसजिद सुए मैख़ाना आदम पीरे मा;
चीस्त याराने तरीकत बाद अजीं तदबीरे मा।

(कल मेरे पीर मसजिद से शराबख़ाने की तरफ़ आये। दोस्तो, बतलाओ, अब मैं क्या करूं?)

ख़ुशामदी—वाह-वाह, क्या शेर है। सादी का क्या कहना!

गप्पी—सुना, गाते भी ख़ूब थे। बिहाग की धुन पर सिर धुनते हैं।

आजाद दिल में ख़ूब हंसे। यह मसख़रे इतना भी नहीं जानते कि यह सादी का शेर है या हाजिफ़ का! और मज़ा यह कि उनको बिहाग भी पसंद था! कैसे-कैसे गौखे जमा हैं।

मुसाहब—हुज़ूर, बजा फ़रमाते हैं। भूखों मरने से भला ख़ुदा क्या ख़ुश होगा?

नवाब—भई, यहां तो जब से पैदा हुए, क़सम ले लो, जो एक दिन भी फ़ाक़ा किया हो। फिर भूख में नमाज़ की किसे सूझती है?

ख़ुशामदी—हुज़ूर, आप ही के नमक की क़सम, दिन-रात खाने ही की फ़िक्र रहती है। चार बजे और लौंडी की जान खाने लगे—लहसुन ला, प्याज़ ला, कबाब पके, तौबा!

हिंदू मुसाहब—हुज़ूर, हमारे यहां भी व्रत रखते हैं लोग, मगर हमने तो हर व्रत के दिन गोस्त चखा।

ख़ुशामदी—शाबाश लाला, शाबाश! वल्लाह, तुम्हारा मज़हब पक्का है।

नवाब—पढ़े-लिखे आदमी हैं, कुछ ज़ाहिल-गंवार थोड़े ही हैं।

ख़ोजी—वाह-वाह, हुज़ूर ने वह बात पैदा की कि तौबा ही भली।

ख़ुशामदी—वाह भई, क्या तारीफ़ की है। कहने लगे, तौबा ही भली। किस जंगल से पकड़ के आये हो भई? तुमने तो वह बात कही कि तौबा ही भली। ख़ुदा के लिए जरी समझ-बूझकर बोला करो।

गप्पी—ऐ हज़रत, बोलें क्या, बोलने के दिन अब गये। बरसात हो चुकी न?

ख़ोजी—मियां, एक-एक आओ, या कहो, चौमुखी लड़ें। हम इससे भी नहीं डरते। यहां उम्र भर नवाबों ही की सोहबत में रहे। तुम लोग अभी कुछ दिन सीखो। आप, और हम पर मुंह आयें। एक बार हमारे नवाब साहब के यहां एक हज़रत आये, बड़े बुलक्कड़। आते ही मुझ पर फ़िक़रे कसने लगे। बस, मैंने जो आड़े हाथों लिया, तो भौंककर एकदम भागे। मेरे मुक़ाबले में कोई ठहरे तो भला! ले बस आइए, दो-दो चोंचें

हों। पाली से नोकदम न भागो, तो मूंछें मुड़वा डालूं।

मुसाहब—आइए, फिर आप भी क्या याद करेंगे। बंदे की ज़बान भी वह है कि कतरनी को मात करे। ज़बान आगे जाती है, बात पीछे रह जाती है।

ख़ोजी—ज़बान क्या चर्खा है रांड का! ख़ुदा झूठ न बुलाये, तो रोटी को हुज़ूर लोती कहते होंगे।

मुसाहब—जब ख़ुदा झूठ न बुलाये, तब तो। आप और झूठ न बोलें! जब से होश संभाला, कभी सच बोले ही नहीं। एक दफ़े धोखे से सच्ची बात निकल आयी थी, जिसका आज तक अफ़सोस है।

ख़ोजी—और वह उस वक़्त जब आपसे किसी ने आपके बाप का नाम पूछा था और आपने जल्दी में साफ़-साफ़ बता दिया था।

इस पर सब के सब हंस पड़े और ख़ोजी मूंछों पर ताव देने लगे। अभी ये बातें हो ही रही थीं कि एक टुकड़ी आयी, और उस पर से एक हसीना उतर पड़ी। वह पतली कमर को लचकाती हुई आयी, नवाब का मसनद घसीटा और बड़े ठाट से बैठ गयी।

नवाब—मिजाज शरीफ़?

आबादी—आप की बला से!

मुसाहब—हुजूर ख़ुदा की क़सम, इस वक़्त आप ही का ज़िक्र था।

आबादी—चल झूठे! अली की संवार तुझ पर और तेरे नवाब पर।

मुसाहब—ख़ुदा की क़सम।

आबादी—अब हम एक चपत जमायेंगे। देखो नवाब, अपने इन गुर्गों को मना करो, मेरे मुंह न लगा करें।

इतने में एक महरी पांच-छह बरस के एक लड़के को गोद में लायी।

आबादी—हमारी बहन का लड़का है। लड़का क्या, पहाड़ी मैना है। भैया, नवाब को गालियां तो देना। क्यों नवाब, इनको मिठाई दोगे न?

नवाब—हां, अभी-अभी।

लड़का—पहले मिठाई लाओ, फिल हम दाली दे देंगे।

अब चारों तरफ़ से मुसाहब बुलाते हैं—आओ, हमारे पास आओ। लड़के ने नवाब को इतनी गालियां दीं कि तौबा ही भली। नवाब साहब ख़ूब हंसे और सारी महफ़िल लड़के की तारीफ़ करने लगी। ख़ुदावंद, अब इसको मिठाई मंगवा दीजिए।

नवाब—अच्छा भई, इनको पांच रुपये की मिठाई ला दो।

आबादी—ऐ हटो भी! आप अपने रुपये रहने दें। क्या कोई फ़क़ीर है?

नवाब—अच्छा, एक अशर्फ़ी की ला दो।

आबादी—भैया, नवाब को सलाम कर लो।

नवाब—अच्छा, यह तो हुआ, अब कोई चीज सुनाओ। पीलू की कोई चीज़ हो, तुम्हें क़सम है।

आबादी—ऐ हटो भी, आज रोजे से हूं। आपको गाने की सूझती है।

फ़र्श पर कई नीबू पड़े हुए थे। बी साहिबा ने एक नीबू दाहिने हाथ में लिया और दूसरा नीबू उसी हाथ से उछाला और रोका। कई मिनट तक इसी तरह उछाला और रोका की। लोग शोर मचा रहे हैं—क्या तुले हुए हाथ हैं, सुभान-अल्लाह! वह बोली कि भला नवाब, तुम तो उछालो। जब जानें कि नीबू गिरने न पाये। नवाब ने एक नीबू हाथ में लिया और दूसरा उछाला, तो तड़ से नाक पर गिरा फिर उछाला, तो खोपड़ी पर तड़ से।

आबादी—बस, जाओ भी। इतना भी शऊर नहीं है।

नवाब—यह उंगली में कपड़ा कैसा वंधा है ?

आवादी—बूझो, देखें, कितनी अक़्ल है।

नवाव—यह क्या मुश्किल है, छालियां कतरती होंगी।

आवादी—हां, वह खून का तार वंधा कि तोवा। मैंने पानी डाला और कपड़ा बांध दिया।

मुसाहव—हुज़ूर, आज इस शहर में इनकी जोड़ नहीं है।

नवाव—भला कभी नवाव ख़फ़क़ानहुसैन के यहां भी जाती हो? सच-सच कहना।

आवादी—अली की संवार उस पर ! हज्ज कर आया है। उस मनहूस से कोई इतना तो पूछे कि आप कहां के ऐसे वड़े मौलवी बन बैठे ?

नवाव—जी, वजा है, जो आपको न वुलाये, वह मनहूस हुआ !

आवादी—वुलायेगा कौन ? जिसको ग़रज़ होगी, आप दौड़ा आयेगा।

आज़ाद और खोजी यहां से चले, तो आज़ाद ने कहा—आप कुछ समझे ? यह जोड़ी वही थी, जो रोशनअली ख़रीद लाये थे।

खोजी—यह कौन वड़ी वात है, इसी में तो रईसों का रुपया खर्च होता है। इनकी सोहवत में जव वैठिए खूब ग़प्प उड़ाइए और झूठ इस क़दर बोलिए कि ज़मीन-आसमान के कुलावे मिलाइए। रंग जम जाय, तो दोनों हाथों से लूटिए और सोने की ईंटें वनवाकर संदूक में रख छोड़िए। लेकिन ऐसे माल को रहते न देखा; मालूम नहीं होता, किधर आया और किधर गया।

आज़ाद—यह नवाब बिलकुल चोंगा है।

खोजी—और नहीं तो क्या, निरा चोंच।

आज़ाद—ख़ुदा करे, ये रईसज़ादे पढ़-लिखकर भले आदमी हो जायें।

खोजी—अरे, ख़ुदा न करे भाई, ये जाहिल ही रहें तो अच्छा। जो कहीं पढ़-लिख जायें, तो फिर इतने भलेमानसों की परवरिश कौन करे ?

तीसरे दिन दोनों फिर नवाव की कोठी पर पहुंचे।

खोजी—ख़ुदा ऐसे रईस को सलामत रखे। आज यहां सन्नाटा-सा नज़र आता है; कुछ चहल-पहल नहीं है।

मुसाहव—चहल-पहल क्या ख़ाक हो ! आज मुसीवत का पहाड़ टूट पड़ा।

आज़ाद—ख़ुदा ख़ैर करे, कुछ तो फ़रमाइए।

नवाव—क्या अर्ज़ करूं, जव बुरे दिन आते हैं, तो चारों ही तरफ़ से बुरी ही बुरी बातें सुनने में आती हैं। घर में वज़ा-हमल (प्रसव) हो गया।

आज़ाद—यह तो कुछ बुरी बात नहीं। वज़ा-हमल के माने लड़का पैदा होना। यह तो खुशी का मौक़ा है।

मुसाहव—हमारे हुज़ूर का मंशा-इस्क़ात-हमल (गर्भपात) से था।

ख़ुशामदी—अजी, इसे वज़ा-हमला भी कहते हैं—लुग़त देखिए।

नवाव—अजी, इतना ही होता, तो दिल को किसी तरह समझा लेते हैं। यहां तो एक और मुसीवत ने आ घेरा।

मुसाहव—(ठंडी सांस लेकर) ख़ुदा दुश्मन को भी यह दिन न दिखाये।

ख़ुशामदी—हज़रत, क्या अर्ज़ करूं, हुज़ूर का एक मेढ़ा मर गया, कैसा तैयार था कि क्या कहूं, गैंडा वना हुआ।

गप्पी—अजी, यों नहीं कहते कि गैंडे को टकरा देता, तो टें करके भागता। एक दफ़े मैं अपने साथ वाग़ ले गया। इत्तिफ़ाक़ से एक राजा साहव पाठे पर सवार वड़े ठाट

से आ रहे थे। बंदा मेढ़े को ऐन सड़क पर लिये हुए डटा खड़ा है। सिपाही ने ललकारा कि हटा बकरी को सड़क से। इतना कहना था कि मैं आग ही तो हो गया। पूछा—क्या कहा भाई? फिर तो कहना। सिपाही आंखे नीली-पीली करके बोला—हटा बकरी को सामने से, सवारी आती है। तब तो जनाब, मेरे खून में जोश आ गया। मैंने मेढ़े को ललकारा, तो उसने झपट कर हाथी के मस्तक पर एक टक्कर लगायी। वह आवाज़ आयी। जैसे कोई दरख्त ज़मीन पर आ रहा हो। बंदर डाल-डाल चीखने लगे, बंदरियां बच्चो को छाती से लगाये दबक रही, तो वजह क्या, उनको मेढ़े पर भेडिये का धोखा हुआ।

ख़ोजी—मेढ़े को भेड़िया समझा! मगर वल्लाह, आपको तो बेदुम का लंगूर समझा होगा!

गप्पी—बस हजरत, एक टक्कर लगाकर पीछे हटा और बदन को तोलकर छलांग जो मारता है, तो हाथी के मस्तक पर! वहां से फिर उचका, तो पीलवान के माथे पर एक टक्कर लगायी, मगर आहिस्ता से। जरा इस तमीज को देखिएगा, समझा कि इसमे हाथी का-सा जोर कहां। मगर राजा का अदब किया। अब मै लाख-लाख जोर करता हूं, पर वह किसकी सुनता है? ग़ुस्सा आया, सो आया, जैसे सिर पर भूत सवार हो गया। छुड़ाकर फिर लपका और एक, दो, तीन, चार—बस, ख़ुदा जाने इतनी टक्करें लगायी कि हाथी हवा हो गया और चिंघाड़ कर भागा। आदमी पर आदमी गिरते है। आप जानिए, पाठे का बिगड़ना कुछ हंसी-ठट्ठा तो है नही। जनाब, वही मेढ़ा आज चल बसा।

आजाद—निहायत अफ़सोस हुआ।

ख़ोजी—सिन शरीफ़ क्या था?

नवाब—सिन क्या था, अभी बच्चा था।

मुसाहब—हुजूर, वह आपका दुश्मन था, दोस्त न था।

नवाब—अरे भई, किसका दोस्त, कैसा दुश्मन। उस बेचारे का क्या क़सूर? वह तो अच्छा गया; मगर हम सबको जीते-जी मार डाला।

आजाद—हजरत, यह दुनिया सराय-फ़ानी है। यहां से जो गया, अच्छा गया। मगर नौजवान के मरने का रंज होता है।

मुसाहब—और फिर जवान कैसा कि होनहार। हाथ मल कर रह गये यार, बस और क्या करें।

आजाद—मरज क्या था?

मुसाहब—क्या मरज बतायें। बस क़िस्मत ही फूट गयी।

ख़ुशामदी—मगर क्या मौत पायी है, रमजान के महीने में, उसकी रूह जन्नत में होगी। तूबा[1] के तले जो घास है, वह चर रहा होगा।

इतने में एक महरी गुलबदन का लंहगा, जिसमें आठ-आठ अंगुल गोलट लगी थी, फड़काती और गुलाबी दुपट्टे को चमकाती आयी और नवाब के कान में झुक कर बोली—बेगम साहिबा हुजूर को बुलाती हैं।

नवाब—यह नादिरी हुक्म? अच्छा साहब, चलिए। यहां तो बेगम और महरी दोनों से डरते हैं।

नवाब साहब अंदर गये, तो बेगम ने ख़ूब ही आड़े हाथों लिया—ऐ, मैं कहती हूं यह कैसा रोना-धोना है? कहां की ऐसी मुसीबत पड़ गयी कि आंखें ख़ून की बोटी बन गयी? मेढ़े निगोड़े मरा ही करते हैं। ऐसी अक़्ल पर पत्थर पड़े कि मुए जानवर की जान को रो रहे है। तुम्हारी अक़्ल को दिन-दिन दीमक चाटे जाती है क्या? और इन मुफ़्त

1. स्वर्ग का एक वृक्ष

खोरों ने तो आपको और भी चंग पर चढ़ाया है। अल्लाह की क़सम, अगर आपने रंज-वंज किया. तो हम जमीन-आसमान एक कर देंगे। आखिर वह मेढ़ा कोई आपका··· बस, अब क्या कहूं। भीगी बिल्ली बने गटर-गटर सुन रहे हो।

नवाब—तुम्हारे सिर की क़सम, अब हम उसका ज़िक्र भी न करेंगे। मगर जब आपकी बिल्ली मर गयी थी, तो आपने दिन-भर खाना नहीं खाया था? अब हमारी दफ़े आप गुर्राती हैं?

मुसाहब—(परदे के पास से) वाह हुज़ूर, बिल्ली के लिए गुर्राना भी क्या ख़ूब। वल्लाह, जिले से तो कोई फ़िक़रा आपका खाली नहीं होता।

बेगम—देखो, इन मुए मुसंडों को मना कर दो कि ड्योढ़ी पर न आने पायें।

दरबान ने जो इतनी शह पायी, तो एक डांट बतायी। बस जी, सुनो, चलते-फिरते नज़र आओ। अब ड्योढ़ी पर आने का नाम लिया, तो तुम जानोगे। बेगम साहिबा हम पर ख़फ़ा होती हैं। तुम्हारी गिरह से क्या जायेगा, हम सिपाही आदमी हम तो नौकरी से हाथ धो बैठेंगे।

मुसाहब सिपाही से तो कुछ न बोले, मगर बड़बड़ाते हुए चले। लोगों ने पूछा —क्यों भई, इस वक़्त नाक-भौं क्यों चढ़ाये हो? बोले—अजी, क्या कहें, हमारे नवाब तो बस, बछिया के बाबा ही रहे! बीवी ने डपट लिया। ज़न-मुरीद है जी! आबरू का भी कुछ खयाल नहीं। औरतजात, फिर जोरू और उल्टे डांट बताये और दाढ़ी-मूंछों वाले होकर चुपचाप सुना करें! वल्लाह, जो कहीं मेरी बीवी कहती, तो गला ही घोंट देता। यहां नाक पर मक्खी तक बैठने नहीं देते।

आज़ाद—भई, गुस्से को थूक दो। गुस्सा हराम होता है। उनकी बीवी हैं, चाहे घुड़कियां सुनें, चाहे झिड़कियां सहें, आप बीच में बोलने वाले कौन? और फिर जिसका खाते हो, उसी को कोसते हो! उस पर दावा यह है कि नमकहलाल और कट मरने वाले लोग हैं।

इतने में नवाब साहब बाहर निकले। अमीरों के दरबार में आप जानिए, एक का एक दुश्मन होता है। सैकड़ों चुग़लखोर रहते हैं। हरदम यही फ़िक्र रहती है कि दूसरे की चुग़ली खायें और सबको दरबार से निकलवा कर हमी-हम नज़र आयें। दो मुसाहबों ने सलाह की कि आज नवाब निकलें, तो इसकी चुग़ली खायें और इसको खड़े-खड़े निकलवा दें। नवाब को जो आते देखा, तो चिल्ला कर कहने लगे—सुना भई, बस, अब जो कोई कलमा कहा, तो हमसे न बनेगी। जिसका खाये, उसी की गाये। यह नहीं कि जिसका खायें उसी को गालियां सुनायें। नवाब साहब को चाहे आप पीठ पीछे ज़न-मुरीद बतायें, या भीगी बिल्ली कहें, मगर खबरदार जो आज से बेगम साहिबा की शान में कोई गुस्ताख़ी की, ख़ून ही पी लूंगा।

नवाब—(त्योरियां बदल कर) क्या?

हाफ़िज़ जी—कुछ नहीं हुज़ूर ख़ैरियत है।

नवाब—नहीं, कुछ तो है ज़रूर।

रोशनअली—तो छिपाते क्यों हो, सरकार से साफ़-साफ़ क्यों नहीं कह देते? हुज़ूर, बात यह है कि मियां साहब जब देखो तब हुज़ूर की हजो किया करते हैं। लाख-लाख समझाया, यह बुरी बात है, मियां कहकर, भाई कहकर, बेटा कहकर, बाबा कहकर, हाथ जोड़कर, हर तरह समझाया, मगर यह तो लातों के आदमी हैं, बातों से कब मानते हैं। हम भी चुपके हो रहते थे कि भई, चुग़ली कौन खाये; मगर आप जनानी ड्योढ़ी से ···हुज़ूर, बस, क्या कहूं, अब और न कहलाइए।

नवाब—इनको हमने मौक़ूफ़ कर दिया।

मियां मुसाहव तो खिसके। इतने मे मटरगश्त आ पहुंचे और नवाब को सलाम करके बोले—खुदावंद, आज खूब सैर-सपाटा किया। इतना घूमा कि टांगों के टट्टू की गामचियां दर्द करने लगी। कोई इलाज वताइए।

हाफ़िज़ जी—घास खाइए या, किसी सालोत्री के पास जाइए।

नवाब—खूब! टट्टू के लिए घास और सालोत्री की अच्छी कही। अव कोई ताजा-ताजा खबर सुनाइए, वासी न हो, गरमागरम।

मटरगश्त—वह ख़बर सुनाऊं कि महफ़िल भर को लोटपोट कर दूं। हुजूर, किसी मुल्क से चंद परीजाद औरते आयी है। तमाशाइयो की भीड़ लगी हुई है। सुना, थिएटर मे नाचती है और एक-एक क़दम और एक-एक ठोकर मे आशिक़ों के दिल को पामाल करती है। उन्ही मे से एक परीजाद जो दन से निकल गयी, तो बस, मेरी जान सन से निकल गयी। दरिया किनारे खीमे पड़े है। वही इंदर का अखाड़ा सजा हुआ है। आज शाम को नौ बजे तमाशा होगा।

नवाब—भई, तुमने खूब मज़े की ख़बर सुनायी। ईजानिव जरूर जायेगे।

इतने मे खुदायारखां, जिन्हे जरा पहले नवाब ने मौकूफ़ कर दिया था, आ बैठे और बोले—हुजूर, इधर खुदावंद ने मौकूफ़ी का हुक्म सुनाया, उधर घर पहुंचा, तो जोरू तलाक़ दे दी। कहती है, 'रोटी न कपरा, सेत-मेत का भतरा।'

आजाद—हुजूर, इन गरीब पर रहम कीजिए। नौकरी की नौकरी गयी और बीबी की बीवी।

नवाब—हाफिजजी, इधर आओ, कुछ हाल ठीक-ठीक बताओ।

हाफिज—हुजूर, इन्होंने कहा कि नवाब तो निरे वछिया के ताऊ ही है, जन मुरीद! और वेगम साहिवा को इस नावकार ने वह-वह वाते कही कि बस, कुछ न पूछिए! अजीब शैतान आदमी है। आपको यकीन न आये, तो उन्ही से पूछ लीजिए।

नवाब—क्यो मियां आजाद, सच कहो, तुमने क्या सुना?

आजाद—हुजूर, अव जाने दीजिए क़ुसूर हुआ। मैने समझा दिया है।

हाफिज—यह वेचारे तो अभी-अभी समझा रहे थे कि ओ गीदी, तू अपने मालिक को ऐसी-ऐसी खोटी-खरी कहता है!

नवाब—(दरवान से) देखो जी हुसेन अली, आज से अगर खुदायारखां को आने दिया, तो तुम जानोगे। खड़े-खड़े निकाल दो। इसे फाटक मे कदम रखने का हुक्म नहीं।

खुदायार—हुजूर, गुलाम से भी तो सुनिए। आज मियां रोशनअली ने मुझे ताड़ी पिला दी और यही मनसूवा था कि यह नशे मे चूर हो, तो इसे किसी लिम मे निकलवा दें। सो हुजूर, इनकी मुराद बर आयी। मगर हुजूर, मै इस दर को छोड़कर और जाऊं कहां? खुदा आपके बाल-बच्चो को सलामत रखे, यहां तो रोआं-रोआं हुजूर के लिए दुआ करता है। हुजूर तो पोतडो के रईस है, मगर चुगलखोरो ने कान भर दिये—

खुदा के गज़व से जरा दिल मे कांप;
चुगलखोर के मुह को डसते है सांप।

नवाब—अच्छा, यह वात है। खवरदार, आज से ऐसी वेअदवी न करना। जाओ, हमने तुमको वहाल किया।

मुसाहिवो ने गुल मचाया—वाह हुजूर, कितना रहम है। ऐसे रईस पैदा काहे को होते है। मगर खुदायार खां को तो उनकी जोरू ने वचा लिया। न वह तलाक़ देती, न यह वहाल होते। वल्लाह, जोरू भी क़िस्मत से मिलती है।

अट्ठाईस

दूसरे दिन नौ बजे रात को नवाब साहब और उनके मुसाहब थियेटर देखने चले।

नवाब—भई, आबादीजान को भी साथ ले चलेंगे।

मुसाहब—ज़रूर, ज़रूर। हुज़ूर, उनके बग़ैर मज़ा किरकिरा हो जायगा।

इतने में फिटन आ पहुंची और आबादीजान छम-छम करती हुई आकर मसनद पर बैठ गयी।

नवाब—वल्लाह, अभी आप ही का ज़िक्र था।

आबादी—तुमसे लाख दफ़े कह दिया कि हमसे झूठ न बोला करो। हमें कोई देहाती समझा है!

नवाब—खुदा की क़सम, चलो, तुमको तमाशा दिखा लायें। मगर मरदाने कपड़े पहन कर चलिए, वर्ना हमारी बेइज़्ज़ती होगी।

आबादी ने तिनक कर कहा—जो हमारे चलने में बेआबरूई है, तो सलाम।

यह कहकर वह जाने को उठ खड़ी हुई। नवाब ने दुपट्टा दबा कर कहा—हमारा ही खून पिये, जो एक क़दम भी आगे बढ़ाये, हमीं को रोये, जो रूठ कर जाय! हाफ़िज़ जी, ज़रा मरदाने कपड़े तो लाइए।

ग़रज़ आबादीजान ने अमामा सिर पर बांधा; चुस्त अंगरखा और कसा हुआ घुटन्ना, टाटबाफी बूट, फुंदना झलकता हुआ, उनके गोरे बदन पर खिल उठा। नवाब साहब उनके साथ फिटन पर सवार हुए और मुसाहबों में कोई बग्घी पर, कोई टम-टम पर, कोई पालकी-गाड़ी पर लदे हुए तमाशा-घर में दाखिल हुए। मगर आबादीजान जल्दी में पाजेब उतारना भूल गयी थी। वहां पहुंच कर नवाब ने अव्वल दर्जे के दो टिकट लिये और सरकस में दाखिल हुए! लेकिन पाजेब की छम-छम ने वह शोर मचाया कि सभी तमाशाइयों की निगाहें इन दोनों आदमियों की तरफ़ उठ गयीं। जो है, इसी तरफ़ देखता है; ताड़नेवाले ताड़ गये, भांपनेवाले भांप गये। नवाब साहब अकड़ते हुए एक कुर्सी पर जा डटे और आबादीजान भी उनकी बगल में बैठ गयीं। बहुत बड़ा शामियाना टंगा हुआ था। बिजली की बत्तियों से चकाचौंध का आलम था। बीचो-बीच एक बड़ा मैदान, इर्द-गिर्द कोई दो हज़ार कुर्सियां। खीमा भर जग-मग कर रहा था। थोड़ी देर में दस-बारह जवान घोड़े कड़कड़ाते हुए मैदान में आये और चक्कर काटने लगे, इसके बाद एक जवान नाजनीन, आफ़त की परकाला, घोड़े पर सवार, इस शान से आयी कि महफ़िल भर पर आफ़त ढायी। सारी महफ़िल मस्त हो गयी। वह घोड़े से फुर्ती के साथ उचकी और फिर पीठ पर आ पहुंची। चारों तरफ़ से वाह-वाह का शोर मच गया। फिर उसने घोड़े को मैदान में चक्कर देना शुरू किया। घोड़ा सरपट जा रहा था, इतना तेज़ कि निगाह न ठहरती थी। एकाएक वह लेडी तड़ से जमीन पर कूद पड़ी। घोड़ा ज्यों का त्यों दौड़ता रहा। एकदम में वह झपट कर फिर पीठ पर सवार हो गयी उस पर इतनी तालियां बजीं कि ख़ीमा भर गूंज उठा। इसके बाद शेरों की लड़ाई, बंदरों की दौड़ और ख़ुदा जाने, कितने और तमाशे हुए। ग्यारह बजते-बजते तमाशा ख़तम हुआ। नवाब साहब घर पहुंचे, तो सांसें भरते थे और मियां आजाद दोनों हाथों से सिर धुनते थे। दोनों मिस बरजिना (तमाशा करनेवाली औरत) की निगाहों के शिकार हो गये।

हाफ़िज़ जी बोले—हुज़ूर, अभी मुश्किल से तेरह-चौदह बरस का सिन होगा, और किस फुर्ती से उचक कर घोड़े की पीठ पर हो रहती थी कि वाह जी वाह। मियां रोशनअली बड़े शहसवार बनते थे। क़सम ख़ुदा की जो उनके बाप भी क़ब्र से उठ आयें,

तो यह करतब देखकर होश उड़ जायं।

नवाब—क्या चांद-सा मुखड़ा है।

आबादीजान—यह कहां का दुखडा है ? हम जाते है।

मुसाहब—नही हुजूर, ऐसा न फ़र्माइए, कुछ देर तो बैठिए।

लेकिन आबादीजान रूठ कर चली ही गयी अब नवाव का यह हाल है कि मुह फुलाये, गम की सूरत वनाये बैठे सर्द आहें खीच रहे है। मुसाहब सब बैठे समझा रहे हैं; मगर आपको किसी तरह सब्र ही नही आता। अब जिंदगी ववाल है, जान जंजाल है। यह भी फ़ख्र है कि हमारा दिल किसी परीजाद पर आया है, शहर भर मे धूम हो जाय कि नवाब साहब को इश्क़ चर्राया है—

ताकि मशहूर हों हजारों मे;
हम भी है पांचवें सवारों मे।

मुसाहबो ने सोचा, हमारे शह देने से यह हाथ से जाते रहेंगे, इसलिए वह चाल चलिए कि 'सांप मरे न लाठी टूटे।' लगे सब उस औरत की हजो करने। एक ने कहा—भाई, जादू का खेल था। दूसरे बोले—जी हां, मैने दिन के वक़्त देखा था, न वह रंग, न वह रोग़न; न वह चमक-दमक, न वह जोवन; रात की परी देखे की टट्टी है। आखिर मिस वरजिना नवाब की नजरों से गिर गयी। बोले—जाने भी दो, उसका जिक्र ही क्या। तब मुसाहबों की जान मे जान आयी। नवाब साहब के यहां से रुख़सत हुए, तो आपस मे बाते होने लगी—

हाफ़िज जी—हमारे नवाब भी कितने भोले-भाले रईस है!

रोशनअली—अजी, निरे वछिया के ताऊ है। खुदायारखां ने ठीक ही तो कहा था।

खुदायारखां—और नही तो क्या झूठ बोले थे ? हमे लगी-लिपटी नही आती। चाहे जान जाती रहे, मगर खुशामद न करेंगे।

हाफ़िज जी—भई, यह आजाद ने बड़ा अडंगा मारा है। इसको न पछाड़ा, तो हम सब नजरो से गिर जायंगे।

रोशनअली—अजी, मै तरक़ीब बताऊ, जो पट पड़े, तो नाम न रखूं। नवाब डरपोक तो है ही, कोई इतना जाकर कह दे कि मियां आजाद इश्तिहारी मुजरिम है। बस, फिर देखिए, क्या ताथैया मचती है। आप मारे खौफ़ के घर में घुस रहें और जनाने मे तो कुहराम ही मच जाय। आजाद और उनके साथी अफ़ीमची, दोनों खड़े-खड़े निकाल दिये जाय।

ख़ुशामदी—वाह उस्ताद, क्या तड़ से सोच लेते हो! वल्लाह, एक ही न्यारिये हो।

रोशनअली—फिर इन झांसों के बग़ैर काम भी तो नही चलता।

हाफ़िज जी—हां, ख़ूब याद आया। परसो तेगबहादुर दक्खिन से आये है। बेचारे बडी तकलीफ़ मे है। हमारे सच्चे दोस्तो मे है। उनके लिए एक रोटी का सहारा हो जाय, तो अच्छा। आपमे से कोई छेड़ दे तो जरा, बस, फिर मै ले उड़ूगा। मगर तारीफ़ के पुल बांध दीजिए। नवाब को झांसे मे लाना कोई बड़ी बात तो है नही। थाली के बैगन है।

हाफ़िज जी—एक काम कीजिए, कल जब सब जमा हो जायं, तो हम पहले छेड़ें कि इस दरबार में हर फ़न का आदमी मौजूद हे और रियासत कहते इसी को है कि गुनियों की परवरिश की जाय, शरीफ़ों की क़दरदानी हुजूर ही का हिस्सा हे। इस पर कोई बोल उठे कि और तो सब मौजूद है, बस, यहां एक बिनवटिये की कसर है। फिर

कोई कहे कि आजकल दक्खिन से एक साहब आये हैं, जो बिनवट के फ़न में अपना सानी नहीं रखते। दो-चार आदमी हां में हां मिला दें कि उन्हें वह-वह पेंच याद हैं कि तलवार छीन लें; ज़रा से आदमी, मगर सामने आये और बिजली की तरह तड़प गये। हम कहेंगे—वल्लाह, आप लोग भी कितने अहमक़ हैं कि ऐसे आदमी को हुज़ूर के सामने अब तक पेश नहीं किया और जो कोई रईस उन्हें नौकर रख ले, तो फिर कैसी हो? बस, देख लेना, नवाब खुद ही कहेंगे कि अभी-अभी लाओ। मगर तेग़बहादुर से कह देना कि खूब बांके बनकर आयें, मगर बातचीत नरमी से करें, जिसमें हम लोग कहेंगे कि देखिए खुदावंद, कितनी शराफ़त है। जिन लोगों को कुछ आता-जाता नहीं, वे ही ज़मीन पर क़दम नहीं रखते।

मुसाहब—मगर क्यों मियां, यह तेग़बहादुर हिंदू हैं या मुसलमान? तेग़बहादुर तो हिंदुओं का नाम भी हुआ करता है किसी हिंदू के घर मुहर्रम के दिनों में लड़का पैदा हुआ और इमामबख्श नाम रख दिया। हिंदू भी कितने बेतुके होते हैं कि तोबा ही भली। पूछिए कि तुम जो ताज़िये को सिजदा करते हो, दरगाहों में शरबत पिलाते हो, इमामबाड़े बनवाते हो, तो फिर मुसलमान ही क्यों नहीं हो जाते।

हाफ़िज़ जी—मगर तुम लोगों में भी तो ऐसे गौखे हैं जो चेचक में मालिन को बुलाते हैं, चौराहे पर गधे को चने खिलाते हैं, जनमपत्री बनवाते हैं। क्या यह हिंदूपन नहीं है? इसकी न कहिए।

उधर मियां आज़ाद भी मिस बरजिना पर लट्टू हो गये। रात तो किसी तरह करवटें बदल-बदल कर काटी, सुबह होते ही मिस बरजिना के पास जा पहुंचे। उसने जो मियां आज़ाद की सूरत से उनकी हालत ताड़ ली, तो इस तरह चमक-चमक कर चलने लगी कि उनकी जान पर आफत ढायी। आज़ाद उसके सामने जाकर खड़े हो गये; मगर मुंह से एक लफ़्ज़ भी न निकला।

बरजिना—मालूम होता है, या तो तुम पागल हो, या अभी पागलखाने से रस्सियां तुड़ा कर आये हो।

आज़ाद—हां, पागल न होता, तो तुम्हारी अदा का दीवाना क्यों होता?

बरजिना—बेहतर है कि अभी से होश में आ जाओ, मेरे कितने ही दीवाने पागलखाने की सैर कर रहे हैं। रूस के तीन जनरल मुझ पर रीझे, यूनान में एक रईस लट्टू हो गये, इंगलिस्तान के कितने ही बांके आहें भरते रहे, जर्मनी के बड़े-बड़े अमीर साये की तरह मेरे साथ घूमा किये, रूम के कई पाशा ज़हर खाने पर तैयार हो गये। मगर दुनियां में दग़ाबाज़ी का बाजार गरम है, किसी से दिल न मिलाया, किसी को मुंह न लगाया। हमारे चाहनेवाले को लाजिम है कि पहले आईने में अपना मुंह तो देखे।

आज़ाद—अब मुझे दीवाना कहिए या पागल, मैं तो मर मिटा—

फिरी चश्मे-बुते-बेपीर देखो;
हमारी गर्दिशे-तक़दीर देखो।
उन्हें है तौक़ मन्नत का गरां बार;
हमारे पांव की जंजीर देखो।

बरजिना—मुझे तुम्हारी जवानी पर रहम आता है। क्यों जान देने पर तुले हुए हो?

आज़ाद—जीकर ही क्या करूंगा? ऐसी ज़िंदगी से तो मौत ही अच्छी।

बरजिना—आ गये तुम भी झांसे में! अरे मियां, मैं औरत नहीं हूं, जो तुम सोचे। मगर क़सम खाओ कि किसी से यह बात न कहोगे। कई साल से मैंने यही भेष बना

रखा है। अमीरों को लूटने के लिए इससे बढ़कर और कोई तदबीर नहीं। एक-एक चितवन के हज़ारों पौंड लाता हूं, फिर भी किसी को मुंह नहीं लगाता। आज तुम्हारी बेक़रारी देखकर तुमको साफ़-साफ़ बता दिया।

आज़ाद—अच्छा मर्दाने कपड़े पहन कर मेरे सामने आओ, तो मुझे यक़ीन आये।

मिस बरजिना ज़रा देर में कोट और पतलून पहन कर आज़ाद के सामने आयी और बोली—अब तो तुम्हें यक़ीन आया, मेरा नाम टामस हुड है। अगर तुमको वे चिट्ठियां दिखाऊं, जो ढेर की ढेर मेरे पास पड़ी हैं, तो हंसते-हंसते तुम्हारे पेट में बल पड़ जायं। देखिए, एक साहब लिखते हैं—

जनाज़ा मेरा गली में उनकी जो पहुंचे ठहराके इतना कहना;
उठानेवाले हुए हैं मांदे सो थकके कांधा बदल रहे हैं।

दूसरे साहब लिखते हैं—

हम भी कुश्ता तेरी नैरंगी के हैं याद रहे;
ओ ज़माने की तरह रंग बदलनेवाले।

एक बार इटली गया, वहां अक्सर अमीरों और रईसों ने मेरी दावतें कीं और अपनी लड़कियों से मेरी मुलाक़ात करायी। मैं कई दिन तक उन परियों के साथ हवा खाता रहा। और एक दिल्लगी सुनिए। एक अमीरज़ादी ने मेरे हाथ को चूमकर कहा कि हमारे मियां तुमसे शादी करना चाहते हैं। वह कहते हैं कि अगर तुमसे उनकी शादी न हुई, तो वह ज़हर खा लेंगे। यह अमीरजादी मुझे अपने घर ले गयी। उसका शौहर मुझे देखते ही फूल उठा और ऐसी-ऐसी बातें की कि मैं मुश्किल से अपनी हंसी को जब्त कर सका।

आज़ाद बहुत देर तक टामस हुड से उनकी ज़िंदगी के क़िस्से सुनते रहे। दिल में बहुत शर्मिंदा थे कि यहां कितने अहमक बने। यह बातें दिल में सोचते हुए सराय में पहुंचे, तो फाटक ही के पास से आवाज़ आयी, लाना तो मेरी क़रौली, न हुआ तमंचा, नहीं तो दिखा देता तमाशा। आज़ाद ने ललकारा कि क्या है भाई, क्या है, हम आ पहुंचे। देखा, तो ख़ोजी एक कुत्ते को दुत्कार रहे हैं।

उनतीस

आज तो निराला समा है। ग़रीब, अमीर, सब रंगरलियां मना रहे हैं। छोटे-बड़े ख़ुशी के शादियाने बजा रहे है। कहीं बुलबुल के चहचहे, कही कुमरी के क़हक़हे। ये ईद की तैयारियां हैं। नवाब साहब की मसजिद का हाल न पूछिए। रोज़े तो आप पहले ही चट कर गये थे; लेकिन ईद के दिन धूमधाम से मजलिस सजी। नूर के तड़के से मुसाहबों ने आना शुरू किया और मुबारक-मुबारक की आवाज़ ऐसी बुलंद की कि फ़रिश्तों ने आसमान को थाम लिया, नहीं तो ज़मीन और आसमान के कुलावे मिल जाते।

मुसाहब—ख़ुदा ईद मुबारक करे। मेरे नवाब जुग-जुग जियें।

हाफ़िज़ जी—बरस दिन का दिन मुबारक करे।

रोशनअली—ख़ुदा हुज़ूर को ईद मुबारक करे।

नवाब—आपको भी मुबारक हो। मगर सुना कि आज तो ईद में फ़र्क़ है। भई, आधा तीतर और आधा बटेर नहीं अच्छा।

मुसाहब—हुज़ूर; फिरंगीमहल के उलमा ने तो आज ही ईद का फतवा लगाया है।

नवाब—भला चांद किसी ने देखा भी ?

मुसाहब—हुज़ूर, पक्के पुल पर चार भिश्तियों ने देखा, राजा की बाज़ार में हाफ़िज़ जी ने देखा और मेरे घर में भी देखा।

नवाब—आपकी बेगम साहिबा का सिन क्या है ? हैं कोई चौदह-पंद्रह बरस की ?

मुसाहब ने शरमा कर गरदन झुका ली।

नवाब—आप अपनी बेगम साहिबा की उम्र तो छिपाते हैं, फिर उनकी शहादत ही क्या ? बाक़ी रहे हाफ़िज़ जी, उनकी आंखें पढ़ते-पढ़ते जाती रहीं; उनको दिन को ऊंट तो सूझता ही नहीं, भला सरेशाम, दोनों वक़्त मिलते, नाख़ून के बराबर चांद क्या सूझेगा !

आज़ाद—हज़रत, मैंने और मियां ख़ोजी ने कल शाम को अपनी आंखों देखा।

नवाब—तो तीन गवाहियां मोतबर हुईं। हमारी ईद तो हर तरह आज है।

इतने में फिटन पर से आबादीजान मुस्कराती हुई आयी।

नवाब—आइए-आइए, आपकी ईद किस दिन है ?

आबादीजान—क्या कोई भारी जोड़ा बनवा रखा है ? फटे से मुंह शर्म नहीं आती ?

नवाब—ईद कुरबां है, यही दिन तो है कुरबानी का;
आज तलवार के मानिंद गले मिल क़ातिल।

हमको क्या, यहां तो तीसों रोज़े चट किये बैठे हैं। दोवक़्ता पुलाव उड़ता था। यह फ़िक्र तो उसको होगी जो दीन का टोकरा सिर पर लादे-लादे फिरते हैं।

आबादी—इन्हीं लच्छनों तो दोज़ख़ में जाओगे।

नवाब—ख़ैर, एक तसकीन तो हुई ! आपसे तो वहां ज़रूर गले मिलेंगे।

मुसाहब—सुभान-अल्लाह ! क्या ख़ूब सूझी, वल्लाह, ख़ूब सूझी ! क्या गरमा-गरम लतीफ़ा कहा है।

इतने में चंपा लौंडी अंदर से घबरायी हुई आयी। लुट गये, लुट गये ! ऐ हुज़ूर, चोरी हो गयी। सब मूस ले गया।

नवाब—क्या, क्या, चोरी हो गयी ! कब ?

चंपा—रात को, और कब ? इस वक़्त जो बेगम साहिबा कोठरी में जाती हैं, तो रोशनी देखते ही आंखों तले अंधेरा छा गया। जाकर देखती हैं, तो एक बिलूका। कपड़े-लत्ते सब तितर-बितर पड़े हैं।

मुसाहब—ऐ ख़ुदावंद, कल तो एक बजे तक यहां दरबार गरम रहा। मालूम होता है; कोई पहले ही से घुसा बैठा था।

नवाब—जरी हमारी तलवार तो लाना भई ! एहतियात शर्त है। शायद छिपा बैठा हो।

तलवार लेकर घर में गये, तो देखते हैं कि बेगम साहिबा एक नाज़ुक पलंगड़ी पर सिर पकड़े बैठी हैं, और लौंडियां समझा रही हैं कि नवाब की सलामती रहे, एक से एक बढ़िया जोड़ा बन जायगा। आप घबराती काहे को हैं ? नवाब ने जाकर कोठरी को देखा और तलवार हाथ में लिये पैंतरे बदलते हुए घर-भर का मुआयना किया। फिर बेगम से बोले—हमारा लहू पिये, जो रोये। आख़िर यह रोना काहे का; माल गया, गया !

लौंडी—हां, सच तो फ़रमाते हैं। जान की सलामती रहे, माल भी कोई चीज़ है?

बेगम—आज ईद के दिन खुशियां मनाते, डोमनियां आती, मुबारकबादिया गाती, दिन भर धमा-चौकड़ी मचती, रात को रतजगा करते, सो आज यह नया गुल खिला। मगर गहने की संदूकची छोड़ गया, इतना एहसान किया। अभी तक कलेजा धक-धक कर रहा है।

नवाब—हमारे सिर की क़सम, लो उठो, मुह धो डालो। ईद मनाओ, हमारा ही जनाजा देखे जो चोरी का ग़म करे। दो हजार कोई बड़ी चीज है!

आखिर बहुत कहने-सुनने पर बेगम साहिबा उठी। लौडी ने मुह धुलाया। नवाब साहब ने कहा—तुम्हे वल्लाह, हस तो दो, वह होठ पर हसी आयी! देखो मुस्कराती हो। वह नाक पर आयी।

बेगम साहिबा खिलखिलाकर हस पड़ी और घर-भर मे क़हक़हे पड़ने लगे। यो बेगम साहिबा को हंसा कर नवाब साहब बाहर निकले, तो मुसाहब, हवाली-मवाली, ख़िदमतगार गुल मचाने लगे—हुजूर, कुछ तो बतलाइए, यह मामला क्या है? आखिर किधर से चोर आया? कोई कहता है—हुजूर, बेघर के भेदी के चोरी नही होती; हमको उस हबशिन पर शक है। हबशिन अंदर से गालियां दे रही है—अल्लाह करे झूठे पर बिजली गिरे, आसमान फट पड़े। किसी ने कहा—खुदावद, चौकीदार की शरारत है। चौकीदार है कि लाखो क़समे खाता है। घर भर मे हरबोग मचा हुआ है। इतने मे एक मसखरे ने बढ़कर कहा—हुजूर, क़सम है क़ुरान की, हमे मालूम है। भला वे भला, हम पहचान गये, हमसे उड़कर कोई जायगा कहा?

मुसाहब—मालूम है, तो फिर बताते क्यो नही?

मसखरा—अजी, बताने से फ़ायदा क्या? मगर मालूम मुझको बेशक है। इसमे शुबहा नही। गलत हो, तो हाथ-हाथ बदते है।

नवाब—अरे, जिस पर तुझे शक है, उसका नाम बता क्यों नही देता।

मुसाहब—बताओ, तुम्हे खुदा की कसम। किस पर तुमको शक है? आखिर किसको ताका है? भई, हमको बचा देना उस्ताद।

मसखरा—(नवाब साहब के कान मे) हुजूर, यह किसी चोर का काम है।

मुसाहब—क्या कहा हुजूर, किसका नाम लिया?

नवाब—(हंसकर) आप चुपके से फ़रमाते है, यह किसी चोर का काम है।

लोगों के हसते-हसते पेट मे बल पड़ गये। जिसे देखो, लोट रहा है। इतने मे रेल के एक चपरासी ने आकर तार का लिफ़ाफ़ा दिया। लिफ़ाफ़ा देखते ही नवाब साहब का चेहरा फ़क़ हो गया, हाथ-पांव फूल गये। बोले—भई, किसी अंगरेजीदां को बुलाओ और तार पढ़वाओ। खुदा जाने, कहां से गोला आया है।

मुसाहब—क्यो मियां जवान, यह तार बड़े साहब के दफ़्तर से आया है न?

चपरासी—नाही, रेलघर से आवा है।

मुसाहब—वाह रे अंगरेजो, अल्लाह जानता है, अपने फ़न के उस्ताद हैं। और सुनिए, जल्दी के लिए अब तार की खबर भी रेल पर आने लगी। वाह रे उस्ताद, अकल काम नही करती।

हाफ़िज जी—खुदा जाने, यह तार बोलता क्योंकर है? आखिर तार के तो जान नही होती!

ख़िदमतगार एक अंगरेजीदां को ले आया। तार पढा गया, तो मालूम हुआ कि किसी ने मिरजापुर से पूछा है कि ईद आज है, या कल होगी?

मुसाहब—यह तो फ़रमाइए, भेजा किसने?

बाबू—निसारहुसेन ने।

नवाव—समझ गया। मिरज़ापुर में हमारे एक दोस्त हैं निसारहुसेन। उन्हीं ने तार भेजा होगा। इसका जवाव किसी से लिखवाइए जिसमें आज ही पहुंच जाय। एक रुपया, दो रुपया, जो ख़र्च हो, दारोग़ा से दिलवा दो। और मियां नुदरत को तारघर भेजो और कहो कि अगर वावू कुछ मांगे तो दे देना। मगर इतना कह देना कि ख़वर ज़रूर पहुंचे। ऐसा न हो कि कहीं राह में रुक रहे, तो ग़ज़व ही हो जाय।

मियां नुदरत लखनऊ के आदमी-नख़ास के वाहर उम्र भर क़दम ही नहीं रखा। वह क्या जानें कि तारघर किस वला का नाम है। राह में एक-एक से पूछते जाते हैं—क्यों भई, तारघर कहां हैं? आखिरकार एक चपरासी ने कहा—कलकी वरक के सामने है। मियां नुदरत घवरा रहे थे, वुरे फंसे यार, तारघर में न जाने क्या वारदात हो। हम अंग्रेजी क़ानून-वानून नहीं जानते। देखें, आज क्या मुसीवत पड़ती है? ख़ैर, ख़ुदा मालिक है। चलते-चलते कोई दो घंटे में ऐशवाग़ पहुंचे। यहां से पता पूछते-पूछते चले हुसेनगंज। वहां एक वावू सड़क पर खड़े थे। उनसे पूछा—क्यों वावूजी, तारघर कहां है? उन्होंने कहा—सामने चले जाओ। फिर पलटे। वावू जी एक रुपया लाया हूं और लिखवाना यह है कि आज ईद सुन्नियों की है, कल शियों की होगी। भला वहां वैठा रहूं? जव ख़वर पहुंच जाय, तव आऊं? वावू ने कहा—ऐसा कुछ ज़रूरी नहीं। ख़ैर, तारघर पहुंचे तो कलेजा धक-धक कर रहा है कि देखिए जान क्योंकर वचती है। थोड़ी देर फाटक पर खड़े रहे और वहां से मारे डर के वैरंग वापस। राह में दोनों रुपये उन्होंने भुनाये और वीवी के लिए पंचमेल मिठाई चंगेल में ले चले। रास्ते में यही सोचते रहे कि नवाव से यों चकमा चलेंगे, यों झांसा देंगे। चैन करो। उस्ताद, अव तुम्हारे पौ-वारह हैं। हलवाई की दुकान और दादा जी का फ़ातिहा, घर में जो ख़ुश-ख़ुश घुसे, तो वीवी देखते ही खिल गयीं। झपट कर चंगेल उनके हाथ से छीनी। देखा, तो मुंह में पानी भर आया। वरफ़ी पर चांदी का वरक़ लगा हुआ, इमरतियां ताज़ी, लड्डू गरमागरम। पेड़े वह, जो मथुरा के पेड़ों के दांत खट्टे कर दें। दो-तीन लड्डू और एक वरफ़ी तो देखते ही देखते चट कर गयीं। पेड़ा उठाने ही को थीं कि मियां नुदरत ने झल्लाकर पहुंचा पकड़ लिया और वोले—अरे, वस भी तो करोगी? एक लड्डू खाया, मैं कुछ न वोला; दूसरा निकाला, मैं चुपचाप देखा किया। तीसरे लड्डू पर हाथ वढ़ाया, वरफ़ी खायी और अव चली पेड़े पर हाथ डालने! अव खाने-पीने की चीज़ में टोके कौन, इतनी वड़ी लूमड़ हो गयीं, मगर विल्लड़ ही वनी रहीं। मरभुक्खों की तरह मिठाई पर गिर पड़ने के क्या माने? दो प्यालियां लाओ, अफ़ीम घोलो, पियो। जव ख़ूव नशे गठें, तो मिठाइयां चखो। ख़ुदा की क़सम, यह अफ़ीम भी नेमत की मां का कलेजा है।

वीवी—(तिनक कर) वस, नेमत की मां का कलेजा तुम्हीं खाओ। खाओ, चाहे भाड़ में जाओ। वाह, आज इतने वड़े त्यौहार के दिन मिठाई क्या लाये कि दिमाग़ ही नहीं मिलता। मोती की-सी आव उतार ली। एक पेड़े के ख़ातिर पहुंचा धरके मरोड़ डाला।

इतने में वाहर से आवाज़ आयी—मियां नुदरत हैं?

वीवी—सुनते हो, या कानों में ठेंठियां हैं? एक आदमी गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा है, दरवाज़े को चूल से निकाले डालता है। वोलते क्यों नहीं? कहीं चोरी करके तो नहीं आये हो?

नुदरत—ज़री आहिस्ते-आहिस्ते वातें करो।

वीवी—ऐ है, सच कहिएगा। हम तो ख़ूव गुल मचायेंगे। मामा, हम परदे में हुए जाते हैं। जाकर उनसे कह दो—घर में घुसे वैठे हैं।

नुदरत—नहीं, नहीं, यह दिल्लगी अच्छी नहीं। कह दो, नवाव साहव के यहां

गये हैं।

मामा—(बाहर जाकर) मियां, क्या गुल मचा रहे हो ? मैं तो समझी, कहीं से दौड़ आयी है। वह तो सबेरे नवाब साहब के यहां गये थे, अभी आये नहीं। जो मिले, तो भेज दीजिएगा।

पुकारने वाला—यह कैसी बात ? नवाब साहब के यहां से तो हम भी अभी-अभी आ रहे है। वहां ढुढ़स मची हुई है कि चल कहां दिये। अच्छा भाभी साहब से कहो, आज ईद के दिन दरवाजे पर आये है, कुछ सेवइयां-बेवइयां तो खिलायें। हम तो बेत-कल्लुफ़ आदमी है। तकाजा करके दावत लेते हैं।

मामा ने अन्दर से ले जाकर बाहर बरामदे में एक मोढ़ा डाल दिया। उधर मियां-बीवी में तकरार होने लगी।

मियां—अजी, टाल भी दो। ऐसे-ऐसे मुफ़्तख़ोरे बहुत आया करते है। मामा, तुम भी पागल ही रही। मोढ़ा डालने की भला क्या ज़रूरत थी ?

बीवी—ऐ वाह ! हम तो जरूर खातिर करेंगे। यह अच्छा कि नवाब के यहां जाकर हमको गंवारिन बनाये ? इसमे तुम्हारी नाक न कटेगी !

बीवी ने एक तश्तरी में पांच-छह डलियां मिठाई की करीने से लगाकर उस पर रेशमी हरा रूमाल ढक दिया और मामा से कहा—जाओ, दे आओ। मियां नुदरत की रूह पर सदमा हुआ कि चार-पांच डली तो बीवी बातें करते-करते चख गयी और पांच-छह अब निकल गयी। ग़ज़ब ही हो गया। मामा मिठाई लेकर चली, तो ड्योढ़ी मे दो लड्डू चुपके से निकाल कर एक ताक़ में रख दिये। इत्तिफ़ाक़ से एक छोकरा देख रहा था। जैसे मामा बाहर गयी, वैसे ही दोनों लड्डू मजे से खा गया। चलिए, चोर के घर मे मोर बैठा। मुसाहब ने रूमाल हटाया, तो कहा—वाह, भाभी साहब तो भाई साहब से भी बढ़कर निकली। यह हाथी के मुंह मे जीरा। ख़ैर, पानी तो लाओ। हजरत ने मिठाई खायी और पानी पिया, तो पान की फ़रमाइश की। बीवी ने अपने हाथ से दो गिलौरियां बनायी। मुसाहब ने चखी, तो हुक़्क़ा मांगा। नुदरत ने कहा—देखा न, हाथ देते ही पहुंचा पकड़ लिया। मिठाई लाओ, पान खिलाओ, पानी पिलाओ, हुक़्का भर लाओ गोया बाबा के घर मे बैठे है। इन मूजियों की तो क़ब्र तक से मैं वाक़िफ़ हूं। और एक इस पर क्या मौक़ूफ़ है। नवाब के यहा जितने है, सब गुरगे, मुफ़्तख़ोरे, पराया माल ताकने वाले। मामा, जाकर कह दो, हुक़्क़ा यहां कोई नही पीता। लेकिन बीवी ने हुक़्क़ा भरवा कर भेज ही दिया। जब पी चुके, तो बाहर से आवाज़ दी कि मामा, चारपाई यहां मौजूद है। जरा दरी या गलीचा दे जाइएगा। अब ठीक दोपहर में कौन इतनी दूर जाय, ज़रा कमर सीधी कर लें। तब तो मियां नुदरत खूब ही झल्लाये। आख़िर शैतान का मनसूबा क्या है ? देख रहा है कि मालिक घर में नही है; फिर यह दरवाजे पर चारपाई पर सोना क्या माने ? और मुझसे-इससे कहां का ऐसा याराना है कि आते ही भाभी साहिबा से फ़रमाइशें होने लगी।

इधर मामा ड्योढ़ी में गयी कि लड्डू चुपके-चुपके खाये। ताक में ढूंढ़ मारा पर लड्डुओं का कही पता नही। छोकरे ने पूछा—मामा, वहां क्या ढूंढ़ रही हो ? वह तो चूहा खा गया। सच कहना कैसी हुई ? चूहे ने तुम्हारे अच्छे कान कतरे ?

मुसाहब—मामाजी, जरी दरी दे जाइए।

मामा—यहां दरी-वरी नही है।

मुसाहब—हम जानते है, बड़े भाई कही इस वक़्त ईद मिलने गये हैं। बस, समझ जाइए।

नुदरत ने कहा—खुश हुई ? कुछ समझी भी ? अब यह इस फ़िक्र में है कि तुमको

मको लड़वा दें। और मिठाई भेजो। गिलौरियां चखाओ!

जब मियां मुसाहब चंपत हुए तो मियां नुदरत भी चंगेल की तरफ़ बढ़े और फ़ीम की पीनक में खूब छक कर मिठाई चखी। फिर चले नवाब के घर। क़दम-क़दम र फ़िक़रे सोचते जाते हैं। बारे दाखिल हुए, तो लोगों ने आसमान सिर पर उठाया।

नवाब—शुक्र है, ज़िंदा तो बचे! यह आप अब तक रहे कहां आख़िर?

मुसाहब—हुज़ूर, तारघर तो यह सामने है।

हाफ़िज़—हां, और नहीं तो क्या? बात करते तो आदमी पहुंचता है।

रोशनअली—कौन, मुझसे कहिए, तो इतनी देर में अठारह फेरे करूं।

नुदरत—हां भाई, घर बैठे जो चाहे कह लो, कोई जाय, तो आटे-दाल का भाव मालूम हो। चलते-चलते आंधी-रोग आ जाता है। बकरी मर गयी और खाने वाले को मज़ा ही न आया। आप लोग थान के टर्रे हैं। कहने लगे, दो क़दम पर है। यहां से गये सआदतगंज, वहां से धनिया महरी के पुल, वहां से ऐशबाग़, वहां से गनेशगंज, वहां से अमीनाबाद होते हुए तारघर पहुंचे। दम टूट गया, शल हो गये, मर मिटे, न खाना न दाना। आप लोग बैठे-बैठे यहां जो चाहे फ़रमायें, कहने और करने में फ़र्क़ है।

नवाब—तो इस ठांय-ठांय से वास्ता, यह कहिए, खबर पहुंची कि नहीं?

नुदरत—खुदावंद, भला मैं इसका क्या जवाब दूं? खबर दे आया। बाबू ने मेरे सामने खट-खट किया, साहब ने रुपये लिये, चपरासियों को इनाम दिया। चार रुपये अपनी जेब से देने पड़े। वह तो कहिए, वहां मेरे एक जान-पहचान के निकल आये, नहीं बैरंग वापस आना पड़ता।

नवाब—खैर, तसकीन हुई। अब फ़रमाइए, इतनी देर कहां हुई?

नुदरत—खुदावंद, जल्दी के मारे बग्घी किराये करके गया था; लौटती बार उसने वह पलटा खाया कि मैं तो समझा, बस कुचल ही गया। मगर खुदा कार-साज़ है गिरा तो, लेकिन बच गया। कोई घंटे तक कोचवान बम ही दुरुस्त किया किया। इससे देर हुई। हुज़ूर, अब घर जाता हूं।

नवाब—अरे भई, खाना तो खाते जाओ। अच्छा चार रुपये वे हुए और बग्घी के किराये के भी कोई तीन रुपये हुए होंगे? सात रुपये दारोग़ा से ले लो।

नुदरत—नहीं खुदावंद, झूठ नहीं बोलूंगा। चाहे फ़ाक़ा करूं, मगर कहूंगा सच ही। यही तो ग़ुलाम में जौहर है। दो रुपये और पांच पैसे दियें। देखिए, खुदा को मुंह दिखाना है।

नवाब—दारोग़ा, इनको दस रुपये दे दो। सच बोलने का कुछ इनाम भी तो दूं।

तीस

दूसरे दिन सुबह को नवाब साहब जनानख़ाने से निकले, तो मुसाहबों ने झुक-झुककर सलाम किया। खिदमतगार ने चाय की साफ़-सुथरी प्यालियां और चमचे लाकर रखे। नवाब ने एक-एक प्याली अपने हाथ से मुसाहबों को दी और सबने गरम-गरम दूधिया चाय उड़ानी शुरू की। एक-एक घूंट पीते जाते हैं और गप भी उड़ाते जाते हैं।

मुसाहब—हुज़ूर, कश्मीरी खूब चाय तैयार करते हैं।

हाफ़िज़—हमारी सरकार में जो चाय तैयार होती है, सारी खुदाई में तो बनती न होगी। ज़रा रंग तो देखिए हिंदू भी देखे, तो मुंह में पानी भर आये।

रोशनअली—क़ुरबान जाऊं हुज़ूर, ऐसी चाय तो बादशाह के यहां भी नहीं बनती, थी। खुदा जाने, मियां रहीम कहां से नुस्ख़ा पा गये। मगर ज़रा तलखी बाक़ी

रह जाती है।

रहीम—सुभान अल्लाह ! आप तो वादशाहों के यहां चाय पी चुके है और इतना भी नही जानते कि चाय मे तलखी न हो, तो वह चाय ही नही।

खिदमतगार—खुदावंद, शिवदीन हलवाई हाजिर है।

नवाब—दारोग़ा जी, इस हलवाई का हिसाव कर दो, और समझा दो कि अगर ख़राब या सड़ी हुई बासी मिठाई भेजी, तो इस सरकार से निकाल दिया जाएगा। परसों बरफ़ी ख़राव भेजी थी। घर में शिकायत करती थीं।

दारोग़ा—सुनते हो शिवदीन ? देखो, सरकार क्या फ़रमाते हैं ? ख़बरदार जो सड़ी-गली मिठाई भेजी। अव तुमने नमक़हरामी पर कमर बांधी है ! खड़े-खड़े निकाल दिये जाओगे।

हलवाई—नही खुदावंद, अव्वल माल दूं, अव्वल। चाशनी जरा बहुत आ गयी, तो दाना कम पड़ा। कड़ी हो गयी। चाशनी की गोली देर में देखी, नही तो इस दुकान की बरफ़ी तो शहर भर में मशहूर है। वह लज्जती होती है कि ओठ बंधने लगते है।

दारोग़ा—चलो, तुम्हारा हिसाब कर दें। ले बतलाओ, कितने दिन से खर्च नहीं पाया, और तुम्हारा क्या आता है ?

हलवाई—अगले महीने में चौबीस रुपये और कुछ आने की आयी थी। और अब की दस तारीख अंग्रेजी तक कोई सत्तर या अस्सी की।

दारोग़ा—अजी, तुम तो गड्डेबाज़ियां करते हो ! सत्तर या अस्सी, सौ या पांच सौ; उस महीने में उतनी और इस महीने में इतनी। यह बखेड़ा तुमसे पूछता कौन है ? हमे तो वस, गठरी बता दो, कितना हुआ ?

हलवाई—अच्छा, हिसाब तो कर लूं, (थोड़ी देर के बाद) वस, एक सौ वयालीस रुपये और दस आने दीजिए। चाहे हिसाब कर लीजिए, बोलता जाऊं।

दारोग़ा—अजी, तुम कोई नये तो हो नही। बताओ इसमें यारों का कितना है ? सच बोलना लाला ! (पीठ ठोंककर) आओ, वारे-न्यारे हों। क्यों, है न ?

हलवाई—बस, सौ हमको दे दो, बयालीस तुम ले लो। सीधा-सीधा मैं तो यह जानता हूं।

दारोग़ा—अच्छा, मंजूर। मगर बयालीस के बावन करो। एक सौ तुम्हारे, बावन हमारे। सच कहना, दोनो महीनों में चालीस की मिठाई आयी होगी या कम ?

हलवाई—अजी हुज़ूर; अब इस भेद से आपको क्या वास्ता ? आपको आम खाने से ग़रज है, या पेड़ गिनने से। सच-सच यह कि सब मिला कर अड़तीस रुपये की आयी होगी। मुल वज़न में मार देता हूं। सेर भर लड्डू मांग भेजे, हमने पाव सेर कम कर दिये।

दारोग़ा—ओह, इसकी न कहिए, यहां अंधेर-नगरी चौपट-राज है। यह दिमाग किसे कि तौलने बैठे। मियां लखलुट, बीवी उनसे बढ़कर। दस के पचास लो, और सेर के तीन पाव भेजो। मजे है। अच्छा, ये सौ रुपये गिन लो और एक सौ बावन की रसीद हमें दो।

हलवाई—यह मोल-तोल है। सौ और पांच हम लें और बाक़ी हुजूर को मुबारक रहें।

अब सुनिए, मियां खोजी ने ये सारी बातें सुन ली। जब शिवदीन चला गया, तो बढ़कर बोले—अजी, हजरत, आदाबरज है। कहिए, इसमें कुछ यारों का भी हिस्सा है? या बावन के बावन खुद ही हजम कर जाओगे और डकार तक न लोगे ? अब हमारा और आपका साझा न होगा, तो बुरी ठहरेगी।

दारोग़ा—क्या ? किससे कहते हैं आप ! यह साझा कैसा ! भंग तो नहीं पी गये हो कहीं ? यह क्या वाही-तवाही वक रहे हो ? यहां वेहूदा वकने वालों की ज़वान खींच ली जाती है। तुम टुकड़गदों को इन वातों से क्या वास्ता ?

ख़ोजी—(कमर कस कर) ओ गीदी, क़सम ख़ुदा की, इतनी क़रौलियां भोंकी हों की याद करो। मुझे भी कोई ऐसा-वैसा समझे हो ? मैं आदमी को दम के दम में सीधा वना देता हूं। किसी और भरोसे न भूलिएगा। क्या ख़ूव, अड़तीस के डेढ़ सौ दिलवाये, पचास ख़ुद उड़ाये और ऊपर से गुर्राता है मर्दक। अभी तो नवाव साहव से सारा कच्चा चिट्ठा जड़ता हूं। खड़े-खड़े न निकाल दिये जाओ, तो सही। हम भी तमाम उम्र रईसों की ही सोहवत में रहे हैं; घास नहीं छीला किये हैं। वायें हाथ से वीस रुपये इधर रख दीजिए। वस, इसी में ख़ैर है; वर्ना उल्टी आंतें गले पड़ेंगी। अव सोचते क्या हो ? ज़रा चीं-चपड़ करोगे, तो क़लई खोल दूंगा। वोलो, अव क्या राय है ? वीस रुपये से ग़म खाओगे, या ज़िल्लत उठाओगे ? अभी तो कोई कानोंकान नहीं सुनेगा, पीछे अलवता बड़ी टेढ़ी खीर है।

दारोग़ा—वाह री फूटी क़िस्मत ! आज सुवह-सुवह वोहनी अच्छी हुई थी। अच्छे का मुंह देखकर उठे थे; मगर हज़रत ने अपनी मनहूस सूरत दिखायी। अव वावन में से आपको वीस रुपये, रक़म की रक़म निकाल दें, तो हमारे पास क्या खाक रहे ? और हां, ख़ूव याद आया, वावन किस मरदूद को मिले। सैंतालीस ही तो हमारे हत्थे चढ़े। दस तुम भी लो भई। (गर्दन में हाथ डालकर) मान जाओ उस्ताद। हमें ज़रूरत थी इससे कहा, वरना क्या वात थी। और फिर हम तुम ज़िंदा हैं तो सैकड़ों लूटेंगे मियां, ये हाथ दोनों लूटने ही के लिए हैं, या कुछ और ?

खोजी—दस में तो हमारा पेट न भरेगा। अच्छा भई, पन्द्रह दो।

आखिर दारोग़ा ने मजवूर होकर पन्द्रह रुपये मियां खोजी को नज़र किये और दोनों आदमी जाकर महफ़िल में शरीक़ हुए। थोड़े ही देर वैठे होंगे कि चोवदार ने आकर कहा—हुज़ूर, वह वज़ाज़ आया है, जो विलायती कपड़ा वेचता है। कल भी हाज़िर हुआ था; मगर उस वक्त मौक़ा न था, मैंने अर्ज़ न किया।

नवाव—दारोग़ा से कहो, मुझे क्या घड़ी-घड़ी आके परचा जड़ते हो। (दारोग़ा से) आओ भई, उसको भी लगे हाथों भुगता ही दो। झंझट क्यों वाक़ी रह जाय। कुछ और कपड़ा आया है विलायत से ? आया हो, तो दिखाओ; मगर वावा मोल की सनद नहीं।

वजाज—अव कोई दूज तक सव कपड़ा आ जाएगा। और, हुज़ूर ऐसी वातें कहते हैं ! भला, इस ड्योढ़ी पर हमने कभी मोल-तोल की वात की है आज तक ? और यों तो आप अमीर हैं, जो चाहे कहें, मालिक हैं हमारे।

दारोग़ा—और वजाज चले। जव दारोग़ा साहव की खपरैल में दोनों जाकर वैठे, तो मियां ख़ोजी भी रेंगते हुए चले और दन से मौजूद ! दारोग़ा ने जो इनको देखा तो काटो तो वदन में लहू नहीं; मुर्दनी सी चेहरे पर छा गयी ! चुप ! हवाइयां उड़ी हुई। समझे कि यह ख़ोजी एक ही काइयां है। इससे ख़ुदा पनाह में रखे। सुवह को तो मरदूद ने हत्थे ही पर टोक दिया, और पन्द्रह पटीले। अव जो देखा कि वज़ाज़ आया, तो फिर मौजूद। आज रात को इसकी टांग न तोड़ी हो, तो सही। मगर फिर सोचे कि गुड़ से जो मरे, तो जहर क्यों दें। आओ इस वक़्त चुनीं-चुनां करें, फिर समझा जाएगा। वोले—आओ भाईजान, इधर मोढ़े पर वैठो। अच्छी तरह भई ? हुक़्क़ा लाओ, आपके लिए।

वज़ाज़ सदर-वाज़ार का रहने वाला एक ही उस्ताद था। ताड़ गया कि इसके वैठने से मेरा और दारोग़ा का मतलव ख़व्त हो जायेगा ? किसी तदवीर से इसको यहां

से निकालना चाहिए। पहले तो कुछदेर दारोग़ा से इशारों मे बातें हुआ की। फिर थोड़ी देर के बाद बज़ाज़ ने कहा—मियां साहब, आपको यहां कुछ काम है ?

ख़ोजी—तुम अपनी कहो लालाजी, हमसे क्या वास्ता ?

बज़ाज—तुम यहां से उठ जाओ। उठते हो कि मैं दूं एक लात ऊपर से।

ख़ोजी—ओ गीदी, ज़बान संभाल; नही तो इतनी करौलियां भोंकूंगा कि ख़ून-खराबा हो जाएगा।

बज़ाज—उठूं फिर मैं ?

ख़ोजी—उठके तमाशा भी देख ले !

बजाज़—बेधा है क्या ?

ख़ोजी—वल्लाह, जो बे-ते किया, तो इतनी क़रौलियां···

खोजी कुछ और कहने ही को थे कि बज़ाज ने बैठे-बैठे मुंह दबा दिया और एक चपत जमायी। चलिए, दोनों गुथ गये। अब दारोग़ा जी को देखिए। बीच-बचाव किस मजे से करते है कि ख़ोजी के दोनों हाथ पकड़ लिये और कमर दबाये हुए है और बजाज ऊपर से इनको ठोक रहा है। दारोग़ा साहब गला फाड़-फाड़ कर गुल मचाते जाते है कि मियां, क्यों लड़े मरते हो ? भई, धौल-धप्पे की सनद नही। ख़ोजी अपने दिल मे झल्ला रहे है कि अच्छे मीरफ़ैसली बने। इतने मे किसी ने नवाब साहब से जाकर कह दिया कि मियां ख़ोजी, दारोग़ा और बजाज तीनों गुंथे पड़े है। उसी वक़्त बजाज भी दौड़ा हुआ आया और फ़रियाद की कि हुजूर, हम आपके यहां तो सस्ता माल देते है, मगर यह खोजी हिसाब-किताब के वक़्त सर पर सवार हो गये। लाख-लाख कहा किये कि भई, हम अपने माल का भाव तुम्हारे सामने न बतायेंगे; मुल इन्होने हारी मानी न जीती, और उल्टे पंजे झाड़ के चित-पट की ठहरायी। कमजोर, मार खाने की निशानी। मैंने वह गुद्दा दिया कि छठी का दूध याद करते होंगे। दारोग़ा भी रोते-पीटते आये कि दोहाई है, चारपाई की पट्टी तोड़ डाली, खासदान तोड़ डाला और सैकड़ों गालियां दी।

मियां ख़ोजी ऐसे धपियाये गये और इतनी बेभाव की पड़ी कि बस, कुछ पूछिए नही। नवाब ने पूछा—आख़िर झगड़ा क्या था ?

दारोग़ा—हुजूर यह ख़ोजी बड़े ही तीखे आदमी है। बात-बात पर क़रौली भोंकते है, और गीदी तो तकिया-कलाम है। इस वक़्त लाला बलदेव ही से भिड़ पड़े। वह तो कहिए, मैने बीच-बचाव कर दिया। वर्ना एक-आध का सिर ही फूट जाता।

बजाज—बड़े झल्ले आदमी है। दारोग़ा जी बेचारे न आ जाये तो कपड़े-वपड़े फाड़ डालें।

खोजी—तो अब रोते काहे को हो ? अब यह दुखड़ा लेके क्या बैठे हो।

नवाब—लप्पा-डग्गी तो नहीं हुई ?

ख़ोजी—नही हुजूर, शरीफ़ों में कही हाथा-पाई होती है भला ? हमने इनको ललकारा, इन्होने हमको डांटा, मगर कुंदे तौल-तौल कर दोनों रह गये। भलेमानस पर हाथ उठाना कोई दिल्लगी है !

ख़ैर, मियां ख़ोजी तो महफ़िल में जाकर बैठे और उधर लाला बलदेव और दारोग़ा साहब हिसाब करने गये।

दारोग़ा—हां भाई, बताओ।

लाला—अजी बतायें क्या, जो चाहे दिलवा दो।

दारोग़ा—पहले यह बताओ, तुम्हारा आता क्या है ? सौ, दो सौ, दस, बीस, पचास जो हो, कह दो

लाला—दारोग़ा जी, आजकल कपड़ा बड़ा मंहगा है।

दारोग़ा—लाला, तुम निरे गावदी ही रहे। हमको मंहगे-सस्ते से क्या वास्ता? हमको तो अपने हक़ से मतलव। तुम तो इस तरह कहते हो, जैसे हमारी गिरह से जाता है।

लाला—फिर तो सात सौ तिरेपन निकालिए।

दारोग़ा—वस, अरे मियां, अवकी इतने दिनों में सात-साढ़े सात सौ ही की नौवत आयी?

लाला—जी हां, आप से कुछ परदा थोड़े ही है। दो सौ पचपन रुपये का कपड़ा आया है; अन्दर-वाहर, सव मिलाकर। मगर परसों नवाव साहव कहने लगे। कि अवकी तो तुम्हारा कोई पांच-छह सौ का माल आया होगा। मैंने कहा कि ऐसे मौक़े पर चूकना गधापन है। वह तो पांच-छह सौ वताते थे, मेरे मुंह से निकल गया कि हिसाव किये से मालूम होगा। मुल कोई आठ-सात सौ का आया होगा। तो अव सात सौ तिरेपन ही रखिए। इसमें हमारा और आपका समझौता हो जायगा।

दारोग़ा—अजी, समझौता कैसा, हम-तुम कुछ दो तो हैं नहीं; और हमारे-तुम्हारे तो वाप-दादा के वक़्त से दोस्ताना है। वोलो, कितने पर फ़ैसला होता है?

लाला—वस, दो सौ छव्वीस तो हमको एक दीजिए और तीन सौ और दीजिए। इसके वाद वढ़े सो आपका।

दारोग़ा—(हंसकर) अच्छा भई, मंजूर। हाथ पर हाथ मारो। मगर सात सौ तिरेपन रुपये छह आने की रसीद लिखो, जिनमें मालूम हो कि आने-पाई से हिसाव लैस है।

लाला—वड़े काइयां हो दारोग़ा जी! अजी, दो सौ सत्ताईस रुपये छह आने कुल आपका?

खोजी—वल्कि आपके वाप का।

यह आवाज़ सुनकर दोनों चौंके। इधर-उधर देखते हैं, कोई नज़र ही नहीं आता। दारोग़ा के हवास ग़ायब। वज़ाज़ के वदन में ख़ून का नाम नहीं। इतने में फिर आवाज़ आयी—कहो, कुछ यारों का भी हिस्सा है? तव दोनों के रहे-सहे होश और भी उड़ गये।

अव सुनिए—मियां खोजी खपरैल के पिछवाड़े एक मोखे की राह से सव सुन रहे थे। जव कुल कार्रवाई खतम हो गयी, तो आवाज़ लगायी, ख़ैर दारोग़ा और लाला वलदेव ने उनको ढूंढ़ निकाला और लल्लो-पत्तो करने लगे।

वज़ाज़—हमारा क़सूर फिर माफ़ कीजिए।

दारोग़ा—अजी, ये ऐसे आदमी नहीं हैं। ये वेचारे किसी से लड़ने-भिड़ने वाले नहीं। वाक़ी लड़ाई-झगड़ा तो हुआ ही करता है। दिल में क़ुदरत आयी और साफ़ हो गये।

खोजी—ये वातें तो उम्र भर हुआ करेंगी। मतलव की वात फ़रमाइए। लाओ कुछ इधर भी।

दारोग़ा—जो कहो।

खोजी—सौ दिलवाइए पूरे। एक सौ लिये वग़ैर न टलूंगा। आज तुम दोनों ने मिलकर हमारी खूव मरम्मत की है।

दारोग़ा—यह तीस रुपए तो एक लीजिए और यह दस का नोट, वस। और जो अलसेट कीजिए, तो इससे भी हाथ धोइए।

खोजी—ख़ैर लाइए, चालीस ही क्या कम हैं।

दारोग़ा—हम समझते थे कि वस हमी-हम हैं; मगर आप हमारे भी गुरू पैदा हुए।

मियां खोजी और दारोग़ा साहब हाथ मे हाथ दिये जाकर महफ़िल मे बैठे, गोया दोनो मे दांत-काटी रोटी थी। मगर दारोग़ा का बस चलता, तो खोजी को काले पानी ही भेज देते, या जिंदा चुनवा देते। महफ़िल मे लतीफ़े उड़ रहे थे।

नुदरत—हुजूर, आज एक आदमी ने हमसे पूछा कि अगर दरिया मे नहाय, तो मुंह किस तरफ़ रखे। हमने कहा था कि भाई, अगर अक्लमंद हो, तो अपने कपड़ों की तरफ़ रखो, वर्ना चोर उठा ले जाएगा और आप गोते ही खाते रह जायेंगे।

हाफ़िज—पुराना लतीफ़ा है।

आजाद—एक हकीम ने कहा कि जब तक मै विन व्याहा था, तो बीवी वाले गूगे हो गये थे और अब जो शादी करली, तो एक-एक मुह मे सौ-सौ जबाने है।

इतने मे गंधी ने आकर सलाम किया।

नवाब—दारोग़ाजी, इनको भी भुगता दो।

दारोग़ा और गंधी खपरैल मे पहुंचे, तो दारोग़ा ने पूछा—कितना इत्र आया?

गंधी—देखिए, आपके यहां तो लिखा होगा।

दारोग़ा—हां, लिखा तो है। मगर खुदा जाने वह काग़ज कहां पड़ा है। तुम अपनी याद से जो जी मे आये, बता दो।

गधी—पैंतीस रुपये तो कल के हुए, और अस्सी रुपये उधर के। बेगम साहिबा ने अब की इत्र की भरमार ही कर दी। क़रावे के क़रावे खाली कर दिये।

दारोग़ा—अच्छा भई, फिर इसमे किसी के बाप का क्या इजारा। शौक़ीन है, रईसजादी है, अमीर है। इत्र उन्ही के लिए है, या हमारे-आपके लिए? अच्छा, तो कुल एक सौ पन्द्रह रुपये हुए न! तुम भी क्या याद करोगे। लो, सौ ये है और तीन नोट पांच-पांच के।

गंधी—अच्छा लीजिए, यह इत्र की शीशी आपके लिए लाया हूं।

दारोग़ा—किस चीज़ का है?

गंधी—सूघिए, तो मालूम हो। ख़ुदा जानता है, दस रुपये तोले में झड़ाझड़ उड़ा जा रहा है।

मियां गंधी उधर रवाना हुए, इधर दारोग़ा जी खुश-खुश चले, तो आवाज आयी कि उस्ताद, इस शीशी मे यारो का भी हिस्सा है। पीछे फिर के देखते है, तो मियां खोजी घूमते हुए चले आते है।

दारोग़ा—यार, तुमने तो बेतरह पीछा किया।

खोजी—अब की तो तुमको कुछ न मिला। मगर इस इत्र मे से आधी शीशी लेंगे।

दारोगा—अच्छा भई, ले लेना। तुमसे तो कोर ही दबी है। दोनों आदमी जाकर महफ़िल मे फिर शरीक हो गये।

इकतीस

एक दिन पिछले पहर से खटमलों ने मियां ख़ोजी के नाक मे दम कर दिया। दिन भर का खून जोक की तरह पी गये। हजरत बहुत ही झल्लाये; चीख़ उठे, लाना क़रौली, अभी सबका ख़ून चूस लू। यह हांक जो औरो ने सुनी, तो नीद हराम हो गयी। चोर का शक हुआ। लेना-लेना, जाने न पाये। सराय भर में हुल्लड़ मच गया। कोई आंखे मलता हुआ अंधेरे मे टटोलता है, कोई आखे फाड-फाड़कर अपनी गठरी को देखता है, कोई मारे डर के आंखे बन्द किये पड़ा है। मियां ख़ोजी ने जो चोर-चोर की आवाज सुनी, तो ख़ुद भी

गुल मचाना शुरू किया—लाना मेरी क़रौली। ठहर! मैं भी आ पहुंचा। पीनक में सूझ गयी कि चोर आगे भागा जाता है, दौड़ते-दौड़ते ठोकर खाते हैं तो अररर धों! गिरे भी कहां, जहां कुम्हार के हंडे रखे थे। गिरना था कि कई हंडे चकनाचूर हो गये। कुम्हार ने ललकारा कि चोर-चोर। यह उठने ही को थे कि उसने आकर दबोच लिया और पुकारने लगा—दौड़ो-दौड़ो, चोर पकड़ लिया। मुसाफ़िर और भठियारे सब-के-सब दौड़ पड़े। कोई डंडा लिये है, कोई लट्ठ बांधे। किसी को क्या मालूम कि यह चोर है, या मियां खोजी। खूब वेभाव की पड़ी। यार लोगों ने ताक-ताककर जन्नाटे के हाथ लगाये। खोजी की सिट्टी-पिट्टी भूल गयी; न क़रौली याद रही, न तमंचा। जब खूब पिट-पिटा चुके, तो एक मुसाफ़िर ने कहा—भई, यह तो खोजी मालूम होते हैं। जब चिराग़ जलाया गया, तो आप दबके हुए नज़र आये। मियां आज़ाद से किसी ने आकर कह दिया कि तुम्हारे साथी खोजी चोरी की इल्लत में फंसे हैं, किसी मुसाफ़िर की टोपी चुरायी थी। दूसरे ने कहा—नहीं-नहीं, यह नहीं हुआ। हुआ यह कि एक कुम्हार की हंडियां चुराने गये थे। मुल जाग हो गयी।

मियां आज़ाद को यह बात कुछ जंची नहीं। सोचे, खोजी बेचारे चोरी-चकारी क्या जानें। फिर चोरी भी करते तो हंडियों की? दिल में ठान ली कि चलें और खोजी को बचा लायें। चारपाई से उतरे ही थे कि देखा, खोज़ी साहब झूमते चले आते हैं और बड़बड़ाते जाते हैं—हत् तेरी गीदी की, बड़ा आज़ाद बना है। चारपाई पर पड़ा जर्र-खर्र किया किया और हमारी ख़बर ही नहीं।

आज़ाद—खैर, हमको तो पीछे गालियां देना, पहले यह बताओ कि हाथ-पांव तो नहीं टूटे?

खोजी—हाथ-पांव! अजी, आप उस वक़्त होते तो देखते कि बंदे ने क्या-क्या जौहर दिखाये। पचास आदमी घेरे हुए थे, पूरे पचास, एक कम न एक ज़्यादा, और मैं फुलझड़ी बना हुआ था। बस, यह क़ैफ़ियत थी कि किसी को अंटी दी धम से ज़मीन पर, किसी को कूले पर लादकर मारा। दो-चार मेरे रोब में आकर थरथरा के गिर ही तो पड़े। दस-पांच की हड्डी-पसली चकनाचूर कर दी। जो सामने आया, उसे नीचा दिखाया।

आज़ाद—सच?

खोजी—खुदाई भर में कोई ऐसा जीवटदार आदमी दिखा तो दीजिए।

आज़ाद—भई, खुदाई भर का हाल तो खुदा ही को खूब मालूम है। मगर इतनी गवाही तो हम भी देंगे कि आप-सा बेहया दुनिया भर में न होगा।

दोनों आदमी इस वक़्त सो रहे, दूसरे दिन सवेरे नवाब साहब के यहां पहुंचे।

आज़ाद—जनाब, रुखसत होने आया हूं। ज़िन्दगी है, तो फिर मिलूंगा।

नवाब—क्या कूच की तैयारी कर दी? भई, वापस आना, तो मुलाक़ात ज़रूर करना।

आज़ाद और खोजी रुख़सत हुए, तो खोजी पहुंचे ज़नानी ड्योढ़ी पर और दरबान से बोले—यार, ज़रा बुआ ज़ाफ़रान को नहीं बुला देते। दरबान ने आवाज़ दी—बुआ ज़ाफ़रान, तुम्हारे मियां आये हैं।

बुआ ज़ाफ़रान के मियां खोजी से बिलकुल मिलते-जुलते थे, ज़रा फ़र्क़ नहीं। वही सवा बालिश्त का क़द, वही दुबले-पतले हाथ-पांव। ज़ाफ़रान उनसे रोज़ कहा करती थी—तुम अफ़ीम खाना छोड़ दो। वह कब छोड़नेवाले थे भला। इसी सबब से दोनों में दम भर नहीं बनती थी। ज़ाफ़रान ने जो बाहर आकर देखा, तो हज़रत पीनक ले रहे हैं। जल-भुनकर खाक ही तो हो गयी। जाते ही मियां खोजी के पट्टे पकड़कर

एक, दो, तीन, चार, पांच चांटे लगा ही तो दिये। खोजी का नशा हिरन हो गया। चौककर बोले—लाना तो क़रौली, खोपड़ी पिलपिली हो गयी। हाथ छुड़ाकर भागना चाहा; मगर वह देवनी नवाब का माल खा-खाकर हथनी बनी फिरती थी। इनको चुरमुर कर डाला। इधर गुल-गपाड़े की आवाज़ हुई, तो बेगम साहिबा, मामा, लौडियां, सब पर्दे के पास दौड़ी।

बेगम—जाफ़रान, आखिर यह है क्या? रुई की तरह इस बेचारे को तूम के धर दिया।

मामा—हुजूर, जाफ़रान का क़सूर नही, यह उस मरदुए का क़सूर है जो जोरू के हाथ बिक गया है। (खोजी के कान पकड़कर) जोरू के हाथ से जूतियां खाते हो, और जरा चू नही करते?

खोजी—हाय अफ़सोस! अजी, यह जोरू किस मरदूद की है। खुदा-खुदा करो! भला मै इस हुड़दंगी, काली-कलूटी डाइन के साथ ब्याह करता! मार-मार के भुरकस निकाल लिया।

बुआ जाफ़रान ने जो ये बातें सुनी, तो वह आवाज़ ही नही। गौर करके देखती है, तो यह कोई और ही है। दांतों के तले उंगली दबाकर खामोश हो रहीं।

लौडी—ऐ वाह बुआ जाफ़रान! इतनी भी नही पहचानती। यह बेचारे तो नवाब साहब के यहां बने रहते थे। आखिर तुमको सूझी क्या?

बेगम साहिबा ने भी जाफ़रान को खूब आड़े हाथों लिया। इतने मे किसी ने नवाब साहब से सारा क़िस्सा कह दिया! महफ़िल भर मे क़हक़हा पड़ गया।

नवाब—जाफ़रान की सजा यही है कि खोजी को दे दी जाये।

खोजी—बस, गुलाम के हाल पर रहम कीजिए। गजब खुदा का! मियां के धोखे-धोखे में तो इसने हमारे हाथ-पांव ढीले कर दिये और जो कही सचमुच मियां ही होते, तो चटनी ही कर डालती। क्या कहे, कुछ बस नही चलता, नही नवाबी होती, तो इतनी करौलियां भोंकी होती कि उम्र भर याद करती। यहां कोई ऐसे-वैसे नही। घास नही खोदा किये है।

बडी देर तक अन्दर-बाहर क़हक़हे पड़े, तब दोनों आदमी फिर से रुखसत होकर चले। रास्ते में मियां आज़ाद मारे हंसी के लोट-लोट गये।

खोजी—जनाब, आप हंसते क्या है? मैने भी ऐसी-ऐसी चुटकियां ली है कि जाफ़रान भी याद ही करती होगी।

आजाद—मियां, डूब मरो जाकर। एक औरत से हाथापाई मे जीत न पाये!

खोजी—जी, वह औरत सौ मर्द के बराबर है। चिमट पड़े, तो आपके भी हवास उड़ जायें।

दोनों आदमी सराय पहुंचकर चलने की तैयारी करने लगे। खाना खाकर बोरिया-बक़चा संभाल स्टेशन को चले।

खोजी—हजरत, चलने को तो हम चलते है, मगर इतनी शर्तें आपको क़बूल करनी होंगी—

(1) क़रौली हमको जरूर ले दीजिए।

(2) बरस भर के लिए अफ़ीम ले लीजिए। मैं अपने लादे-लादे फिरूंगा। वरना जम्हाइयों पर जम्हाइयां आयेगी और बेमौत मर जाऊंगा। आप तो औरतो की तरह नशे के आदी नही; मगर मैं बगैर अफ़ीम पिये एक कदम न चलूगा। परदेस मे अफ़ीम मिले, या न मिले, कहां ढूंढ़ता फिरूंगा?

(3) इतना बता दीजिए कि वहां बुआ जाफ़रान की-सी डंडपेल देवनियां तो

नज़र न आयेंगी ? वल्लाह, क्या कस-कस के लातें लगायी हैं, और क्या तान-तान के मुक्केबाज़ी की है कि पलेथन ही निकाल डाला।

(4) सराय में हम अब तमाम उम्र न उतरेंगे, और जो जहाज़ पर कुम्हार हुए तो हम डूब ही मरेंगे। हम ठहरे आदमी भारी-भरकम, कहीं पांव फिसल गया और एक-आध हंडा टूट गया, तो कुम्हार से ठांय-ठांय हो जायेगी।

(5) जिस रईस की सोहबत में बज़ाज़ आते होंगे, वहां हम न जायेंगे।

(6) जहां आप चलते हैं, वहां कांजी हौस तो नहीं है कि गधे के धोखे में कोई हमको कान पकड़ के कांजीहौस पहुंचा दे।

(7) टट्टू पर हम सवार न होंगे, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाये।

(8) मीठे पुलाव रोज़ पकें।

(9) हमको मियां खोजी न कहना। जनाब ख़्वाजा साहब कहा कीजिए। यह खोजी के क्या माने ?

(10) मोर्चे पर हम न जायेंगे। लूट-मार में जो कुछ हाथ आये, वह हमारे पास रखा जाये।

(11) गोली खाने के तीन घण्टे पहले और मरने के दो घड़ी पहले हमें बतला देना।

(12) अगर हम मर जायें, तो पता लगाकर हमारे वालिद के पास ही हमारी लाश दफ़न करना। अगर पता न लगे, तो किसी क़ब्रिस्तान में जाकर सबसे अच्छी क़ब्र के पास हमको दफ़न करना। और लिख देना कि यह इनके वालिद की क़ब्र है।

(13) पीनक के वक़्त हमको हर्गिज़ न छेड़ना।

आज़ाद—तुम्हारी सब शर्तें मंजूर। अब तो चलिएगा।

खोजी—एक बात और बाक़ी रह गयी।

आज़ाद—लगे हाथों वह भी कह डालिए।

खोजी—मैं अपनी दादीजान से तो पूछ लूं।

आज़ाद—क्या वह अभी ज़िंदा हैं ? खुदा झूठ न बुलाये, तो आप कोई पचास के पेटे में होंगे ? और वह इस हिसाब से कम-से-कम क्या डेढ़ सौ बरस की भी न होंगी ?

खोजी—अजी, मैं दिल्लगी करता था। उनकी तो हड्डियों तक का पता न होगा।

स्टेशन पर पहुंचे। गुल-गपाड़ा मचा हुआ था। दोनों आदमी भीड़ काटकर अंदर दाखिल हुए, तो देखा, एक आदमी गेरुए कपड़े पहने खड़ा है। फ़क़ीरों की-सी दाढ़ी, बाल कमर तक, मूंछें मुड़ी हुईं, कोई पचास के पेटे में। मगर चेहरा सुर्ख़, जैसे लाल अंगारा; आंखें आगभभूका।

आज़ाद—(एक सिपाही से) क्यों भई, क्या यह कोई फ़क़ीर हैं ?

सिपाही—फ़क़ीर नहीं, चंडाल है। कोई चार महीने हुए, यहां आया और एक आदमी को सब्ज़-बाग़ दिखाकर अपना चेला बनाया। रफ़्ता-रफ़्ता और लोग भी शागिर्द हुए। फिर तो हज़रत पुजने लगे। अब कोई तो कहता है कि बाबा जी ने दस सेर मिठाई दरिया में डाल दी और दूसरे दिन जाकर कहा—गंगा जी, हमारी अमानत हमको वापस कर दो। दरिया लहरें मारता हुआ बाबा जी के पास आया और दस सेर गरमागरम मिठाई किसी ने आप-ही-आप उनके दामन में बांध दी। कोई क़समें खा-खाकर कहता है कि कई मुर्दे इन्होंने जिन्दा कर दिये। एक साहब ने यहां तक बढ़ाया कि एक दिन मूसलाधार मेंह बरस रहा था और इन पर बूंद ने असर न किया। कोई फ़रिश्ता इन पर छतरी लगाये रहा।

आज़ाद—चिकने घड़े बन गये ।

सिपाही—कुछ पूछिए नहीं । उन लोगों ने कहना शुरू कर दिया था कि यह क़ैदख़ाने से निकल जायेंगे; मगर तीन दिन से हवालात में हैं, और अब सिट्टी-पिट्टी भूली हुई है । मैं जो उधर से आऊं-जाऊं, तो रोज देखूं कि भीड़ लगी हुई है; मगर औरतें ज्यादा और मर्द कम । जो आता है, वह सिजदा करता है आपकी देखा-देखी मैं गया, मेरी देखा-देखी आप गये । बाबा जी के यहां रोज दरबार लगने लगा ।

एक दिन का ज़िक्र है कि बावा जी ने अपनी कोठरी में टाट के नीचे दस-पांच रुपये रख दिये और चुपके से बाहर निकल आये । जब दरबार जम गया, तो एक आदमी ने कहा—बाबा जी, हमको कुछ दिखाइए । बिना कुछ देखे हम एक न मानेंगे । बाबाजी ने आंखें नीली-पीली कीं और शेर की तरह गरजे—लोगों के होश उड़ गये । दो-चार डरपोक आदमियों ने तो मारे डर के आंखें बन्द कर ली । एक आदमी ने कहा—बाबा, अनजान है । इस पर रहम कीजिए । दूसरा बोला—नादान है, जाने दीजिए ।

'फ़क़ीर—नहीं, इससे पूछो, क्या देखेगा ?

'आदमी—बाबा, मैं तो रुपयों का भूखा हूं ।

'फ़क़ीर—बच्चा, फ़क़ीरों को दौलत से क्या काम ? मगर तेरी ख़ातिर करना भी ज़रूरी है । चल, चल, चल । बरसो, बरसो, बरसो । खन, खन, खन । अच्छा बच्चा, कुटी में देख; टाट का कोना उठा । ख़ुदा ने तेरे लिए कुछ भेजा ही होगा । मगर दाहिना सुर चलता हो, तभी जाना; नहीं तो धोखा खायेगा । वहां कोई डरावनी सूरत दिखायी दे, तो डर मत जाना; नहीं तो मर जायेगा ।

'बाबा जी ने कुटी के एक कोने में परदा डाल दिया था और उस परदे में एक आदमी का मुंह काला करके बिठा दिया था । अब तो आदमी डरा कि न जाने कैसी भयानक सूरत नजर आयेगी । कहीं डर जाऊं, तो जान ही जाती रहे । बाबा जी एक-एक से कहते हैं, मगर किसी की हिम्मत नहीं पड़ती । तब एक नौजवान ने उठकर कहा—लीजिए, मैं जाता हूं ।

'फ़क़ीर—बच्चा, जाता तो है, मगर ज़रा संभलकर जाना ।

'नौजवान बेधड़क कोठरी में घुस गया । टाट के नीचे से रुपये निकालकर जेब में रख लिये और चलने ही को था कि परदे में से वह काला आदमी निकल पड़ा और जवान की तरफ़ मुंह खोलकर झपटा । जवान ने आव देखा न ताव, लकड़ी उसकी हलक़ में डाल दी और इतनी चोटें लगायीं कि बौखला दिया । जब वह रुपये लिये अकड़ता हुआ बाहर निकला, तो हवाली-मवाली सब दंग कि यह तो ख़ुश-ख़ुश आते हैं और हम समझे थे कि अब इनकी लाश देखेंगे ।

'नौजवान—(फ़क़ीर से) कहिए हजरत, और कोई करामात दिखाइएगा ?

'फ़क़ीर—बच्चा, तुम्हारी जवानी पर हमें तरस आ गया ।

'नौजवान—पहले जाकर अन्दर देखिए तो आपके देव साहब की क्या हालत है ? जरा मरहम-पट्टी कीजिए ।'

अगर वहां समझदार लोग होते तो समझ जाते कि बाबा जी पूरे ठग हैं; मगर वहां तो सभी ज़ाहिल थे । वे समझे, बेशक बाबा जी ने नौजवान पर रहम किया । ख़ैर, बाबा जी ने ख़ूब हाथ-पांव फैलाये । एक दिन किसी महाजन के यहां गये । वहां मुहल्ले-भर के मर्द और औरतें जमा हो गयी । रात को जब सब लोग चले गये, तो इन्होंने महाजन के लड़के से कहा—हम तुमसे बहुत ख़ुश हैं । जो चाहे मांग ले । लड़का इनके क़दमों पर गिर पड़ा । आपने फ़रमाया कि एक कोरी हांडी लाओ, चूल्हा गरम करो; मगर लकड़ी न हो, कंडे हों । कुम्हार ने सब सामान चुटकियों में लैस कर दिया । तब

आपने लोहे का एक पत्तर मंगवाया। उसे हांड़ी में पानी भरकर डाल दिया। पानी को लेकर कुछ पढ़ा। थोड़ी देर के वाद एक पुड़िया दी और कहा—वह सफ़ेद दवा उसमें डाल दे। थोड़ी देर के बाद जव महाजन का लड़का अन्दर गया, तो वावा जी ने लोहे का पत्तर निकाल दिया और अपने पास से सोने का पत्तर हांड़ी में डाल दिया, और चल दिये। महाजन का लड़का वाहर आया, तो वावा जी का पता नहीं। हांड़ी को जो देखो, तो लोहे का पत्तर ग़ायव, सोने का थक्का मौजूद। मुहल्ले-भर में शोर मच गया। लोग वावा जी को ढूंढ़ने लगे। आखिर यहां तक नौवत पहुंची कि एक मालदार की वीवी ने चकमे में आकर अपना पांच-छह हज़ार का ज़ेवर उतार दिया। वावा जी ज़ेवर लेकर उड़ गये। साल भर तक कहीं पता न चला। परसों पकड़े गये हैं।

थोड़ी देर के वाद गाड़ी आयी। दोनों आदमी जा वैठे।

बत्तीस

सुवह को गाड़ी एक वड़े स्टेशन पर रुकी। नये मुसाफ़िर आ-आ कर वैठने लगे। मियां खोजी अपने कमरे के दरवाज़े पर खड़े घुड़कियां जमा रहे थे—आगे जाओ, यहां जगह नहीं है; क्या मेरे सिर पर वैठोगे? इतने में एक नौजवान दूल्हा वराती कपड़े पहने आकर गाड़ी में वैठ गया। वरात के और आदमी असवाव लदवाने में मसरूफ़ थे। दुलहिन और उसकी लौंडी ज़नाने कमरे में वैठायी गयी थीं। गाड़ी चलने वाली ही थी कि एक वद-माश ने गाड़ी में घुसकर दूल्हे की गरदन पर तलवार का ऐसा हाथ लगाया कि सिर कट कर धड़ से अलग हो गया। उस वेगुनाह की लाश फड़कने लगी। स्टेशन पर कुहराम मच गया। सैकड़ों आदमी दौड़ पड़े और क़ातिल को गिरफ़्तार कर लिया। यहां तो यह आफ़त थी, उधर दुलहिन और महरी में और ही वातें हो रही थीं।

दुलहिन—दिलवहार, देखो तो, यह गुल कैसा है? ज़रा झांककर देखना तो!

दिलवहार—हैं-हैं! किसी ने एक आदमी को मार डाला है। चवूतरा सारा लहू-लुहान है।

दुलहिन—अरे ग़ज़व। क्या जाने, कौन था वेचारा!

दिलवहार—अरे! वात क्या है! लाश के सिरहाने खड़े तुम्हारे देवर रो रहे हैं।

एक दफ़े लाश की तरफ़ से आवाज़ आयी—हाय, भाई, तू किधर गया! दुल-हिन का कलेजा धक-धक करने लगा। भाई-भाई करके कौन रोता है। अरे ग़ज़व! वह घवरा कर रेल से उतरी और छाती पीटती हुई चली। लाश के पास पहुंचकर वोली—हाय, लुट गयी! अरे लोगो, यह हुआ क्या?

दिलवहार—हैं-हैं दुलहिन, तुम्हारा नसीव फूट गया।

इतने में स्टेशन की दो-चार औरतें—तार-वावू की वीवी, गार्ड की लड़की, ड्राइवर की भतीजी वग़ैरह ने आकर समझाना शुरू किया। स्टेशन मातमसरा वन गया। लोग लाश के इर्द-गिर्द खड़े अफ़सोस कर रहे थे। वड़े-वड़े संगदिल आठ-आठ आंसू रो रहे थे। सीना फटा जाता था। एकाएक दुलहिन ने एक ठंडी सांस ली, ज़ोर से हाय करके चिल्लायी और अपने शौहर की लाश पर धम से गिर पड़ी। चंद मिनट में उसकी लाश भी तड़प कर सर्द हो गयी। लोग दोनों लाशों को देखते थे, और हैरत से दांतों उंगली दवाते थे। तक़दीर के क्या खेल हैं, दुलहिन के हाथ-पांव में मेंहदी लगी हुई, सिर से पांव तक ज़ेवरों से लदी हुई; मगर दम के दम में कफ़न की नौवत आ गयी। अभी स्टेशन से एक पालकी पर चढ़ कर आयी थी, अव तावूत में जायगी। अभी कपड़ों से इत्र की महक आ रही थी कि काफ़ूर की तदवीरें होने लगीं। सुवह को दरवाज़े पर रोशन-

चौकी और शहनाई बज रही थी, अब मातम की सदा है। थोड़ी ही देर हुई कि शहर के लोग छतों और दूकानों से बरात देख रहे थे, अब जनाजा देखेंगे। दिलबहार दोनों लाशों के पास बैठी थी; मगर आंसुओं का तार बंधा हुआ था। वह दुलहिन के साथ खेली थी। *दुनिया उसकी नज़रों मे अंधेरी हो गयी थी।* *दूल्हा के ख़िदमतगार क़ातिल को जोर-*जोर से जूते और थप्पड़ लगा रहे थे और मरने वाले को याद करके ढाड़ें मार-मार के रोते थे। ख़ैर, स्टेशन मास्टर ने लाशों को उठवाने का इंतजाम किया। गाड़ी तो चली गयी। मगर बहुत से मुसाफ़िर रेल पर से उतर आये। बला से टिकट के दाम गये। उस क़ातिल को देखकर सबकी आंखों से ख़ून टपकता था। यही जी चाहता था कि इसको इसी दम पीस डालें। इतने मे लाल कुर्ती का एक गोरा, जो बड़ी देर से चिल्ला-चिल्ला कर रो रहा था, ग़ुस्से को रोक न सका, जोश में आके झपटा और क़ातिल की गरदन पकड़ कर उसे ख़ूब पीटा।

आजाद और मियां ख़ोजी भी रेल से उतर पड़े थे। दोनों लाशों के साथ उनके घर गये। राह में हज़ारों आदमियों की भीड़ साथ हो गयी। जिन लोगों ने उन दोनों की सूरत ख़्वाब में भी न देखी थी, जानते भी न थे कि कौन है और कहां रहते हैं, वे भी ज़ार-ज़ार रोते थे। औरतें बाजारों, झरोखों और छतों पर से छाती पीटती थीं कि ख़ुदा ऐसी घड़ी सातवें दुश्मन को भी न दिखाये। दुकानदारों ने जनाज़े को देखा और दुकान बढा के साथ हुए। रईसजादे सवारियों पर से उतर-उतर पड़े और जनाज़े के साथ चले। जब दोनों लाशें घर पर पहुंची, तो सारा शहर उस जगह मौजूद था। दुलहिन का बाप हाय-हाय कर रहा था और दूल्हे का बाप सब्र की सिल छाती पर रखे उसे समझाता था—भाई सुनो, हमारी और तुम्हारी उम्र एक है, हमारे मरने के नजदीक है। और दो-चार बरस बेहयाई से जिये तो जिये, वर्ना अब चलचलाव है। किसी को हम क्या रोयें। जिस तरह तुम आज अपनी प्यारी बेटी को रो रहे हो, इसी तरह हजारों आदमियों को अपनी औलाद का ग़म करते देख चुके हो। इसका अफ़सोस ही क्या ? वह ख़ुदा की अमानत थी, ख़ुदा के सुपुर्द कर दी गयी।

उधर क़ातिल पर मुक़दमा पेश हुआ और फांसी का हुक्म हो गया। सुबह के वक़्त क़ातिल को फ़ांसी के पास लाये। फांसी देखते ही बदन के रोएं खड़े हो गये। बड़ी हसरत के साथ बोला—सब भाइयों को सलाम। यह कहकर फ़ांसी की तरफ़ नज़र की और ये शेर पढ़े—

कोई दम कीजिए किसी तौर से आराम कही;
चैन देती ही नहीं गरदिशे अय्याम कही।
सैद लाग़र हूं, मेरी जल्द ख़बर ले सैयाद;
दम निकल जाय तड़प कर न तहे दाम कहीं।

खोजी—क्यो मियां, शेर तो उसने कुछ बेतुके से पढ़े। भला इस वक़्त शेर का क्या ज़िक्र था।

आज़ाद —चुप भी रहो उस बेचारे की जान पर बन आयी है, और तुमको मजाक़ सूझता है—

उन्हें कुछ रहम भी आता है या रब, वक़्ते ख़ूं-रेज़ी;
छुरी जब हल्क़े-आजिज पर रवां जल्लाद करते हैं।

क़ातिल फांसी पर चढ़ा दिया गया और लाश फड़कने लगी। इतने में लोगों ने देखा कि एक आदमी घोड़ा कड़कड़ाता सामने से आ रहा है। वह सीधा जेलख़ाने में

दाख़िल हुआ और चिल्लाकर बोला—खुदा के वास्ते एक मिनट की मुहलत दो। मगर वहां तो लाश फड़क रही थी। यह देखते ही सवार धम से घोड़े से गिर पड़ा और रोकर बोला—यह तीसरा था। जेल के दरोग़ा ने पूछा—तुम कौन हो? उसने फिर आहिस्ता से कहा—यह तीसरा था। अब एक-एक आदमी उससे पूछता है कि मियां, तुम कौन हो और रोक लो, रोक लो की आवाज़ क्यों दी थी? वह सबको यही जवाब देता है—यह तीसरा था।

आज़ाद—आपकी हालत पर अफ़सोस आता है।

सवार—भई, यह तीसरा था।

इनसान का भी अजब हाल है। अभी दो ही दिन हुए कि शहर भर इस क़ातिल के ख़ून का प्यासा था। सब दुआ कर रहे थे कि इसके बदन को चील-कौए खायें। वे भी इस बूढ़े की हालत देखकर रोने लगी। क़ातिल की बेरहमी याद न रही। सब लोग उस बूढ़े सवार से हमदर्दी करने लगे! आख़िर, जब बूढ़े के होश-हवास दुरुस्त हुए, तो यों अपना क़िस्सा कहने लगा—

मैं क़ौम का पठान हूं। तीन ऊपर सत्तर बरस का सिन हुआ। ख़ुदा ने तीन बेटे दिये। तीनों जवान हुए और तीनों ने फांसी पायी। एक ने एक क़ाफ़िले पर छापा मारा। उस तरफ़ लोग बहुत थे। क़ाफ़िले वालों ने उसे पकड़ लिया और अपने-आप एक फांसी बना कर लटका दिया। जिस वक़्त उसकी लाश को फांसी पर से उतारा मैं भी वहां जा पहुंचा। लड़के की लाश देखकर ग़श की नौबत आयी मगर चुप। अगर ज़रा उन लोगों को मालूम हो जाए कि यह उसका बाप है; तो मुझे भी जीता न छोड़े। एका-एक किसी ने उनसे कह दिया कि यह उसका बाप है। यह सुनते ही दस-पंद्रह आदमी चिपट गये और आग जलाकर मुझसे कहा कि अपने लड़के की लाश को इसमें जला। भाई,जान बड़ी प्यारी होती है। इन्हीं हाथों से, जिनसे लड़के को पाला था, उसे आग में जला दिया।

'अब दूसरे लड़के का हाल सुनिए—वह रावलपिंडी में राह-राह चला जाता था कि एक आदमी ने, जो घोड़े पर सवार था, उसको चाबुक से हटाया! उसने झल्लाकर तलवार म्यान से खींची और उसके दो टुकड़े कर डाले। हाकिम ने फांसी का हुक्म दिया। और आज का हाल तो आप लोगों ने ख़ुद ही देखा। इस लड़की के बाप ने क़रार किया था कि मेरे बेटे के साथ निकाह पढ़वायेगा। लड़के ने जब देखा कि यह दूसरे की बीबी बनी, तो आपे से बाहर हो गया!'

मियां आज़ाद और खोजी बड़ी हसरत के साथ वहां से चले।

खोजी—चलिए, अब किसी दुकान पर अफ़ीम ख़रीद लें।

आज़ाद—अजी, भाड़ में गयी आपकी अफ़ीम। आपको अफ़ीम की पड़ी है, यहां मारे ग़म के खाना-पीना भूल गये।

खोजी—भई, रंज घड़ी-दो घड़ी का है। यह मरना-जीना तो लगा ही रहता है।

दोनों आदमी बातें करते हुए जा रहे थे, तो क्या देखते हैं कि एक दुकान पर अफ़ीम झड़ाझड़ बिक रही है। खोजी की बांछें खिल गयीं, मुरादें मिल गयी। जाते ही एक चवन्नी दुकान पर फेंकी। अफ़ीम ली, लेते ही घोली और घोलते ही गट-गट पी गये।

खोजी—अब आंखें खुलीं।

आज़ाद—यों नहीं कहते कि अब आंखें बन्द हुईं!

खोजी—क्यों उस्ताद, जो हम हाकिम हो जायें, तो बड़ा मजा आये। मेरा कोई अफ़ीमची भाई किसी को क़त्ल भी कर आये, तो बेदाग़ छोड़ दूं।

आजाद—तो फिर निकाले भी जल्द जाइए।

दोनो आदमी यही बाते करते हुए एक सराय मे जा पहुंचे। देखा, एक बूढा हिंदू जमीन पर बैठा चिलम पी रहा है।

आजाद—राम-राम भई, राम-राम !

बूढा—सलाम साहब, सलाम। सुथना पहने हो और राम-राम कहते हो !

आजाद—अरे भाई, राम और ख़ुदा एक ही तो है। समझ का फेर है। कहां जाओगे ?

बूढा—गांव यहां से पांच चौकी है। पहर रात का घर से चलेन, नहावा, पूजन कीन, चबेना, बांधा और ठंडे-ठडे चले आयन। आज कचहरी मां एक तारीख हती। सांझ ले फिर चले जाब। ज़मीदारी मां अब कचहरी धावे के सेवाय और का रहिगा ?

आजाद—तो जमीदार हो ? कितने गाव है तुम्हारे ?

बूढा—ऐ हजूर, अब यो समझो, कोइ दुइ हजार खरच-बरच करके बच रहत है।

आजाद ने दिल मे सोचा कि दो हजार साल की आमदनी और बदन पर ढंग के कपड़े तक नही ! गाढे की मिरजई पहने हुए है, इसकी कंजूसी का भी ठिकाना है ? यह सोचते हुए दूसरी तरफ़ चले, तो देखा, एक कालीन बड़े तकल्लुफ़ से बिछा है और एक साहब बड़े ठाट से बैठे हुए है। जामदानी का कुरता, अद्धी का अंगरखा, तीन रुपये की सफेद टोपी, दो-ढाई सौ की जेब घडी, उसकी सोने की जंजीर गले में पड़ी हुई। करीब ही चार-पाच भले आदमी और बैठे हुए हे और दोसेरा तंबाकू उड़ा रहे है। आजाद ने पूछा, तो मालूम हुआ, आप भी एक जमीदार है। पांच-छह कोस पर एक कस्बे मे मकान है। कुछ 'सीर' भी होती है। जमीदारी से सौ रुपए माहवार की बचत होती है।

आजाद—यहा किस गरज से आना हुआ।

रईस—कुछ रुपये कर्ज लेना था, मगर महाजन दो रुपये सैकड़ा सूद मांगता हे।

मियां आजाद ने जमीदार साहब के मुशी को इशारे से बुलाया, अलग ले जाकर यो बाते करने लगे—

आजाद—हजरत, हमारे जरिये से रुपया लीजिए। दस हजार, बीस हजार, जितना कहिए, मगर जागीर कुर्क करा लेगे और चार रुपये सैकडा सूद लेगे।

मुशी—वाह ! नेकी और पूछ-पूछ ! अगर आप चौदह हजार भी दिलवा दे, तो वडा एहसान हो। और, सूद चाहे पांच रुपए सैकड़ा लीजिए तो कोई परवाह नही। सूद देने मे तो हम आंधी हे।

आजाद—बस, मिल चुका। यह सूद की क्या बात-चीत है भला ? हम कही सूद लिया करते है ? मुनाफ़ा नही कहते ?

मुशी—अच्छा हुजूर, मुनाफ़ा सही।

आजाद—अच्छा, यह बताओ कि जब सौ रुपये महीना बचा रहता है, तो फिर चौदह हजार कर्ज क्यों लेते है ?

मुशी—जनाब, आपसे तो कोई परदा नही। सौ पाते है, और पांच सौ उड़ाते हे। अच्छा खाना खाते हे, बारीक और कीमती कपडे पहनते है, यह सब आये कहां से ? बंक से लिया, महाजनों से लिया; सब चौदह हजार के पेटे मे आ गये। अब कोई टका नही देता।

आजाद दिल मे उस बूढे ठाकुर का इन रईस साहब से मुकाबला करने लगे। यह भी जमीदार, यह भी जमीदार; उनकी आमदनी डेढ सौ से ज्यादा, इनकी मुश्किल से सौ; वह गाढ़े की धोती और गाढे की मिरजई पर खुश है और यह शरबती और

जामदानी फड़काते हैं। वह ढाई तल्ले का चमरौंधा जूता पहनते हैं, यहां पांच रुपया की सलीमशाही जूतियां। वह पालक और चने की रोटियां खाते हैं और यह दो वक़्त शीरमाल और मुर्ग़पुलाव पर हाथ लगाते हैं, वह टके ग़ज़ की चाल चलते हैं, यहां हवा के घोड़ों पर सवार। दोनों पर फटकार ! वह कंजूस और यह फ़ज़ूलखर्च। वह रुपये को दफ़न किये हुए, यह रुपये लुटाते फिरते हैं। वह खा नहीं सकते, तो यह बचा नहीं सकते।

शाम को दोनों आदमी रेल पर सवार होकर पूना जा पहुंचे।

तेंतीस

रेल से उतर कर दोनों आदमियों ने एक सराय में डेरा जमाया और शहर की सैर को निकले। यों तो यहां की सभी चीजें भली मालूम होती थीं, लेकिन सबसे ज़्यादा जो बात उन्हें पसंद आयी, वह यह थी कि औरतें बिला चादर और घूंघट के सड़कों पर चलती-फिरती थीं। शरीफ़ज़ादियां बेहिजाब नक़ाब उठाये; मगर आंखों में हया और शर्म छिपी हुई।

खोजी—क्यों मियां, यह तो कुछ अजब रस्म है ? ये औरतें मुंह खोले फिरती हैं। शर्म और हया सब भून खायी। वल्लाह, क्या आज़ादी है !

आज़ाद—आप ख़ासे अहमक़ हैं। अरब में, असम में, अफ़ग़ानिस्तान में, मिसर में, तुर्किस्तान में, कहीं भी परदा है ? परदा तो आंख का होता है। कहीं चादर हया सिखाती है ? जहां घूंघट काढ़ा, और नज़र पड़ने लगी।

खोजी—अजी, मैं दुनिया की बात नहीं चलाता। हमारे यहां तो कहारियां और मालिनें तक परदा करती हैं, न कि शरीफ़ज़ादियां ही ! एक क़दम तो बेपरदे के जाती नहीं।

आज़ाद—अरे मियां, नक़ाब को शर्म से क्या सरोकार ? आंख की हया से बढ़ कर कोई परदा ही नहीं; हमारे मुल्क में तो परदे का नाम नहीं; मगर हिंदुस्तान का तो बाबा आदम ही निराला है।

खोजी—आपका मुल्क कौन ? ज़रा आपके मुल्क का नाम तो सुनूं।

आज़ाद—कश्मीर। वही कश्मीर जिसे शायरों ने दुनिया का फ़िरदौस माना है। वहां हिंदू-मुसलमान औरतें बुरक़ा ओढ़ कर निकलती हैं; मगर यह नहीं कि औरतें घर के बाहर क़दम ही न रखें। यह रोग तो हिंदुस्तान ही में फैला है ! हम तो जब तुर्की से आयेंगे, तो यहीं बिस्तर जमायेंगे और हुस्नआरा को साथ लेकर आज़ादी के साथ हवा खायेंगे।

खोजी—यार, बात तो अच्छी है, मगर मेरी बीवी तो इस लायक़ ही नहीं कि हवा खिलाने ले जाऊं। कौन अपने ऊपर तालियां बजवाये ? फिर अब तो बूढ़ी हुई और रंग भी ऐसा साफ़ नहीं।

आज़ाद—तो इसमें शरम की कौन-सी बात है ? आप उनके काले मुंह से झेंपते क्यों हैं ?

खोजी—जब हब्श जाऊंगा, तो वहां हवा खिलाऊंगा। आप नई रोशनी के लोग हैं। आपकी हुस्नआरा आपसे भी बढ़ी हुई, जो देखे फड़क जाय कि क्या चांद-सूरज की जोड़ी है। ऐसी शक्ल-सूरत हो, तो हवा खिलाने में कोई मुज़ायक़ा नहीं। हम अब क्या जोश दिखायें; न वह उमंग है, न वह तरंग।

आज़ाद—हम कहते हैं, बुआ ज़ाफ़रान को ब्याह लो और एक टट्टू ले दो। बस, इसी तरह वह भी बाज़ारों में हवा खायें।

खोजी—(कान पकड़कर) या ख़ुदा, बचाइयो। पीच पी, हज़ार निआमत खायी। मारे चपतो के खोपड़ी गंजी कर दी थी। क्या वह भूल गया?

आजाद—यहां से बंबई भी तो क़रीब है।

खोजी—अरे ग़ज़ब! क्या जहाज पर बैठना होगा? तो भई, मेरे लिए अफ़ीम ले दो।

पूने से बंबई तक दिन में कई गाड़ियां जाती थी। दोनों आदमियों ने सराय मे पहुंच कर खाना खाया और बबई रवाना हुए। शाम हो गयी थी। एक होटल मे जाकर ठहरे। आजाद तो दिन भर के थके हुए थे, लेटते ही खर्राटे लेने लगे। खोजी अफ़ीमची आदमी, नीद कहां? इसी फ़िक्र में बैठे हुए थे कि नीद को क्योंकर बुलाऊं। इतने में क्या देखते है कि एक लबी-तड़ंगी, पंचहत्थी औरत चमकती-दमकती चली आती है। पूरे सात फुट का क़द, न जौ-भर कम, न जौ-भर ज़्यादा। धानी चादर ओढ़े, इठला-इठला कर चलती हुई मियां खोजी के पास आकर खड़ी हो गयी। खोजी ने उसकी तरफ़ नजर डाली, तो उसने एक तीखी चितवन से उनको देखा और आगे चली। आपको शरारत जो सूझी तो सीटी वजाने लगे। सीटी की आवाज़ सुनते ही वह इनकी तरफ़ झुक पड़ी और छमाछम करती हुई कमरे मे चली आयी। अब मियां खोजी के हवास पैतरे हुए कि अगर आज़ाद की आंख खुल गयी, तो ले ही डालेंगे; और जो कही रीझ गये, तो हमारी ख़ैरियत नही। हम बस, नीबू और नोन चाट कर जायेंगे। इशारे से कहा—जरी आहिस्ता बोलो।

औरत—अरे वाह मियां! अच्छे मिले।

खोजी—मियां आजाद सोये हुए हैं।

औरत—इनका बड़ा लिहाज़ करते हो; क्या बाप है तुम्हारे?

खोजी—ख़ुदा के वास्ते चुप भी रहो।

औरत—चलो, हम-तुम दूसरी कोठरी मे चलकर बैठें।

दोनों पास की एक कोठरी मे जा बैठें। औरत ने अपना नाम केसर बतलाया और बोली—अल्लाह जानता है, तुम पर मेरी जान जाती है। ख़ुदा की क़सम, क्या हाथ-पांव पाये है कि जी जाहता है, चूम लूं। मगर दाढ़ी मुड़वा डालो।

खोजी—(अकड़कर) अभी क्या, जवानी में देखना हमको!

क्या ख़ूब अभी जवानी शायद आने वाली है। कुछ ऊपर पचास का सिन हुआ, और आप अभी लड़के ही बने हुए है। उस औरत ने आपको उंगलियों पर नचाना शुरू किया, लेकिन आप समझे कि सचमुच रीझ ही गयी और भी बफलने लगे।

औरत—डील-डौल कितना प्यारा है कि जी ख़ुश हो गया। मगर दाढ़ी मुड़वा डालो।

खोजी—अगर मैं कसरत करूं, तो अच्छे-अच्छे पहलवानों को लड़ा दूं।

औरत—जरा कान तो फटफटा लो, शाबाश!

खोजी—एक बात कहूं, बुरा तो न मानोगी?

औरत—बुरा मानूगी, तो ज़रा खोपड़ी सहला दूंगी।

खोजी—जांबख्शी करो, तो कहूं।

औरत—(चपत लगाकर) क्या कहता है, कह।

खोजी—भई, यह धौल-धप्पा शरीफ़ों में जायज़ नही।

औरत—तुझ मुए को कौन निगोड़ी शरीफ़ समझती है।

एक चपत और पड़ी। खोजी ने त्योरियां बदलकर कहा—भई, आदत मुझे पसंद नही। मुझे भी गुस्सा आ जायेगा।

औरत—आंखें क्या नीली-पीली करता है? फोड़ दूं दोनों आंखें?

खोजी—अब हमारा मतलब तो इस झंझट में खत्म हुआ जाता है। अब तो बताओ, कुछ मांगें, तो दोगी?

औरत—हां, क्यों नहीं, एक लप्पड़ इधर और दूसरा उधर। क्या मांगते हो?

खोजी—कहना यह है कि···मगर कहते हुए दिल कांपता है।

औरत—अब मैं तुमको ठीक न बनाऊं कहीं।

खोजी—तुम्हारे साथ ब्याह करने को जी चाहता है।

औरत—ऐ, अभी तुम बच्चे हो। दूध के दांत तक तो टूटे नहीं। ब्याह क्या रोगे भला?

खोजी—वाह-वाह! मेरे दो बच्चे खेलते हैं। अभी तक इनके नज़दीक लौंडे ही हम।

औरत—अच्छा, कुछ कमाई-वमाई तो निकाल, और दाढ़ी मुड़वा।

खोजी—(दस रुपये देकर) लो, यह हाज़िर है।

औरत—देखूं। ऊंह, हाथी के मुंह में जीरा!

खोजी—लो, यह पांच और लो। अजी, मैं तुमको बेगम बनाकर रखूंगा।

औरत—अच्छा, एक शर्त से शादी करूंगी। तड़के उठ के मुझे सात बार सलाम रना और मैं सात चपतें लगाऊंगी।

खोजी—अजी, बल्कि और दस।

औरत—अच्छा, इसी बात पर कुछ और निकालो।

खोजी—लो, यह पांच और लो। तुम्हारे दम के लिए सब कुछ हाजिर है।

औरत ने झट से मियां खोजी को गोद में उठा लिया और बगल में दबाकर ले ली, तो खोजी बहुत चकराये। लाख हाथ-पांव मारे, मगर उसने जो दबाया, तो इस ह ले चली, जैसे कोई चिड़ीमार जानवरों को फड़फड़ाते हुए ले चले। अब सारा ाना देख रहा है कि खोजी फड़कते हुए जाते हैं और वह औरत छम-छम करती चली ती है।

खोजी—अब छोड़ती है, या नहीं?

औरत—अब उम्र-भर तो छोड़ने का नाम न लूंगी। हम भलेमानसों की बहू-ेयां छोड़ देना क्या जानें। बस, एक के सिर हो रहीं। भागे कहां जाते हो मियां।

खोजी—मैं कुछ क़ैदी हूं?

औरत—(चपत लगाकर) और नहीं, कौन है तू? अब मैं कहीं जाने भी दूंगी?

खोजी पीछे हटने लगे, तो उसने पट्टे पकड़कर खूब बेभाव की लगायी। अब लाये और गुल मचाया कि कोई है? लाना क़रौली? बहुत से तमाशाई खड़े हंस रहे ।

एक—क्या है मियां? यह धर-पकड़ कैसी?

औरत—आप कोई क़ाज़ी हैं? यह हमारे मियां हैं; हम चाहे चपतियाएं चाहे ें! किसी को क्या?

दूसरा—मेहरारू गर्दन दाबे उठाये लिये जात है, वह क़रौली निकारत है।

खोजी—बुरे फंसे! यारो, ज़रा मियां आज़ाद को सराय से बुलाना।

औरत ने फिर खोजी को गोद में उठाया और मशक की तरह पीठ पर रखकर 'मसक दरियाव, ठंडा पानी' कहती हुई ले चली।

एक आदमी—कैसे मर्द हो जी! औरत से जीत नहीं पाते? बस, इज्जत डुबो दी बिलकुल।

खोजी—अजी, इस औरत पर शैतान की फटकार। यह तो मरदों के कान काटती है।

इतने मे मियां आजाद की नीद खुली, तो खोजी ग़ायब। बाहर निकले, तो देखा खोजी को एक औरत दबाये खडी है। ललकार कर कहा—तू कौन है ! उन्हे छोडती क्यो नही ?

औरत ने खोजी को छोड़ दिया और सलाम करके बोली—हुजूर, मेरा इनाम हुआ। मै बहुरुपिया हूं।

दूसरे दिन खोजी मियां आजाद के साथ शहर की सैर करने चले, तो शहर भर के लौडे-लपाडिये साथ, पीछे-पीछे तालियां बजाते जाते है। एक बोला—कहो चड्डा, बीबी ने चांद गजी कर दी न ? हत् तेरे की ! दूसरा बोला—कहो उस्ताद, खोपडी का क्या रग है ?

बेचारे खोजी को रास्ता चलना मुश्किल हो गया। दो-चार आदमियो ने बहुरुपिये की तारीफ़ की, तो खोजी जल-भुन कर खाक़ हो गये। अब किसी से न बोलते हैं न चालते। दुम दबाये, डग बढ़ाये, गर्दन झुकाये पत्तातोड भाग रहे है। वारे खुदा-खुदा करके दोपहर को फिर सराय मे आये। नीम की ठंडी-ठंडी छांह मे लेट गये, तो एक भठियारिन ने मुस्करा के कहा—गाज पड़े ऐसी औरत पर, जो मियां को गोद मे उठाये और बाजार भर मे नचाये। ग़रज सराय की भठियारियो ने खोजी को ऐसा उगलियो पर नचाया कि खुदा की पनाह ! ऐसे झेपे कि क़रौली तक भूल गये।

इतने मे क्या देखते है कि एक लम्बे डील-डौल का खूबसूरत जवान तमंचा कमर से लगाये, ऊदी पगड़ी सिर पर जमाये, बांकी-तिरछी छवि दिखाता हुआ अकड़ता चला आता है। भठियारियां छिप-छिप के झांकने लगी। समझी कि मुसाफ़िर, है, बोली—मियां, इधर आओ, यहां बिस्तर जमाओ। मियां मुसाफ़िर, देखो, कैसा साफ-सुथरा मकान है ! पकरिया की ठंडी-ठडी छांह है, जरा तो तकलीफ़ होगी नही। सिपाही बोला—हमे बाजार से कुछ सौदा खरीदना है। कोई हमारे साथ चले, तो सौदा खरीद कर हम आ जाये। एक भठियारी बोली—चलिए, हम चलते है। दूसरी बोली—लौंडी हाजिर है। सिपाही ने कहा—मै किसी परायी औरत को नही ले जाना चाहता। कोई पढा-लिखा मर्द चले, तो पांच रुपये दें। मियां खोजी के कान में जो भनक पड़ी, तो कुलबुला कर उठ बैठे और कहा—मै चलता हूं, मगर पांचो नक़द गिनवा दीजिए। मैं अलसेट से डरता हूं। सिपाही ने झट से पांचो गिन दिये। रुपये तो खोजी ने टेट मे रखे और सिपाही के साथ चले। रास्ते मे जो इन्हें देखता है, कहकहा लगाता है—बचा की खोपडी जानती होगी, छठी का दूध याद आ गया होगा ! जब चारों ओर से बौछारें पडने लगी तो खोजी बहुत ही झल्लाये और गुल मचा कर एक-एक को डांटने लगे। चलते-चलते एक अफ़ीम की दुकान पर पहुंचे।

सिपाही—कहो भई जवान, है शौक़ ? पिलवाऊ ?

खोजी—अजी, मै तो इस पर आशिक हूं।

सिपाही ने मियां खोजी को खूब अफ़ीम पिलायी। जब खूब सरूर गंठे तो सिपाही ने उनको साथ लिया और चला। बातें होने लगी। खोजी बोले—भई, अफ़ीम पिलायी है, तो मिठाई भी खिलवाओ। एहसान करे, तो पूरा।

सिपाही—अजी, अभी लो। ये चार गंडे की पंचमेल मिठाई हलवाई की दुकान से लाओ।

हलवाई की दुकान से खोजी ने लड़-लड़ के खूब मिठाई ली और झूमते हुए चले। भूख के मारे रास्ते ही मे डलिया निकालकर चखनी शुरू कर दी। सिपाही कनखियो से

देखता जाता था; मगर आंख चुरा लेता था। आखिर दोनों आदमी एक वज़ाज़ की दुकान पर पहुंचे। सिपाही ने खोजी की तरफ़ इशारा करके कहा—इनके अंगरखे के बराबर जामदानी निकाल दीजिए।

वज़ाज़—हुजूर, अपने अंगरखे के लिए लें, तो कुछ हमें भी मिल रहे। इनका तो अंगरखा और पाजामा सब ग़ज़ भर में तैयार है।

खोजी—निकालो, जामदानी निकालो। बहुत बातें न बनाओ। अभी एक धक्का दूं, तो पचास लुढ़कनियां खाओ।

वज़ाज़—लीजिए, क्या जामदानी है। बहुत बढ़िया! मोल-तोल दस रुपये ग़ज़। मगर सात रुपये ग़ज़ से कौड़ी कम न होगी।

सिपाही—भई, हम तो पांच रुपये के दाम देंगे।

वज़ाज़—अब तकरार कौन करे। आप छह के दाम दे दें।

सिपाही—अच्छा, दो ग़ज़ उतार दो।

सिपाही ने वज़ाज़ से सब मिलाकर कोई पचीस रुपये का कपड़ा लिया और गट्ठा बांधकर उठ खड़ा हुआ।

वज़ाज़—रुपये?

सिपाही—अभी घर से आकर देंगे? जरा कपड़े पसंद तो करा लायें। यह हमारा साला बैठा है, हम अभी आये।

वह तो ले-देकर चल दिया। खोजी अकेले रह गये। जब बहुत देर हो गयी, तो वज़ाज़ ने गर्दन नापी—कहां चले आप! कहां, चले कहां?

खोजी—हम क्या किसी के ग़ुलाम हैं?

वज़ाज़—ग़ुलाम नहीं हो तो और हो कौन? तुम्हारे बहनोई तुमको बिठा कर कपड़ा ले गये हैं।

खोजी पीनक से चौंके थे। सिपाही और वज़ाज़ में जब बातें हो रही थीं, तब वह पीनक में थे। झल्लाकर बोले—अबे किसका बहनोई? और कौन साला? कुछ वाही हुआ है?

इतने में एक आदमी ने आकर खोजी से कहा—तुम्हारे बहनोई तुम्हें यह खत दे गये हैं। खोजी ने खोलकर पढ़ा तो लिखा था—

"हत् तेरे की, क्यों? खा गया न झांसा? देख, अबकी फिर फांसा। तब की बीवी बनके चपतियाया, अब की बहनोई बनके झांसा दिया। और अफ़ीम खाओगे?"

खोजी 'अरे!' करके रह गये। वाह रे बहुरूपिये, अच्छा घनचक्कर बनाया। खैर, और तो जो हुआ, वह हुआ, अब यहां से छुटकारा कैसे हो। वज़ाज इस दम टुटरूं-टूं, और क़रौली पास नहीं। मगर एक दफ़े रोब जमाने की ठानी। दुकान के नीचे उतर कर बोले—इस फेर में भी न रहना! मैंने बड़े-बड़ों की गर्दनें ढीली कर दी हैं।

वज़ाज़—यह रोब किसी और पर जमाइएगा। जब तक आपके बहनोई न आयेंगे दुकान से हिलने न दूंगा।

बारे थोड़ी ही देर में एक आदमी ने आकर वज़ाज़ को पचीस रुपये दिये और कहा—अब इनको छोड़ दीजिए।

चौंतीस

इधर तो ये बातें हो रही थीं, उधर आज़ाद से एक आदमी ने आकर कहा—जनाब, आज मेला देखने न चलिएगा? वह-वह सूरतें देखने में आती हैं कि देखता ही रह जाए।

नाज से पायंचे उठाये हुए, शर्म से जिस्म को चुराये हुए!
नशए-वादए शबाब से चूर, चाल मस्ताना, हुस्न पर मगरूर।
सैकड़ों बल कमर को देती हुई, जाने ताऊस कब्क लेती हुई।

चलिए और मियां खोजी को साथ लीजिए। आजाद रंगीले थे ही, चट तैयार हो गये, सज-धजकर अकड़ते हुए चले। कोई पचास क़दम चले होंगे कि एक झरोखे से आवाज आयी—

खुदा जाने यह आराइश करेगी क़त्ल किस-किसको;
तलब होता है शानः आइने को याद करते हैं।

मियां आजाद ने जो ऊपर नजर की, तो झरोखे का दरवाजा खोजी की आख की तरह बंद हो गया। आजाद हैरान कि खुदा, यह माजरा क्या है ? यह जादू था, छलावा था, आखिर था क्या ? आजाद के साथी ने यह रंग देखा, तो आहिस्ते से कहा—हजरत इस फेर मे न पडिएगा।

इतने मे देखा कि वह नाजनीन फिर नक़ाब उठाये झरोखे पर आ खड़ी हुई और अपनी महरी से बोली—फीनस तैयार कराओ, हम मेले जायेंगे।

आजाद कुछ कहने वाले ही थे कि ऊपर से एक काग़ज नीचे आया। आजाद ने दौड़कर उठाया, तो मोटे कलम से लिखा था—

"दिल्लगी करती है परियां मेरे दीवाने से।"

आजाद पढते ही उछल पड़े। यह शेर पढा—

"हम ऐसे हो गये अल्लाहो-अकबर ! ऐ तेरी कुदरत;
हमारे नाम से अब हाथ वह कानों पै धरते है।"

इतने मे एक महरी अंदर से आयी और मुस्कराकर मियां आजाद को इशारे से बुलाया। आजाद खुश-खुश महताबी पर पहुंचे, तो दिल बाग़-बाग़ हो गया। देखा, एक हसीना बड़े ठाट-बाट से एक कुर्सी पर बैठी है। मियां आजाद को कुर्सी पर बैठने का इशारा किया और बोली—मालूम होता है, आप चोट खाये है; किसी के जुल्फ़ मे दिल फसा है—

खुलते है कुछ इश्तियाक़ के तौर;
रुख मेरी तरफ, नजर कही और।

आजाद ने देखा तो इस नाजनीन की शक्ल व सूरत हुस्नआरा से मिलती थी। वही सूरत, वही गुलाब-सा चेहरा ! वही नशीली आंखे ! बाल बराबर भी फ़र्क नही। बोले—बरसो इस कूचे की सैर की; मगर अब दिल फंसा चुके।

हसीना—तो बिसमिल्लाह, जाइए।

आजाद—जैसी हुजूर की मरजी।

हसीना—वाह री, बददिमागी ! कहिए, तो आपका कच्चा चिट्ठा कह चलूं। मियां आजाद आप ही का नाम हे न ? हुस्नआरा से आप ही की शादी होनेवाली है न ?

आजाद—ये बातें आपको कैसे मालूम हुई ?

हसीना—क्यो, क्या पते की कही ! अब बता ही दूं। हुस्नआरा मेरी छोटी चचाजाद बहन है। कभी-कभी खत आ जाता हे। उसने आपकी तसवीर भेजी है और

तवा है कि उन्हें बंबई में रोक लेना। अब आप हमारे यहां ठहरें। मैं आपको आज़माती ो कि देखूं, कितने पानी में हैं। अब मुझे यक़ीन आ गया कि हुस्नआरा से आपको सच्ची हब्बत है।

आज़ाद—तो फिर मैं यहीं उठ आऊं?

हसीना—ज़रूर।

आजाद—शायद आपके घर में किसी को नागवार गुजरे?

हसीना—वाह, आप खूब जानते हैं कि कोई शरीफ़ज़ादी किसी अजनबी आदमी ो इस तरह बेधड़क अपने यहां न बुलायेगी। क्या मैं नहीं जानती कि तुम्हारे भाई हब किसी ग़ैर आदमी को बैठे देखेंगे, तो उनकी आंखों से खून टपकने लगेगा? र वह तो खुद इस वक़्त तुम्हारी तलाश में निकले हैं। बहुत देर से गये हुए हैं, आते होंगे। अब आप मेरे आदमी को भेज दीजिए। आपका असबाब ले आये।

आज़ाद ने खोजी के नाम यह रुक्क़ा लिखा—

ाजा साहब,

असबाब लेकर इस आदमी के साथ चले आइए। यहां इत्तिफ़ाक से हुस्नआरा बहन मिल गयीं। यार, हम-तुम दोनों हैं क़िस्मत के धनी। यहां अफ़ीम की दुकान भी रीब ही है।

—तुम्हारा
आज़ाद।

पैंतीस

जी ने दिल में ठान ली कि अब जो आयेगा, उसको खूब ग़ौर से देखूंगा। अब की मा चल जाय, तो टांग की राह निकल जाऊं। दो दफ़े क्या जानें, क्या बात हो गयी वह चकमा दे गया। उड़ती चिड़िया पकड़ने वाले हैं। हम भी अगर यहां रहते होते, उस मरदूद बहुरुपिये को चचा ही बनाकर छोड़ते।

इतने में सामने एकाएक एक घसियारा घास का गट्ठा सिर पर लादे, पसीने में आ खड़ा हुआ और खोजी से बोला—हुजूर, घास तो नहीं चाहिए?

खोजी—(खूब ग़ौर से देखकर) चल; अपना काम कर। हमें घास-वास कुछ नहीं हिए। घास कोई और खाते होंगे।

घसियारा—ले लीजिए हुज़ूर, हरी हरी दूब है।

खोजी—चल बे चल, हम पहचान गये। हमसे बहुत चकमेबाजी न करना बचा। की पलेथन ही निकाल डालूंगा। तेरे बहुरुपिये की दुम में रस्सा।

इत्तिफ़ाक़ से घसियारा बहरा था। वह समझा, बुलाते हैं। इनकी तरफ़ आने ा। तब तो मियां खोजी गुस्सा जब्त न कर सके और चिल्ला उठे—ओ गीदी, आगे न बढ़ना; नहीं तो सिर धड़ से जुदा होगा। यह कहकर लपके और गट्ठा पकड़ चाहा कि घसियारे को चपत लगावें। उसने जो छुड़ाने के लिए ज़ोर किया, तो मियां ी मुंह के बल जमीन पर आ रहे और गट्ठा उनके ऊपर गिर पड़ा। तब आप गट्ठे नीचे से गुर्राने लगे—अबे ओ गीदी, इतनी क़रौलियां भोकूंगा कि छठी का दूध याद जायगा। बदमाश ने नाकों दम कर दिया। बारे बड़ी मुश्किल से आप गट्ठे के नीचे निकले और मुंह फुलाये बैठे थे कि आज़ाद का आदमी आकर बोला—चलिए, आपको आज़ाद ने बुलाया है।

खोजी—किससे कहता है? कम्बख्त अब की संदेसिया बनकर आया। तब की

घसियारा बना था। पहले औरत का भेस बदला ! फिर सिपाही बना। चल, भाग।

आदमी—रुक़्क़ा तो पढ लीजिए।

खोजी—मै जलती-बलती लकड़ी से दाग दूगा, समझे ? मुझे कोई लौडा मुकर्रर किया है ? तेरे जैसे बहुरूपिये यहा जेब मे पड़े रहते है।

आदमी ने जाकर आजाद से सारा हाल कहा—हुजूर, वह तो कुछ झल्लाये से मालूम होते हे। मै लाख-लाख कहा किया, उन्होने एक तो सुनी नही। बस, दूर ही दूर से गुर्राते रहे।

आजाद—खत का जवाब लाये ?

आदमी—ग़रीबपरवर, कहता जाता हूं कि क़रीब फटकने तो दिया नही जवाब किससे लाता ?

ये बाते हो ही रही थी कि उस हसीना के शौहर आ पहुचे और कहने लगे—शहर भर घूम आया, सैकड़ो चक्कर लगाये, मगर मिया आजाद का कही पता न चला। सराय मे गया, तो वहां खबर मिली कि आये है। एक साहब बैठे हुए थे, उनसे पूछा, तो बडी दिल्लगी हुई। ज्यो ही मै क़रीब गया, तो वह कुलबुलाकर उठ खड़े हुए—कौन ? आप कौन ? मैने कहा—यहां मिया आजाद नामी कोई साहब तशरीफ़ लाये है ? बोले—फिर आपसे वास्ता ? मैने कहा—साहब, आप तो काटे खाते है ! तो मुझे ग़ौर से देखकर बोले—इस बहुरूपिये ने तो मेरी नाक मे दम कर दिया। आज भलेमानस की सूरत बनाकर आये है।

बेगम—जरी ऊपर आओ देखो, हमने मिया आजाद को घर बैठे बुलवा लिया। न कहोगे।

आजाद—आदाब बजा लाता हूं।

मिरजा—हजरत, आपको देखने के लिए आंखे तरसती थी।

आजाद—मेरी वजह से आपको बड़ी तकलीफ़ हुई।

मिरजा—जनाब, इसका जिक्र न कीजिए। आपसे मिलने की मुद्दत से तमन्ना थी।

उधर मियां खोजी अपने दिल मे सोचे कि बहुरूपिये को कोई ऐसा चमका देना चाहिए कि वह भी उम्र भर याद करे। कई घंटे तक इसी फ़िक्र मे ग़ोते खाते रहे। इतने मे मिरजा साहब का आदमी फिर आया। खोजी ने उससे खत लेकर पढा, तो लिखा था—आप इस आदमी के साथ चले आइए, वर्ना बहुरूपिया आपको फिर धोखा देगा। भाई, कहा मानो, जल्द आओ। खोजी ने आजाद की लिखावट पहचानी, तो असबाब वगैरह समेट कर खिदमतगार के सुपुर्द किया और कहा—तू जा, हम थोड़ी देर मे आते है। खिदमतगार तो असबाब लेकर उधर चला, इधर आप बहुरूपिये के मकान का पता पूछते हुए पहुंचे। इत्तिफ़ाक से बहुरुपिया घर मे न था, और उसकी बीवी अपने मैके भेजने के लिए कपड़ो का एक पार्सल बना रही थी। तीस रुपये की एक गड्डी भी उसमे रख दी थी। पार्सल तैयार हो चुका, तो लौडी से बोली—देख, कोई पढ़ा-लिखा आदमी इधर से निकले, तो इस पार्सल पर पता लिखवा लेना। लौडी राह देख रही थी कि मियां खोजी जा निकले।

खोजी—क्यों नेकबख्त, जरा पानी पिला दोगी ?

लौडी यह सुनते ही फूल गयी। खोजी की बडी खातिरदारी की, पान खिलाया, हुक़्क़ा पिलाया और अंदर से पार्सल लाकर बोली—मियां, इस पर पता तो लिख दो।

खोजी—अच्छा, लिख दूगा। कहां जायगा ? किसके नाम हे ? कौन भेजता ह ?

लौडी—मै बीबी से सब हाल पूछ आऊ, बतलाऊं।

खोजी—अच्छी बात है, जल्द आना।

लौंडी दौड़कर पूछ आयी और पता-ठिकाना बताने लगी।

खोजी चकमा देने तो गये ही थे, झट पार्सल पर अपना लखनऊ का पता लिख दिया और अपनी राह ली। लौंडी ने फ़ौरन डाकखाने में पार्सल दिया और रजिस्ट्री कराके चलती हुई। थोड़ी देर के बाद बहुरुपिया जो घर में घुसा, तो बीबी ने कहा—तुम भी बड़े भुलक्कड़ हो। पार्सल पर पता तो लिखा ही न था। हमने लिखवाकर भेज दिया।

बहुरुपिया—देखूं, रसीद कहां है? (रसीद पढ़कर) ओफ़! मार डाला। बस, ग़ज़ब ही हो गया।

बीबी—ख़ैर तो है?

बहुरुपिया—तुमसे क्या बताऊं? यह वही मर्द है, जिससे मैंने कई रुपये ऐंठे थे। बड़ा चकमा दिया।

छत्तीस

मियां आज़ाद मिरज़ा साहब के साथ जहाज़ की फ़िक्र में गये। इधर ख़ोजी ने अफ़ीम की चुस्की लगायी और पलंग पर दराज़ हुए। जैनब लौंडी जो बाहर आयी, तो हज़रत को पीनक में देखकर ख़ूब खिलखिलायी और बेगम से जाकर बोली—बीबी, जरी परदे के पास आइए, तो लोट-लोट जाइए। मुआ खोजी अफ़ीम खाये औंधे मुंह पड़ा हुआ है। जरी आइए तो सही। बेगम ने परदे के पास से झांका; तो उनको एक दिल्लगी सूझी। झप से एक बत्ती बनायी और जैनब से कहा कि ले, चुपके से इनकी नाक में बत्ती कर। जैनब एक ही शरीर; बिस की गांठ। वह जाकर बत्ती में तीता मिर्च लगा लायी और ख़ोजी की खटिया के नीचे घुसकर मियां ख़ोजी की नाक में आधी बत्ती दाख़िल ही तो कर दी! उफ़! इस वक़्त मारे हंसी के लिखा नहीं जाता। ख़ोजी जो कुलबुलाकर उठे, तो आ:छी, छीं-छीं, ओ गेद—अ:छी:। ओ गीदी कहने को थे कि छींक आ गयी, और बिगड़े। ओ ना—आछ। ओ नामाकूल कहने को थे कि छींक ने ज़बान बंद कर दी। इत्तिफ़ाक़ से पड़ोस में एक पुराने फ़ैशन के भले आदमी नौकरी की तलाश में एक हाकिम के पास जानेवाले थे। वह जैसे ही सामने आये, वैसे ही ख़ोजी ने छींका। बेचारे अंदर चले गये। पान खाया, ज़रा देर इधर-उधर टहले। फिर ड्योढ़ी तक पहुंचे कि छींक पड़ी। फिर अंदर गये। चिकनी डली खायी। रवाना होने ही को थे कि इधर आ:छीं की आवाज आयी और उधर बीबी ने लौंडी दौड़ायी कि चलिए; अंदर बुलाती हैं। अंदर जाके उन्होंने जूते बदले, पानी पिया और रुख़सत हुए। बाहर आकर इक्के पर बैठने ही को थे कि ख़ोजी से नाक की दुनाली बंदूक से एक और फ़ैर दाग़ दी। तब तो बहुत ही झल्लाये। हत् तेरी नाक काटूं और पाऊं तो कान भी साफ़ कतर लूं। मर्दक ने मिर्च की नास ली है क्या? नाक क्या नकछीकनी की झाड़ी है। मनहूस ने घर से निकलना मुश्किल कर दिया। बीबी अंदर से बोली कि नाक ही कटे मुए की। जरी जैनब को बुलाकर पूछो तो कि यह किस नकटे को बसाया है? अल्लाह करे, गधे की सवारी नसीब हो।

मियां-बीबी पानी पी-पी कर बेचारे को कोस रहे थे। उधर ख़ोजी का छींकते-छींकते हुलिया बिगड़ रहा था। बेगम साहिबा घर के अंदर हंसी के मारे लोटी पड़ती थीं। मगर वाह ही जैनब! वह दम साधे अब तक चारपाई के नीचे दबकी पड़ी थी। मगर मारे हंसी के बुरा हाल था। जब छींकों का जोर ज़रा कम हुआ, तो उन्होंने गुल मचाया, ओ गीदी, भला वे बहुरुपिये, निकाली न कसर तूने! अच्छा बचा, चचा ही बनाकर छोड़ूं तो सही। चारपाई से उठे, मुंह-हाथ धोया। ठंडे-ठंडे पानी से ख़ूब तरेड़े दिये; खोपड़ी पर

ख़ूब पानी डाला, तब जरा तसकीन हुई। बैठकर बहुरुपिये को कोसने लगे—ख़ुदा करे, साप काटे मरदूद को। न जाने मेरे साथ क्या जिद पड़ गयी है। कल तेरे छप्पर पर चिनगारी न रख दी, तो कहना।

यो कोसते हुए उन्होने सब दरवाजे बद कर लिये कि बहुरूपिया फिर न आ जाय। अव तो जैनब चकरायी। कलेजा धक-धक करने लगा और क़रीब था कि चीख़कर निकल भागे, मगर जब मियां ख़ोजी चारपाई पर दराज हो गये और नाक पर हाथ रख लिया, तो जैनब की जान मे जान आयी। चुपके से खिसकती हुई निकली और अंदर भागी।

वेगम—जाओ, फिर नाक मे बत्ती करो।

जैनब—ना बीबी, अब मै नही जाने की। सिड़ी-सौदाई आदमी के मुह कौन लगे।

जैनब का देवर दस बरस का छोकड़ा बड़ा ही शरीफ था। नस-नस मे शरारत भरी हुई थी। कमरे मे जाके झांका, तो देखा, हजरत पीनक ले रहे है। कुत्ता घर मे बंधा था। झट उसको जंजीर से खोल जंजीर मे रस्सी बांधी और बाहर ले जाकर चारपाई के पाये मे कुत्ते को वांध दिया। ख़ोजी की टांग मे भी वही रस्सी बांध दी और चंपत हो गया। कुत्ते ने जो भूकना शुरू किया, तो ख़ोजी चौककर उठे। देखते है तो टांग मे रस्सी और रस्सी में कुत्ता। अब इधर ख़ोजी चिल्लाते है, उधर कुत्ता चिल्ल-पो मचाता है। जैनव दौड़ी हुई घर मे से आयी। ख़ैर तो है! क्या हुआ? अरे, तुम्हारी टांग मे कुत्ता कौन बांध गया?

ख़ोजी—यह उसी बहुरूपिये मर्दक का काम है, किसी और को क्या पड़ी थी?

जैनब—मगर, मुआ आया किधर से? किवाड़े तो सब वंद पडे हुए है।

ख़ोजी—यही तो मुझे भी हैरत है। मगर अबकी मैने भी नाक पर इस जोर से हाथ रखा कि बहुरुपिया भी मेरा लोहा मान गया होगा। मगर यह तो सोचो कि आया किस तरफ़ से?

जैनब—मियां, कहते डर मालूम होता हे। इस जगह एक शैतान रहता है।

ख़ोजी—शैतान! अजी नही, यह उस बहुरुपिये ही का काम है।

जैनव—अब तुम यो थोड़े ही मानोगे। एक दिन शैतान चारपाई उलट देगा, तो मालूम होगा।

ख़ोजी—यह बात थी, तो अब तक हमसे क्यो न कहा भला! जान लोगी किसी की?

जैनव—मै भी कहूं कि वंद दरवाजे से कुत्ता आया कैसे? मेरा माथा ठनका था, मुदा बोली नही।

ख़ोजी—अब आजाद आये, तो उनको आड़े हाथो लू। वह भूत चुड़ैल एक के भी क़ायल नही। सोयें तो मालूम हो।

ख़ोजी तो इसी फ़िक्र मे बैठे-बैठे पीनक लेने लगे। आजाद और मिरजा साहब आये, तो उन्हें ऊंघते देखकर दोनों हंस पड़े।

आजाद—(ख़ोजी के कान मे) क्या पहुंच गये?

ख़ोजी ने हाक लगायी—'बहुरूपिया, बहुरूपिया', और इस जोर से आजाद का हाथ पकड लिया कि अपने हिसाब चोर को गिरफ़्तार किया था। आंखे तो हजरत की बंद है, मगर बहुरूपिया-बहुरूपिया गुल मचाते जाते है। मियां आजाद ने इस जोर से झटका दिया कि हाथ छूट गया और ख़ोजी फट से मुह के बल जमीन पर आ रहे। आज़ाद ने गुल मचाया कि भागा, भागा, वह बहुरूपिया भागा जाता है। ख़ोजी भी

'लेना-लेना' कहते हुए लपके। दस ही पांच क़दम चलकर आप हांफ गये और बोले—'निकल गया, निकल गया।' मैंने तो गर्दन नापी थी, मगर नाली बीच में आ गयी इससे बच गया, वर्ना पकड़ ही लेता।

आज़ाद—अजी, मैं तो देख ही रहा था कि आप बहुरुपिये के कल्ले तक पहुंच गये थे।

इतने में एक क़ाज़ी साहब मियां आज़ाद से मिलने आये। आज़ाद ने नाम पूछा, तो बोले—अब्दुल कुद्दूस।

ख़ोजी—क्या! उस्तु खुद्दूस! यह नयी गढ़त का नाम है।

आज़ाद—निहायत गुस्ताख़ आदमी हो तुम। बस, चोंच संभालो।

ख़ोजी कीं आंखें बंद थीं। जब आज़ाद ने डांट बतायी तो आपने आंखें खोल दीं। क़ाज़ी साहब पर नज़र पड़ी। देखते ही आग हो गये और बकने लगे—और देखिएगा जरी, मरदूद आज मौलाना बनकर आया है। भई, गिरगिट के से रंग बदलता है। उस दिन घसियारा बना था; आज मौलवी बन बैठा।

क़ाज़ी साहब बहुत झेंपे। मगर आज़ाद ने कहा कि जनाब, यह दीवाना है। यों ही ऊल-ज़लूल बका करता है।

जब क़ाज़ी साहब चले गये, तब आज़ाद ने ख़ोजी को खूब ललकारा—नामाक़ूल! बिना देखे-भाले, बेसमझे-बूझे, जो चाहता है, बक देता है। कुछ पढ़े-लिखे होते, तो आदमियों की क़द्र करते। लिखे न पढ़े नाम मुहम्मद फ़ाज़िल।

ख़ोजी—जी हां, बस, अब एक आप ही बड़े लुक़मान बने हैं। हमको यह समझाते हैं कि कोई गधा है। और यहां अरबी चाटे बैठे हैं। अफ़आल, फ़ालुआ मा फ़ालअत। और सुनिए—ग़ल्लम्, ग़ल्लाम, ग़ल्लमू।

मिरज़ा—यह कौन सीग़ा है भाई?

ख़ोजी—जी, यह सीग़ा अल्लम-ग़ल्लम है। यहां दीवान के दीवान ज़बान पर हैं। मगर मुफ़्त की शेख़ी ज़ताने से क्या फ़ायदा!

मिरज़ा साहब के घर के सामने एक तालाब था। ख़ोजी अभी अपने कमाल की डींग मार ही रहे थे कि शोर मचा—एक लड़का डूब गया। दौड़ो, दौड़ो। तैराक अपने करतब दिखाने लगे। कोई पुल पर से कूदा धम। कोई चबूतरे से आया तड़। कोई मल्लाही चीरता है, कोई खड़ी लगा रहा है। नौसिखिये अपने किनारे ही पर हाथ-पांव मारते हैं, और डरपोक आदमी तो दूर से ही सैर देख रहे हैं। भई, पानी और आग से ज़ोर नहीं चलता, इनसे दूर ही रहना चाहिए।

आज़ाद ने जो शोर सुना तो दौड़े हुए पुल पर आये और धम से कूद पड़े। गोता लगाते ही उस लड़के का हाथ मिल गया। निकाल कर किनारे लाये, तो देखा, जान बाक़ी है। लोगों ने मिलकर उसको उलटा लटकाया। जब पानी निकल गया, तो लड़के को होश आया।

अब सुनिए कि वह लड़का बंबई के एक पारसी रईस रुस्तम जी का इकलौता लड़का था। अभी आज़ाद लड़के को होश में लाने की फ़िक्र ही कर रहे थे कि किसी ने जाकर रुस्तम जी को यह ख़बर सुनायी। बेचारे दौड़े आये और आज़ाद को गले से लगा लिया।

रुस्तम—आपने अपने लड़के को डूबने से बचाया। बंदा आपका बहुत शुक्रगुज़ार है।

आज़ाद—अगर आपस में इतनी हमदर्दी भी न हो, तो आदमी ही क्या?

ख़ोजी—सच है, सच है। हम ऐसे शेरों के तुम ऐसे शेर ही होते हैं। मैं भी अगर

यहां होता, तो ज़रूर कूद पड़ता। मगर यार, अब दुआ मांगनी पड़ी कि यह मोटी तोंद-वाला भी किसी दिन ग़ोता खाय, तो फिर यारों के गहरे हैं।

आज़ाद—(पारसी से) मैं बड़े मौक़े से पहुंच गया।

रुस्तम—अपने को बड़ी ख़ुशी का बातचीत।

ख़ोजी—कुछ उल्लू का पट्ठा मालूम होता है।

रुस्तम—काल आप आवे, तो हमारा लेडी लोग आपको गाना सुनावें।

ख़ोजी—अजी, क्या बेवक़्त की शहनाई बजाते हो? अजी, कुछ अफ़ीम घोलो, चुस्की लगाओ, मिठाई मंगवाओ। रईस की दुम बने हैं।

आज़ाद—कल मैं ज़रूर आऊंगा।

रईस—आप तो अपना का बाप है।

ख़ोजी—बल्कि दादा। ख़ूब पहचाना, वाह पट्ठे!

रुस्तम जी आज़ाद से यह वादा लेकर चले गये, तो ख़ोजी और आज़ाद भी घर आये। शाम को रुस्तम जी ने पांच हज़ार रुपयों की एक थैली आज़ाद के पास भेजी और ख़त में लिखा कि आप इसे ज़रूर क़बूल करें। मगर आज़ाद ने शुक्रिये के साथ लौटा दिया।

सैंतीस

ज़रा ख्वाजा साहब की क़िता देखिएगा। वल्लाह, इस वक़्त फ़ोटो उतारने के क़ाबिल हैं। न हुआ फ़ोटो। सुबह का वक़्त है। आप खारुए की एक लुंगी बांधे पीपल के दरख़्त के साये में खटिया बिछाये ऊंघ रहे हैं, मगर गुड़गुड़ी भी एक हाथ में थामे हैं। चाहे पियें न, मगर चिलम पर कोयले दहकते रहें? इत्तिफ़ाक़ से एक चील ने दरख़्त पर से बीट कर दी। तब आप चौंके और चौंकते ही आ ही गये। बहुत उछले-कूदे और इतना गुल मचाया कि मुहल्ला भर सिर पर उठा लिया। हत् तेरे गीदी की, हमें भी कोई वह समझ लिया है। आज चील बनकर आया है। क़रौली तो वहां तक पहुंचेगी नहीं; तोड़ेदार बंदूक होती, तो वह ताक के निशाना लगाता कि याद ही करता।

आज़ाद—यह किस पर गर्म हो रहे हो ख्वाजा साहब?

ख़ोजी—और ऊपर से पूछते हो, किस पर गर्म हो रहे हो? गर्म किस पर होंगे! वही बहुरुपिया है, जो मौलवी बनकर आया था।

मिरज़ा—तो फिर अब उसे कुछ सज़ा दीजिए।

ख़ोजी—सजा क्या ख़ाक दूं! मैं ज़मीन पर, वह आसमान पर। कहता तो हूं कि तोड़ेदार बंदूक मंगवा दीजिए, तो फिर देखिए, कैसा निशाना लगाता हूं। मगर आपको क्या पड़ी है। जायगा तो ग़रीब ख्वाजा के माथे ही।

मिरज़ा—हम बतायें एक ज़ीना मंगवा दें और आप पेड़ पर चढ़ जायं; भागकर जायगा कहां?

ख़ोजी—(उछल कर) लाना हाथ।

मिरज़ा साहब ने आदमी से कहा कि बड़ा ज़ीना अन्दर से ले आओ; मगर जल्द लाना। ऐसा न हो कि बैठ रहो।

ख़ोजी—हां मियां, इसी साल आना। मेरे यार, देखो, ऐसा न हो कि गीदी भाग निकले।

आदमी जब अन्दर सीढ़ी लेने गया, बेगम ने पूछा—सीढ़ी क्या होगी?

आदमी—हुज़ूर, वही जो सिड़ी हैं ख़फ़क़ान, उन पर कहीं चील ने बीट कर दी;

तो अब सीढ़ी लगाकर पेड़ पर चढ़ेंगे।

हंसोड़ औरत, खूब ही खिलखिलायी और फौरन छत पर जा पहुंची। आधी दुपट्टा खिसका जाता है, जूड़ा खुला पड़ता है और जैनब को ललकार रही हैं कि उससे कहो, जल्द सीढ़ी ले जाय। मियां खोजी ने सीढ़ी देखी, तो कमर कसी और कांपते हुए जीने पर चढ़ने लगे। जब आखिरी ज़ीने पर पहुंचकर दरख़्त की टहनी पर बैठे, तो चील की तरफ़ मुंह करके बोले—गांस लिया, गांस लिया; फांस लिया, फांस लिया, हत् तेरे गीदी की, अब जाता कहां है? ले, अब मैं भी कल्ले पर आ पहुंचा। बचा, आज ही तो फंसे हो। रोज़ झांसे देकर उड़ंछू हो जाया करते थे। अब सोचो तो, जाओगे किधर से? ले, आइए बस, अब चोट के सामने। मैंने भी क़रौली तेज़ कर रखी है।

इतने में पीछे फिरकर जो देखते हैं, तो ज़ीना ग़ायब। लगे सिर पीटने। इधर चील भी फुर्र से उड़ गयी। इधर के रहे न उधर के। बेगम साहिबा ने जो यह कैफ़ियत देखी, तो तालियां बजाकर हंसने लगीं।

खोजी—यह मिरज़ा साहब कहां गये। जरी चार आंखें तो कीजिए हमसे। आखिर हमको आसमान पर चढ़ाकर ग़ायब कहां हो गये? अरे यारो, कोई सांस डकार ही नहीं लेता। अरे मियां आज़ाद! मिरज़ा साहब! कोई है, या सब मर गये? आखिर हम कब तक यहां टंगे रहें?

बेगम—अल्लाह करे, पीनक आये।

खोजी—यह कौन बोला? (बेगम को देखकर) वाह हुजूर, आपको तो ऐसी दुआ न देनी चाहिए।

मियां आज़ाद सोचे कि खोजी अफ़ीमी आदमी, ऐसा न हो, पांव डगमगा जायं, तो मुफ़्त का खून हमारी गर्दन पर हो। आदमी से कहा—ज़ीना लगा दो। बेगम ने जो सुना, तो हज़ारों क़समें दीं—खबरदार, सीढ़ी न लगाना। बारे सीढ़ी लगा दी गयी और खोजी नीचे उतरे। अब सबसे नाराज़ हैं। सबको आंखें दिखा रहे हैं—आप लोगों ने क्या मुझे मसखरा समझ लिया है। आप लोगों जैसे मेरे लड़के होंगे।

इतने में एक आदमी ने आकर मिरज़ा साहब को सलाम किया।

मिरज़ा—बंदगी। कहां रहे सलारी, आज तो बहुत दिन के बाद दिखायी दिये।

सलारी—कुछ न पूछिए खुदावंद, बड़ी मुसीबत में फंसा हूं।

मिरजा—क्या है क्या? कुछ बताओ तो?

सलारी—क्या बताऊं, कहते शर्म आती है। परसों मेरा दामाद मेरी लड़की को लिये गांव जा रहा था। जब थाने के क़रीब पहुंचा, तो थानेदार साहब घोड़े पर सवार हो कर कहीं जा रहे थे। इनको देखते ही बाग़ रोक ली और मेरे दामाद से पूछा—तुम कौन हो? उसने अपना नाम बताया। अब थानेदार साहब इस फ़िक्र में हुए कि मेरी लड़की को बहला कर रख लें और दामाद को धता बता दें। बोले—बदमाश, यह तेरी बीवी नहीं हो सकती। सच बता, यह कौन है? और तू इसे कहां से भगा लाया है?

दामाद—यह मेरी जोरू है।

थानेदार—सुअर, हम तेरा चालान कर देंगे। तेरी ऐसी क़िस्मत कहां कि यह हसीना तुझको मिले! अगर तू हमारी नौकरी कर ले तो अच्छा; नहीं तो हम चालान करते हैं। (औरत से) तुम कौन हो, बोलो?

दामाद—दरोग़ा जी, आप मुझसे बातें कीजिए।

मेरी लड़की मारे शर्म के गड़ी जाती थी। गर्दन झुका कर थर-थर कांपती थी। अपने दिल में सोचती थी कि अगर ज़मीन में गढ़ा हो जाता, तो मैं धंस जाती। सिपाही अलग ललकार रहा है और थानेदार अलग कल्ले पर सवार।

दामाद—मेरे साथ किसी सिपाही को भेज दीजिए। मालूम हो जाय कि यह मेरी ब्याहता बीबी है या नहीं।

थानेदार—चुप बदमाश, मैं बदमाशों की आंख पहचान जाता हूं। तुम कहां के ऐसे खुशनसीब हो कि ऐसी परी तुम्हारे हाथ आयी। यह सब बनावट की बातें हैं।

सिपाही—हां, दारोग़ा जी, यही बात है।

आख़िर थानेदार साहब मेरी लड़की को एक दरख़्त की आड़ में ले गये और सिपाही ने मेरे दामाद को दूसरी तरफ़ ले जाकर खड़ा किया। थानेदार बोला—बीबी, जरा गर्दन तो उठाओ। भला तुम इस परकटे के क़ाबिल हो! ख़ुदा ने चेहरा तो नूर-सा दिया है, लेकिन शौहर लंगूर-सा।

लड़की—मुझे वह लंगूर ही पसन्द है।

इधर तो थानेदार साहब यह इजहार ले रहे थे, उधर सिपाही मेरे दामाद को और ही पट्टी पढ़ा रहे थे। भाई, सुनो, सूबेदार साहब के सामने तो मैं उनकी सी कह रहा था। न कहूं, तो जाऊं कहां? मगर इनकी नीयत बहुत खराब है। छटा हुआ गुरगा है।

दामाद—और कुछ नहीं, बस, मैं समझ गया कि फांसी जरूर पाऊंगा। अब तो मुझे चाहे जाने दे या न जाने दे मैं इसे बेमारे न रहूंगा। अब बेइज़्जती में बाक़ी क्या रह गया।

थानेदार—सिपाही, सिपाही, यह कहती है कि यह आदमी इन्हें भगा लाया है।

लड़की—जिसने यह कहा हो, उस पर आसमान फट पड़े।

दामाद—अब आपकी मरज़ी क्या है? जो हो, साफ़-साफ़ कहिए।

ख़ैर, थानेदार साहब एक कुर्सी पर डट गये और मेरी लड़की से कहा कि तुम इस सामनेवाली कुर्सी पर बैठो। अब ख़याल कीजिए कि गृहस्थ औरत बिना घूंघट निकाले कुएं तक पानी भरने भी नहीं जाती, वह इतने आदमियों के सामने कुर्सी पर कैसे बैठती। सिपाही झुक-झुक कर देख रहे थे और वह बेचारी गर्दन झुकाये बुत की तरह खड़ी थी। तब थानेदार ने धमक कर कहा—तुम दस बरस के लिए भेजे जाओगे। पूरे दस बरस के लिए!

दामाद—जब कोई जुर्म साबित हो जाय।

थानेदार—हां, आप क़ानून भी जानते हैं? तो हम अब जाब्ते की कार्रवाई करें।

दामाद—यह कुल कार्रवाई ज़ाब्ते ही की तो है। ख़ैर, इस वक़्त तो आपके बस में हूं, जो चाहे कीजिए। मगर मेरा ख़ुदा सब देख रहा है।

थानेदार—तुम हमारा कहा क्यों नहीं मान लेते? हम बस, इतना चाहते हैं कि तुम नौकरी कर लो और अपनी जोरू को लेकर यहीं रहा करो।

दामाद—आपसे मैं अब भी मिन्नत से कहता हूं कि इस बात को दिल से निकाल डालिए। नहीं तो बात बढ़ जायगी।

इतने में किसी ने पीछे से आकर मेरे दामाद की मुश्कें कस ली और ले चले, और एक सिपाही मेरी लड़की को थानेदार साहब के घर की तरफ़ ले चला। अब रात का वक़्त है। एक कमरे में थानेदार लड़की के पैरों पर गिर पड़ा। उसने एक ठोकर दी और झपट कर इस तेजी से भागी कि थानेदार के होश उड़ गये। अब ग़ौर कीजिए कि कमसिन औरत, परदेस का वास्ता, अंधेरी रात, रास्ता गुम, मियां नदारद। सोची, या ख़ुदा, कहां जाऊं और क्या करूं? कभी मियां की मुसीबत पर रोती, कभी अपनी हालत पर। इस तरह गिरती पड़ती चली जाती थी कि एक तिलंगे से भेंट हो गयी। बोला—कौन जाता है? कौन जाता है छिपा हुआ? लड़की थर-थर कांपने लगी। डरते-डरते बोली—

ग़रीब औरत हूं। रास्ता भूल कर इधर निकल आयी। आखिर बड़ी मुश्किल से कानों का करन-फूल दे कर अपना गला छुड़ाया। आगे बढ़ी, तो उसका शौहर मिल गया। सिपाहियों ने उसे एक मकान में बंद कर दिया था, मगर वह दीवार फांद कर निकल भागा आ रहा था। दोनों ने खुदा का शुक्र किया और एक सराय में रात काटी। सुबह को मेरे दामाद ने थानेदार को घोड़े पर से खींचकर इतनी लकड़ियां मारीं कि बेदम हो गया। गांववाले तो थानेदार के दुश्मन थे ही, एक ने भी न बचाया; बल्कि जब देखा कि अधमरा हो गया, तो दो-चार ने लातें भी जमायीं। अब मेरा दामाद मेरे घर में छिपा बैठा है। बतलाइए, क्या करूं?

खोजी—मुझे तो मालूम होता है कि यह भी उसी बहुरूपिये की शरारत थी।

सलारी—कौन बहुरूपिया?

मिरज़ा—तुम्हारी समझ में न आयेगा। यह क़िस्सा-तलब बात है।

सलारी—तो फिर मुझे क्या हुक्म होता है? हम तो ग़रीब टके के आदमी हैं। मगर आबरूदार हैं।

आजाद—बस, जाकर चैन करो। जब शोर-गुल मचे, तो आना। सलाह की जायगी।

सलारी ने सलाम किया और चला गया।

अड़तीस

खोजी ने एक दिन कहा—अरे यारो, क्या अंधेर है। तुम रूम चलते-चलते बुड्ढे हो जाओगे। स्पीचें सुनीं, दावतें चखीं, अब बक़चा संभालो और चलो। अब चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, हम एक न मानेंगे। चलिए, उठिए। कूच बोलिए।

आज़ाद—मिरजा साहब, इतने दिनों में खोजी ने एक यही तो बात पक्की कही। अब जहाज़ का जल्द इंतज़ाम कीजिए।

खोजी—पहले यह बताइए कि कितने दिनों का सफ़र है?

आज़ाद—इससे क्या वास्ता? हम कभी जहाज़ पर सवार हुए हों तो बतायें।

खोजी—जहाज़! हाय ग़ज़ब! क्या तरी-तरी जाना होगा? मेरी तो रूह कांपने लगी। भैया, मैं नहीं जाने का।

आज़ाद—अजी, चलो भी, वहां तुरकी औरत के साथ तुम्हारा ब्याह कर देंगे।

खोजी—खुश्की-खुश्की चलो तो भई, मैं चलूंगा। समुद्र में जाते पांव डगमगाता है।

मिरज़ा—जनाब, आपको शर्म नहीं आती? इतनी दूर तक साथ आये, अब साथ छोड़ देते हो? डूब मरने की बात है।

खोजी—क्या खूब! यों भी डूबूं और वो भी डूबूं। खुश्की ही खुश्की क्यों नहीं चलते?

मिरज़ा—आप भी वल्लाह, निरे चोंच ही रहे। खुश्की की राह से कितने दिनों में पहुंचोगे भला? खुश्की की एक ही कही।

खोजी—अब आपसे हुज्जत कौन करे। जहाज़ का कौन एतबार। ज़रा किसी सूराख की राह से पानी आया, और बस, पहुंचे जहन्नुम सीधे।

आज़ाद—तो न चलोगे? साफ़-साफ़ बता दो। अभी सबेरा है।

खोजी—चलें तो बीच खेत, मगर पानी का नाम सुना और कलेजा दहल उठा। भला क्यों साहब, यह तो बताइए कि समुद्र का पाट गंगा के पाट से कोई दूना होगा या

कुछ कमोवेश ?

मिरजा—जी वस, और क्या। चलिए, आपको समुद्र दिखलावें न, थोड़े ही फ़ासले पर है।

खोजी—क्यों नही। हमको ले चलिए और झप से चपरगट्टू करके जहाज़ पर विठा दीजिए। एक शर्त से चलते हैं। वेगम साहिवा ज़मानत करें। हमारे सिर की क़सम खायें कि जबरदस्ती न करेंगे।

आज़ाद—इसमें क्या दिक़्क़त है। चलिए, हम वेगम साहिवा से कहलाये देते हैं। आप और आपके वाप, दोनों के सिर की क़सम खा लें तो सही।

मिरज़ा—हां-हां, वह जमानत कर देंगी। आइए, उठिए।

मियां आजाद और मिरज़ा, दोनों मिल कर गये और वेगम से कहा—इस सिड़ी से इतना कह देना कि तू जहाज देखने जा। ये लोग जवरदस्ती सवार न करेंगे। वेगम साहिवा ने जो सारी दास्तान सुनी, तो तिनक कर वोली कि हम न कहेंगे। आप लोगों ने जरा-सी वात न मानी और सीढ़ी हटा ली। अच्छा, ख़ैर, परदे के पास वुला लो।

खोजी ने परदे के पास आकर सलाम किया; मगर ज़वाव कौन दे। वेगम साहिवा तो मारे हसी के लोटी जाती हैं। मियां आजाद के ख़याल से अपनी चुलवुलाहट पर लजाती भी है और खिलखिलाती भी। शर्म और हंसी, दोनों ने मिलकर रुख़सारों को और भी सुर्ख़ कर दिया। इतने में खोजी ने फ़िर हांक लगायी कि हुजूर ने ग़ुलाम को क्यों याद फ़रमाया है ?

मिरजा—कहती हैं कि हम ज़मानत किये लेते हैं।

ख़ोजी—आप रहने दीजिए, उन्ही को कहने दीजिए।

वेगम—ख़्वाजा साहव, वंदगी। आप क्या पूछते है ?

ख़ोजी—ये लोग मुझे जहाज़ दिखाने लिये जाते है। जाऊं या न जाऊं ? जो हुक्म हो, वह करूं।

वेगम—कभी भूले से न जाना। नही फिर के न आओगे।

ख़ोजी—आप इनकी जमानत करती है।

वेगम—मै किसी की जामिन-वामिन नही होती। 'ज़र दीजिए जामिन न हूजिए'। ये डुवो ही देंगे। मुई क़रौली रखी ही रहेगी।

ख़ोजी—चलिए, वस, हद हो गयी। अब हम नही जाने के।

आजाद—भई, तुम जरा साथ चल कर सैर तो देख आओ।

ख़ोजी—वाह ! अच्छी सैर है। किसी की जान जाय, आपके नजदीक सैर है। उस जानेवाले पर तीन हरफ़।

खैर, समझा-वुझा कर दोनों आदमी खोजी को ले चले। जव समुद्र के किनारे पहुंचे तो खोजी उसे देखते ही कई क़दम पीछे हटे और चीख़ पड़े। फिर दस-पांच क़दम पीछे खिसके और रोने लगे। या ख़ुदा, वचाइए ! लहरें देखते ही किसी ने कलेजे को मसोस लिया।

मिरज़ा—क्या लुत्फ़ है ! ख़ुदा की क़सम, जी चाहता है, फांद ही पड़ूं।

खोजी—कहीं भूल से फांदने-वांदने का इरादा न करना। हयादार के लिए एक चुल्लू काफ़ी है।

आज़ाद—अजव मसख़रा है भई, एक आंख से रोता है, एक आंख से हंसता है।

इतने में दो-चार मल्लाह सामने आये। खोजी ने जो उन्हें ग़ौर से देखा, तो मिरज़ा साहव से वोले—ये कौन हैं भई ? इनकी तो कुछ वजा ही निराली है। भला, ये हमारी वोली समझ लेंगे ?

मिरज़ा—हां हां, खूब। उर्दू खूब समझते हैं।

खोजी—(एक मल्लाह से) क्यों भई मांझी, जहाज़ पर कोई जगह ऐसी भी है, जहां समुद्र नज़र न आये और हम आराम से बैठे रहें? सच बताना उस्ताद! अजी, हम पानी से बहुत डरते हैं भई!

मांझी—हम आपको ऐसी जगह बैठा देंगे, जहां पानी क्या, आसमान तो सूझ ही न पड़े।

खोजी—अरे, तेरे कुरबान। एक बात और बता दो। गन्ने मिलते जायंगे राह में या उनका अकाल है?

मांझी—गन्ने वहां कहां? क्या कुछ मंडी है? अपने साथ चाहे जितने ले चलिए।

खोजी—हाथ, गंडेरियां ताज़ी-ताज़ी खाने में न आयेंगी। भला हलवाई की दुकान तो होगी? आखिर ये इतने शौक़ीन अफ़ीमची जो जाते हैं, तो खाते क्या हैं?

मांझी—अजी, जो चाहो, साथ रख लो।

खोजी—और जो मुंह-हाथ धोने को पानी की ज़रूरत हो तो कहां से आवे?

आज़ाद—पागल है पूरा! इतना नहीं समझता कि समुद्र में जाता है और पूछता है कि पानी कहां से आयेगा।

खोजी—तो आप क्यों उलझ पड़े? आपसे पूछता कौन है? क्यों यार मांझी, भला हम गन्ने यहां से बांध ले चलें और जहाज़ पर चूसें, मगर छिलके फेंकेंगे कहां। आखिर हम दिन भर में चार-छह पौंड़े खाया ही चाहें।

आज़ाद—यह बड़ी टेढ़ी खीर है, गन्नों के छिलके खाने पड़ेंगे।

खोजी—आपसे कौन बोलता है? क्यों भई जो क़रौली बांधें तो हर्ज तो नहीं है कुछ?

मांझी—लैसन ले लीजिएगा और क्या हर्ज है?

खोजी—देखिए, एक बात तो मालूम हुई न! अच्छा यह बताओ कि बहुरूपिये तो जहाज़ पर नहीं चढ़ने पाते?

मांझी—चाहे जो सवार हो। दाम दे, सवार हो ले।

खोजी—यह तो तुमने बेढब सुनायी। जहाज़ पर कुम्हार तो नहीं होते?

मांझी—आज तलक कोई कुम्हार नहीं गया।

खोजी—ऐ, मैं तेरी ज़बान के क़ुरबान। बड़ी ढारस हुई। खैर कुम्हार से तो बचे। बाक़ी रहा बहुरूपिया। उस गीदी को समझ लूंगा। इतनी क़रौलियां भोंकूं कि याद ही करे। हां, बस एक और बात भी बता देना। यह क़ैद तो नहीं है कि आदमी सुबह-शाम ज़रूर ही नहाय?

मांझी—मालूम देता है, अफ़ीम बहुत खाते हो?

खोजी—हां, खूब पहचान गये। यह क्योंकर बूझ गये भई? शौक़ हो, तो निकालूं?

मांझी—राम-राम! हम अफ़ीम छूते तक नहीं।

खोजी—ओ गीदी! टके का आदमी और झख मारता है। निकालूं क़रौली?

मिरज़ा—हां, हां, ख़्वाजा साहब! देखिए, जरी क़रौली म्यान ही में रहे।

खोजी—खैर, आप लोगों की खातिर है। वर्ना उधेड़ कर धर देता पाजी को। आप लोग बीच में न पड़ें, तो भुरकुस ही निकाल दिया होता।

इतने में घोड़े पर सवार एक अंग्रेज़ आकर आज़ाद से बोला—इस दरख़्त का क्या नाम है?

आज़ाद—इसका नाम तो मुझे मालूम नहीं। हम लोग ज़रा इन बातों की तरफ़

कम ध्यान देते है।

अंग्रेज़—हम अपने मुल्क की सब घास-फूस पहचानता है।

खोजी—विलायत का घसियारा मालूम होता है।

अंग्रेज—चिड़िया का इल्म जानता है आप ?

आज़ाद—जी नहीं यह इल्म यहां नही सिखाया जाता।

अंग्रेज़—चिड़िया का इल्म हम खूब जानता है।

खोजी—चिड़ीमार है लंदन का। बस, क़लई खुल गई।

अंग्रेज घोड़ा बढ़ा कर निकल गया। इधर आज़ाद और मिरज़ा साहब के पेट में हंसते-हंसते बल पड़ गये।

उनतालीस

शाम के वक़्त मिरजा साहब की बेगम ने परदे के पास आकर कहा—आज इस वक़्त कुछ चहल-पहल नही है; क्या खोजी इस दुनिया से सिधार गये ?

मिरज़ा—देखो खोजी, बेगम साहिबा क्या कह रही है।

खोजी—कोई अफ़ीम तो पिलवाता नही, चहल-पहल कहां से हो ! लतीफ़े सुनाऊं, तो अफ़ीम पिलवाइएगा ?

बेगम—हां, हां, कहो तो। मरो भी, तो पोस्ते ही के खेत में दफ़नाये जाओ। काफ़ूर की जगह अफ़ीम हो, तो सही।

खोजी—एक ख़ुशनवीस थे। उनके क़लम से ऐसे हरूफ़ निकलते थे, जैसे सांचे के ढले हुए। मगर इन हजरत मे एक सख़्त ऐब यह था कि ग़लत न लिखते थे।

आजाद—कुछ जांगलू हो क्या ?

खोजी—खुदा इन लोगों से बचाये। भई, मेरे तो नाकों दम हो गया। बात पूरी सुनी नही और एतराज़ करने को मौजूद। बात काटने पर उधार खाये हुए हो। मेरा मतलब यह था कि वह ग़लत न लिखते थे; मगर ऐब यह था कि अपनी तरफ़ से कुछ मिला देते थे। एक दफ़े एक आदमी को क़ुरान लिखाने की जरूरत हुई। सोचे कि इनसे बढ़कर कोई खुशनवीस नहीं, अगर दस-पांच रुपये ज़्यादा भी खर्च हों, तो बला से, लिखवायेंगे इन्ही से।

बेगम—ऐ वाह री अक़्ल ! कोई आप ही के से जांगलू होंगे। गली-गली तो छापेख़ाने है। कोई छपा हुआ क़ुरान क्यों न मोल ले लिया ?

खोजी—हुजूर, वह सीधे-सादे मुसलमान थे। मंतिक (न्याय) नही पढ़े थे। ख़ैर साहब ख़ुशनवीस के पास पहुंचे और कहा—हजरत, जो उजरत मांगिए, दूंगा; मगर अर्ज़ यह है, कहिए, कहूं, कहिए, न कहूं। खुशनवीस ने कहा—ज़रूर कहिए। ख़ुदा की क़सम, ऐसा लिखूं कि जो देखे, फड़क जाय। वह बोले—हजरत, यह तो सही है, लेकिन अपनी तरफ़ से कुछ न बढ़ा दीजिएगा। ख़ुशनवीस ने कहा—क्या मजाल; आप इतमीनान रखिए, ऐसा न होने पावेगा। ख़ैर, वह हज़रत तो घर गये, इधर मियां ख़ुशनवीस लिखने बैठे। जब खतम कर चुके, तो किताब लेकर चले। लीजिए हुज़ूर क़ुरान मौजूद है। उन्होंने पूछा—एक बात साफ़ फ़रमा दीजिए। कही अपनी तरफ़ से तो कुछ नहीं मिला दिया ? खुशनवीस ने कहा—जनाब, बदलते या बढ़ाते हुए हाथ कांपते थे। मगर इसमें जगह-जगह शैतान का नाम था। मैने सोचा, ख़ुदा के कलाम में शैतान का क्या जिक्र ? इसलिए कहीं आपके बाप का नाम लिख दिया, कही अपने बाप का।

वेगम—वस, यही लतीफ़ा है ? यह तो सुन चुकी हूं।

खोजी—इस धांधली की सनद नहीं। जव अफ़ीम पिलाने का वक़्त आया तो धांधली करने लगी !

मिरज़ा साहव वोले—अजी, यह पिलवावें या न पिलवावें, मैं पिलवाये देता हूं। यह कहकर उन्होंने एक थाली में थोड़ा-सा कत्था घोलकर खोजी को पिला दिया। खोजी को दिन को तो ऊंट सूझता न था; रात को कत्थे और अफ़ीम के रंग में क्या तमीज़ करते। पूरा प्याला चढ़ा लिया और अफ़ीम पीने के खयाल से पीनक लेने लगे। मगर जव रात ज़्यादा हो गयी तो आपको अंगड़ाइयां आने लगीं; जम्हाइयों की डाक वैठ गयी, आंखों से पानी जारी हो गया। डिविया जेव से निकाली कि शायद कुछ खुरचन-उरचन पड़ी-पड़ायी हो, तो इस दम जी जायं। मगर देखा, तो सफाचट ! वस, सन से जान निकल गयी। आधी रात का वक़्त, अव अफ़ीम आये तो कहां से ? सोचे, भई, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, अफ़ीम कहीं-न-कहीं से ढूंढ़ ही लायेंगे। दन से चल ही तो खड़े हुए। गली में सिपाही से मुठभेड़ हुई।

सिपाही—कौन ?

खोजी—हम हैं ख्वाजा साहव।

सिपाही—किस दफ़्तर में काम करते हो ?

खोजी—पुलिस के दफ़्तर में। मानिकजी-भाईजी की जगह पर आज से काम करते हैं। यार, इस वक़्त कहीं से ज़रा-सी अफ़ीम लाओ, तो वड़ा एहसान हो। आखिर उस्ताद, पाला हमीं से पड़ेगा। तुम्हारे ही दफ़्तर में हैं।

सिपाही—हां, हां, लीजिए, इसी दम। मैं तो खुद अफ़ीम खाता हूं। अफ़ीम तो लो यह है, मगर इस वक़्त घोलिएगा काहे में ?

खोजी—वाह ! सिपाही हो कि वातें ? घर की हुकूमत है ! सरकारी सिपाही सभी मानते हैं।

सिपाही—अच्छा, चलो, पिला दें।

खोजी—वाह सूवेदार साहव ! वड़े वुरे वक़्त काम आये। हम, आप जानिए, अफ़ीमची आदमी, शाम को अफ़ीम खाना भूल गये, आधी रात को याद आया। डिविया खोली, तो सन्नाटा। ले, कहीं से पानी और प्याली दिलवाओ, तो जी उठें।

खैर, सिपाही ने खोजी को खूब अफ़ीम पिलवायी। यहां तक कि घर को लौटे, तो रास्ता भूल गये। एक भलेमानस के दरवाज़े पर पहुंचे, तो पीनक में सूझी कि यही मिरज़ा साहव का मकान है। लगे ज़ंजीर खड़खड़ाने—खोलो, खोलो। भई, अव तो खड़ा नहीं रहा जाता। दरवाज़ा खोल देना।

ख्वाजा साहव तो वाहर खड़े गला फाड़-फाड़कर चिल्लाते हैं, और अंदर उस मकान में मियां का दम निकला जाता है। कोई एक ऊपर दस वरस का सिन, खेल-कूद के दिन, खोजी के भी चचा, दुवले-पतले हाथ-पांव, क़द तीन कम सवा दो इंच का। सिवा हड्डी और चमड़े के गोश्त का कहीं नाम नहीं। और उनकी वीवी खासी देवनी, हट्टी-कट्टी मुसंडी, वड़े डील-डौल की औरत, उठती जवानी, मगर एक आंख की कानी। एक घूंसा तानके लगावे, तो शीदी लंधौर का भुरकस निकल जाय। कोई दो-तीन कम वीस वरस की उम्र। दोनों मीठी नींद सो रहे थे कि खोजी ने धमधमाना शुरू किया।

मियां—या खुदा, वचाइयो। इस अंधेरी रात में कौन आया ? मारे डर के रूह कांपती है; मगर जो वीवी को जगाऊं और मर्दाने कपड़े पहना कर ले जाऊं, तो यह हज़रत भी कांपने लगें।

खोजी—खोलो, मीठी नींद सोने वालों, खोलो। यहां जाते देर नहीं हुई, और

किवाड़े झप से बंद कर लिये ? खटिया-वटिया सब ग़ायब कर दी ?

मियां—बेगम, बेगम, क्या सो गयी ?

वहां सुनता कौन है, जवानी की नींद है कि दिल्लगी। कोई चारपाई भी उलट दे, तो कानों-कान खबर न हो। सिर पर चक्की चले। तो भी आंख न खुले। मियां आखें को मारे डर के एक हाथ से बंद किये बीवी के सिरहाने खड़े हैं; मगर थर-थर कांप रहे हैं। आखिर एक बार किचकिचा के खूब जोर से कंधा हिलाया और बोले—ओ बेगम, सुनती हो कि नहीं ? जगी है, मगर दम साधे पड़ी है।

बेगम—(हाथ झटककर) ऐ हटो, लेके कंधा उखाड़ डाला। अल्लाह करे, ये हाथ टूटें। हमारी मीठी-मीठी नींद खराब कर दी। खुदा जानता है, मैं तो समझी, हालाडोला आ गया। खुदा-खुदा करके जरा आंख लगी, तो यह आफ़त आयी। अब की जगाया तो तुम जानोगे। फिर अपने दांव को तो बैठकर रोते हैं। बेहया, चल दूर हो।

मियां—अरे, क्या फिर सो गयी ? जैसे नींद के हाथों बिक गयी हो। बेगम सुनती हो कि नहीं ?

बेगम—क्या है क्या ? कुछ मुंह से बोलोगे भी ? बेगम-बेगम की अच्छी रट लगायी है। डर लगता हो तो मुंह ढांप कर सो रहो। एक तो आप न सोयें, दूसरे हमारी नींद भी हराम करें।

खोजी—अरे, भई खोलो ! मर गया पुकारते-पुकारते।

मियां—बेगम खुदा करे, बहरी हो जायं। देखो तो यहां किवाड़ कौन तोड़े डालता है ? बंदा तो इस अंधियारी में हुमसने वाला नहीं। जरी तुम्हीं दरवाजे तक जाकर देख लो।

बेगम—जी ! मेरी पैजार उठती है। तुम्हारी तो वही मसल हुई कि 'रोटी खाय दस-बारह, दूध पिये मटका सारा, काम करने को नन्हा बेचारा।' पहले तो मैं औरत जात डर गयी तो फिर कैसी हो ? चोर-चाकर से बीबी को भिड़वाते हैं। मर्द बने हैं, जोरुओं से कहते हैं कि बाहर जाकर चोर से लड़ो।

खोजी—अजी, बेगम साहिबा, खुदा की क़सम, अफ़ीम लाने गया था। जरी दरवाजा खुलवा दीजिए। यह मिरजा साहब, और मौलाना आजाद तो मेरी जान के दुश्मन हैं।

बेगम ने जो अफ़ीम का नाम सुना, तो आग-भभूका हो गयी। उठकर मियां के एक लात लगायी और ऊपर से कोसने लगी—इस अफ़ीम को आग लगे, पीने वाले का सत्यानाश हो जाय। एक तो मेरे मा-बाप ने इस निखट्टू के खूंटे में बांधा, दूसरे इसके मां-बाप ने अफ़ीम इसकी घुट्टी में डाल दी। क्यों जी, तुमने क़सम खायी थी कि आज से अफ़ीम न पीऊंगा ? न तुम्हारी क़सम का एतबार, न जबान का। क़सम भी क्या मूली-गाजर है कि कर-कर करके चबा गये !

मिया—(गर्द झाड-पोंछ कर) क्यों जी, और जो मैं भी एक लात कसके जमाने के लायक होता तो फिर कैसी ठहरती ?

बीवी—मैं तो पहले बातों से समझाती हूं और कोई न समझे तो फिर लातों से खबर लेती हूं। मैं तो इस फ़िक्र में हूं कि तुमको खिला-पिलाकर हट्टा-कट्टा बना दूं, पड़ोसी ताने न दें। और तुम पियो अफ़ीम तो जी जले या न जले ?

मियां साहब दिल ही दिल में अपने मां-बाप को गालियां दे रहे थे। यहां धान-पान आदमी, बीवी लाके बिठा दी देवनी। वे तो ब्याह करके छुट्टी पा गये, लातें हमें खानी पड़ती हैं। मैं तो समझा कि अपना काम ही तमाम हो गया; मगर बेहया ज्यों का त्यों मौजूद। बोले—तुम्हारी जान की क़सम, कौन मरदूद चंडू के क़रीब भी गया हो। आज

या कभी अफ़ीम की सूरत भी देखी हो। और यों खामख्वाह वदगुमानी का कौन-सा इलाज है। जरी चलके देखो तो ! आखिर है कौन ? आव देखा न ताव, कसकर एक लात जमा दी, वस। और जो कहीं कमर टूट जाती ?

खोजी पीनक में जंजीर पकड़े थे। इधर मियां वीवी चले, तो इस तरह कि वीवी आगे-आगे हाथ में चिमटा लिए हुए और मियां पीछे-पीछे मारे डर के आंखें वंद किये हुए। दरवाजा खुला, तो ख़ोजी धम से गिरे सिर के वल और मियां मारे ख़ौफ़ के खोजी पर धर-र-र करके आ रहे। वीवी ने ऊपर से दोनों को दवोचा। खोजी का नशा हिरन हो गया। निकलकर भागे तो नाक की सीध पर चलते हुए मिरज़ा साहव के मकान पर दाख़िल। वहां देखा, खिदमतगार पड़ा खर्राटे ले रहा है। चुपके-से अपनी खटिया पर दराज़ हुए; मगर मारे हंसी के वुरा हाल था। सोचे, हम तो थे ही, यह मियां हमारे भी चचा निकले।

चालीस

सुवह का वक़्त था। मियां आज़ाद पलंग से उठे तो देखा, वेगम साहिवा मुंह खोले वेतक़ल्लुफ़ी से खड़ी उनकी ओर कनखियों से ताक रही है। मिरज़ा साहव को आते देखा, तो वदन को चुरा लिया, और छलांग मारी, तो जैनव की ओट में थीं।

मिरज़ा—कहिए, आज क्या इरादे है ?

आज़ाद—इस वक़्त हमको किसी ऐसे आदमी के पास ले चलिए, जो तुरकी के मामलों से खूव वाक़िफ़ हो। हमें वहां का कुछ हाल मालूम ही नही। कुछ सुन तो लें। वहां के रंग-ढंग तो मालूम हों।

मिरजा—वहुत ख़ूव; चलिए, मेरे एक दोस्त हेडमास्टर हैं। वहुत ही जहीन और खुशवाश आदमी हैं।

आज़ाद तैयार हुए तो वेगम ने कहा—ऐ, तो कुछ खाते तो जाओ। ऐसी अभी क्या जल्दी है ?

आज़ाद—जी नहीं। देर होगी।

वेगम—अच्छा, चाय तो पी लीजिए।

थोड़ी देर में दोनों आदमियों ने चाय पी, पान खाये और चले। हेड मास्टर का मकान थोड़ी ही दूर था, खट से दाख़िल। सलाम-वलाम के वाद आज़ाद ने रूम और रूस की लड़ाई का ताज़ा हाल पूछा।

हेडमास्टर—तुरकी की हालत वहुत नाजुक हो गयी है।

खोजी—यह वताइए कि वहां तोप दग़ रही है या नहीं ? दनादन की आवाज़ कान में आती है या नही ?

हेडमास्टर—दनादन की आवाज़ तो यहां तक आ चुकी; मगर लड़ाई छिड़ गयी है और खूव जोरों से हो रही है।

खोजी—उफ्, मेरे अल्लाह ! यहां तो जान ही निकल गयी।

आजाद—मियां, हिम्मत न हारो। ख़ुदा ने चाहा, तो फ़तह है।

खोजी—अजी, हिम्मत गयी भाड़ में, यहां तो क़ाफ़िया तंग हुआ जाता है।

आज़ाद—लड़ाई रूस से हो रही है, या आपस में ?

हेडमास्टर—आपस ही में समझिए। अक्सर सूवे विगड़ गये और लड़ाई हो रही

आजाद—यह तो वुरी हुई।

ख़ोजी—बुरी हुई, तो फिर जाते क्यों हो ? क्या तवाही आयी है ?

हेडमास्टर—सर्विया की फ़ौज सरहद को पार कर गयी। तुरकों से एक लड़ाई भी हुई। सुना है कि सर्विया हार गया। मगर उसका कहना है कि यह सब ग़लत है। हम डटे हुए है, और तुरकों को बासिनिया की सरहद पर जक दी।

ख़ोजी—अब मेरे गये बग़ैर बेड़ा न पार होगा। क़सम ख़ुदा की, इतनी क़रौलियां भोंकी हों कि परे के परे साफ़ हो जायं। दिल्लगी है कुछ।

हेडमास्टर—दूसरी ख़बर यह है कि सर्विया और तुरकों में सख्त लड़ाई हुई, मगर न कोई हारा, न जीता। सर्विया वाले कहते हैं कि हमने तुरकों को भगा दिया।

ख़ोजी—भई आज़ाद, सुनते हो ? वापस चलो। अजी, शर्त तो यही है न कि तमग़े लटका कर आओ ? आप वापस चलिए मैं एक तमग़ा बनवा दूंगा।

कुछ देर तक मियां आज़ाद और हेडमास्टर साहब में यही बातें होती रहीं। दस बजते-बजते यहां से रुख़सत होकर घर आये। जब खाना खाकर बैठे तो बेगम साहिबा ने आज़ाद से कहा—हज़रत, ज़रा इस मिसरे पर कोई मिसरा लगाइए—

इसलिए तसवीर जानां हमने खिचवायी नहीं।

आज़ाद—हां-हां सुनिए—

ग़ैर देखे उनकी सूरत इसकी ताब आयी नहीं;
इसलिए तसवीर जानां······नहीं।
उसकी फ़ुरक़त ज़ेहन में अपने कभी आयी नहीं;
इसलिए तसवीर जानां······नहीं।

बेगम—कहिए, आपकी ख़ातिर से तारीफ़ कर दें। मगर मिसरे ज़रा फीके हैं।

आज़ाद—अच्छा, लें आप ही कोई चटपटा मिसरा कहिए।

बेगम—ऐ, हम औरतजात, भला शेर-शायरी क्या जानें। और जो आपकी यही मरज़ी है, तो लीजिए—

लौहे-दिल ढूंढा किये पर हाथ की आयी नहीं,
इसलिए ··· ··· ··· नहीं।

ख़ोजी—वाह, बेगम साहिबा ! आपने तो सुलेमान सावजी के भी कान काटे। पर अब ज़रा मेरी उपज भी सुनिएगा—

पीनके-अफ़यूं से टुक फ़ुरसत कभी पायी नहीं,
इसलिए ··· ··· ··· नहीं।

इस मिसरे का सुनना था कि मिरज़ा साहब, उनकी हंसोड़ बीवी और मियां आज़ाद—हंसते-हंसते लोट गये। अभी यही चर्चा हो रही थी कि इतने में एक आदमी ने बाहर से आवाज दी। मिरज़ा ने जैनब से कहा कि जाओ, देखो तो कौन है ? मियां खलीफ़ा हों तो कहना, इस वक़्त हम बाल न बनवायेंगे। तीसरे पहर को आ जाइए। जैनब आटा गूंध रही थी। 'अच्छा' कहकर चुप हो रही। आदमी ने फिर बाहर से आवाज़ दी। तब तो जैनब को मजबूर होकर उठना ही पड़ा। नाक-भौं चढ़ाती, नौकर को जली-कटी सुनाती चली। जो है, मेरी ही जान का ग्राहक है। जिसे देखो, मेरा ही दुश्मन। वाह एक काम छोड़ दूसरे पर लपको। अबकी चांद हो, तो मैं तनख्वाह लेके अपने घर बैठ रहूं। क्यों, निगोड़ी नौकरी का भी कुछ अकाल है ? जैनब का क़ायदा था कि काम सब करती थीं, मगर बड़बड़ाकर। बात-बात पर तिनक जाना तो गोया उसकी घुट्टी में

पड़ा था। मगर अपने काम में चुस्त थी। इसलिए उसकी खातिर होती थी। मुंह-फुलाकर बाहर गयीं। पहले तो जाते ही खिदमतगार को खूब आड़े हाथों लिया—क्या घर भर में मैं ही अकेली हूं? जो पुकारता है, मुझी को पुकारता है। मुए उल्लू के मुंह में नाम पड़ गया है।

खिदमतगार ने कहा—मुझसे क्यों बिगड़ते हो? यह मियां आये हैं; हुजूर से जा कर इनका पैग़ाम कह दो। मगर ज़रा समझ-बूझ कर कहना। सब बातें सुन लो अच्छी तरह।

जैनब— (उस आदमी से) कौन हो जी? क्या कहते हो? तुम्हें भी इसी वक़्त आना था?

आदमी—मल्लाह हूं, और हूं कौन? जाकर अपने मियां से कह दो, आज जहाज़ रवाना होगा। अभी दस घंटे की देर है। तैयार हो जाइए।

जैनब ने अंदर जाकर यह खबर दी। बेगम साहिबा ने जहाज़ का नाम सुना, तो धक से रह गयीं। चेहरे का रंग फीका पड़ गया। कलेजा धड़-धड़ करने लगा। अगर ज़ब्त न करतीं, तो आंसू जारी हो जाते।

मिरज़ा—लीजिए हज़रत, अब कूच की तैयारी कीजिए।

आज़ाद—तैयार बैठा हूं। यहां कोई लंबा-चौड़ा सामान तो करना नहीं। एक बैग, एक दरी, एक लोटा, एक लकड़ी। चलिए, अल्लाह-अल्लाह, खैरसल्लाह। वक़्त पर दन से खड़ा हूंगा।

खोजी—यहां भी वही हाल है। एक डिबिया, एक प्याली, चंडू पीने की एक निगाली; एक क़तार, एक दोना मिठाई का, एक चाकू, एक क़रौली; बस, अल्लाह अल्लाह, खैरसल्लाह। बंदा भी कील-कांटे से दुरुस्त है।

यह सुन कर मियां आज़ाद और मिरज़ा साहब दोनों हंस पड़े। मगर बेगम साहिबा के होंठों पर हंसी न आयी। मिरज़ा साहब, तो उसी वक़्त मल्लाह से बातें करने के लिए बाहर चले गये और यहां मियां आज़ाद और बेगम साहिबा, दोनों अकेले रह गये। कुछ देर तक बेगम ने मारे रंज के सिर तक न उठाया। फिर बहुत संभल कर बोलीं—मेरा तो दिल बैठा जाता है।

आज़ाद—आप घबराइए नहीं, मैं जल्दी वापस आऊंगा।

बेगम—हाय, अगर इतनी ही उम्मीद होती, तो रोना काहे का था?

आज़ाद—सब्र को हाथ से न जाने दीजिए। खुदा बड़ा क़ारसाज़ है।

बेगम—आंखों में अंधेरा-सा छा गया। क्या आज ही जाओगे? आज ही? तुम्हारे जाने के बाद मेरी न जाने क्या हालत होगी?

आज़ाद—खुदा ने चाहा, तो हंसी-खुशी फिर मिलेंगे।

इतने में मिरज़ा साहब ने आकर कहा कि सुबह को तड़के जहाज़ रवाना होगा।

बेगम—यों जाने को सभी जाते हैं, लाखों मर्द-औरत हर साल हज कर आते हैं; मगर लड़ाई में शरीक होना! बस, यही खयाल तो मारे डालता है।

आज़ाद—ये लाखों आदमी जो लड़ने जाते हैं, क्या सब के सब मर ही जाते हैं? फिर क़ज़ा का वक़्त कौन टाल सकता है? जैसे यहां, वैसे वहां।

मिरज़ा—भई, मेरा तो दिल गवाही देता है कि आप सुर्खरू हो कर आयेंगे। और यों तो ज़िंदगी और मौत खुदा के हाथ है।

बेगम—ये सब बातें तो मैं भी जानती हूं! मगर समझाऊं किसे?

मिरज़ा—जब जानती हो, तब रोना-धोना बेकार है। हाथ-मुंह धो डालो।

जैनब, पानी लाओ। यही तो तुम मे ऐब है कि सुबह का काम शाम को और शाम का सुबह को करती हो। लाओ पानी झटपट।

जैनब—या अल्लाह ! अब आलू छीलू या पानी लाऊं !

आखिर जैनब दिल ही दिल मे बुरा-भला कहती पानी लायी। बेगम ने मुह धोया और बोली—अब मै कोई ऐसी बात न कहूंगी, जिससे मियां आजाद को रंज हो।

खोजी—अजी मियां आजाद ! चलने का वक़्त क़रीब आया। कुछ मेरी भी फ़िक्र है ? वह क़रौली लेते ही लेते रह गये ? अफ़ीम का क्या बंदोबस्त किया ? यार, कही ऐसा न हो कि अफ़ीम राह मे न मिले और हम जीते जी मर मिटे। जरी जैनब को बाजार तक भेज कर कोई साठ-सत्तर क़तारे को नर्म-नर्म मंगवा दीजिए। नही तो मैं जीता न फिरूंगा।

जैनब—हां, जैनब ही तो घर भर में फालतू है। लपक कर बाजार से ले क्यों नही आते ? क्या चूड़ियां टूट जायंगी ? और औरत जात अफ़ीम लेने कहां जाऊंगी भला ?

बेगम—रास्ते में इस पगले के सबब से खूब चहल-पहल रहेगी।

आजाद—हां, इसीलिए तो लिये जाता हू। मगर देखिए, क्या यह बेहूदगियां करते है ?

खोजी—अजी, आपसे सौ क़दम आगे रहूं, तो सही।

मिरजा—इसमे क्या शक है ? लेकिन उस तरफ़ कोई बहुरूपिया हुआ, तो कैसी ठहरेगी ?

खोजी—सच कहता हूं, इतनी क़रौलिया भोकूं कि याद करे। मै दगानेवाली पलटन मे रिसालदार था। अवध मे खुदा जाने कितनी गढ़ियां जीत ली।

बेगम—ऐ रिसालदार साहब, आपकी क़रौली क्या हुई ? मोरचा खा गयी हो तो साफ़ कर लीजिए। ऐसा न हो, मोरचे पर म्यान ही मे रहे।

जैनब—रिसालदार साहब, हमारे लिए वहां से क्या लाइएगा ?

खोजी—अजी, जीते आवे, तो यह बड़ी बात है। यहां तो बदन कांप रहा है।

इन्ही बातों मे चलने का वक़्त आ गया। आजाद ने अपना और खोजी का सामान बांधा। बग्घी तैयार हुई। जब मिया आजाद ने चलने के लिए लकड़ी उठायी तो बेगम बेचारी बेअख्तियार रो दी। कांपते हुए हाथों से इमामजामिन की अशरफ़ी बांधी और कहा—जिस तरह पीठ दिखाते हो, उसी तरह मुह भी दिखाना।

मियां आजाद, मिरजा और खोजी जाकर बग्घी पर बैठे। जब गाड़ी चली, तो खोजी बोले—हमसे कोई नहाने को कहेगा, तो हम करौली ही भोंक देगे।

मिरजा—तो जब कोई कहे न ?

खोजी—हां, बस, इतना याद रखिएगा जरा। और, हम यह भी बताये देते हैं कि गन्ना चूस-चूस कर समुदर के बाप मे फेकेंगे, और जो कोई बोलेगा, तो दबोच बैठेंगे। हां, ऐसे-वैसे नही है यहा !

सामने समुद्र नजर आने लगा।

इकतालीस

हुस्नआरा मीठी नीद सो रही थी। ख़्वाब में क्या देखती है कि एक बूढ़े मियां सब्ज कपड़े पहने उसके क़रीब आकर खड़े हुए और एक किताब देकर फ़रमाया कि इसे लो और इसमे फ़ाल देखो। हुस्नआरा ने किताब ली और फ़ाल देखा, तो यह शेर था—

हमें क्या ख़ौफ़ है, तूफ़ान आवे या वला टूटे।

आंख खुल गयी तो न वूढ़े मियां थे, न किताव। हुस्नआरा फ़ाल-वाल की क़ायल न थी; मगर फिर भी दिल को कुछ तसकीन हुई। सुवह को वह अपनी वहन सिपहआरा से इस ख़्वाव का ज़िक्र कर रही थी कि लौंडी ने आज़ाद का ख़त लाकर उसे दिया।

हुस्नआरा—हम पढ़ेंगे।

सिपहआरा—वाह, हम पढ़ेंगे

हुस्नआरा—(प्यार से झिड़क कर) वस, यही वात तो हमें भाती नहीं।

सिपहआरा—न भावें, धमकाती क्या हो ?

हुस्नआरा—मेरी प्यारी वहन, देखो, वड़ी वहन का इतना कहना मान जाओ। लाओ ख़त ख़ुदा के लिए।

सिपहआरा—हम तो न देंगे।

हुस्नआरा—तुम तो ख़ाहमख़्वाह ज़िद करती हो, वच्चों की तरह मचली जाती हो।

सिपहआरा—रहने दीजिए, वाह-वाह ! हम आज़ाद का ख़त न पढ़ें ?

यह कहकर सिपहआरा ने आज़ाद का ख़त पढ़ सुनाया—

'अव तो जाते हैं हिंद से आज़ाद,
फिर मिलेंगे अगर ख़ुदा लाया।

आज जहाज़ पर सवार होता हूं। दो घंटे और हिंदुस्तान में हूं। उसके वाद सफ़र, सफ़र, सफ़र। मैं ख़ुश हूं। मगर इस ख़याल से जी वेचैन है कि तुम वेक़रार होगी। अगर यह मालूम हो जाता कि तुम भी ख़ुश हो, तो जी जाता। अव तो यही धुन है कि कव रूम पहुंचूं। वस रुख़सत।

—तुम्हारा आज़ाद।

'हां, प्यारी सिपहआरा को ख़ूव समझाना। उनका दिल वहुत नर्म है। इस वक़्त ख़ोजी पानी की सूरत देखकर मचल रहे हैं।'

हुस्नआरा—यह मुआ ख़ोजी अभी जीता ही है ?

सिपहआरा—उसे तो पानी का नाम सुन कर जूड़ी चढ़ आती थी।

हुस्नआरा—आखिर वेचारे जहाज़ पर सवार हो गये ! अव देखें. रूम से कव ख़त आता है ?

सिपहआरा—अव तो फ़ाल पर ईमान लायी ? देखा, मैं क्या कहती थी ? अव मिठाई खिलवाइए। जरी, कोई यहां आना। पांच रुपये की पंचमेल मिठाई लाओ।

हुस्नआरा—यह क्या ख़व्त है ?

सिपहआरा—आपकी वला से। एक डली तुम भी खा लेना।

हुस्नआरा—ख़ूव ! पांच रुपये की मिठाई, और उसमें हमको एक डली मिले ? आते ही आते आधी न चख जाऊं, तो कहना।

सिपहआरा—वाह, दे चुकी मैं ! ऐसी कच्ची नहीं हूं।

हुस्नआरा—भला, किताव से आगे का हाल क्या मालूम होगा ? मुझे वड़ी हंसी आती है, जव कोई फ़ाल देखता है। आंखें वंद किये हुए थोड़ी देर वड़वड़ाये, और किताव खोली। फिर अपने-अपने तौर पर मतलव निकालने। यह सव ढकोसला है। हमको वड़े उस्ताद ने सवक़ पढ़ाया है।

थोड़ी देर में सिपाही ने बाहर से आवाज़ दी कि मामा, मिठाई ले जाओ। सिपहआरा दौड़ी—मुझे देना। हुस्नआरा अलग फुर्ती से झपटी कि हमें, हमें। अब मामा बेचारी किसको दे, एक चंगेल, दो गाहक। उसने हुस्नआरा को चंगेली दे दी।

हुस्नआरा—अब बतलाइए, खाने मे लग्गा लगाऊं? बरफ़ी पर चादी के चमकते हुए वर्क़ कितनी बहार देते हैं।

सिपहआरा—मामा, तुम दीवानी हो गयी हो कुछ? रुपये हमने दिए थे या इन्होने? पराया माल क्या झप से उठा दिया! वाह-वाह! हां-हां—कहती जाती हूं, सुनती ही नही।

मामा—वह आपकी बड़ी···

सिपहआरा—चलो, बस रहने भी दो। ऊपर से बातें बनाती हो।

सिपहआरा ने मिठाई बांटी, तो मामा हुस्नआरा की बूढ़ी दादी को भी उसमे से दस-पांच डलियां दे आयी।

बूढ़ी—यह मिठाई कैसी!

मामा—हुजूर, हुस्नआरा ने फ़ाल देखी थी।

बूढ़ी—फ़ाल कैसी?

मामा—चिट्ठी आयी थी कहीं से।

बूढ़ी—चिट्ठी कैसी?

मामा—बीबी, वही जो हैं, देखिए, क्या नाम है उनका जदाई।

बूढ़ी—जदाई कैसी? ला, मेरी छड़ी तो दे।

बूढ़ी बेगम कमर झुकाये, लठिया टेकते हुए चली। आकर देखा, दोनों बहन मिठाई चख रही हैं।

बूढ़ी—यह मिठाई कैसी आई है?

सिपहआरा—अम्मांजान, हुस्नआरा हमसे शर्त हारी है। कहती थी, हमारे दीवान-हाफ़िज मे चार सौ सफ़े है; मैने कहा, नही चार सौ चालीस हैं।

बूढ़ी—यह बात थी! मामा सठिया गई है क्या? जाने क्या-क्या बकती थी।

शाम के वक़्त दोनों बहनें सहेलियों के साथ हाथ में हाथ दिये छत पर अठखेलियां कर रही थी। एक ने दूसरे के चुटकी ली, किसी ने किसी को गुदगुदाया, जरा खयाल नही कि तिमंजिले पर खड़ी हैं, जरा पांव डगमगाया तो ग़जब ही हो जाय। हवा सन-सन चल रही थी। एकाएक एक पतंग आकर गिरी। सिपहआरा ने लपक कर लूट लिया। आहाहा, इस पर तो किसी ने कुछ लिखा है—माहीजालवाला पतंग, सब की सब दौड़ पड़ी। हुस्नआरा ने ये शेर पढ़ कर सुनाये—

बहुत तेज है आजकल तीरे मिजगां;
कोई दिल निशाना हुआ चाहता है।
मेरे क़त्ल करने को आता है क़ातिल;
तमाम आज क़िस्सा हुआ चाहता है।

हुस्नआरा का माथा ठनका कि कुछ दाल मे काला है। ताड़ गयी कि कोई नये आशिक़ पैदा हुए, मुझ पर सिपहआरा पर शैदा हुए। मालूम नही, कौन है? कही मुझे बाहर देख तो नही लिया? दिमाग़ फिर गया है मुए का। जब सब सहेलियां अपने-अपने घर चली गयी तो हुस्नआरा ने बहन से कहा—तुम कुछ समझी? यह पतंग पर क्या लिखा था? तुम तो खेल रही थी; मैं उस वक़्त से इसी फ़िक्र में हूं कि माजरा क्या है?

सिपहआरा—कुछ-कुछ तो मैं भी समझती हूं; मगर अव किसी से कहो-सुनो नहीं।

हुस्नआरा—लच्छन बुरे हैं। इस पतंग को फाड़-फूड़ कर फेंक दो। कोई देखने न पाये।

इतने में खिदमतगार ने मामा को आवाज़ी दी और मामा वाहर से एक लिफ़ाफ़ा ले आयी। हुस्नआरा ने जो लिफ़ाफ़ा लिया, तो मारे ख़ुशवू के दिमाग़ तर हो गया फिर माथा ठनका। ख़ुशवू कैसी! मामा से वोली—किसने दिया है?

मामा—एक आदमी खिदमतगार को दे गया है। नाम नहीं वताया। दिया और लंवा हुआ।

सिपहआरा—खोलो तो, देखो है क्या?

लिफ़ाफ़ा खोला, तो एक खत निकला। लिखा था—'एक ग़रीव मुसाफ़िर हूं, कुछ दिनों के लिए आपके पड़ोस में आकर ठहरा हूं। इसलिए कोई ग़ैर न समझिएगा। सुना है कि आप दोनों वहनें शतरंज खेलने में वर्क हैं। यह नक़्शा भेजता हूं। मेरी खातिर से इसे हल कर दो, तो वड़ा एहसान हो। मैंने तो वहुत दिमाग़ लड़ाया, पर नक़्शा समझ में न आया।

—मिरज़ा हुमायूं फ़र।'

इस खत के नीचे शतरंज का एक नक़्शा दिया हुआ था।

सिपहआरा—वा जी, सच कहना, यह तो कोई वड़े उस्ताद मालूम होते हैं। मगर तुम जरा ग़ौर करो, तो चुटकियों में हल कर लो। तुम तो वड़े-वड़े नक़्शे हलकर लेती हो। भला इसकी क्या हक़ीक़त है?

हुस्नआरा—वहन, यह नक़्शा इतना आसान नहीं है। इसको देखो तो अच्छी तरह। मगर यह तो सोचो कि भेजा किसने है!

सिपहआरा—हुमायूं फ़र तो किसी शाहज़ादे ही का नाम होगा। मामा को वुलाओ और कहो, सिपाही से पूछें, कौन लाया था? क्या कहता था? आदमी का पता मिल जाय, तो भेजनेवाले का पता मिला दाखिल है।

मामा ने वाहर जाकर इशारे से सिपाही को वुलाया।

सिपाही—कहो, क्या कहती हो?

मामा—जरी, इधर तो आ।

सिपाही—वहां कोने में क्या करूं आन के। कोई वहां हौले-हौले वातें करते देखेगा, तो क्या कहेगा। यहां से निकलवा दोगी क्या?

मामा—ऐ चल छोकरे! कल का लौंडा, कैसी वातें करता है? छोटी वेगम पूछती हैं कि जो आदमी लिफ़ाफ़ा लाया था, वह किधर गया? कुछ मालूम है?

सिपाही—वह तो वस लाया, और देके चम्पत हुआ; मगर मुझे मालूम है, वह, सामनेवाले वाग़ में एक शाहज़ादे आनके टिके हैं, उन्हीं का चोवदार था।

हुस्नआरा ने यह सुना, तो वोली—शाहज़ादे तो हैं, मगर वदतमीज़।

सिपहआरा—यह क्यों?

हुस्नआरा—अव्वल तो किसी कुंआरी शरीफ़ज़ादी के नाम ख़त भेजना वुरा, दूसरे पतंग गिराया। ख़त भेजा, वह भी इत्र में वसा हुआ।

सिपहआरा—वा जी, यह तो वदगुमानी है कि खत को इत्र से वसाया। शाहज़ादे हैं, हाथ की खुशवू खत में भी आ गयी। मगर खत अदव से लिखा है।

हुस्नआरा—उनको ख़त भेजने की जुर्रत क्योंकर हुई। अव ख़त आये, तो न लेना, खवरदार। वह शाहज़ादे, हमारा उनका मुक़ावला क्या? और फिर वदनामी का डर।

सिपहआरा—अच्छा, नक़्शा तो सोचिए। इसमें तो कोई बुराई नहीं !

हुस्नआरा ने बीस मिनट तक ग़ौर किया और तव हंस कर बोली—लो, हल कर दिया। न कहोगी। अल्लाह जानता है, बड़ी टेढ़ी खीर है। लाओ, फिर अब जवाब तो लिख भेजें। मगर डर मालूम होता है कि कहीं उंगली देते ही पहुंचा न पकड़ लें। जाने भी दो। मुफ़्त की बदनामी उठाना भला कौन सी दानाई है ?

सिपहआरा—नहीं-नही बहन, जरूर लिख भेजो। फिर चाहे कुछ न लिखना।

हुस्नआरा—अच्छा, लाओ लिखें, जो होना होगा, सो होगा !

सिपहआरा—हम बतायें। ख़त-वत तो लिखो नही, बस, इस नक़्शे को हल करके डाक में भेज दो।

बयालीस

शहर से कोई दो कोस के फ़ासले पर एक बाग़ है, जिसमें एक आलीशान इमारत बनी हुई है। इसी में शाहजादा हुमायूं फर आकर ठहरे है। एक दिन शाम के वक़्त शाहजादा साहब बाग़ में सैर कर रहे थे और दिल ही दिल में सोचते जाते थे कि शाम भी हो गयी मगर ख़त का जवाब न आया। कहीं हमारा ख़त भेजना उन्हें बुरा तो न मालूम हुआ। अफ़सोस, मैने जल्दी की। जल्दी का काम शैतान का। अपने ख़त और उसकी इबारत को सोचने लगे कि कोई बात अदब के खिलाफ़ जबान से निकल गयी हो तो ग़जब ही हो जाय। इतने में क्या देखते हैं कि एक आदमी सांड़नी पर सवार दूर से चला आ रहा है। समझे, शायद मेरे ख़त का जवाब लाता होगा। खिदमतगारों से कहा कि देखो, यह कौन आदमी है ? खत लाया है या खाली हाथ आया है ? आदमी लोग दौड़े ही थे कि सांड़नी सवार हवा हो गया।

थोड़ी देर मे एक चपरासी नजर आया। समझे, बस, यह क़ासिद है। चपरासी ने दरबान को ख़त दिया और शाहज़ादा साहब की बांछें खिल गयीं। दिल ने गवाही दी कि सारी मुरादें मिल गयी। खत खोला, तो एक लेक्चर का नोटिस था। मायूस होकर ख़त को रख दिया और सोचा कि अब ख़त का जवाब आना मुश्किल है। ग़म ग़लत करने को एक ग़जल गाने लगे। इतने ही में डाक का हरकारा लाल पगिया जमाये, धानी दगला फड़काये, लहबर तोते की सूरत बनाये आ पहुंचा और ख़त देकर रवाना हुआ। शाहजादे ने ख़त खोला और इबारत पढी तो फड़क गये। हाय, क्या प्यारी जबान है, क्या बोल-चाल है। जबान और बयान में भी निगाह की तरह जादू कूट-कूट कर भरा है। उस नाजुक हाथ के सदक़े, जिसने ये सतरें लिखी है। लिखते वक़्त कलाई लचकी जाती होगी। एक-एक लफ़्ज से शोखी टपकती है, एक-एक हरफ़ से रंगीनी झलकती है। और नक़्शा तो ऐसा हल किया कि क़लम तोड़ दिये। आख़िर मे लिखा था—

इश्क़ का हाल वेसवा जानें,
हम बहू-बेटियां ये क्या जानें ?

ख़ुद ही शेर पढ़ते थे और ख़ुद ही जवाब देते थे।

एकाएक उनके एक दोस्त आये और बोले—कहिए, कुछ जवाब आया ? या धता बता दिया ?

शाहजादा—वाह, धता तुम जैसों को बताती होंगी। लो, यह जवाब है।

दोस्त—(लिफ़ाफ़ा पढ़कर) वाह, बड़े अदब से ख़त लिखा है।

शाहज़ादा—जनाब, कुछ बाज़ारी औरतें थोड़े हैं। एक-एक लफ़्ज़ से शराफ़त बरसती है।

दोस्त—फिर पूछते क्या हो! गहरे हैं। हमें न भूलिएगा।

अब शाहज़ादे को फ़िक्र हुई कि किसी तरह मुलाक़ात की ठहरे। बने या बिगड़े। जब आमने-सामने बात हो, तब दिल को चैन आये। सोचते-सोचते आपको एक हिकमत सूझ ही गयी। मूंछों का सफ़ाया कर दिया, नकली बाल लगा लिये, ज़नाने कपड़े पहने और पालकी पर सवार होकर हुस्नआरा के दरवाज़े पर जा पहुंचे। अपनी महरी को साथ ले लिया था। महरी ने पुकारा—अरे, कोई है? जरा अंदर ख़बर कर दो कि मिरज़ा हुमायूं फ़र की बहन मिलने आयी हैं।

बड़ी बेगम ने जो सुना, तो आकर हुस्नआरा से बोलीं—ज़रा क़रीने से बैठाना। तमीज़ से बातें करना। कोई भारी सा जोड़ा पहन लो, समझीं!

हुस्नआरा—अम्मांजान, कपड़े तो बदल लिये हैं?

बड़ी बेगम—देखूं। यह क्या सफ़ेद दुपट्टा है?

हुस्नआरा—नहीं, अम्मांजान, गुलाबी है। वही जामदानी का दुपट्टा जिसमें कामदानी की आड़ी बेल है।

बड़ी बेगम—बेटा, कोई और भारी जोड़ा निकालो।

हुस्नआरा—हमें तो यही पसंद है।

इतने में आशिक़ बेगम पालकी से उतरीं और जाकर बोलीं—आदाब बजा लाती हूं।

हुस्नआरा—तस्लीम! आइए।

आशिक़—आओ बहन, गले तो मिलें।

दोनों बहनें बेझिझक आशिक़ बेगम से गले मिलीं।

सिपहआरा—

> आमद हमारे घर में किसी महलक़ा की है;
> यह शाने किर्दगार यह क़ुदरत ख़ुदा की है।

हुस्नआरा—

> यह कौन आया है रखकर फूल, मुए अंबर अफ़शां में;
> सबा इतरायी फिरती है जो इन रोजों गुलिस्तां में।

आशिक़—

> 'सफ़दर' ज़बां से रोज़े मुहब्बत अयां न हो;
> दिल आशनाए-दर्द हो, लब पर फ़ुगां न हो।

सिपहआरा—आपने आज ग़रीबों पर करम किया। हमारे बड़े नसीब।

आशिक़—बहन, हमारी तो कई दिन से ख़्वाहिश थी कि आपसे मिलें, मगर फिर हम सोचे कि शायद आपको नागवार हो। हम तो ग़रीब हैं। अमीरों से मिलते हुए ज़रा बह मालूम होता है।

हुस्नआरा—बजा है। आप तो ख़ुदा के फ़ज़्ल से शाहज़ादी हैं, हम तो आपकी रिआया हैं।

आशिक़—आप दोनों बहनें एक दिन कोठे पर टहल रही थीं, तो हुमायूं फ़र ने मुझे बुला कर दिखाया था।

हुस्नआरा ने गिलौरी बना कर दी और आशिक़ बेगम ने उन्ही के हाथो से खायी। कत्था केवडे मे बसा हुआ, चादी-सोने का वर्क़ लगा हुआ, चिकनी डली और इलायची। ग़रज कि वडे तकल्लुफ़ वाली गिलौरियां थी। थोड़ी देर के बाद तरह-तरह के खाने दस्तरख़्वान पर चुने गये और तीनो ने मिलकर खाना खाया। खाना खाकर आशिक बेगम ने बेतकल्लुफ़ी से हुस्नआरा की रानो पर सिर रख दिया और लेट रही। सिपहआरा ने उठकर कश्मीर का एक दुशाला उढा दिया और करीब आकर बैठ गयी।

आशिक—बहन, अल्लाह जानता है, तुम दोनो बहने चाद को भी शरमाती हो।

हुस्नआरा—और आप ?

अपने जोबन से नही यार ख़बरदार हनोज,
नाजो-अंदाज से वाकिफ़ नही जिनहार हनोज।

तीनों मे बहुत देर तक बाते होती रही। दस बजे के क़रीब आशिक़ बेगम उठ बैठी और फ़रमाया कि बहन, अब हम रुख़्सत होगे। जिंदगी है तो फिर मिलेगे।

सिपहआरा—

बेचैन कर रहा है क्या-क्या दिलोजिगर को;
हरदम किसी का कहना, जाते है हम तो घर को।

इस तरह मुहब्बत की बाते करके आशिक बेगम रुखसत हुई और जाते वक़्त कह गयी कि एक दिन आपको हमारे यहा आना पड़ेगा। पालकी पर सवार होकर आशिक बेगम ने मामाओ, खि़दमतगारो और दरबानो को दो-दो अशर्फिया इनाम की दी और चुपके से मामा को एक तसवीर देकर कहा कि यह दे देना।

कहारो ने तो पालकी उठायी और मामा ने अदर जाकर तसवीर दी। हुस्नआरा ने देखा, तो धक से रह गयी। तसवीर के नीचे लिखा था—

'प्यारी,

मै आशिक बेगम नही हूं, हुमायू फ़र हू। अब अगर तुमने बेवफ़ाई की तो जहर खाकर जान दे दूगा।'

हुस्नआरा—बहन, गजब हो गया !

सिपहआरा—क्या, हुआ क्या ? बोलो तो !

हुस्नआरा—लो, यह तसवीर देखो।

सिपहआरा—(तसवीर देखकर) अरे, गजब हो गया ! इसने तो बड़ा जुल दिया।

हुस्नआरा—(हीरे की कील नाक से निकालकर) बहन, मै तो यह खाकर सो रहती हूं।

सिपहआरा—(कील छीनकर) उफ् जालिम ने बड़ा धोखा दिया।

हुस्नआरा—हम गले मिल चुकी। जालिम जानू पर सिर रखकर सोया।

सिपहआरा—मगर बा जी, इतना तो सोचो कि बहन कह-कह कर बात करते थे। बहन बना गये है।

हुस्नआरा—यह सब बाते है। किसकी बहन और कैसा भाई !—

वह यो मुझे देखकर गया है;
खाल उसकी जो खीचिए, सजा है।

सिपहआरा—वाह ! किसी की मजाल पड़ी हे जो हमसे शरारत करे ?

हुस्नआरा—खबरदार, अब उससे कुछ वास्ता न रखना। आदमियों को ताकीद कर दो कि किसी का खत बेसमझे-बूझे न लें, वर्ना निकाल दिये जायंगे?

सिपहआरा—ज़री सोच लो। लोग अपने दिल में क्या कहेंगे कि अभी तो इतने जोश से मिलीं और अभी यह नादिरी हुक्म!

हुस्नआरा—हां, सच तो है। अभी तक हमीं तुम जानते हैं।

सिपहआरा—कहीं ऐसा न हो कि वह किसी से ज़िक्र कर दें।

हुस्नआरा—इससे इतमिनान रखो। वह शोहदे तो हैं नहीं।

सिपहआरा—वाह, शोहदे नहीं, तो और हैं कौन! शोहदों के सिर पर क्या सींग होते हैं?

हुस्नआरा—अब आज से छत पर न चढ़ना।

सिपहआरा—वाह बहन, बीच खेत चढ़ें। किसी ने देख ही लिया तो क्या! अपना दिल साफ़ रहना चाहिए।

हुस्नआरा—मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि शाहज़ादे साहब तुम्हारी फ़िक्र में हैं।

सिपहआरा—चलिए, बस, अब छेड़खानी रहने दीजिए।

हुस्नआरा—अरे वाह! दिल में तो खुशी हुई होगी। चाहे ज़बान से न कहो।

सिपहआरा—आप भी क्या वाही-तबाही बकती हैं!

हुस्नआरा—आखिर बुरा क्या है? शाहज़ादे हैं कि नहीं। और सूरत तो तुम देख ही चुकी हो। लो आज के दूसरे ही महीने दरवाज़े पर शहनाई बजती होगी।

सिपहआरा—हम उठ कर चले जायंगे, हां! यह हंसी हमको गवारा नहीं।

हुस्नआरा—खुदा की क़सम, मैं दिल्लगी से नहीं कहती। आखिर उस बेचारे में क्या बुराई है! हसीन, मालदार, शौकीन, नेकबख्त।

सिपहआरा—बस, और दस-पांच बातें कहिए न।

सिपहआरा के दिल पर इन बातों का बहुत बड़ा असर हुआ। आदमी की तबीयत भी क्या जल्द पलटा खाती है। अभी तो हुमायूं फ़र को बुरा-भला कह रही थीं और अब दिल ही दिल में खिली जाती हैं कि हां, है तो सच। आखिर उनमें ऐब ही क्या है?

दोनों बहनों में तो ये बातें हो रही थीं और वह महरी, जो आशिक़ बेगम के साथ आयी थी, दरवाज़े पर चुपकी खड़ी सुन रही थी। जब हुस्नआरा चुप हुई, तो उसने अंदर पहुंच कर सलाम किया।

हुस्नआरा—कौन हो?

महरी—हुज़ूर, मैं हूं अच्छन।

हुस्नआरा—कहां से आयी हो?

महरी—आप मुझे इतनी जल्द भूल गयीं! बेगम साहिबा ने भेजा है।

हुस्नआरा—बेगम साहिबा कौन?

महरी—वही आशिक़ बेगम जो आपसे मिल गयी हैं।

हुस्नआरा—कहो; क्या पैग़ाम भेजा है।

महरी—(मुसकरा कर) हुज़ूर को ज़रा वहां तक तकलीफ़ दी है।

महरी का मुसकराना दोनों बहनों को बहुत बुरा लगा। मगर करतीं क्या। महरी उन्हें चुप देखकर फिर बोली—बेगम साहिबा ने फ़रमाया है कि अगर कुछ हर्ज न हो, तो इस वक़्त हमारे यहां आइए।

सिपहआरा—कह देना, हमें फ़ुरसत नहीं।

महरी—उन्होंने कहा है कि अगर आपको फ़ुरसत न हो तो मैं खुद ही आ जाऊं।

सिपहआरा—जी, कुछ ज़रूरत नहीं है। बस, अब दूर ही से सलाम है। और अब आज से तुम न आना यहां। सुना कि नहीं ?

महरी—बहुत अच्छा। लौंड़ी हुक्म बजा लावेगी। बेगम साहिबा की जैसी नौकरी, वैसी ही हुजूर की।

सिपहआरा—चलो, बस। बहुत बातें न बनाओ। कह देना, ख़ैर इसी में है कि अब कोई ख़त-वत न आये। शाहज़ादे हैं, इससे छोड़ दिया, कोई दूसरा होता तो खून हो जाता। इतने बड़े शाहज़ादे और ग़रीब शरीफ़ज़ादियों पर नज़र डालते हैं। बस चले, तो वह सजा दूं कि उम्र भर याद करे। वाह ! अच्छा जाल फैलाया है।

हुस्नआरा—बस, अब ख़ामोश भी रहो। कोई सुन लेगा। अब कुछ कहो न सुनो। (महरी से) चलो, सामने से हटो।

महरी—हुजूर, जानबख्शी हो तो अर्ज करूं।

हुस्नआरा—अब तुम जाओ, हमने कई दफ़े कह दिया। नहीं पछताओगी।

महरी रवाना हुई। क़सम खायी कि अब नहीं आने की। सिपहआरा का चेहरा मारे ग़ुस्से के लाल-भभूका हो गया। हुस्नआरा समझाती थी कि बहन, अब और बातों का ख़याल करो। लेकिन सिपहआरा ठंडी न होती थीं। बहुत देर के बाद बोली—बस मालूम हुआ कि कोई शोहदा है; अगर सच्ची मुहब्बत है, तो हया और शर्म के साथ ज़ाहिर करना चाहिए या इस बेतुकेपन से ?

तैंतालीस

शाहज़ादा हुमायूं फ़र महरी को भेज कर टहलने लगे, मगर सोचते जाते थे कि कहीं दोनों बहनें ख़फ़ा न हो गयी हों, तो फिर बेढब ठहरे। बात की बात जाय, और शायद जान के भी लाले पड़ जायं। देखें महरी क्या ख़बर लाती है। ख़ुदा करे, दोनों महरी को साथ लेकर छत पर चली आवें। इतने में महरी आयी और मुंह फुलाकर खड़ी हो गयी।

शाहज़ादा—कहो, साफ़-साफ़।

महरी—हुजूर, क्या अर्ज करूं !

शाहज़ादा—वह तो हम तुम्हारी चाल ही से समझ गये थे कि बेढब हुई। कह चलो, बस।

महरी—अब लौंडी वहां नहीं जाने की।

शाहज़ादा—पहले मतलब की बात तो बताओ कि हुआ क्या ?

महरी—मैंने जाकर परदे के पास से सुना कि आप ही की बातें चुपके-चुपके कर रही हैं। मैं जो गयी, तो बड़ी बहन ने रुखाई के साथ बातें की, और छोटी बहन तो बस बरस ही पड़ीं। मैं खड़ी कांप रही थी कि किस मुसीबत में पड़ी। बहुत तेज होके बोली—अब न आना, नहीं तो तुम जानोगी। और उनसे भी कान खोलके कह देना कि बहुत चल न निकले। बहुत ही बिगड़ी। मैं चोर की तरह चुपके-चुपके सुनती रही।

हुमायूं—अफ़सोस ! तो बहुत ही बिगड़ी ?

महरी—क्या कहूं हुजूर, अपने आपे ही में नहीं थी।

हुमायूं—हमने बड़ी ग़लती की। पहले तो हमें जाना न था, और गये तो पहचनवाना न था।

महरी—अब जाने-वाने का इरादा न कीजिएगा ?

दूसरे दिन हुमायूं फ़र छत पर निकले, तो क्या देखते हैं कि हुस्नआरा बेगम अपने कोठे पर चढ़ी है और मुंह पर नक़ाब डाले खड़ी हैं। इतने में सिपहआरा भी ऊपर आयी

और शाहज़ादे को देखते ही उचककर आड़ में हो रहीं। दम के दम में हुस्नआरा भी आंखों से ओझल हो गयीं। बेचारे नज़र भर कर देखने भी न पाये थे कि दोनों नज़र से ग़ायब हो गयीं। सोचे, ऐसी ही हया फट पड़ी थी, तो कोठे पर क्यों आयीं!

अव उधर की कैफ़ियत सुनिए। हुस्नआरा को मालूम ही न था कि हज़रत इस वक़्त कोठे पर टहल रहे हैं। जब सिपहआरा ने कोठे पर आकर शाहज़ादे को देख लिया तो चुपके से कहा—वहन, यही वैठ जाओ, वह ताक-झांक से वाज़ न आवेंगे। हुस्नआरा ने छलांग भरी, तो खट से नीचे। सिपहआरा भी उचक कर ज़ीने पर जा पहुंची!

हुस्नआरा—पटकी पड़े। ऐ वाह, अच्छा घर परख लिया है।

सिपहआरा—मेरा वस चले, तो उसका घर उजड़वा दूं।

हुस्नआरा—यह क्या सितम करती हो? घर आवाद करते हैं या उजड़वाते हैं?

सिपहआरा—वा जी, अल्लाह ख़ैर करे। यह मुआ जव देखो, कोठे पर खड़ा रहता है।

हुस्नआरा—तो तुम काहे को अपनी ज़वान ख़राव करती हो? आदमी ही तो वह भी है!

सिपहआरा—वा जी, तुम चाहे मानो, चाहे न मानो, यह मुआ वहुरूपिया है कोई।

इतने में एक लौंडी ने आकर कहा—लीजिए, वड़ी वेगम साहिवा ने यह मिठाई दी है। वह जो उस दिन आयी नहीं थीं, उन्होंने मिठाइयों के दो ख्वान भेजे हैं।

लौंडी की लड़की का नाम प्यारी था। उसने मिठाई जो देखी, तो तुतला कर वोली—जला-सी हमें दीजिए।

सिपहआरा—अरे वाह, इनको दीजिए। वड़ी वह व नके आयी हैं! अच्छा, इतना वता दे कि कै व्याह करेगी?

प्यारी—पहले मिठाई दीजिए, तो वताऊं।

सिपहआरा—तो मिल चुकी। गढ़ैया में मुंह धो आ।

प्यारी—मैं एक खसम करूंगी, औल फिल छोड़के दूसला। और फिल तीसला। फिल चौथा। उन सवको लातें माल-मालके निकाल दूंगी। ले, अव दीजिए।

सिपहआरा—जा अव न दूंगी।

हुस्नआरा—दे दो, दे दो, रो रही है।

सिपहआरा—अच्छा ले, मगर पानी न पीने दूंगी।

प्यारी—हां, न पीऊंगी। लाओ तो जला।

इस पर क़हक़हा पड़ा। जरा सी लड़की और कैसी बातें वनाती है! इतने में वड़ी वेगम आकर वोलीं—अरे, तुम्हारी वही गोइयां जो उस दिन आयी थीं, उन्हीं के यहां से मिठाई के दो ख्वान आये हैं। एक औरत साथ थी। कह गयी है कि दोनों वहनों को कल वुलाया है। सो कल किसी वक़्त चली जाना, घड़ी दो घड़ी दिल वहलाके चली आना। नहीं तो मुफ़्त की शिकायत होगी।

हुस्नआरा—कल की कल के हाथ है अम्मांजान!

वेगम साहिवा तो चली गयीं। इधर हुस्नआरा का रंग उड़ गया। वोलीं—वहन, यह टेढ़ी खीर है।

सिपहआरा—एक काम कीजिए। अव वे ख़ुशामद के काम न चलेगा। उनके नाम एक ख़त लिखिए और साफ़-साफ़ मतलव समझा दीजिए। मुए को अच्छे-अच्छे लटके याद हैं। जव इधर दाल न गली, तो अम्मांजान से लासा लगाया और वह भी कितनी भोली हैं!

एकाएक दरवाज़े पर एक नया गुल खिला। दस-वारह आदमियों ने मिलकर

गाना शुरू किया—

मान करे नंदलाल सों,
सोहागिन जचा मान करे नंदलाल सो।
दूध-पूत और अन्न-धन-लच्छमी
गोद खिलाये नंदलाल सो। मान०।

दस-पांच आदमी गाते है। दो-चार ताल देते जाते है। दो-एक मजीरा वजाते है। एक हजरत ढोलकी थप-थपाते है।

घर भर मे खलबली मच गयी कि यह माजरा क्या है ? लड़का किसके हुआ है ? वड़ी वेगम वेवा दोनो बहने कुंआरी। यह क्या अंधेर है भई !

मामा—अरे, तुम कौन लोग हो ?

कई आदमी—ऐ हुजूर, खुदा सलामत रखे। भांड़ है।

एक साहब हिनहिनाकर बोले—मेरे बछेड़े की कुछ न पूछो। यह मां के पेट ही से हिनहिनाता निकला था।

दूसरे साहब ने उचककर फ़रमाया—हें-हें-हें, दो बागे है, और उधर तालियां बज रही है। 'मान करे नंदलाल ···'

बड़ी वेगम—अरे लोगों, यह है क्या ? यह दिन-दहाड़े क्या अंधेर है ? इन निगोड़े भाडो से पूछो—आये किसके यहां है ?

दरबान—चुप रहो जी, आखिर कहां आये हो ?

एक भाड—वाह शेरा, क्यो न हो। क्या दुम हिलाके भूके हो।

दरवान—आखिर तुम लोगो से किसने क्या कहा ? कुछ घास तो नही खा गये हो ?

मामा—यह क्या गजब करते हो !

भांड़—गजब पड़े बुरे की जान पर, और आंख लड़े हमसे।

सिपाही—मियां, कसम खाकर कहते हे कि यहां लड़का-वडका नही हुआ। तुम मानते ही नही हो।

भांड़—वाह जवान ! क्यो न हो, खड़ी मूछे और चढी दाढी।

सिपाही—(आहिस्ता) भला लड़का होगा किसके ? दो लड़किया, वे कुआरी है; एक वडी वेगम, वह बूढी खप्पट। और तो कोई औरत ही नही; तुम यह बक क्या रहे हो !

भाड—यह अच्छी दिल्लगी है भई, फिर उस मर्दक ने कहा ही क्यों था ?

सिपाही—यह कांटे किसके बोये हुए है ?

भांड़—अरे साहव, कुछ न पूछिए। वड़ा चकमा हो गया।

दरबान—ले, अब मजीरा वजीरा हटाओ; नही तो यहां ठीक किये जाओगे।

भांड़—वल्लाह, हो बड़े नमकहलाल।

उधर दोनो वहनो मे यों वाते होने लगी—

सिपहआरा—यह उसी की शरारत है।

हुस्नआरा—किनकी ? नही; तोबा।

सिपहआरा—आप चाहे न मानें हम तो यही कहेगे।

हुस्नआरा—बहन, वह शाहजादा है, उनसे यह हरकत नही हो सकती।

सिपहआरा—अच्छा, फिर ये भांड़ क्यों आये ? अगर किसी ने वहका कर भेजा नही, तो आये कैसे ?

हुस्नआरा—हा, कहती तो सच हो; मगर अल्लाह जानता हे, उससे ऐसी हरकत

नहीं हो सकती।

सिपहआरा—आप मेरे कहने से उन्हें एक खत लिख भेजिए कि फिर ऐसी हरकत की, तो हम ज़हर ही खा लेंगे।

हुस्नआरा खत लिखने पर राजी हो गयीं और यों खत लिखा—

'हया से मुंह न मोड़ेंगे, सताये जिसका जी चाहे;
वफ़ादारी में हमको आजमाये जिसका जी चाहे।
कभी मानिंदे ग़ौहर आवरू 'सफदर' न जायेगी;
वज़ाहिर ख़ाक में हमको मिलाये जिसका जी चाहे।

अरे ज़ालिम, कुछ ख़ुदा का डर भी है? क्यों जी, शरीफ़ों की ये ही हरकतें होती हैं? शर्म नहीं आती! वहन बनाकर अव ये शरारतें करते हो! ये ही मरदों के काम हैं! अगर अव किसी को भेजा तो हम हीरे की कनी खा लेंगी। ख़ून तुम्हारी गर्दन पर होगा। आख़िर तुम अपने दिल में हमको समझते क्या हो? अगर भूत सिर पर सवार है, तो कहीं और मुंह काला कीजिए। हम-घरगिरस्त शरीफ़ज़ादियां, इन वातों से क्या वास्ता? दिल लेना जानें न दिल देना।

'कांटों में न हो अगर उलझना,
थोड़ा लिखा वहुत समझना।'

हुमायूं फ़र के पास जव यह ख़त पहुंचा तो वहुत शरमाये। समझ गये कि यहां हमारी दाल न गलेगी। दिल में इरादा कर लिया कि अव भूलकर भी ऐसी चालें न चलेंगे।

चौवालीस

हुस्नआरा और सिपहआरा, दोनों रात को सो रही थीं कि दरवान ने आवाज़ दी—मामा जी, दरवाज़ा खोलो।

मामा—दिलवहार, देखो कौन पुकारता है?

दिलवहार—ऐ वाह, फिर खोल क्यों नही देतीं?

मामा—मेरी उठती है जूती; दिन भर की थकी-मांदी हूं।

दिलवहार—और यहां कौन चंदन-चौकी पर वैठा है?

दरवान—अजी, लड़ लेना पीछे, पहले किवाड़ें खोल जाओ।

मामा—इतनी रात गये क्यों आफ़त मचा रखी है?

दरवान—अजी, खोलो तो, सवारियां आयी हैं।

हुस्नआरा—कहां से? अरे दिलवहार! मामा! क्या सव की सव मर गयीं? अव हम जायें दरवाज़ा खोलने?

हुस्नआरा की आवाज़ सुनकर सव की सव एकदम उठ खड़ी हुईं। मामा ने परदा कराकर सवारियां उतरवायीं।

सिपहआरा—अच्छा रूहअफ़ज़ा वहन हैं, और वहारवेगम। आइए, वंदगी।

ये दोनों हुस्नआरा की चचेरी वहनें थीं। दोनों की शादी हो चुकी थी। ससुराल से दोनों वहनों से मुलाक़ात करने आयी थीं। चारों वहनें गले मिलीं। ख़ैर-आफ़ियत के वाद हुस्नआरा ने कहा—दो वरस के वाद आप लोगों से मुलाक़ात हुई।

वहारवेगम—हां, और क्या!

सब की सब बातें करते-करते सो गयी। सुबह को हुस्नआरा ने बड़ी बेगम से दोनों बहनों के आने की ख़बर सुनायी।

बड़ी बेगम—जभी मेरी बायी आंख फड़कती थी। मै भी कहूं कि अल्लाह, क्या खुशख़बरी सुनूगी। कहां, है कहां, जरा बुलाओ तो।

हुस्नआरा—अभी सो रही है।

बड़ी बेगम—ऐ, तो जगा दे बेटा ! अच्छी तो है ?

हुस्नआरा ने आकर देखा, तो दोनो ग़ाफ़िल सो रही है। रूहअफ़जा की लटे काली नागिन की तरह बल खाकर तकिये पर से पलंग के नीचे लहरा रही है। बहारबेगम का दुपट्टा कही है, दुलाई कही। हाथ सीने पर रखे हुए खर्राटे ले रही है।

हुस्नआरा—अजी, सोती ही रहिएगा ! अम्मांजान बुलाती है।

रूहअफ़जा—बहन, अब तक आंखो में नीद भरी है। नमाज पढ लूं, तो चलू।

हुस्नआरा—(बहारबेगम का हाथ हिलाकर) ऐ बहन, अब उठो।

बहारबेगम—अल्लाह, इतना दिन चढ़ आया ! सारे घर में धूप फैल गयी।

हुस्नआरा—उठिए, अम्मांजान बुला रही है।

बहारबेगम—रूहअफ़जा को तो जगाओ।

सिपहआरा—वह क्या बैठी है सामने।

दोनों ने उठकर नमाज़ पढ़ी और बड़ी बेगम के पास चली। रूहअफ़जा जाते ही बड़ी बेगम से चिमट गयी। बहार भी उनसे गले मिली और अदब के साथ फ़र्श पर बैठी।

बड़ी बेगम—क्यों रूहअफ़जा, अब तो उस बीमारी ने पीछा छोड़ा ? क्या कहते है, तोबा मुझे तो उसका नाम भी नही आता।

सिपहआरा—(मुसकराकर) डेगू बुखार। आप तो रोज-रोज़ भूल जाती है।

बड़ी बेगम—हां, वही डंकू।

सिपहआरा—डंकू नही, डेगू।

रूहअफ़जा—अब एक महीने से पीछा छुटा है कही। मेरी तो जान पर बन आयी थी।

बड़ी बेगम—चेहरा कैसा जर्द पड़ गया है !

बहारबेगम—अब तो आप इन्हें अच्छी देखती है ! यह तो घुलकर कांटा हो गयी थी।

बडी बेगम—हकीम मुहम्मद हुसेन ने इलाज किया था न वहां ?

रूहअफ़जा—जी नही, एक डॉक्टर था।

बड़ी बेगम—ऐ है, भूले से इलाज न करना डागडर-वागडर का।

रूहअफ़जा—मै तो उसकी बोली ही न समझूं। कहे, जबान दिखाओ। अब मुंह दिखावे तब तो जबान दिखावें ? मैने कहा—यह तो हश्र तक नही होने का। फिर नब्ज देखी, तो हाथ परदे से निकाल लिया और कहा, चूड़ियां उतार डालो। मैंने सोने की चूड़ियां तो उतार डाली, मगर शीशे की एक चूड़ी पहने रही। तब कहने लगा, हमसे बातें करो। तब तो मैने दूल्हा भाई को बुलाया और कहा—वाह साहब, आप तो अच्छे डॉक्टर को लाये ! मुंह क्या, हम तो एड़ी भी न दिखावें और कहता है, हमसे बाते करो। यहां निगोड़ी गिटपिट किसे आती है ! बस, दरगुजरी ऐसे इलाज से। आप इन्हें धता बताइए। इतने मे उसने घड़ी जेब से निकाली और कहने लगा—गिनती गिनो। सुनिए, जैसे लड़कियों के मदरसे में इम्तहान ले रहे हों। आखिर मैंने एक-दो-पांच-बीस-ग्यारह—अनाप-शनाप बका। बड़ी कड़वी दवाइयां दी। बारे बच गयी।

वड़ी वेगम—वहार ! यह तुम महीनों खत क्यों नहीं भेजती हो ?

वहारवेगम—अम्मांजान, खतों का तो मैं तार बांध दूं, मगर जव कोई लिखने वाला भी हो।

रूहअफ़ज़ा—यह तो गिरस्ती के धंधे में ऐसी पड़ गयीं कि पढ़ा-लिखा सव चौपट कर दिया।

हुस्नआरा—और दूल्हा भाई ने तो खत लिखने की क़सम खायी है।

रूहअफ़ज़ा—दिन भर वैठे शेर कहा करते है।

वड़ी वेगम—कहो, तुम्हारी सास तो अच्छी हैं ?

वहारवेगम—हां, न मुझे मौत आती है, न उन्हें।

हुस्नआरा—कल-परसों तक दूल्हा भाई यहां आवेंगे, तो मैं उनको खूब झाड़ूंगी।

वड़ी वेगम—वहार, सच्ची वात तो यह है कि तुम भी ज़रा तेज़-मिज़ाज हो।

सिपहआरा—जो एक गर्म और एक नर्म हो, तो वात वने। और जो दोनों तेज़ हुए, तो कैसे वने ?

वहारवेगम—अव तुम अपनी सास से न लड़ना। तुम नर्म ही रहना। मेरे तो नाक में दम आ गया।

बड़ी वेगम—अव की मिरज़ा यहां आयें, तो समझाऊं।

वहारवेगम—अम्मांजान, मुझसे उनसे हश्र तक न वनेगी। जो कोई लौंडीवांदी भी मुझसे अच्छी तरह वातें करे, तो जल मरती है। और मैं जान-वूझकर और जलाती हूं।

हुस्नआरा—वहन, मिल-जुलकर रहना चाहिए।

वहारवेगम—जव तुम ससुराल जाओगी, ऐसी ही सास पाओगी और फिर मिल-जुलकर रहोगी, तो सात वार सलाम करूंगी।

रूहअफ़ज़ा—झगड़ा सारा यह है कि दूल्हा भाई इनकी खातिर वहुत करते हैं। वस, इनकी सास जली मरती हैं कि यह जोरू की खातिर क्यों करता है ?

वहारवेगम—अल्लाह जानता है, हज़ारों दफे तरह दे जाती हूं; मगर जव नहीं रहा जाता, तो मैं भी वकने लगती हूं। मुझे तो उन्होंने वेहया कर दिया। अव वह एक कहती हैं, तो मैं दस सुनाती हैं।

वड़ी वेगम—(पीठ ठोककर) शावाश !

हुस्नआरा—मेरी तरफ़ से पीठ ठोंक दीजिएगा।

वहारवेगम—वहन, अभी किसी से पाला नहीं पड़ा। हमको तो ऐसा दिक़ कर रखा है कि अल्लाह करे, अव वह मर जायें, या हम।

चारों वहनें यहां से उठकर अपने कमरे में गयीं और वनाव-सिंगार करने लगी। हुस्नआरा, सिपहआरा और रूहअफ़जा तो वन-ठनकर मौजूद हो गयीं; मगर वहारवेगम अभी वाल ही संवार रही थीं।

रूहअफ़ज़ा—इन्हें जव देखो, वाल ही संवारा करती हैं।

वहारवेगम—तुम आये दिन यही ताना दिया करती हो।

रूहअफ़ज़ा—ऐसी तो सूरत भी अल्लाह ने नहीं वनायी है !

वहारवेगम ने कोई दो घंटे में कंघी-चोटी से फ़राग़त पायी। फिर चारों निकल कर वातें करने लगीं। सिपहआरा डली कतरती थीं, हुस्नआरा गिलौरियां वनाती थीं, रूहअफ़ज़ा एक तसवीर की तरफ़ ग़ौर से देखती थीं। मगर वहारवेगम की निगाह आईने ही पर थी।

सिपहआरा—अरे, अब तो आईना देख चुकी? या घंटों सूरत ही देखा कीजिएगा?

बहारबेगम—तुम कहती जाओ, हम जवाब ही न देंगे।

रूहअफ़ज़ा—अल्लाह जानता है, इन्हें यह मरज़ है।

सिपहआरा—हां, मालूम तो होता है।

बहारबेगम—तुम सब बहनें एक हो गयीं। अपनी ही ज़बान थकाओगी।

हुस्नआरा—रूहअफ़ज़ा, तुम उठकर आईने पर कपड़ा गिरा दो।

रूहअफ़ज़ा—चिढ़ जायेंगी।

हुस्नआरा—हां बहन, बताओ तो, यह बात क्या है? सास से बनती क्यों नहीं तुमसे?

बहारबेगम—ऐसी सास को तो बस, चुपके से ज़हर दे दे। कुछ कम सत्तर की होने आयी, अभी खासी कठौता-सी बनी है। मेरा हाथ पकड़ लें, तो छुड़ाना मुश्किल हो जाये। मुई देवनी है।

हुस्नआरा—क्या यह भी कोई ऐब है?

बहारबेगम—एक दिन का ज़िक्र सुनो, किसी के यहां से महरी आयी। कुछ मेवे लायी थी। वह उस वक़्त झूठ-मूठ क़ुरान-शरीफ़ पढ़ रही थीं। महरी ने आके मुझको सलाम किया और मेवे की तश्तरी सामने रख दी। बस, दिन भर मुंह फुलाये रहीं।

हुस्नआरा—मगर बातें तो बड़ी मीठी-मीठी करती हैं।

बहारबेगम—एक दिन किसी ने उनको दो चकोतरे दिये। उन्होंने एक चकोतरा मुझको भेजा और एक मेरी ननद को। वह उनसे भी बढ़कर बिस की गांठ। जाकर मां से जड़ दिया कि भाई ने हमको आधा सड़ा हुआ चकोतरा दिया और भाभी को बड़ा-सा! बस, इस पर सुबह से शाम तक चरखा कातती रहीं।

हुस्नआरा—मैं एक बात पूछूं? सच-सच कहना। दूल्हा भाई तो प्यार करते हैं?

बहारबेगम—यही तो ख़ैर है।

हुस्नआरा—दिल से?

बहारबेगम—दिल और जान से।

हुस्नआरा—भला, मां से बनती है!

बहारबेगम—वह ख़ुद जानते हैं कि बुढ़िया चिड़चिड़ी औरत है।

हुस्नआरा—बहन, वह तो बड़ी हैं ही, मगर तुम भी तेज़ी के मारे उनको और जलाती हो। जो मिलके चलो, वह तुम्हारा पानी भरने लगें।

बहारबेगम—अच्छा तुम्हीं बताओ, कैसे मिल के चलूं?

हुस्नआरा—अब की जब जाओ, तो अदब के साथ झुककर सलाम करो।

बहारबेगम—किसको?

हुस्नआरा—अपनी सास को, और किसको।

बहारबेगम—वाह! मर जाऊं, मगर सलाम न करूं मुरदार को।

हुस्नआरा—बस, यही तो बुरी बात है।

बहारबेगम—रहने दीजिए, बस। वह तो हमको देखकर जल मरें, और हम उनको झुकके सलाम करें। एक दिन मामा से बोलीं कि हमारा पानदान उसको क्यों दे आयी? मेरे मुंह से बस, इतनी-सी बात निकल गयी कि मेरी सास काहे को हैं, यह तो मेरी सौत हैं। बस, इस पर इतना बिगड़ीं कि तोबा ही भली?

हुस्नआरा—बहन, तुमने भी तो ग़ज़ब किया। तुम्हारे नज़दीक यह इतनी-सी

ही वात थी ? सास को सौत वनाया, और उसको इतनी-सी ही वात कहती हो ! अगर तुम्हारी वहू आये और तुम्हें सौत वनाये, तव देखूंगी, उछलती-कूदती हो कि नहीं।

सिपहआरा—उफ् ! वड़ी वुरी वात कही।

रूहअफ़ज़ा—तो अव वन चुकी वस।

वहारवेगम—तुम सवको उसने कुछ रिश्वत ज़रूर दी है। जव कहती हो, उसी की-सी।

सिपहआरा—हमारी वहन, और ऐसी मुंहफ़ट ! सास को सौत वनाये !

हुस्नआरा—और फिर शरमाये न शरमाने दे।

वहारवेगम—अच्छा वताइए, तो पहले झुकके सलाम करूं ख़ूव ज़मीन पर सो कर। फिर ?

हुस्नआरा—मेरे तो वहन, रोंगटे खड़े हो गये कि तुमसे यह कहा क्योंकर गया !

वहारवेगम—वताओ-वताओ। हमारी क़सम, वताओ।

हुस्नआरा—तुम हंसोगी, और हमें होगा रंज।

वहारवेगम—नहीं, हंसेंगे नहीं। वोलो।

हुस्नआरा—जाकर सलाम करो।

वहारवेगम—जो वह जवाव न दें, तो अपना-सा मुंह लेकर रह जाऊं ?

सिपहआरा—वाह ! ऐसा हो नहीं सकता।

हुस्नआरा—न जवाव दें, तो क़दमों पर गिर पड़ो।

वहारवेगम—मेरी पैज़ार गिरती है क़दमों पर। वह जैसा मेरे साथ करती हैं, वैसा उनकी आंखों, घुटनों के आगे आये।

हुस्नआरा—खर्च तो उजला है, या कंजूस है ?

वहारवेगम—तीन सौ वसीके के हैं, ढाई सौ गांव से आते हैं। नक़द कोई डेढ़ लाख से ज़्यादा ही ज़्यादा होगा। मकान, वाग़, दुकानें अलग हैं। वकालत में कोई छह-सात सौ का महीना मिलता है।

हुस्नआरा—तुमको क्या देते हैं ?

वहारवेगम—वुढ़िया से चुराकर मेरे ऊपर के खर्च के लिए सौ रुपये मुक़र्रर हैं।

सिपहआरा—रूहअफ़ज़ा वहन, तुम्हारे मियां क्या तनख़्वाह पाते हैं ?

रूहअफ़ज़ा—चार सौ हुए हैं। चार-पांच सौ ज़मीन से मिल जाते हैं।

हुस्नआरा—तुम्हारी सास तो अच्छी हैं।

रूहअफ़ज़ा—हां, वेचारी वड़ी सीधी हैं। हां, उनकी लड़की ने अलवत्ता मेरी नाक में दम कर दिया है। जव आती है, रोज़ मां को भरा करती है।

सिपहआरा—वहारवेगम जो वहां होतीं, तो उनसे भी न वनती।

वहारवेगम—अच्छा, चुप ही रहिएगा, नहीं तो काट खाऊंगी। वड़ी वह वनके आयी हैं।

इतने में काली-काली घटा छा गयी। ठंडी-ठंडी हवा चलने लगी। वहार ने कहा—जी चाहता है, छत पर से दरिया की सैर करें। सवने कहा—हां-हां, चलिए। मगर हुस्नआरा को याद आ गयी कि हुमायूं फ़र ज़रूर खवर पायेंगे और कोठे पर आके सतायेंगे। लेकिन मजवूर थी। चारों चौकड़ियां भरती हुई छत पर जा पहुंचीं। हवा इस ज़ोर से चलती थी कि दुपट्टा खिसका जाता था। गोरा-गोरा वदन साफ़ नज़र आता था। किसी ने जाकर हुमायूं फ़र से कह दिया कि इस वक़्त तो सामने वाला कोठा इंदर का अखाड़ा हो रहा है। उनको ताव कहां ? चट से कोठे पर आ पहुंचे। सिपहआरा ऊपर के कमरे में हो रहीं। रूहअफ़ज़ा वहीं वैठ गयीं। हुस्नआरा ने एक छलांग भरी, तो रावटी

में। मगर बहारबेगम ने बेढब आंखें लड़ायी। हुमायूं फ़र ने बहुत झुककर सलाम किया।

बहारबेगम—आंखें ही फूटें, जो इधर देखें।

हुमायूं—(हाथ के इशारे से) अपना गला आप काट डालूंगा।

बहारबेगम—शौक़ से।

नन्हीं-नन्ही बूंदे पड़ने लगी और चारों परियां नीचे चल दी। मिरज़ा हुमायूं फ़र मुंह ताकते रह गये।

हुस्नआरा—(बहार से) आप तो खूब डटके खड़ी हो गयी।

बहारबेगम—क्यों, क्या कोई घोलकर पी जायेगा! मैं इन्हें जानती हूं, हुमायूं फ़र तो हैं।

सिपहआरा—तुम क्योंकर जानती हो बहन!

बहारबेगम—ऐ वाह, और सुनिएगा लड़कपन में हम खेला किये हैं। इनके साथ। खूब चपतें जमाया किये हैं इनको! इनकी मां और दादी खूब झोटमझोटा हुआ करता था।

इतने में मामा ने आकर कहा—बड़ी बेगम साहिबा ने ये मेवे भेजे है।

सिपहआरा—देखूं। ये चिलग़ोजे लेती जाओ।

प्यारी—हमको दीजिए।

सिपहआरा—इनको दीजिए। 'पीर न शहीद, नकटों को छापा।' सबके बदले इनको दीजिए।

हुस्नआरा—अच्छा, पहले सलाम कर।

चारों बहनों ने मजे से मेवे चखे। एक दूसरी के हाथ के छीन-छीन कर खाती थी। जवानी की उमंग का क्या कहना!

उधर मिरजा हुमायूं फ़र अपनी छत पर खड़े यह शेर पढ़ रहे थे—

न मुड़कर भी बेदर्द क़ातिल ने देखा,
तड़पते रहे नीम जां कैसे-कैसे।

जब बड़ी देर तक छत पर किसी को न देखा तो, यह शेर जबान पर लाये—

कल बदामोंज (रक़ीब) ने क्या तुमको सिखाया है हाय!
आज वह आंख, वह चमक, वह इशारा ही नही।

पैंतालीस

एक दिन हुस्नआरा को सूझी कि आओ, अबकी अपनी बहनों को जमा करके एक लेक्चर दूं। बहारबेगम बोली—क्या? क्या दोगी?

हुस्नआरा—लेक्चर-लेक्चर। लेक्चर नही सुना कभी?

बहारबेगम—लेक्चर क्या बला है?

हुस्नआरा—वही, जो दूल्हा भाई जलसों में आये दिन पढ़ा करते है।

बहारबेगम—तो हम क्या तुम्हारे दूल्हा भाई के साथ-साथ घूमा करते है? जाने कहां-कहां जाते है, क्या पढ़-पढ़के सुनाते है। इतना हमको मालूम है कि शेर बहुत कहते है। एक दिन हमसे कहने लगे—चलो, तुमको सैर करा लायें। फिटन पर बैठ लो। रात का वक़्त है, तुम दुशाले से खूब मुंह और जिस्म चुरा लेना। मैने कानों पर हाथ धरे कि न साहब, बंदी ऐसी सैर मे दरगुज़री। वहां जाने कौन-कौन हो, हम नही जाने के।

सिपहआरा—अब की आवें तो उनके साथ हम ज़रूर जायें !

बहारबेगम—चलो, बैठो, लड़कियां बहनोइयों के साथ यों नहीं जाया करतीं।

रूहअफ़ज़ा—मगर सुनेगा कौन ? दस-पांच लड़कियां और भी तो हों कि हमी-तुम टुटरूं टूं ?

सिपहआरा—देखिए, मैं बुलवाती हूं। अभी मामा को भेजे देती हूं।

हुस्नआरा—मगर नज़ीर को न बुलवाओ। उनके साथ जानीबेगम भी आयेंगी वह बात-बात में शाखें निकालती हैं। उन्हें खब्त है कि हमसे बढ़कर कोई हसीन ही नहीं। 'शक्ल चुड़ैलों की, नाज़ परियों का'; दिन-रात बनाव-संवार ही में लगी रहती हैं।

सिपहआरा—फिर अच्छा तो है ! बहारबेगम से भिड़ा देना।

थोड़ी देर में डोलियों पर डोलियां और बग्घियों पर बग्घियां आने लगीं। दरबान बार-बार आवाज़ देता था कि सवारियां आयी हैं। लौंडियां जा-जाकर मेहमानों को सवारियों पर से उतरवाती थीं और वे चमक-चमक कर अंदर आती थीं। आखिर में जानीबेगम और नज़ीरबेगम भी आयीं। जानीबेगम की बोटी-बोटी फड़कती थी; आंखें नाचती रहती थीं। नज़ीरबेगम भोली-भाली शरमीली लड़की थी। शरम से आंखें झुकी पड़ती थीं। जब सब आ चुकीं। तो हुस्नआरा ने अपना लेक्चर सुनाना शुरू किया—

"मेरी प्यारी बहनो, सास-बहुओं के झगड़े, ननद-भावजों के बखेड़े, बात-बात पर तकरार, मियां-बीवी की जूती-पैजार से खुदा की पनाह। इन बुरी बातों से खुदा बचाये। भलेमानसों की बहू-बेटियों में ऐसी बात न आने पाये। इस फूट की हमारे ही देश में इतनी गर्मबाज़ारी है कि सास की ज़बान पर कोसना जारी है, बहू मसरूफ़ गेरिया व ज़ारी है और मियां की अक्ल मारी है। ननद भावज से मुंह फुलाये हुए, भावज ननद ये त्योरियां चढ़ाये हुए। बहू हिचकियां ले-लेकर रोती है, सास ज़हर खाकर सोती है। और, जो सास गुस्सेवर हुई और बहू ज़बान की तेज़, तो मार-पीट की नौबत पहुंचती है। मियां अगर बीबी की-सी कहें, तो अम्मां की घुड़कियां सहें; अम्मां की-सी कहें, तो बीबी की बातें सुनें। मां उधर, बीवी इधर कान भरती है, वह इनके और यह उनके नाम से कानों पर हाथ धरती हैं।

"मगर ताली एक हाथ से नहीं बजती। सास भली हो, तो बहू को मना ले; और बहू आदमी हो, तो सास को आदमी बना ले। एक शरीफ़ज़ादी ने अपनी मामा से कहा कि हमारी सास तो हमारी सौत हैं। खुदा जाने, उनकी ज़बान से यह बात कैसे निकली ! इस पर भी उन्हें दावा है कि हम शरीफ़ज़ादी हैं। अगर वह हमारी राय पर चलें, तो उनकी सास उन्हें अपने सिर पर बिठायें। वह सीधी जाकर सास के क़दमों पर गिर पड़ें और आज से उनकी किसी बात का जवाब न दें। क्या उनकी सास का सिर फिर गया है, या उन्हें बावले कुत्ते ने काटा है ? बहू अगर सास की खिदमत करे, तो दुनिया भर की सासों में कोई ऐसी न मिले, जो छेड़कर बहू से लड़े।

"अब सोचो तो ज़रा दिल में, इस तक़रार और जूती-पैज़ार का अंजाम क्या है ? घर में फूट, एक-दूसरे की सूरत से बेज़ार, लौंडियों-बांदियों में ज़लील, सारी दुनिया में बदनाम, घर तबाह। एक चुप हज़ार बला को टालती है, फ़साद को जहन्नुम में डालती है। हां, जो यह खयाल हो कि सास एक कहें, तो दस सुनायें, वह दो बातें कहें, तो बीस मरतबे उनको उल्लू बनायें, तो बस, मेल हो चुका। सास न हुई, भूनी मूंग हुई। आखिर उसका भी कोई दरजा है या नहीं ? या बस, बहू ससुराल में जाते ही मालकिन बन बैठे, सास को ताक़ पर रख दे और मियां पर हुकूमत चलाने लगे ? अब मैं आप लोगों से इतना चाहती हूं कि सच-सच अपनी-अपनी सांसों का हाल बयान कीजिए।"

एक—अल्लाह करे, हमारी सास को आज रात ही को हैजा हो।

दूसरी—अल्लाह करे, हमारी सास को हैजा हो गया हो।

तीसरी—अल्लाह करे, हमारी सास ऐसी जगह मरे, जहां एक बूंद पानी न मिले।

बहारबेगम—या खुदा, मेरी सास के पांव मे बावला कुत्ता काटे और वह भूंक-भूंक कर मरे।

चौथी—हम तो अपनी सास को पहले ही चट कर गये। जहन्नुम चली गयी।

पांचवी—सास तो सास, हमारी ननद ने नाक मे दम कर दिया।

जानीबेगम—मेरी सास तो मेरे आगे चूं नही कर सकती। बोली, और मैने गला घोंटा।

इस लेक्चर का और किसी पर तो ज्यादा नही, मगर नजीरबेगम पर बहुत असर हुआ। हुस्नआरा से बोली—बहन, हम कल से आया करेंगे, हमें कुछ पढ़ाओगी?

हुस्नआरा—हां, हां, जरूर आओ।

जानीबेगम—ऐ वाह, यह क्या पढ़ायेंगे भला! हमारे पास आओ, तो हम रोज पढ़ा दिया करें।

नजीरबेगम—आपके तो पड़ोस ही में रहते है हम, मगर बहन, तुम तो हुड़दंगा सिखाती हो। दिन भर कोठे पर घोड़े की तरह दौड़ा करती हो, कभी नीचे कभी ऊपर।

जानीबेगम—(नजीरबेगम का हाथ पकड़कर) मरोड़ डालू हाथ!

नजीर—देखा, देखा; बस, कभी हाथ मरोड़ा, कभी ढकेल दिया।

जानीबेगम—(नजीर का गाल काटकर) अब खुश हुई?

सिपहआरा—ऐ वाह, लेके गाल काट लिया।

जानीबेगम—फिर औरत है, या मर्द है कोई!

नजीरबेगम—अब आप अपनी मुहब्बत रहने दें।

जब सब मेहमान विदा हुए, तो चारों बहनें मिलकर गयी और बड़ी बेगम के साथ एक ही दस्तरख्वान पर खाना खाया। खाते वक़्त यों गुफ़्तगू हुई—

बहारबेगम—हुस्नआरा की शादी कही तजवीजी?

बड़ी बेगम—हां, फ़िक्र मे तो हूं।

बहारबेगम—फ़िक्र नही अम्मांजान, अब दिन-दिन चढ़ता हे।

बड़ी बेगम—अपने जान तो जल्दी ही कर रही हूं।

बहारबेगम—जल्दी क्या दो-चार बरस में?

रूहअफ़जा—बहन, अल्लाह-अल्लाह करो।

बहारबेगम—बेचारी सिपहआरा भी ताक रही है कि हम इनका भी जिक्र करें।

सिपहआरा—देखिए, यह छेड़खानी अच्छी नही, हां!

बड़ी बेगम—(मुस्कराकर) तुम जानो, यह जाने।

बहारबेगम—अभी कल शाम ही को तो तुमने कहा था कि अम्मांजान से हमारे ब्याह की सिफ़ारिश करो। आज मुकरती हो? भला खाओ तो क़सम कि तुमने नही कहा?

सिपहआरा—वाह, जरा-जरा-सी बात पर कोई क़सम खाया करता है!

रूहअफ़जा—पानी मरता है कुछ?

सिपहआरा—जी हां, आप भी बोली?

रूहअफ़जा—अच्छा, क़सम खा जाओ न!

सिपहआरा—काहे को खायें?

वड़ी वेगम—ऐ, तो चिढ़ती क्यों हो बेटी !

सिपहआरा—अम्मांजान, झूठ-मूठ लगाती हैं। चिढ़ें नहीं ?

रूहअफ़ज़ा—क्या ! झूठ-मूठ ?

सिपहआरा—और नहीं तो क्या ?

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, हमारे सिर की क़सम खाओ।

सिपहआरा—अल्लाह करे, मैं मर जाऊं।

रूहअफ़ज़ा—चलो वस, रो दीं। अव कुछ न कहो।

वहारवेगम—अम्मांजान, एक रईस हैं। उनका लड़का कोई उन्नीस-वीस वर्ष का होगा ! ख़ुदा जानता है, वड़ा हसीन है। आजकल सिकन्दरनामा पढ़ता है।

वड़ी वेगम—खाने पीने से ख़ुश हैं ?

रूहअफ़ज़ा—खुश ? आठ तो घोड़े हैं उनके यहां।

वहारवेगम—अम्मांजान, वह लड़का हुस्नआरा के ही लायक़ है। दो लड़के हैं। दोनों लायक़, होशियार, नेकचलन। हमारे यहां दूसरे-तीसरे आया करते हैं।

रूहअफ़ज़ा—ज़रूर मंजूर कीजिए।

वड़ी वेगम—अच्छा, अच्छा, सोच लूं।

हुस्नआरा ने यह वात-चीत सुनी तो होश उड़ गये। खुदा ही ख़ैर करे। ये दोनों वहनें अम्मांजान को पक्का कर रही हैं। कहीं मंजूर कर लें, तो ग़ज़व ही हो जाये। वेचारे आज़ाद वहां मुसीवतें झेल रहे हैं, और यहां जश्न हो। इस फ़िक्र में उससे अच्छी तरह खाना भी न खाया गया। अपने कमरे में आकर लेट रही और मुंह ढांप कर ख़ूव रोयी। खाना खाने के वाद वे तीनों भी आयीं और हुस्नआरा को लेटे देखकर झल्लायीं।

वहारवेगम—मकर करती होंगी। सोयेंगी क्या अभी।

सिपहआरा—नहीं वहन, यह तकिये पर सिर रखते ही सो जाती हैं।

वहारवेगम—जी हां, सुन चुकी हूं। एक तुमको तकिये पर सिर रखते ही नींद आ जाती है, दूसरे इनको।

रूहअफ़ज़ा—(गुदगुदाकर) उठो वहन, हमारा ही खून पिये, जो न उठे। मेरी वहन न, उठ वैठो शावाश ?

सिपहआरा—सोने दीजिए। आंखें मारे नींद के मतवाली हो रही हैं।

वहारवेगम—रसीली मतवालियों ने जादू डाला। हमारे यहां पड़ोस में रोज तालीम होती है। मगर हमारे मियां को इससे वड़ी चिढ़ है कि औरतें नाच देखें या गाना सुनें। मर्दों की भी क्या हालत है ! घर की जोरू से बातें न करें, वाहर शेर। अल्लाह जानता है, हम तो उन सव मुई वेसवाओं को एड़ी-चोटी पर कुरवान कर दें। एक ने मिस्सी की घड़ी जमायी थी, जैसे वत्तख़ ने कीचड़ खायी हो।

रूहअफ़ज़ा—(हुस्नआरा को चूम कर) उठो वहन !

हुस्नआरा—(आंखें खोलकर) सिर में दर्द है।

वहारवेगम—संदली-रंगों से माना दिल मिला;
दर्द सर की किसके माथे जायेगी।

हुस्नआरा—यहां इन झगड़ों में नहीं पड़ते।

वहारवेगम—दुरुस्त।

रूहअफ़ज़ा—ज़रूर किसी से आंख लड़ायी है, इसी से नींद आयी है। अच्छा अव सच-सच कह दो, किससे दिल मिला है ?—दिल दीजिए तो यार तरहदार देखकर।

सिपहआरा—और क्या !—
माशूक़ कीजिए तो परीज़ाद कीजिए।

हुस्नआरा—किसी से मिलने का अब हौसला नहीं है जां;
बहुत उठाये मजे उनसे आशना होकर।

रूहअफ़जा—बस, बहुत बातें न बनाइए। हम सब सुन चुकी है। भला किसी पर दिल नहीं आया, तो आंखो से आंसू क्योंकर निकले? जरी, आइने में सूरत देखिए।

सिपहआरा— ऐ बहन, यह धान-पान आदमी, जरी सिर में दर्द हुआ, और लेट रही।

बहारबेगम— लड़की बातें बनाती है। हमको चुटकियों पर उड़ाती है।

हुस्नआरा—अब आप जो चाहे कहें। यहां न कोई आशिक़ है, न कोई माशूक़।

रूहअफ़जा—उड़ो न। कह चलूं सब?

हुस्नआरा—हां, हां, कहिए। सौ काम छोड़के। आपको ख़ुदा की क़सम।

रूहअफ़ज़ा—अच्छा, इस वक़्त दिल क्यों भर आया?

हुस्नआरा—

दिल ही तो है न संग व खिश्त, दर्द से भर न आये क्यों,
रोयेंगे हम हजार बार, कोई हमें रुलाये क्यों?

बहारबेगम—(तालियां बजाकर) खुल गयी न बात?

रूहअफ़ज़ा—जादू वह, जो सिर पर चढ़के बोले।

हुस्नआरा—मुंह में जबान है, जो चाहो, बको।

बहारबेगम—अच्छा, बड़ी सच्ची हो, तो एक बात करो। हम एक हाथ में कोई चीज लें और दूसरा हाथ ख़ाली रखें। फिर मुट्ठी बांध के आयें, और तुम एक हाथ मारो। जो ख़ाली हाथ पर पडे, तो तुम झूटी। दूसरे हाथ पर पड़े, तो हम झूठे।

हुस्नआरा—ऐ वाह, छोकरियों का खेल।

रूहअफ़जा—अक़्खाह, और आप है क्या?

सिपहआरा—अच्छा, आप आइए। मगर हम दोनों हाथ देख लेगे।

बहारबेगम—हां-हां, देख लेना।

बहारबेगम ने दूसरे कमरे मे जाकर एक छोटी-सी शीशे की गोली दाहिने हाथ में रखी और बायां हाथ खाली। दोनों मुट्ठियां खूब ज़ोर से बंद कर ली और आकर बोली—अच्छा, मारो हाथ पर हाथ।

हुस्नआरा—ये वाहियात बातें है।

रूहअफ़जा—तो कापी क्यों जाती हो?

सिपहआरा—बा जी, बोलो, किस हाथ में है?

हुस्नआरा—उधर वाले में।

सिपहआरा—नही बा जी, धोखा खाती हो। हम तो बाएं हाथ पर मारते है।

बहारबेगम—(बायां हाथ खोलकर, सलाम।

सिपहआरा—अरे, वह हाथ तो दिखाओ।

बहारबेगम—देखो। है शीशे की गोली कि नहीं?

हुस्नआरा—देखा! कहा था कि उस हाथ में है। कहा न माना।

रूहअफ़जा—कहिए, अब तो सच है?

हुस्नआरा—ये सब ढकोसले हैं।

बहारबेगम—अच्छा बहन, अब इतना बता दो कि मियां आजाद कौन है?

हुस्नआरा—क्या जानें, क्या वाही-तबाही बकती हो।

बहारबेगम—अब छिपाने से क्या होता है भला! सुन तो चुके ही है हम।

हुस्नआरा—वतायें क्या, जव कुछ वात भी हो ?

सिपहआरा—इन दोनों वहनों ने ख़्वाव देखा था कल मालूम होता है।

हुस्नआरा—हां, सच कहा। ख़्वाव देखा होगा।

रूहअफ़ज़ा—ख़्वाव तो नहीं देखा; मगर सुना है कि सूरत-शक्ल में करोड़ों में एक हैं।

वहारवेगम—हुस्नआरा ने तो अपना जोड़ छांट लिया, अव सिपहआरा का निकाह हुमायूं फ़र के साथ हो जाये, तो हम समझें कि यह वड़ी ख़ुशनसीव हैं।

सिपहआरा—मेरे तो तलवों को भी न पहुंचें।

हुस्नआरा—तूती का कौए से जोड़ लगाती हो ?

वहारवेगम—वाह, चेहरे से नूर वरसता है। जी चाहता है कि घंटों देखा करें। अम्मां से आज ही तो कहूंगी मैं।

हुस्नआरा—कह दीजिएगा, धमकाती क्या हो !

सिपहआरा—आपके कहने से होता क्या है ? यहां कोई पसंद भी करे !

रूहअफ़ज़ा—इनकार करोगी, तो पछताओगी।

छियालीस

सवेरे हुस्नआरा तो कुछ पढ़ने लगी और वहारवेगम ने सिंगारदान मंगाकर निखरना शुरू किया।

हुस्नआरा—वस, सुवह तो सिंगार, शाम तो सिंगार। कंघी-चोटी, तेल-फुलेल। इसके सिवा तुम्हें और किसी चीज से वास्ता नहीं। रूहअफ़ज़ा सच कहती हैं कि तुम्हें इसका रोग है।

वहारवेगम—चलो, फिर तुम्हें क्या ? तुम्हारी वातों में खयाल वंट गया, मांग टेढ़ी हो गयी।

हुस्नआरा—है-है ! ग़ज़व हो गया। यहां तो दूल्हा भाई भी नहीं हैं ! आख़िर यह निखार दिखाओगी किसे ?

वहारवेगम—हम उठकर चले जायेंगे। तुम छेड़ती जाती हो और यह मुआ छपका सीधा नहीं रहता।

हुस्नआरा—अव तक मांग का खयाल था, अव छपके का खयाल है।

वहारवेगम—अच्छा, एक दिन हम तुम्हारा सिंगार कर दें, ख़ुदा की क़सम वह जोवन आ जाये कि जिसका हक़ है।

हुस्नआरा—फिर अव साफ़-फ़ाफ़ कहलाती हो। तुम लाख वनो-ठनो, हमारा जोवन ख़ुदादाद होता है। हमें वनाव-चुनाव की क्या ज़रूरत भला !

वहारवेगम—अपने मुंह मियां मिट्ठू वन लो।

हुस्नआरा—अच्छा, सिपहआरा से पूछो। जो यह कहें वह ठीक।

सिपहआरा—जिस तरह वहार वहन निखरती हैं, उस तरह अगर तुम भी निखरो, तो चांद का टुकड़ा वन जाओ। तुम्हारे चेहरे पर सुर्ख़ी और सफ़ेदी के सिवा नमक भी वहुत है। मगर वह गोरी-चिट्टी हैं वस, नमक नहीं।

रूहअफ़ज़ा—सच्ची वात तो यह है कि हुस्नआरा हम सव में वढ़-चढ़कर हैं।

इतने में एक फिटन खड़खड़ाती हुई आयी, मुश्की जोड़ी जुती हुई। नवाव ख़ुरशेदअली उतर कर वड़ी वेगम के पास पहुंचे और सलाम किया।

वड़ी वेगम—आओ वेटा, वायीं आंख जव फड़कती है, तव कोई-न-कोई आता

ज़रूर है। उस दिन आंख फड़की, तो लड़कियां आयीं। यह रूहअफ़ज़ा की क्या हालत हो गयी है ?

नवाब साहब—अब तो बहुत अच्छी हैं ! मगर परहेज नही करतीं। तीता मिर्च न हो, तो खाना न खायें। फिर भला अच्छी क्योंकर हों ?

यहां से बातें करके नवाब साहब उस कमरे मे पहुंचे, जिसमें चारों बहनें बैठी थीं। नवाब साहब का लिबास देखिए, जुर्राब ख़ाकी रंग का, घुटन्ना चुस्त, कुर्ता सफ़ेद फलालैन का। उस पर स्याह बनात का दगला और हरी गिरंट की गोट। बांकी नुक्के-दार टोपी। पांव में स्याह वारनिश का बूट, एक सफ़ेद दुलाई ओढ़े हुए। हुस्नआरा और सिपहआरा ने नीची गरदन करके बंदगी की। रूहअफ़जा ने कहा—आप बे-इत्तला किये हमारे कमरे में क्यों चले आये साहब ?

नवाब साहब—हुक्म हो, तो लौट जाऊं।

बहारबेगम—शौक़ से। बिन बुलाये कोई नहीं आता। लो सिपहआरा, अब इनके साथ बग्घी पर हवा खाने जाओ।

सिपहआरा—वाह, क्या झूठ-मूठ लगाती हो। भला मैंने कब कहा था।

रूहअफ़ज़ा—हम गवाह हैं।

नवाब साहब—अच्छा, फिर उसमें ऐब ही क्या है !

इतने में रूहअफ़ज़ा एक शीशे की तश्तरी में चिकनी डलियां रख कर लायी। नवाब साहब ने दो उठाकर खा लीं और 'आख थू' 'आख थू !' करते-करते बोले—पानी मंगाओ खुदा के वास्ते।

वह चिकनी डली असल में मिट्टी की थी। चारों बहनों ने क़हक़हा लगाया और वह हजरत बहुत झेंपे। जब मुंह धो चुके, तो सिपहआरा ने एक गिलौरी दी।

नवाब साहब—(गिलौरी खोलकर) अब बेदेखे-भाले खाने वाले की ऐसी-तैसी। कहीं इसमें मिरचें न झोंक दी हों। इस वक़्त तो भूख लगी हुई है। आंतें कुलहु अल्लाह पढ़ रही हैं।

हुस्नआरा—बासी खीर खाइए, तो लाऊं ?

नवाब साहब—नेकी और पूछ-पूछ !

हुस्नआरा जाकर एक कुफ़ली उठा लायी। नवाब साहब ने बड़ी खुशी से ली, मगर खोलते है तो मेंढकी उचक कर निकल पड़ी !

नवाब साहब—खूब ! यह रूहअफ़ज़ा से भी बढ़ कर निकली। 'बड़ी बी तो बड़ी बी, छोटी बी सुभान अल्लाह।'

रात को नवाब साहब आराम करने गये, तो बहारबेगम ने पूछा—कहो, तुम्हारी अम्माजान तो जीती हैं ? या ढुलक गयीं ?

नवाब साहब—क्या बेतुकी उड़ाती हो, ख़्वाहमख़्वाह दिल दुखाती हो। ऐसी बातें करती हो कि सारा शौक़ ठंडा पड़ जाता है।

बहारबेगम—हां, उनकी तो मुहब्बत फट पड़ी है तुमको। बत्तीस धार का दूध पिलाया है कि नहीं !

नवाब साहब—इसी से आने को जी नहीं चाहता था।

बहारबेगम—तो क्यों आये ? क्या चकला निगोड़ा उजड़ गया है ? या बाज़ार में किसी ने आग लगा दी ?

नवाब साहब—अच्छा, इस वक़्त तो ख़ुदा के लिए ये बातें न करो ? कोई छह दिन के बाद मुलाक़ात हुई है।

बहारबेगम—क्या कहीं आज और ठिकाना न लगा ?

नवाव साहव—तुम तो जैसे लड़ने पर तैयार होकर आयी हो।

वहारवेगम—क्यों ? आज प्राटन साहव न वनोगे ? कोट-पतलून पहनके न जाओगे ? मुझसे उड़ते हो !

नवाव साहव रंगीन मिज़ाज आदमी थे। वहारवेगम को उनके सैर-सपाटे वुरे मालूम होते थे। इसी सवव से कभी-कभी मियां-वीवी में चख़ चल़ जाती थी। मगर अवकी मरतवा वहारवेगम ने एक ऐसी वात सुनी थी कि आंखों से ख़ून वरसने लगा था ? एक दिन नवाव साहव कोट-पतलून डाट कर एक वंगले पर जा पहुंचे और दरवाज़ा खटखटाया। अंदर से आदमी ने आकर पूछा—आप कहां से आते हैं ? आपने कहा—हमारा नाम प्राटन साहव है। मेम साहव को वुलाओ। अव सुनिए, एक कुंजड़िन जो पड़ोस में रहती थी वहां तरकारी वेचने गयी हुई थी। वह इन हज़रत को पहचान गयी और घर में आकर वहारवेगम से कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। वेगम सुनते ही आग-भभूका हो गयीं और सोचीं कि आज आने तो दो, कैसा आड़े-हाथों लेती हूं कि छठी का दूध याद आ जाय। मगर उसी दिन यहां चली आयीं और वात ज्यों की त्यों रह गयी। भरी तो वैठी ही थीं, इस वक़्त मौक़ा मिला, तो उवल पड़ीं। नवाव ने जो पते-पते की सुनी, तो सन्नाटे में आ गये।

वहारवेगम—कहिए, प्राटन साहव, मिज़ाज तो अच्छे हैं ?

नवाव साहव—तुम क्या कहती हो ? मेरी समझ ही में नहीं आता कुछ।

वहारवेगम—हां, हां, आप क्या समझेंगे। हम हिंदुस्तानी और आप ख़ासी विलायत के प्राटन साहव। हमारी वोली आप क्या समझेंगे ?

नवाव साहव—कहीं भंग तो नहीं पी गयी हो ?

वहारवेगम—अव भी नहीं शरमाते ?

नवाव साहव—ख़ुदा गवाह है, जो कुछ समझ में भी आया हो।

वहारवेगम—जलाये जाओ और फिर कहो कि धुआं न निकले। मैं क्या जानती थी कि तुम प्राटन साहव वन जाओगे !

इधर तो मियां-वीवी में नोक-झोंक हो रही थी, उधर उनकी सालियां दरवाज़े के पास खड़ी चुपके-चुपके झांकतीं और सारी दास्तान सुन रही थीं। मारे हंसी के रहा न जाता था। आख़िर जव एक मरतवा वहार ने ज़ोर से नवाव का हाथ झटक कर कहा—आप तो प्राटन साहव हैं, मैं आपको अपने घर में न घुसने दूंगी— तो सिपहआरा खिलखिला कर हंस पड़ी। वहार ने हंसी की आवाज़ सुनी, तो धक से रह गयी। नवाव भी हक्का-वक्का हो गये।

नवाव साहव—तुम्हारी वहनें वड़ी शोख़ हैं।

रूहअफ़ज़ा—वहन, सलाम !

सिपहअरा—दूल्हा भाई, वंदगीअर्ज़।

हुस्नआरा—मैं भी प्राटन साहव को आदावअर्ज़ करती हूं।

नवाव साहव—समझा दो, यह वुरी वात है।

सिपहआरा—विगड़ते क्यों हो प्राटन साहव ?

वहारवेगम—(कमरे से निकल कर) ऐ, तो अव भागी कहां जाती हो ?

रूहअफ़ज़ा—वहन, अव जाइए। प्राटन साहव से वातें कीजिए।

वहारवेगम—आओ-आओ, तुम्हें ख़ुदा की क़सम।

सिपहआरा—कोई भाई-वंद अपना हो तो आयें। भला प्राटन साहव को क्या मुंह दिखायें ?

नवाव साहव—इस प्राटन के नाम ने तो हमें ख़ूब झंडे पर चढ़ाया। कैसे रुसवा

हुए !

बहारबेगम—अपनी करतूतो से।

सिपहआरा—अब तो क़लई खुल गयी ?

तीनो बहनों ने नवाब साहब को खूब आड़े हाथों लिया। बेचारे बहुत झेपे। जब वे चली गयी, तो बहारबेगम ने भी प्राटन साहब का क़सूर माफ़ कर दिया—

दिलो मे कहने-सुनने से अदावत आ ही जाती है;
जब आंखे चार होती है, मुहब्बत आ ही जाती है।

सैंतालीस

आज हम उन नवाब साहब के दरबार की तरफ़ चलते है, जहां खोजी और आजाद ने महीनो मुसाहबत की थी और आजाद बटेर की तलाश में महीनों सैर-सपाटे करते रहते थे। शाम का वक़्त था। नवाब साहब एक मसनद पर शान से बैठे हुए थे। इर्द-गिर्द मुसाहब लोग बैठे हुक्के गुड़गुड़ाते थे। बी अलारक्खी भी जाकर मसनद का कोना दबा कर बैठी।

नवाब साहब—यों आइए, बी साहब !

अलारक्खी—(खिसक कर) बहुत खूब !

मुसाहब—(दूसरे मुसाहब के कान मे) क्या जमाना है, वाह ! हम शरीफ़ और शरीफ़ के लड़के और यह इज़्ज़त कि जूतियों पर बैठे है। कोई टके को नही पूछता।

नुदरत—यार, क्या कहें, अब्बाजान चकलेदार थे, जिसका चाहा, भुट्टा-सा सिर उडा दियां। डका सामने बजता था। इन्ही आंखों के सामने दोनों तरफ़ आदमी झुक-झुककर सलाम करते थे, और इन्ही आंखो यह भी देख रहे है कि बेसवा आकर मनसद पर बैठ गयी और हम नीचे बैठे है। वाह री क़िस्मत ! फूट गयी।

नवाब साहब—आपका नाम क्या है बी साहब ?

अलारक्खी—हुजूर, मुझे अलारक्खी कहते है।

नवाब साहब—क्या प्यारा नाम है !

नुदरत—हुजूर, चाहे आप बुरा माने या भला, हम तो बीच खेत कहेगे कि आपके यहां शरीफ़ो की क़दर नही। ग़जब खुदा का, यह टके की बाजारी औरत मसनद पर आके बैठ जाय और हम शरीफ़ लोग ठोकरें खाये ! आसमान नही फट पड़ता ! कैसे-कैसे गौखे रईस जमा है दुनिया मे।

इतना कहना था कि हाफ़िज जी बिगड़ खड़े हुए और लपक के नुदरत के मुह पर एक लप्पड़ जमाया। वह आदमी थे करारे, लप्पड़ खाते ही आग हो गये। झपटके हाफ़िज जी को दे पटका। इस पर कुल मुसाहब और हवाली-मवाली उठ खड़े हुए।

एक—छोड़ दे बे !

दूसरा—इतनी लातें लगाऊंगा कि भुरकस निकल जायगा।

तीसरा—मर्दक, जिसका नमक खाता है, उसी को गालियां सुनाता है ?

नवाब साहब—निकाल दो इसे बाहर।

हाफ़िज़—देखिए तो नमकहराम की बातें !

नवाब साहब—आज से दरबार मे न आने पाये।

तीन-चार आदमियों ने मिलकर हाफ़िज जी को छुड़ाया। दरबार मे हुल्लड़ मचा हुआ था। अलारक्खी खड़े-खड़े थरथराती थी और नवाब साहब उनको दिलासा देते

जाते थे।

एक मुसाहव—(अलारक्खी से) ऐ हुज़ूर, आप न घबरायें।

दूसरा मुसाहव—वल्लाह बी साहवा, जो आप पर ज़रा भी आंच आने पाये।

नवाव—तुम तो मेरी पनाह में हो जी!

अलारक्खी—जी हां, मगर ख़ौफ़ मालूम होता है।

नवाव—अभी उस मूजी को यहां से निकलवाये देता हूं।

हाफ़िज़—हुज़ूर, वह बाहर खड़े सबको गालियां दे रहे हैं।

सबने मिलकर मियां नुदरत को बाहर तो निकाल दिया पर वह टर्रा आदमी था, बाहर जाकर एंड़ी-बेंड़ी सुनाने लगा—ऐसे रईस पर आसमान फट पड़े, जो इन टके-टके की औरतों को शरीफ़ों से अच्छा समझे। किसी ज़माने में हम भी हाथीनसीन थे। चौदह-चौदह हाथी हमारे दरवाजे पर झूमते थे। आज इस नवबढ़ रईस ने हमको फ़र्श पर बिठाया और मालजादी को मनसद पर जगह दी। खुदा इस मर्दक से समझे!

नवाब साहब—यह कौन गुल मचा रहा है?

एक मुसाहव—वही है हुज़ूर।

दूसरा मुसाहव—नहीं हुज़ूर, वह कहां! वह भागा पत्तातोड़। यह कोई फ़क़ीर है। भूखों मरता है।

नवाब—कुछ दिलवा दो भई!

एक मुसाहव ने दारोग़ा जी को बुलाया और उनसे दस रुपये लेकर बाहर चला। जब उसके लौट आने पर भी बाहर का शोर न बंद हुआ, तो नवाव ने खिदमतगार को भेजा कि देख, अब कौन चिल्ला रहा है? खिदमतगार ने बाहर जाकर जो देखा, तो मियां नुदरत खड़े गालियां सुना रहे हैं। जब वह नवाव साहब के पास जाने लगा, तो दारोग़ा जी ने उसे रोककर समझाया—अगर तुमने ठीक-ठीक बतला दिया, तो हम तुम को मार ही डालेंगे। ख़बरदार, यह न कहना कि मियां नुदरत गालियां दे रहे हैं। बल्कि यों बयान करना कि वह फ़क़ीर तो दस रुपये लेकर चल दिया, मगर और कई फ़क़ीर, जो उस वक़्त वहां मौजूद थे, आपको दुआएं दे रहे हैं। उनका सवाल है कि हुज़ूर के दरबार से कुछ उन्हें भी मिले।

नवाब साहब ने यह सुना, तो उन्हें यक़ीन आ गया। बेचारे भोले-भाले आदमी थे, हुक्म दिया कि इसी वक़्त सब फ़क़ीरों को इनाम मिले, कोई दरबार से नामुराद न लौटे; वर्ना मैं ज़हर खाकर मर जाऊंगा।

हाफ़िज़—दारोग़ा जी, इन फ़क़ीरों को चालीस रुपये दे दीजिए।

नवाव—क्या, चालीस! भला सौ रुपये तो तकसीम करो!

मुसाहव—ऐ, ख़ुदा सलामत रखे।

हाफ़िज़—वाह-वाह, क्यों न हो मेरे नवाब।

दारोग़ा ने सौ रुपये लिये और बाहर निकले। कई मुसाहब भी उनके साथ-साथ बाहर आ पहुंचे।

एक—ऐसे गौखे रईस कहां मिलेंगे?

दूसरा—क्या पागल है, वल्लाह!

हाफ़िज़—बेवकूफ़, काठ का उल्लू।

दारोग़ा—कह देंगे कि दे आये।

हाफ़िज़—लेकिन जो फिर गुल मचाये?

दारोग़ा—अजी, उसको निकाल बाहर कर दो। दो धक्के।

सबने मियां नुदरत को घेर लिया और कोसों तक रगेदते हुए ले गये। वह गालियां

देते हुए चले। अलारक्खी को भी खूब कोसा।

नवाब ने लाखों क़समें दीं कि अलारक्खी खाना खायें और कुछ दिन उसी बग़ीचे में आराम से रहें; मगर अलारक्खी ने एक न मानी। मियां नुदरत का उसे बार-बार ताने देना, उसे टके की औरत और बेसवा कहना उसके दिल में कांटे की तरह खटक रहा था। उसकी आंखों में आंसू भर आये।

नवाब—सच कहिए बी साहिबा, आखिर आप क्यों इस क़दर रंजीदा है अगर मुझसे कोई खता हुई हो तो माफ़ करो।

अलारक्खी—जाने हमें इस वक़्त क्या याद आया। आपसे क्या बतायें। दिल ही तो है।

नवाब—मुझसे तो कोई क़सूर नहीं हुआ?

अलारक्खी—हुजूर, ये सब क़िस्मत के खेल हैं। हमारी-सी बेहया ज़िंदगी किसी की न हो? मां-बाप ने अंधे कुएं मे ढकेल दिया; आप तो चैन उड़ाया किये हमें भाड़ में झोंक गये। हमारे बूढ़े मियां शादी करते ही दूसरे शहर में जा बसे। हम उनके नाम को रो बैठे। जब वह अटागफ़ील हो गये, तो हमारी मां ने बड़ा जश्न किया और एक-दूसरे लड़के से शादी ठहरायी। मगर अम्मा से किसी ने कह दिया—खबरदार लड़की को अब न व्याहना, भलेमानसों में बेवा का निकाह नही होता। बस, अम्मा चट से बदल गयीं। आखिर मैं एक रात को घर से निकल भागी। लेकिन उस दिन से आज तक जैसी पाक पैदा हुई थी, वैसी ही हूं। आज उस आदमी ने जो मुझे टके की औरत और बेसवा बनाया, तो मेरा दिल भर आया। क़सम ले लीजिए, जो मियां आजाद के सिवा किसी से कभी आंखें लड़ी हों।

नवाब—कौन, कौन? किसका नाम तुमने लिया?

हाफ़िज़—अच्छा पता लगा। वह तो नवाब साहब के दोस्त हैं।

नवाब—हमको उनकी खबर मिले, तो फ़ौरन बुलवा लें।

अलारक्खी—वह तो कहीं बाहर गये हैं। कुछ दिनों हमारी सराय में ठहरे थे। अच्छे खूबसूरत जवान हैं। उनको एक भोले-भाले नवाब मिल गये थे। नवाब ने एक बटेर पाला था। मियां आजाद ने उसे काबुक से निकालकर छिपा लिया। नवाब के मुसाहबों ने बटेर की खूब तारीफ़ें की। किसी ने कहा, क़ुरान पढ़ता था; किसी ने कहा, रोजे रखता था। सबने मिलकर नवाब को उल्लू बना लिया। मियां आज़ाद को ऊंटनी दी गयी कि जाकर बटेर ढूंढ़ लाओ। आजाद ऊंटनी लेकर हमारे यहां बहुत दिन तक रहे।

नवाब साहब मारे शर्म के गले जाते थे। उम्र भर में आज ही तो उन्हें खयाल आया कि ऐसे मुसाहबों से नफ़रत करना लाज़िम है। मुसाहबों ने लाख-लाख चाहा कि रंग जमायें, मगर नवाब और भी बददिमाग़ हो गये।

नवाब—वह भोला-भाला नवाब मैं ही हूं। आपने इस वक़्त मेरी आंखें खोल दी।

मुसाहब—ग़रीबपरवर, खुदा जानता है, हम लोग कट मरनेवाले हैं।

नवाब—बस, हम समझ गये।

हाफ़िज—हुजूर, तोप-दम कर दीजिए, जो जरा खता हो। हम लोग जान देने-वाले आदमी है।

नवाब—बस, चिढ़ाओ नहीं। अब कलई खुल गयी।

मुसाहब—खुदा जानता है।

नवाब—अब क़समें खाने की कुछ जरूरत नहीं। जो हुआ सो हुआ, आगे समझा जाएगा।

अलारक्खी—जो मुझको मालूम होता, तो यह ज़िक्र ही कभी न करती।

नवाब—खुदा की क़सम, तुमने मुझ पर और मेरे वाप पर, दोनों पर इस वक़्त एहसान किया। तुम जिक्र न करतीं, तो मैं हमेशा अंधा वना रहता, तुमने तो इस वक़्त मुझे जिला लिया।

मुसाहव—जिसने जो कह दिया, वही हुज़ूर ने मान लिया। वस, यही तो खरावी है। ज़रा हमारी ख़िदमतों को देखें, तो हमको मोतियों में तोलें—क़सम खुदा की—मोतियों में तोलें।

नवाव—मेरा वस चले, तो तुम सवको कालेपानी भेज दूं। और ऊपर से वातें वनाते हो? वटेर भी रोज़ा रखते हैं?

हाफ़िज़—खुदावंद, खुदा की खुदाई में क्या कुछ वईद है।

नवाव—चलो वस, ख़ुदाई में दखल न दो। मालूम हुआ, वड़े दीनदार हो। मेरा वस चले, तो तुमको ऐसी जगह क़त्ल करूं, जहां पानी तक न मिले।

हाफ़िज़—अगर कोई क़सूर सावित हो, तो क़त्ल कर डालिए।

मुसाहव—ख़ुदावंद, वह आज़ाद एक ही गुर्गा है, वड़ा दग़ावाज़।

अलारक्खी—वस, वस, उनको न कुछ कहिएगा। उनका-सा आदमी कोई हो तो ले!

नवाव—क्या शक है। खैर, अव भी सवेरा है, सस्ते छूटे।

अलारक्खी—छूटे तो सस्ते। ऐ हां, यह कहां की नमकहलाली है कि वटेर को रोज़ादार और नमाज़ी वना दिया? जो सुनेगा, क्या कहेगा?

नवाव—नमकहलाल के वच्चे वने हैं!

मुसाहव—खुदावंद! जो चाहे, कह लीजिए, हम लोग हुज्जत और तकरार थोड़े ही कर सकते हैं।

नवाव—अजी, तुम तो ज़हर दे दो, संखिया खिला दो! खूव देख चुका।

अलारक्खी—ऐसे वेईमानों से ख़ुदा वचाये।

मुसाहव—हां, मसनद पर वैठकर जो चाहो कह लो। वज़ार में झोटमझोट करती फिरती हो, और यहां आके वातें वनाती हो।

नवाव—वस, ज़वान वंद करो। मेरा दिल खट्टा हो गया।

मुसाहव—जो हम खतावार हों, तो हमारा खुदा हमसे समझे। ज़रा भी किसी वात में नमकहरामी की हो, तो हम पर आसमान फट पड़े। हुज़ूर चाहे न मानें, मगर दुनिया कहती है कि जैसे मुसाहव हुज़ूर को मिले हैं, वैसे वड़े खुशक़िस्मतों को मिलते हैं।

नवाव—यों कहो कि जिसकी क़िस्मत फूट जाती है, उसको तुम जैसे गुर्गे मिलते हैं। वस, आप लोग वोरिया-वंधना उठाइए और चलते-फिरते नज़र आइए।

मुसाहव—हुज़ूर, मरते दम तक साथ न छोड़ेंगे, न छोड़ेंगे।

हाफ़िज़—यह दामन छोड़कर कहां जायें?

मिरज़ा—कहीं ठिकाना भी है?

हाफ़िज़—ठिकाना तो सव कुछ हो जाए, मगर छोड़कर जाने को भी जव जी चाहे। जिसका इतने दिन तक नमक खाया, उससे भला अलग होना कैसे गवारा हो? मार डालिए, मगर हम तो इस ड्योढ़ी से नहीं जाने के। यह दर और यह सर। मरें भी, तो हुज़ूर ही की चौखट पर, और जनाज़ा भी निकले तो इसी दरवाज़े से!

नवाव—वातें न वनाओ। जहां सींग समाय, चले जाओ।

हाफ़िज़—हुज़ूर को खुदा सलामत रखे। जहां हुज़ूर का पसीना गिरे, वहां हमारा खून ज़रूर गिरेगा।

मगर नवाब साहब इन चकमो मे न आये। खिदमतगारो को हुक्म दिया कि इन सबों को पकड़कर बाहर निकाल दो। अगर न जायें, तो ठोकर मारकर निकाल दो।

अब अलारक्खी का भी हाल सुनिए। उनको मियां नुदरत की बातो का ऐसा कलक हुआ, दिल पर ऐसी चोट लगी कि अपने कुल जेवर और असबाब बेचकर बस्ती के बाहर एक टीले पर फ़क़ीरो की तरह रहने लगी। क़सम खा ली कि जब तक आज़ाद रूम से न लौटेंगे, इसी तरह रहूंगी।

अड़तालीस

जिस जहाज पर मियां आजाद और खोजी सवार थे, उसी पर एक नौजवान अंग्रेज अफ़सर और उसकी मेम भी थी। अंग्रेज का नाम चार्ल्स अपिल्टन था और मेम का वेनेशिया। आजाद को उदास देखकर वेनेशिया ने अपने शौहर से पूछा—इस जेंटिलमैन से क्यों न पूछे कि यह बार-बार लंबी सांसे क्यो ले रहा है?

साहब—तुम ऐसे-वैसे आदमियों को जेंटिलमैन क्यो कहती हो? यह तो निगर (काला आदमी) है।

मेम—निगर तो हम हबशी को कहते है। यह तो गोरा-चिट्टा, खूबसूरत आदमी है।

साहब—तो क्या खूबसूरत होने से ही कोई जेंटिलमैन हो जाता है? इंगलैंड के सब सिपाही गोरे होते है, तो क्या इससे ये सब-के-सब जेंटिलमैन हो गये?

मेम—तुम तो अपनी दलील से आप क़ायल हो गये। जब गोरे चमड़े से कोई जेंटिलमैन नही होता, तो फिर तुम सब क्यों जेंटिलमैन कहलाओ? और इन लोगों को निगर क्यों कहो? वाह, अच्छा इंसाफ़ है!

इतने मे जहाज के एक कोने से आवाज आयी कि ओ गीदी, न हुई क़रौली, नहीं तो लाश फड़कती होती।

मियां आजाद डरे कि ऐसा न हो, मिया खोजी किसी अंग्रेज से लड़ पड़े, अफीम की लहर मे किसी से बेवजह झगड़ पड़े। क़रीब जाकर पूछा—यह क्यो बिगड़े जी? किस पर गुल मचाया?

खोजी—अजी, जाओ भी, यहां शिकार हाथ से जाता रहा। वल्लाह, गिरफ़्तार ही कर लिया था। गीदी को पाता, तो इतनी क़रौलिया लगाता कि छठी का दूध याद आ जाता। मगर मेरा पांव फिसल गया और वह निकल गया!

आजाद—तुम्हें एक आंच की हमेशा कसर रह जाती है। यह था कौन?

खोजी—था कौन, वही बहुरूपिया! और किसको पडी थी भला!

आजाद—बहुरूपिया!

खोजी—जी हां, बहुरूपिया! बड़ा ताज्जुब हुआ आपको?

आजाद—भई हां, ताज्जुब कही लेने जाना है। क्या बहुरूपिया भी जहाज पर सवार हो लिया है? बडा लागू है भई?

खोजी—सवार नही हुआ, तो आया कहां से?

आजाद—क्या सोते हो खोजी, या पीनक मे हो?

खोजी—खोजी की ऐसी-तैसी। फिर तुमने खोजी कहा हमको!

आजाद—माफ़ करना भई, कसूर हुआ।

खोजी—वाह, अच्छा क़सूर हुआ! किसी को जूते लगाइए और कहिए, क़सूर हुआ। जब देखो, खोजी-खोजी।

आज़ाद—अच्छा जनाब ख़्वाजा साहब, अब तो राज़ी हुए! यह बहुरूपिया कहां से आ गया?

खोजी—अरे साहब, अब तो ख़्वाब में भी आने लगा। अभी मैं सोता था, आप आ पहुंचे। मेरे हाथ में उस वक़्त अफ़ीम की डिबिया थी। फेंक के डिबिया और लेके कतारा जो पीछे झपटा, तो दो कोस निकल गया। मगर शामत यह आयी कि एक जगह ज़रा-सा पानी पड़ा था! मेरी तो जान ही निकल गयी। फिसला, तो आरा रा रा धों!

आज़ाद—क्या गिर पड़े? जाओ भी!

ख़ोजी—बस, कुछ न पूछिए। मेरा गिरना ऐसा मालूम हुआ, जैसे हाथी पहाड़ से गिरा। धड़ाम-धड़ाम!

आज़ाद—इसमें क्या शक़ है! आपके हाथ-पांव ही ऐसे हैं। वह तो कहिए, बड़ी ख़ैरियत गुज़री!

ख़ोजी—और क्या! मगर जाता कहां है गीदी। रगेद के मारूं। यहां पलटन में सूबेदारी कर चुके हैं।

मेम और साहब, दोनों मियां आज़ाद और खोजी की बातें सुन रहे थे। साहब तो उर्दू ख़ूब समझते थे, मगर मेम साहब कोरी थीं। साहब ने तर्जुमा करके बताया, तो वेनेशिया भी मारे हंसी के लोट गयी! यह इंच भर का आदमी, एक-एक माशे के हाथ-पांव और आपके गिरने से इतनी बड़ी आवाज़ हुई कि जैसे हाथी गिरे!

साहब—सिड़ी है कोई। जाने क्या वाही-तबाही बकता है।

मेम—तुम चुप रहो। हम इस जेंटिलमैन से पूछते हैं, यह कौन पागल है।

साहब—अच्छा, मगर हिंदोस्तानी बदतमीज़ होते हैं। तुम इससे बातें न करो।

मेम—अच्छा, तुम्हीं पूछो।

इस पर साहब ने उंगली के इशारे से आज़ाद को बुलाया। आज़ाद भला कब सुननेवाले थे। बोले ही नहीं। साहब पलटनी आदमी, चेहरा मारे ग़ुस्से से लाल हो गया। ख़याल हुआ कि वेनेशिया तालियां बजायेगी कि एक निगर तक मुख़ातिब न हुआ, बात का जवाब तक न दिया। वेनेशिया ने जब यह हालत देखी तो इठलाती और मुस्कराती हुई मियां आज़ाद की तरफ़ गयी। आज़ाद लेडियों से बोलने-चालने के आदी तो थे ही, एक ख़ूबसूरत लेडी को आते देखा, तो टोपी उतार कर सलाम किया और पूछा—आप कहां तशरीफ़ ले जायेंगी?

मेम—घर जा रही हूं। यह ठिगना आदमी कौन है? ख़ूब बातें करता है। हंसते-हंसते पेट में बल पड़-पड़ गये।

आज़ाद—जी हां, बड़ा मसखरा है।

मेम—चार्ली, यह तो कहते हैं कि वह बौना मसखरा है।

साहब—इसकी बातें बड़े मज़े की होती हैं।

साहब का ग़ुस्सा ठंडा हो गया। आज़ाद का डील-डौल देखकर डर गये। इधर-उधर की बातें होने लगीं। इतने में जहाज़ पर एक दिल्लगीबाज़ को सूझी कि आओ, ख़ोजी को बनायें। दो-चार और शोहदे उससे मिल गये। जब देखा कि मियां खोजी पीनक में सो गये, तो एक आदमी ने दो लाल मिरचें उनकी नाक में डाल दीं। ख़ोजी ने जो आंख खोली, तो मारे छींकों के बौखला गये। बावले कुत्ते की तरह इधर-उधर दौड़ने लगे। मेम और साहब तालियां बजा-बजाकर हंसने लगे।

आज़ाद—जनाब ख़्वाजा साहब!

खोजी—बस, अलग रहिएगा, आक् छीं!

आज़ाद—आख़िर यह हुआ क्या? कुछ बताओ तो!

ख़ोजी—चलिए, आपको क्या; चाहे जो कुछ हुआ ! आ···छी !

आजाद—यार, यह उसी बहुरूपिये की शरारत है।

ख़ोजी—देखिए तो, कितनी क़रौलियां भोंकी हों कि आ···छी। याद ही तो करे—छी।

आजाद—मगर तुम तो गिर-गिर पड़ते हो मियां ! एक दफ़े जी कड़ा करके पकड़ क्यों नहीं लेते ?

ख़ोजी—नाक में मिरचें डाल दी। गीदी ने।

आजाद—अबकी आप ताक में बैठे रहिए। बस, आते ही पकड़ लीजिए। मगर है बड़ा शरीर, सचमुच नाक मे दम कर दिया।

ख़ोजी—कुछ ठिकाना है ! नाक मे मिरचें झोंकने की कौन-सी दिल्लगी है ?

आजाद—और क्या साहब, यह बेजा बात है।

ख़ोजी—बेजा-बेजा के भरोसे न रहिएगा, मैं किसी दिन हाथ-पांव ढीले कर दूंगा। कहां के बड़े कड़ेखा है आप ! मैंने भी सूबेदारी की है।

आजाद—तो आप मेरे हाथ-पांव क्यों ढीले करते है ? मैंने तो आपका कुछ बिगाड़ा नही।

ख़ोजी—(आंखें खोलकर) अरे ! यह आप थे ! भई, माफ़ करना। बस, देखते जाओ, अब गिरफ़्तार ही किया चाहता हूं गीदी को।

आजाद—लेकिन, जरा होशियार रहिएगा ? बहुरूपिया गया जहन्नुम मे, ऐसा न हो, कोई हजरत रुपये-पैसे ग़ायब कर दे, बेवकूफ़ कही का ! अबे गधे, यहां बहुरूपिया कहां ?

ख़ोजी—बस, चोंच संभालिए, बंदा चलता हे। दोस्ती हो चुकी। कुछ आपके गुलाम नही है। और सुनिए, हम गधे है। क्या जाने कितने गधे हमने बना डाले।

आजाद—ख़ैर, यही सही। लेकिन जाइएगा कहां ? यहां भी कुछ ख़ुश्की है ?

खोजी—अरे ओ जहाज के कप्तान ! जहाज रोक ले—अभी रोक ले।

साहब—वह क्यों न सुनेगा। दो-चार हाथ क़रौली के लगाइए, तो फिर सुने।

इतने मे हाजरी खाने का वक़्त आया। आज़ाद ने बेतकल्लुफ़ी के साथ उन दोनों के साथ खाना खाया। फिर तीनों टहलने लगे। आजाद को वेनेशिया की एक-एक छवि भाती थी और वह हसीना कभी शोख़ी से इठलाती थी, कभी नाज के साथ मुस्कराती थी। इतने में ख़ोजी ने यह शेर पढ़ा—

अगर तुम नही तो और बुते महजबी सही,
हमको तो दिल्लगी से ग़रज है, कहीं सही।

आजाद ने जो यह शेर सुना, तो ख़ोजी के पास आकर बोले—यह क्या ग़जब करते हो जी ? इसका शौहर शेर ख़ूब समझ लेता है।

ख़ोजी—वह गीदी इन इशारों को क्या जाने।

आजाद—तुम बड़े शरीर हो।

ख़ोजी—क्यों उस्ताद, हमीं से यह उड़नघाइयां बताते हो, क्यों ? सच कहना, हुस्नआरा के लगभग है कि नही। बम्बईवाली बेगम भी ऐसी ही शोख थी।

वेनेशिया ने ख़ोजी को मुस्कराते देखा, तो उंगली के इशारे से बुलाया। ख़ोजी तो रेशाख़तमी हो गये। बहुत ऐंठते और अकड़ते हुए चले। गोया लंधौर पहलवान के भी चचा है। वाह, क्यों न हो। इस वक़्त जरा पांव फिसले, तो दिल्लगी हो। मेम साहब के पास पहुंचे।

आज़ाद—टोपी उतार कर सलाम करो खोजी।

खोजी का लफ़्ज सुनना था कि ख़्वाजा साहब का गुस्सा एक सौ बीस दरजे पर जा पहुंचा। बस, पलट पड़े और पलटते ही उलटे पांव भागने लगे।

आज़ाद—ओ गीदी, जो पलट गया, तो इतनी क़रौलियां भोंकी होंगी कि छठी का दूध याद आ गया होगा।

मेम—क्यों खोजी, क्या मुझसे खफ़ा हो गये?

आज़ाद—क्यों भई, क्या शैतान ने फिर उंगली दिखा दी? मियां खोजी?

खोजी—खोजी पर खुदा की मार! खोजी पर शैतान की फटकार! एक दफ़ा खोजी कहा, मैं खून पीकर रह गया, अब फिर दोहराया। खुदा जाने, कब का दिया इस गाढे वक़्त काम आया। नहीं तो मारे क़रौलियों के भुट्टा-सा सिर उड़ा देता। लाख गया-गुज़रा हूं, तो क्या हुआ, उम्र भर रिसालदारी की है, घास नहीं खोदी।

मेम—अच्छा, यह खोजी के नाम पर बिगड़े! हम समझे, हमसे रूठ गये।

खोजी—नहीं मेम साहब, कैसी बात आप फ़रमाती हैं!

आज़ाद—ज़रा इनसे इनकी बीबी जान का हाल पूछिए। उसका नाम बुआ ज़ाफ़रान है। देवनी है देवनी।

खोजी ने बुआ ज़ाफ़रान का नाम सुना, तो रंग फ़क़ हो गया और सहम कर आंखें बंद कर लीं। आज़ाद ने जब बेनेशिया से सारा क़िस्सा कहा, तो मारे हंसी के लोट-लोट गयी।

उनचास

एक आलीशान महल की छत पर हुस्नआरा और उनकी तीनों बहनें मीठी नींद सो रही हैं। बहारबेगम की जुल्फ़ से अम्बर की लपटें आती थीं; रूहअफ़ज़ा के घूंघरवाले बाल नौजवानों के मिज़ाज की तरह बल खाते थे; सिपहआरा की मेंहदी अजब लुत्फ़ दिखाती थी और हुस्नआरा बेगम के गोरे-गोरे मुखड़े के गिर्द काली-काली जुल्फ़ों को देखकर धोखा होता था कि चांद ग्रहण से निकला है।

इधर तो ये चारों परियां बेख़बर आराम में हैं, उधर शाहज़ादा हुमायूं फ़र अपने दोस्त मीर साहब से इधर-उधर की बातें कर रहे हैं।

मीर—कुछ अड़ोसी-पड़ोसियों का तो हाल कहिए। दोनों हसीनाएं नजर आती हैं या नहीं?

शाहज़ादा—अरे मियां, अब तो चौकड़ी है। एक से एक बढ़-चढ़कर। सब मस्त हैं। मगर बला की हयादार।

मीर—यह कहिए, गहरे हो उस्ताद!

शाहजदा—अजी, अभी ख़्वाब देख रहा था एक महरी हुस्नआरा का ख़त लायी है। ख़त पढ़ रहा था कि आप बला की तरह आ पहुंचे। जी चाहता है, गोली मार दं।

मीर—क्यों साहब, आपने तो कान पकड़े थे।

शाहज़ादा—दिल पर क़ाबू भी तो हो?

मीर—कलंक का टीका लगाओगे? खुदा के लिए फिर तोबा करो। आख़िर चारों छोकरियों में से आप रीझे किस पर? या चारों पर दिल आया है?

शाहज़ादा—चार निकाह तो जायज़ हैं!

मीर—तो यह कहिए, चारों पर दांत हैं।

शाहज़ादा—नहीं मियां, हंसता हूं। दो ही तो कुंआरी हैं।

ये बाते हो ही रही थी कि एकाएक महल्ले मे चोर-चोर का गुल मचा। कोई चिराग़ जलाता है कोई बीबी के जेवर टटोलता है। चारों तरफ़ खलबली मच गयी। पूछने से मालूम हुआ कि बड़ी बेगम साहिबा के घर में चोर घुसा था। शाहज़ादे ने जो यह बात सुनी, तो मीर साहब से बोले···भई मौक़ा तो अच्छा है। चलो, इस वक़्त जरा हो आये। इसी बहाने एहसान जतायें।

मीर—सोच लो, ऐसा न हो, पीछे मेरे माथे जाय। तुम तो शाहज़ादे बनकर छूट जाओगे, उल्लू मै बनूंगा। आख़िर वहा चल कर क्या कहोगे?

शाहज़ादा—अजी, कहेंगे क्या! बस, अफ़सोस करेंगे। शायद इसी फेर में एक झलक मिल जाय। और नही, तो आवाज ही सुन लेंगे।

दोनों आदमी बेगम साहिबा के मकान पर पहुंचे, तो क्या देखते है कि चालीस-पचास आदमी एक चोर को घेरे खड़े हैं और चारों तरफ़ से उस पर बेभाव की पड़ रही है। एक ने तड़ से चपत जमायी, दूसरे ने खोपड़ी पर धौल लगायी। चोर पर इतनी पड़ी कि बिलबिला गया। झल्ला-झल्ला कर रह जाता था। दो-तीन भले आदमी लोगों को समझा रहे थे, बस करो, अब तो खोपड़ी पिलपिली कर दी। क्या जमाते ही जाओगे?

एक—भाई, खूब हाथ गरमाये।

दूसरा—हम तो पोले हाथ से लगाते थे। जिसमें चोट कम आये, मगर आवाज खूब हो।

चोर—छूटूंगा तो एक-एक से समझूंगा। क्या करूं, बेबस हूं; वर्ना सबको पीसकर धर देता।

बहारबेगम के मियां भी खड़े थे। बोले—एक ही शैतान है।

शाहज़ादा—आख़िर, यह आया किधर से?

नवाब साहब—मै घूमकर कोई दस बजे के लगभग आया। खाना खाकर लेटा ही था कि नीद आ गयी। यह गुल मचा, तो तलवार लेकर दौड़ पड़ा। अब सुनिए, मै तो ऊपर से आ रहा हूं, और चोर नीचे से ऊपर जाता है। रास्ते मे मुठभेड़ हुई। इसने छुरी निकाली, मगर मैंने भी तलवार का वह हाथ चलाया कि जरा हाथ ओछा न पड़े, तो भंडारा खुल जाय। फिर तो ऐसा सहमा की होश उड़ गये। भागते राह न मिली। अब छत पर पहुंचा और चाहता था कि झपट कर नीचे कूद पड़े; मगर मेरी छोटी साली ने इस फुर्ती से रस्सी का फंदा बनाकर फेंका कि उलझ कर गिरा। उठकर भागने को ही था कि मैं गले पर पहुंच गया और जाते ही छाप बैठा। औरतो ने दोहाई देना शुरू की; लेकिन मैने न छोड़ा। आपने इस वक़्त कहां तकलीफ़ फ़रमायी?

शाहज़ादा—मैने कहा, चलकर देखूं क्या बात हुई। बारे शुक्र है कि ख़ैरियत हुई। मगर आपकी साली बड़ी दिलेर है। दूसरी औरत हो, तो डर जाय।

यहां तो यह बातें हो रही थी, उधर अंदर चारों बहनों में भी यही जिक्र था। चारों हंस-हंसकर यही बातें कर रही थी···

सिपहआरा—है-है-बाजी, मैने जब उस काले-काले संडे को देखा, तो सन से जान निकल गयी।

रूहअफ़ज़ा—मुआ तंबाकू का पिंडा।

हुस्नआरा—वह तो ख़ैर गुज़री कि संदूक हाथ से गिर पड़ा, नही तो सब मूस ले जाता।

सिपहआरा—बहारबेगम की चिड़चिड़ी सास लाखों ही सुनाती कि मेरी बहू के गहने सब बेच खाये।

बहार बेगम—चोर-चोर की भनक कान में पड़ी, तो मै कुलबुला कर चौंक पड़ी।

भागी, तो जूड़ा भी खुल गया। अल्लाह जानता है, बड़ी महनत से बांधा था चलो ख़ैर !

रूहअफ़ज़ा—बस, हमारी बाजी को चोटी कंघी की फ़िक्र रहती है।

हुस्नआरा—जितना इनको इस बात का ख़याल है, उतना हमारे खानदान-भर में किसी को नहीं है। जभी तो दूल्हा भाई इतने दीवाने रहते हैं।

बहारबेगम—चलो, बैठी रहो; छोटे मुंह बड़ी बात !

हुस्नआरा—दूल्हा भाई को इनके साथ इश्क़ है।

बहारबेगम—क्या टर-टर लगायी है नाहक़ !

अब दिल्लगी सुनिए कि मिरज़ा हुमायूं फ़र बाहर बैठे चुपके-चुपके सारी बातें सुन रहे थे। नवाब बेचारे कट-कट गये, मगर चुप। अंदर जाकर समझायें, तो अदब के ख़िलाफ़; चुपके बैठे रहें, तो भी रहा नहीं जाता। जान अजाब में थी। ख़ैर, हुक़्क़ा पीकर शाहज़ादा रुख़सत हुए। उनके चले जाने के बाद नवाब साहब अन्दर आये और बोले—तुम लोगों की भी अजब आदत है। जब देखोगी कि कोई ग़ैर आदमी आके बैठा है, बस, तभी गुल मचाओगी। इस वक़्त एक भलेमानस बैठे थे और यहां चुहल हो रही थी।

बहारबेगम—वह भलामानस निगोड़ा कौन था, जो इतने वक़्त पंचायत करने आ बैठा ?

रूहअफ़ज़ा—तो अब कोई उनके मारे अपने घर में बात न करे ? घोट कर मार न डालिए।

हुस्नआरा—हम भी तो सुनें, वह भलेमानस कौन थे ?

नवाब—अजी, यही, जो सामने रहते हैं, शाहज़ादे।

हुस्नआरा—तो आपने आकर हमसे कह क्यों न दिया ? फिर हम काहे को बोलते ?

बहारबेगम—अपनी ख़ता न कहेंगे, दूसरों को ललकारेंगे।

नवाब—उस वक़्त वहां से आने का मौक़ा न था। मुझसे पूछा कि चोर को किसने पकड़ा। मैंने कहा, मेरी छोटी साली ने, तो बहुत ही हंसे।

नवाब साहब बाहर चले गये, तो फिर बातें होने लगीं—

सिपहआरा—ज़रा उसकी ढिठाई तो देखो कि चोर का नाम सुनते ही आ डटा। भला क्या वजह थी इसकी ? ऐसा कहां का बड़ा रुस्तम था ?

हुस्नआरा—तीन बजे के वक़्त आप जो आये, तो क्यों आये !

रूहअफ़ज़ा—मैं बताऊं ! उसको यह ख़बर न होगी कि दूल्हा भाई घर पर हैं। वह न होते, तो घर में घुस पड़ता।

सिपहआरा—काम तो शोहदों के जैसे हैं।

अब एक और दिल्लगी सुनिए। चोर आया, गुल गपाड़ा हुआ, पकड़ा गया ज़माने भर में हुल्लड़ मचा, मुहल्ला भर जाग उठा; चोर थाने पर पहुंचा; मगर बड़ी बेगम साहिबा अभी तक खर्राटे ही ले रही हैं। जब जागीं, तो मामा से बोलीं—कुछ गुल-सा मचा था अभी ?

मामा—हां, कुछ आवाज़ तो आयी थी !

बेगम—जरी किसी से पूछो तो।

मामा—ऐ बीवी, पूछना इसमें क्या है ? भेड़िया-वेड़िया आया होगा।

बेगम—मैंने आज हाथी को ख़्वाब में देखा है; अल्लाह बचाये।

इतने में चोर के आने की ख़बर मिली। तब तो बेगम साहिबा के होश उड़ गये। मामा को भेजा कि जा पूछ, कुछ ले तो नहीं गया।

हुस्नआरा—अम्मांजान बहुत जल्द जागीं ! क्या तू भी घोड़े बेच कर सोयी थी !

अल्लाह री नीद !

मामा—जरी आंख लग गयी थी। मगर कुछ गुल की आवाज जरूर आयी थी।

हुस्नआरा—मुहल्ला भर जाग उठा, तुम्हारे नजदीक कुछ ही कुछ गुल था। ठीक ! जाके अम्मां से कह दे कि चोर आया, मगर जाग हो गयी।

सिपहआरा—ऐ, काहे के वास्ते बहकती हो। मामा, तू जाके सो रह, शोर-गुल कही कुछ न था, कोई सोते मे बर्रा उठा होगा।

हुस्नआरा—नही मामा, यह दिल्लगी करती है। चोर आया था।

मामा—ऐ, गया चूल्हे मे निगोड़ा चोर ! इधर आने का रुख करे, तो आखे ही फूट जाये। क्या हसी-ठट्ठा है।

सिपहआरा—देखो तो सही भला !

मामा—अभी बेगम साहिबा सुन ले, तो दुनिया सिर पर उठा ले।

मामा ने जाकर बेगम से कहा—हुजूर, कुछ है न वै, बेकार को जगाया। न भेड़िया, न चोर, कोई सोते-सोते बर्रा उठा था।

बेगम—जरा बाहर जाकर तो पूछ कि यह गुल कैसा था ?

महरी—बीवी, मै अभी बाहर से आयी हू, कोठे पर कलमुहा आया था। कोठरी का कुलुफ तोडकर जब संदूक उठाया, तो जाग हो गयी। इतने मे नवाब साहब कोठे पर से नंगी तलवार लिये दौडे आये।

बेगम—नवाब साहब के दुश्मनों को तो कही चोट-ओट नही आयी ?

महरी—ना बीबी, एक फांस तक तो चुभी नही।

बेगम—चोर कुछ ले तो नही गया।

महरी—एक झंझी तक नही।

बेगम—चोर अब कहां है ?

महरी—ख़ादिमहुसैन थाने पर ले गया।

मामा—अब चक्की पीसनी पड़ेगी।

बेगम—तू तो कहती थी कि कोई सोते-सोते बर्रा उठा था। झूठी जमाने भर की ! चल, जा, हट !

अब थाने का हाल सुनिए। थानेदार नदारद, जमादार शराब पिये मस्त, कांस्टेबिल अपनी-अपनी ड्यूटी पर। एक कांस्टेबिल पहरे पर खड़ा सो रहा था। खादिमहुसैन ने बहुत गुल मचाया। तब जाके हजरत की नीद खुली। बिगड़े कि मुझे जगाया क्यो ? चोर को छोड दो।

खादिमहुसैन—वाह, छोड़ देने की एक ही कही। मैं भी थाने मे मुहर्रिर रह चुका हूं।

कास्टेबिल—न छोड़ोगे तुम ?

खादिमहुसैन—होश की दवा करो मियां ! इसके साथ तुमको भी फंसाऊं तो सही।

कास्टेबिल—(चोर से) तुझे इन्होने अपने यहां कै घंटे रखा था ?

चोर—पकड़ के बस यहां ले आये ?

कांस्टेबिल—दुत गौखे ! अबे, तू कहना कि मै राह-राह चला जाता था, इनसे मुझसे लागडाट थी। इन्होने घात पाकर मुझे पकड़ लिया, खूब पीटा और चार घटे तक अस्तबल की कोठरी मे बद रखा।

चोर—लागडाट क्या बताऊं ?

कांस्टेबिल—कह देना कि मेरी जोरू पर यह बुरी निगाह डालते थे। बस, लाग-

डाट हो गयी।

चोर—मगर मेरी जोरू तो चार वरस हुए, एक के साथ निकल गयी।

कांस्टेविल—वस, तो वात वन गयी! कह देना, इन्हीं की साज़िश से निकली थी। तो इन पर दो जुर्म क़ायम होंगे। एक यह कि तुमको झूठ-मूठ फांस लिया, दूसरे ज़वरदस्ती क़ैद रखा।

ख़ादिमहुसैन—तुम्हारी वातों पर कुछ हंसी आती है, कुछ गुस्सा।

कांस्टेविल—जव वड़ा घर देखोगे, तव हंसी का हाल खुल जायगा।

ख़ादिमहुसैन—हमारे घर में चोरी हो और हमीं फंसें?

ख़ैर कांस्टेविल साहव रोज़नामचा लिखने वैठे। ख़ादिमहुसैन ने सारी दास्तान वयान की। जव उसने यह कहा कि नवाव साहव तलवार लेकर दौड़े, तो कांस्टेविल ने क़लम रोक दिया और कहा—ज़रा ठहरो, तलवार का लाइसेंस उनके पास है?

ख़ादिमहुसैन—उनके साथ तो वीस सिपाही तलवार वांधे निकलते हैं। तुम एक लाइसेंस लिये फिरते हो!

आख़िर रिपोर्ट ख़तम हुई और ख़ादिम अपने घर आया।

पचास

एक दिन मियां आज़ाद मिस्टर और मिसेज़ अपिल्टन के साथ खाना खा रहे थे कि एक हंसोड़ आ वैठे और लतीफ़े करने लगे। वोले—अजी, एक दिन वड़ी दिल्लगी हुई। हम एक दोस्त के यहां ठहरे हुए थे। रात को उसके ख़िदमतगार की वीवी दस अंडे चट कर गयी। जव दोस्त ने पूछा, तो ख़िदमतगार ने विगड़ी वात वनाकर कहा कि विल्ली खा गयी। मगर मैंने देख लिया था। जव विल्ली आयी तो वह औरत उसे मारने दौड़ी। मैंने कहा—विल्ली को मार न डालना, नहीं तो फिर अंडे हज़म न होंगे।

आज़ाद—वात तो यही है। खाय कोई, नाम विल्ली का वद।

अपिल्टन - आप शादी क्यों नहीं करते?

हंसोड़—शादी करना तो आसान है, मगर वीवी का संभालना मुश्किल। हां, एक शर्त पर हम शादी करेंगे। वीवी दस वच्चों की मां हो।

मेम—वच्चों की क़ैद क्यों की?

हंसोड़—आप नहीं समझीं। अगर जवान आयी, तो उसके नख़रे उठाते-उठाते नाक में दम आ जायगा; अधेड़ वीवी हुई तो नख़रे न करेगी और वच्चे वड़े काम आयेंगे।

आज़ाद—वह क्या?

हंसोड़—कहत के दिनों में वेच लेंगे।

इतने में क्या देखते हैं कि मियां खोजी लुढ़कते हुए चले आते हैं। एक सूखा कतारा हाथ में है।

आज़ाद—आइए। वस, आप ही की कसर थी।

खोजी—मुझे वैठे-वैठे ख़याल आया कि किसी से पूछूं तो कि यह समुद्र है क्या चीज़ और किसकी दुआ से वना है?

हंसोड़—मैं वताऊं! अगले ज़माने में एक मुल्क था धामड़-नगर।

खोजी—जरा ठहर जाइएगा। वहां अफ़ीम भी विकती थी?

हंसोड़—उस मुल्क के वाशिंदे वड़े दिलेर होते थे, मगर क़द के छोटे। विलकुल टेनी मुर्गे के वरावर।

खोजी—(मूंछों पर ताव देकर) हां-हां, छोटे क़द के आदमी तो दिलेर होते ही हैं।

हंसोड़—और कोई बग़ैर क़रौली बांधे घर से न निकलता था।

खोजी—(अकड़कर) क्यों मियां आज़ाद, अब न कहोगे ?

हंसोड़—मगर उन लोगों में एक ऐब था, सब-के-सब अफ़ीम पीते थे।

खोजी—(त्योरियां चढ़ाकर) ओ गीदी !

आज़ाद—हैं हैं। शरीफ़ आदमियों से यह बदज़बानी !

खोजी—हम तो सिर से पांव तक फुंक गये, आप शरीफ़ लिये फिरते हैं।

हंसोड़—वहां की औरतें बड़ी गरांडील होती थीं। जहां मियां ज़रा बिगड़े, और बीवी ने बगल में दबाकर बाज़ार में घसीटा।

खोजी—अहाहा, सुनते हो यार ! वह बहुरूपिया वहीं का था। अब तो उस गीदी का मकान भी मिल गया। चचा बना कर छोड़ूं, तो सही।

हंसोड़—वे सब रिसालदारी करते थे।

खोजी—और वहां क्या-क्या होता था ? उस मुल्क के आदमियों की तसवीरें भी आपके पास हैं ?

हंसोड़—थी तो, मगर अब नहीं रहीं। बस, बिलकुल तुम्हारे ही से हाथ-पांव थे। करारे जवान। पौंड़े बहुत खाते थे।

खोजी—ओहोहो ! वे सब हमारे ही बाप-दादा थे। देखो भाई आज़ाद, अब यह बात अच्छी नहीं। वहां से तो लम्बे-चौड़े वादे करके लाये थे कि क़रौली ज़रूर ले देंगे, और यहां साफ़ मुकर गये। अब हमें क़रौली मंगा दो, तो ख़ैरियत है, नहीं तो हम बिगड़ जायेंगे। वल्लाह, कौन गीदी दम भर ठहरे यहां।

आज़ाद—और यहां से आप जायेंगे कहां ? जहन्नुम में ?

वेनेशिया—कुछ रुपये भी है ? जहाज़ का किराया कहां से दोगे ?

आज़ाद—मैं इनका ख़ज़ांची हूं। यह घर जायें, किराया मैं दे दूंगा।

हंसोड़—इस ख़ज़ांची के लफ़्ज़ पर हमें एक लतीफ़ा याद आया। शादी के पहले नौजवान लेडियां अपने आशिक़ को अपना ख़ज़ाना कहती हैं। शादी होने के बाद उसे ख़ज़ांची कहने लगती हैं। ख़ज़ांची के ख़ज़ांची और मियां के मियां।

वेनेशिया—अच्छा हुआ, तुम्हारी बीवी चल बसीं; नहीं तो तुम्हारी किफ़ायत उनकी जान ही ले लेती।

हंसोड़—अजीब औरत थी, शादी के बाद ऐसी रोनी सूरत बनाये रहती थी कि मालूम होता था, आज बाप के मरने की ख़बर आयी है। दो बरस के बाद हमसे छह महीने के लिए जुदाई हुई। अब जो देखता हूं, तो और ही बात है। बात-बात पर मुस्कराना और हंसना। बात हुई और खिल गयी। मैंने पूछा, क्या तुम वही हो जो नाक-भौं चढ़ाये रहती थीं ? मुस्कराकर कहा—हां, हूं, तो वही। मैंने कहा—ख़ैर, काया-पलट तो हुई। हंसके बोली—वाह इसमें ताज्जुब काहे का। एक दिन मुझे ख़याल आ गया, बस, तब से अब हर वक़्त हंसती हूं। तब तो मैंने अपना मुंह पीट लिया। रोनी सूरत बना कर बोला—हम तो ख़ुश हुए थे कि अब हमसे तुमसे ख़ूब बनेगी, मगर मालूम हो गया कि तुम्हारी हंसी और रोने, दोनों का एतबार नहीं। अगर तुम्हें इसी तरह बैठे-बैठे किसी दिन ख़याल आ गया कि रोना अच्छा, तो फिर रोना ही शुरू कर दोगी।

आज़ाद—मुझे भी एक बात याद आ गयी। हमारे मुहल्ले में एक ख़्वाजा साहब रहते थे। उनके एक लड़की थी, इतनी हंसीन कि चांद भी शरमा जाय। बात करते वक़्त बस यही मालूम होता था कि मुंह से फूल झड़ते हैं। उसकी शादी एक गंवार ज़ाहिल से

हुई, जो इतना बदसूरत था कि उससे बात करने को भी जी न चाहता था। आखिर लड़की इसी ग़म में कुढ़-कुढ़ कर मर गयी।

इक्यावन

कई दिन तक तो जहाज़ ख़ैरियत से चला गया, लेकिन पेरिस के क़रीब पहुंचकर जहाज़ के कप्तान ने सबको इत्तिला दी कि एक घंटे में बड़ी सख़्त आंधी आने वाली है। यह ख़बर सुनते ही सबके होश-हवाल ग़ायब हो गये। अक़्ल ने हवा बतलायी, आंखों में अंधेरी छायी, मौत का नक़्शा आंखों के सामने फिरने लगा। तुर्रा यह कि आसमान फ़क़ीरों के दिल की तरह साफ़ था, चांदनी खूब निखरी हुई, किसी को सानगुमान भी नहीं हो सकता था कि तूफ़ान आयेगा; मगर बैरोमीटर से तूफ़ान की आमद साफ़ ज़ाहिर थी। लोगों के बदन के रोंगटे खड़े हो गये, जान के लाले पड़ गये; या खुदा, जायें तो कहां जायें और इस तूफ़ान से नजात क्योंकर पायें ? कप्तान के भी हाथ-पांव फूल गये और उसके नायब भी सिट्टी-पिट्टी भूल गये। सीढ़ियों से तख़्ते पर आते थे और घबराकर फिर ऊपर चढ़ जाते थे। कप्तान लाख-लाख समझाता था, मगर किसी को उसकी बात का यक़ीन न आता था—

किसी तरह से समझता नहीं दिले नाशाद:;
वही है रोना, वही चीखना, वही फ़रियाद।

इतने में हवा ने वह ज़ोर बांधा कि लोग त्राहि-त्राहि करने लगे। कप्तान ने एक पाल तो रहने दिया, और जहाज़ को खुदा की राह पर छोड़ दिया। लहरों की यह कैफ़ियत कि आसमान से बातें करती थीं। जहाज़ झोंके खाकर गेंद की तरह इधर से उधर उछलता था। सब-के-सब ज़िंदगी से हाथ धो बैठे, अपनी जानों को रो बैठे। बच्चे सहमकर अपनी मांओं से चिपटे जाते थे। कोई औरत मुंह ढंककर रोती थी कि उम्र भर की कमाई इस समुद्र में गंवायी। कोई अपने प्यारे बच्चे को छाती से लगाकर कहती—बेटा, अब हम रुख़सत होते हैं। पर वह नादान मुस्कराता था और इस भोलेपन से मां के दिल पर बिजलियां गिराता था। किसी को मारे ख़ौफ़ के चुप लग गयी थी, किसी के हाथ-पांवों में कंपकंपी थी। कोई समुद्र में कूद पड़ने का इरादा करके रह जाता था, कोई बैठा देवताओं को मनाता था। क्या बूढ़े क्या जवान, सबकी अक़्ल गुम थी। वेनेशिया के चेहरे का रंग काफ़ूर हो गया। हंसोड़ के दिल से हंसी का ख़याल कोसों दूर हो गया। मियां आज़ाद का चेहरा ज़र्द, अपिल्टन के हाथ-पांव सर्द। मियां आज़ाद सोचने लगे, या खुदा, यह किस मुसीबत से दो-चार किया, माशूक़ के एवज़ को गले का हार किया! जी लगाने की खूब सज़ा पायी, इश्क़ की धुन में जान भी गंवायी। हमारी हड्डियां तक गल जायेंगी, पर हुस्नआरा हमारी ख़बर भी न पायेंगी। सिपहआरा बार-बार फ़ॉल देखेंगी कि आज़ाद कब मैदान से सुर्ख़रू होकर आयेंगे और हम कब मसजिद में घी का चिराग़ जलायेंगे; मगर आज़ाद की किश्ती ग़ोते खाती है और ज़रा देर में तह की ख़बर लाती है।

जहाज़ में तो यह कुहराम मचा था, मगर ख़ोजी लंबी ताने सो ही रहे थे। इस नींद पर खुदा की मार, इस पीनक पर शैतान की फटकार! आज़ाद ने जगाया कि ख्वाजा साहब, उठिए, तूफ़ान आया है। हज़रत ने लेटे ही लेटे भुनभुनाकर फ़रमाया कि चुप गीदी, हमने ख़्वाब में बहुरूपिया पकड़ पाया है। तब तो आज़ाद झल्लाये और कसकर एक लात लगायी। ख़ोजी कुलबुलाकर उठ बैठे और समुद्र की भयानक सूरत देखी, तो

कांप उठे।

कप्तान खूब समझता था कि हालत हर घड़ी नाज़ुक होती जाती है; लेकिन पुराना आदमी था, कलेजा मजबूत किये हुए था। इससे लोगों को तसल्ली होती थी कि शायद जान बच निकले। सामने पेरिस का जजीरा नज़र आता था; मगर वहां तक पहुंचना मुहाल था। सबके सब दुआ कर रहे थे कि जहाज़ किसी तरह इस टापू तक पहुंच जाय। मरने की तैयारियां हो रही थीं। इतने में आजाद ने क्या देखा कि अपिल्टन वेनेशिया का हाथ पकड़कर तख्ते पर खड़े रो रहे हैं। आजाद को देखते ही वेनेशिया ने कहा —मिस्टर आजाद, रुखसत ! हमेशा के लिए रुखसत !

आजाद—रुखसत !

हंसोड़—है-है ! लो, अब भंवर में जहाज आ गया।

यह सुनकर औरतों ने वह फ़रियाद मचायी कि लोगों के कलेजे दहल गये।

अपिल्टन—बस, इतनी ही दुनिया थी !

आज़ाद—हां, इतनी ही दुनिया थी !

ख़ोजी—भई आज़ाद, खुदा गवाह है, मैं इस वक्त अफ़ीम के नशे में नहीं। अफ़सोस, तुम्हारी जान जाती है, हुस्नआरा समझेंगी कि आजाद ने धोखा दिया। हाय आज़ाद, तेरी जवानी मुफ्त गयी।

एकाएक जहाज़ तीन बार घूमा और हवा के झोंके से कई ग़ज के फ़ासले पर जा पहुंचा। अब लाइफ बोट के सिवा और कोई तदबीर न थी। जहाज डूबने ही को था, दस फुट से ज्यादा पानी उसमें समा गया था। लाइफ-बोट समुद्र मे उतारे गये और आज़ाद लड़कों और औरतों को उठा-उठाकर लाइफ-बोट में बैठाने लगे। उनकी अपनी जान खतरे में थी, मगर इसकी उन्हें परवाह न थी। जब वह वेनेशिया के पास पहुंचे, तो उसने इनसे हाथ मिलाया और अपिल्टन और वह, दोनों लाइफ-बोट में कूद पड़े। आजाद की दिलेरी पर लोग हैरत से दांतो तले उंगली दबाते थे। लोगों को यक़ीन हो गया था कि यह कोई फ़रिश्ता है, जो बेगुनाहों की जान बचाने के लिए आया है।

टापू के बाशिंदे किनारे पर खड़े रोशनी कर रहे थे कि शोले उठें और जहाज के लोग समझ जायें कि जमीन क़रीब है। सैकड़ों आदमी गुल मचाते थे, तालियां बजाते थे। कुछ लोग रो रहे थे। मगर कुछ ऐसे भी थे, जो दिल में खिले जाते थे कि अब पौ-बारह है।

एक—बस, अब जहाज डूबा। तड़के ही से लैस होकर आ डटूंगा।

दूसरा—हमें एक बार जवाहिरात का एक संदूक मिल गया।

तीसरा—अजी हमने इसी तरह बहुत-कुछ पैदा किया।

चौथा—अजी, क्या बकते हो ? कुछ तो खुदा से डरो। वे सब तो मुसीबत में हैं, और तुम लोगों को लूट की धुन सवार है। शर्म हो, तो चुल्लू-भर पानी में डूब मरो।

मियां ख़ोजी बार-बार हिम्मत बांधकर लाइफ-बोट की तरफ़ जाते और डरकर लौट आते थे। आखिर आजाद ने उन्हें भी घसीटकर लाइफ-बोट में पहुंचाया। वहां जाते ही उन्होंने गुल मचाया कि अफ़ीम की डिबिया तो वहीं रह गयी ! मियां जरी कोई लपकके हमारी डिबिया ले आये। आजाद ने कहा—मियां तुम भी कितने पागल हो ? यहां जानों के लाले पड़े हैं, तुम्हें अपनी डिबिया ही की फ़िक्र है।

लाइफ-बोट कुल तीन थे उनमें मुश्किल से पचास-साठ आदमी बैठ सकते थे। लेकिन हर शख्स चाहता था कि मैं भी लाइफ-बोट में पहुंच जाऊं। कप्तान ने यह हालत देखी, तो ज़ंजीरें खोल दी। किश्तियां बह निकलीं। अब बाक़ी आदमियों की जो हालत हुई, वह बयान में नहीं आ सकती। अगर कोई फ़ोटोग्राफ़र इन बदनसीबों की तसवीर

उतारता, तो बड़े से बड़े संगदिल भी उसे देखकर सिर धुनते। मौत चिमटी जाती है, और मौत के पंजों में फंसी हुई जान फड़फड़ा रही है। मगर जान बड़ी प्यारी चीज़ है। लोग खूब जानते थे कि जहाज़ के डूबने में देर नहीं, लाइफ-बोट भी दूर निकल गये। मगर फिर भी यह उम्मीद है, शायद किसी तरह बच जाय। दो बदनसीब बहनें यों बातें कर रही थीं—

बड़ी बहन—कूद पड़ो पानी में। शायद बच जायें।

छोटी बहन—लहरें कहीं न कहीं पहुंचा ही देंगी।

बड़ी—अम्मां सुनेंगी तो क्या करेंगी ?

छोटी—मैं तो कूदती हूं।

बड़ी—क्यों जान देती है ?

एकऔरत ने अपने प्यारे बच्चे को समुद्र में फेंक दिया और कहा—यह लड़का तेरे सुपुर्द करती हूं।

यह कहकर खुद भी गिर पड़ी।

अब सुनिए; जिस लाइफ-बोट पर वेनेशिया और अपिल्टन थे, वह हवा के झोंके से पेरिम से दूर हट गया। वेनेशिया ने कहा—अब कोई उम्मीद नहीं।

अपिल्टन—ख़ुदा पर भरोसा रखो।

वेनेशिया—या ख़ुदा, हमें बचा ले। हम बेगुनाह हैं।

अपिल्टन—सब्र, सब्र !

वेनिशिया—लो, आज़ाद की किश्ती भी इधर ही आने लगी। अब कोई न बचेगा।

दोनों किश्तियां थोड़े ही फ़ासले पर जा रही थीं, इतने में एक लहर ने अपिल्टन की किश्ती को ऐसा झोंका दिया कि वह नीचे-ऊपर होने लगी और तीन आदमी समुद्र में गिर पड़े। अपिल्टन भी उनमें से एक थे। उनके गिरते ही वेनेशिया ने एक चीख मारी और बेहोश हो गयी। आज़ाद ने यह हाल देखा, तो फ़ौरन बोट पर से कूद पड़े और जान हथेली पर लिये हुए, लहरों को चीरते, अपिल्टन की मदद को चले। इधर अपिल्टन का कुत्ता भी पानी में कूदा और उनके सिर के बाल दांतों से पकड़े ऊपर लाया। मियां आज़ाद भी तैरते हुए जा पहुंचे और अपिल्टन को पकड़ लिया। उसी वक़्त किश्ती भी आ पहुंची और लोगों ने मदद देकर अपिल्टन को खींच लिया। मगर किश्ती इतनी तेज़ी से निकल गयी कि आज़ाद उस पर न आ सके। अब उनके लिएं मौत का सामना था। मगर वह कलेजा मज़बूत किये टापू की तरफ़ तैरते चले जाते थे। टापूवालों ने उन्हें आते देखा, तो और भी हौसला बढ़ाया, और हिम्मत दिलायी। सबके सब दुआ कर रहे थे कि या ख़ुदा, इस जवान को बचा। ज्यों ही आज़ाद टापू के क़रीब पहुंचे, रस्सियां फेंकी गयीं और आज़ाद ऊपर आये। सबने उनकी पीठ ठोंकी। वेनेशिया ने मियां आज़ाद से कहा—तुम न होते तो, मैं कहीं की न रहती। तुम्हारा एहसान कभी न भूलूंगी।

अपिल्टन—भाई, देखना, भूल न जाना। टर्की से ख़त लिखते रहना।

आज़ाद—ज़रूर, ज़रूर !

वेनेशिया—आज़ाद, जैसे बहन को अपने भाई से मुहब्बत होती है, वैसे ही मुझको तुमसे मुहब्बत है।

आज़ाद—मैं जहां रहूंगा, आप लोगों से ज़रूर मिलूंगा।

खोजी—यार, हमारी अफ़ीम की डिबिया जहाज़ ही में रह गयी। देखें, किस ख़ुशनसीब के हाथ लगती है।

सब लोग यह जुमला सुनकर खिलखिलाकर हंस पड़े।

बावन

माल्टा मे आर्मीनिया, अरब, यूनान, स्पेन, फ्रांस सभी देशों के लोग है। मगर दो दिन से इस जजीरे मे एक बड़े गरांडील जवान का गुजर हुआ हे। क़द कोई-आध ग़ज का हाथ-पांव दो-दो माशे के; हवा जरा तेज चले, तो उड़ जायं। मगर बात-बात पर तीखे हुए जाते है। किसी ने ज़रा तिरछी नजर से देखा, और आपने क़रौली सीधी की। न दीन की फ़िक्र थी, न दुनिया की, बस, अफ़ीम हो, और चाहे कुछ हो या न हो।

आजाद ने कहा—भई, तुम्हारा यह फ़िक़रा उम्र भर न भूलेगा कि देखे हमारी अफ़ीम की डिबिया किस ख़ुशनसीब के हाथ लगती हे।

खोजी—फिर, उसमें हसी की क्या बात है? हमारी तो जान पर बन आयी और आपको दिल्लगी सूझती है। जहाज के डूबने का किस मर्दक को रंज हो। मगर अफीम के डूबने का अलबत्ता रंज है। दो दिन से जम्हाइयो पर जम्हाइयां आती है पैसे लाओ, तो देखू, शायद कही मिल जाय।

मियां आजाद ने दो पैसे दिये और आप एक दुकान पर पहुंचकर बोले—अफ़ीम लाना जी?

दुकानदार ने हाथ से कहा कि हमने समझा नही।

खोजी—अजब जांगलू है! अबे, हम अफ़ीम मांगते है।

दुकानदार हंसने लगा।

खोजी—क्या फटी जूती की तरह दांत निकालता है! लाता है अफीम कि निकालू क़रौली!

इतने में मियां आजाद पहुचे और पूछा—यहां क्या ख़रीदारी होती है?

खोजी—अजी, यहां तो सभी जांगलू ही जांगलू रहते है। घटे भर से अफीम मांग रहा हू, सुनता ही नही।

आजाद—फिर कहने से तो आप बुरा मानते है। भला यह बारूद बेचता है या अफीम? बिल्कुल गौखे ही रहे!

खोजी—अगर अफ़ीम का यही हाल रहा, तो तुर्की तक पहुंचना मुहाल है।

आजाद—भई, हमारा कहा मानो। हमें टर्की जाने दो और तुम घर जाओ।

खोजी—वाह वाह, अब मै साथ छोड़नेवाला नही। और मैं चला जाऊंगा, तो तुम लड़ोगे किसके बिरते पर?

आजाद—बेशक, आप ही के बिरते पर तो मै लड़ने जाता हूं न?

खोजी—कौन? क़सम खाके कहता हूं, जब सुनिएगा; यही सुनिएगा कि ख्वाजा साहब ने तोप मे कील लगा दी।

आजाद—जी, इसमे क्या शक है।

खोजी—शक-वक के भरोसे न रहिएगा! अकेली लकडी चूल्हे मे भी नही जलती। जिस वक़्त ख्वाजा साहब अरबी घोड़े पर सवार होगे और अकड़कर बैठेंगे, उस वक़्त अच्छे-अच्छे जंडैल-कंडैल झुक-झुककर सलाम करेंगे।

इतने मे एक हब्शी सामने से आ निकला। करारा जवान, मछलियां भरी हुई, सीना चौड़ा। खोजी ने जो देखा कि एक आदमी अकड़ता हुआ सामने से आ रहा है, तो आप भी ऐठने लगे। हब्शी ने क़रीब आकर कंधे से जरा धक्का दिया, तो मियां खोजी ने बीस लुढकनियां खायी। मगर बेहया तो थे ही, झाड़-पोंछकर उठ खड़े हुए, और हब्शी को ललकारकर कहा—अबे ओ गीदी, न हुई क़रौली इस वक़्त। जरा मेरा पैर फिसल गया, नही तो वह पटकनी देता कि अंजर-पंजर ढीले हो जाते!

आज़ाद—तुम क्या, तुम्हारा गांव भर तो इसका मुक़ाबला कर ले !

ख़ोजी—अच्छा, लड़ाकर देख लो न ! छाती पर न चढ़ बैठूं, तो ख्वाजा नाम नहीं। कहो, ललकारूं जाकर।

आज़ाद—बस, जाने दीजिए। क्यों हाथ-पांव के दुश्मन हुए हो !

दूसरे दिन जहाज़ वहां से रवाना हुआ। आज़ाद को बार-बार हुस्नआरा की याद आती थी। सोचते थे, कहीं लड़ाई में मारा गया, तो उससे मुलाक़ात भी न होगी। ख़ोजी से बोले—क्यों जी, हम अगर मर गये, तो तुम हुस्नआरा को हमारे मरने की ख़बर दोगे, या नहीं ?

ख़ोजी—मरना क्या हंसी-टट्ठा है ? मरते हैं हम जैसे दुबले-पतले बूढ़े अफ़ीमची कि तुम ऐसे हट्टे-कट्टे जवान ?

आज़ाद—शायद हमीं तुमसे पहले मर जायं ?

ख़ोजी—हम तुमको अपने से पहले मरने ही न देंगे। उधर तुम बीमार हुए, और हमने इधर ज़हर खाया।

आज़ाद—अच्छा, जो हम डूब गये ?

ख़ोजी—सुनो मियां, डूबनेवाले दूसरे ही होते हैं। वह समुंदर में डूबने नहीं आया करते, उनके लिए एक चुल्लू काफ़ी होता है।

आज़ाद—ज़रा देर के लिए मान लो कि हम मर गये तो इत्तिला दोगे न ?

ख़ोजी—पहले तो हम तुमसे पहले ही डूब जायेंगे, और अगर बदनसीबी से बच गये, तो जाकर कहेंगे—आज़ाद ने शादी कर ली, और गुलछर्रे उड़ा रहे हैं।

आज़ाद—तब तो आप दोस्ती का हक़ ख़ूब अदा करेंगे !

ख़ोजी—इसमें हिकमत है।

आज़ाद—क्या है, हम भी सुनें ?

ख़ोजी—इतना भी नहीं समझते ! अरे मियां, तुम्हारे मरने की ख़बर पाकर हुस्नआरा की जान पर बन आयेगी, वह सिर पटक-पटककर दम तोड़ देगी; और जो यह सुनेगी कि आज़ाद ने दूसरी शादी कर ली, तो उसे तुम्हारे नाम से नफ़रत हो जायेगी, और रंज तो पास फटकने भी न पायेगा। क्यों, है न अच्छी तरक़ीब ?

आज़ाद—हां, है तो अच्छी !

ख़ोजी—देखा, बूढ़े आदमी डिबिया में बंद कर रखने के क़ाबिल होते हैं। तुम लाख पढ़ जाओ, फिर लौंडे ही हो हमारे सामने। मगर तुम्हारी आजकल यह क्या हालत है ? कोई किताब पढ़कर दिल क्यों नहीं बहलाते ?

आज़ाद—जी उचाट हो रहा है। किसी काम में जी नहीं लगता।

ख़ोजी—तो ख़ूब सैर करो। यार, पहले तो हमें उम्मीद ही नहीं कि हिंदोस्तान पहुंचें, लेकिन ज़िंदा बचे, और हिंदोस्तान की सूरत देखी, तो ज़मीन पर क़दम न रखेंगे। लोगों से कहेंगे, तुम लोग क्या जानो, माल्टा कहां है ? ख़ूब ग़प्पें उड़ायेंगे।

यों बातें करते हुए दोनों आदमी एक कोठे में गये। वहां क़हवे की दुकान थी आज़ाद ने एक आदमी के हाथ अफ़ीम मंगायी। ख़ोजी ने अफ़ीम देखी तो खिल गये। वहीं घोली और चुस्की लगायी। वाह आज़ाद, क्यों न हो, यह एहसान उम्र-भर न भूलूंगा। इस वक़्त हम भी अपने वक़्त के बादशाह हैं—

फ़िक्र दुनिया की नहीं रहती है मैख्वारों में;
ग़म ग़लत हो गया जब बैठ गये यारों में।

उस दुकान में बहुत से अख़बार मेज़ पर पड़े थे। आज़ाद एक किताब देखने लगे।

मालिक-दुकान ने देखा, तो पूछा—कहां का सफ़र है ?

आजाद—टर्की जाने का इरादा है।

मालिक—वहां हमारी भी एक कोठी है। आप वहीं ठहरिएगा।

आज़ाद—आप एक खत लिख दें, तो अच्छा हो।

मालिक—खुशी से। मगर आजकल तो वहां जंग छिड़ी है !

आज़ाद—अच्छा, छिड़ गयी ?

मालिक—हां, छिड़ गयी। लड़ाई सख़्त होगी। लोहे से लोहा लड़ेगा।

जब आजाद यहां से चलने लगे, तो मालिक ने अपने लड़के के नाम ख़त लिखकर आजाद को दिया। दोनों आदमी वहां से आकर जहाज पर बैठे।

तिरपन

रात के ग्यारह बजे थे, चारो बहनें चांदनी का लुत्फ़ उठा रही थी। एकाएक मामा ने कहा—ऐ हुजूर, जरी चुप तो रहिए। यह शोर-गुल कैसा हो रहा है ? आग लगी है कहीं।

हुस्नआरा—अरे, वह शोले निकल रहे है। यह तो बिलकुल क़रीब है।

नवाब साहब—कहां हो सबकी सब ! जरूरी सामान बांधकर अलग करो। पड़ोस मे शाहजादे के यहां आग लग गयी। जेवर और जवाहिरात अलग कर लो। असबाब और कपड़े को जहन्नुम में डालो।

बहारबेगम—हाय, अब क्या होगा !

हुस्नआरा—हाय-हाय, शोले आसमान की ख़बर लाने लगे।

नीचे उतरकर सबों ने बड़ी फुरती से सब चीजें बाहर निकाली और फिर कोठे पर गयी, तो क्या देखती है कि हुमायूं फ़र की कोठी मे आग लगी है और हर तरफ़ से शोले उठ रहे है। ये सब इतनी दूर पर खड़ी थी, मगर ऐसा मालूम होता था कि चारों तरफ़ भट्ठी ही भट्ठी है। धन्नियां जो चटकी, तो बस, यही मालूम हुआ कि बादल गरज रहा है।

बहारबेगम—हाय, लाखों पर पानी पड़ गया।

सिपहआरा—बहन, इधर तो आओ। देखो, हजारों आदमी जमा है। जरा देखो, वह कौन है ? है-है ! वह कौन है ?

बहारबेगम—कहां कौन है ?

सिपहआरा—यह महताबी पर कौन है ?

हुस्नआरा—अरे, यह तो हुमायूं फ़र है। ग़जब हो गया। अब यह क्योंकर बचेंगे ?

सिपहआरा फूट-फूटकर रोने लगी। फिर बोली—बा जी, अब होगा क्या ? चारों तरफ़ आग है। बचेगा क्योंकर बेचारा !

बहारबेगम—इसकी जवानी पर तरस आता है।

हुस्नआरा मुह ढांपकर खूब रोयी। सिपहआरा का यह हाल था कि आंसुओं का तार न टूटता था। हुमायूं फ़र महताबी पर इस ताक मे सोये थे कि शायद इन हसीनों में से किसी जलवा नजर आये। लेकिन ठंडी हवा चली, तो आंख लग गयी। जब आग लगी और चारों तरफ़ गुल मचा, तो जागे; लेकिन कब ? जब महताबी के नीचे के हिस्से मे चारों तरफ़ आग लग चुकी थी। ख़िदमतगारों के हाथ-पांव फूल गये। यही सोचते थे, किसी तरह से इस बेचारे की जान बचाये। असबाब बटोरने की फ़िक्र

किसे ! कोई शाहज़ादे की जवानी को याद करके रोता था, कोई सिर धुनकर कहता था—ग़रीब बूढ़ी मां के दिल पर क्या गुज़रेगी ? शहर से गोल के गोल आदमी आकर जमा हो गये। सिपाही और चौकीदार, शहर के रईस और अफ़सर उमड़े चले आते थे। दरिया से हज़ारों घड़े पानी लाया जाता था। भिश्ती और मज़दूर आग बुझाने में मसरूफ़ थे। मगर हवा इस तेज़ी पर थी कि पानी तेल का काम देता था। शाहज़ादे इस नाउम्मीदी की हालत में सोच रहे थे कि जिन लोगों के दीदार के लिए मैंने अपनी जान गंवायी, उन्हें मालूम हो जाय, तो मैं समझूं कि जी उठा। इतने में इधर नज़र पड़ी, तो देखा कि सबकी सब औरतें कोठे पर खड़ी हाय-हाय कर रही हैं। सोचे, खैर शुक्र है ! जिसके लिए जान दी, उसको अपना मातम करते तो देख लिया। एकाएक उन्हें अपना छोटा भाई याद आया। उसकी तरफ़ मुखातिब होकर कहा—भाई, घर-बार तुम्हारे सुपुर्द है। मां को तसल्ली देना कि हुमायूं फ़र न रहा, तो मैं तो हूं। यह फ़िक़रा सुनकर सब लोग रोने लगे। इतने में आग के शोले और क़रीब आये और हवा ने और ज़ोर बांधा, तो शाहज़ादा ने सिपहआरा की तरफ़ नज़र करके तीन बार सलाम किया। चारों बहनें दीवारों से सिर टकराने लगीं कि हाय, यह क्या सितम हुआ। शाहज़ादे ने यह कैफ़ियत देखी, तो इशारे से मना किया। लेकिन दोनों बहनों की आंखों में इतने आंसू भरे हुए थे कि उन्हें कुछ दिखायी न दिया।

सिपहआरा खिड़की के पास जाकर फिर सिर पीटने लगी। हुमायूं फ़र उसे देखकर अपना सदमा भूल गये और हाथ बांधकर दूर ही से कहा—अगर यह करोगी, तो हम अपनी जान दे देंगे ! गोया जान बचने की उम्मीद ही तो थी ! चारों तरफ़ आग के शोले उठ रहे थे, धुआं बादल की तरह छाया हुआ था, भागने की कोई तदबीर नहीं। हवा कहती है कि मैं आज ही तेजी दिखलाऊंगी, और आप कहते हैं कि मैं अपनी जान दे दूंगा।

इतने में जब आग बहुत ही क़रीब आ गयी, तो हुमायूं फ़र की हिम्मत छूट गयी। बेचैनी की हालत में सारी छत पर घूमने लगे। आखिर यहां तक नौबत आयी कि जो लोग क़रीब खड़े थे, वह लपटों के मारे और दूर भागने लगे। आग हुमायूं फ़र से सिर्फ़ एक गज़ के फ़ासले पर थी। आंच से फुंके जाते थे। जब ज़िन्दगी की कोई उम्मीद न रही, तो आखिरी बार सिपहआरा की तरफ़ टोपी उतारकर सलाम किया और बदन को तौलकर धम से कूद पड़े।

उधर सिपहआरा ने भी एक चीख मारी और खिड़की से नीचे कूदी।

शाहज़ादा साहब नीचे घास पर गिरे। यहां ज़मीन बिल्कुल नर्म और गीली थी। गिरते ही बेहोश हो गये। लोग चारों तरफ़ से दौड़ पड़े और हाथों-हाथ ज़मीन से उठा लिया। लुत्फ़ की बात यह कि सिपहआरा को भी ज़रा चोट नहीं लगी थी। उसने उठते ही कहा कि लोगों, हुमायूं शहज़ादा बचा हो, तो हमें दिखा दो। नहीं तो उसी की क़ब्र में हमको भी ज़िंदा दफ़न कर देना।

इतने में नवाब साहब ने सिपहआरा को अलग ले जाकर कहा—तुम घबराओ नहीं। शाहज़ादा साहब खैरियत से हैं।

सिपहआरा—हाय ! दूल्हा भाई, मैं क्योंकर मानूं।

नवाब साहब—नहीं बहन, आओ, हम उन्हें अभी दिखाये देते हैं।

सिपहआरा—फिर दिखाओ मेरे दूल्हा भाई !

नवाब साहब—ज़रा भीड़ छंट जाय, तो दिखाऊं। तब तक घर चली चलो।

सिपहआरा—फिर दिखाओगे ? हमारे सिर पर हाथ रखकर कहो।

नवाब साहब—इस सिर की क़सम ज़रूर दिखायेंगे।

सिपहआरा को अन्दर पहुंचाकर नवाब साहब हुमायूं फ़र के यहां पहुंचे, तो देखा कि टांग मे कुछ चोट आयी है। डॉक्टर पट्टी बांध रहा है और बहुत से आदमी उन्हे घेरे खड़े है। लोग इस बात पर बहस कर रहे है कि आग लगी क्योकर ? रात भर शाहज़ादे की हालत बहुत खराब रही। दर्द के मारे तड़प-तड़प उठते। सुबह को चारपाई से उठकर बैठे ही थे कि चिट्ठीरसां ने आकर एक खत दिया। शाहजादे साहब ने इस खत को नवाब साहब की तरफ़ बढ़ा दिया। उन्होने यह मजमून पढ सुनाया।

अजी हज़रत, तसलीम।

सच कहना, कैसा बदला लिया ! लाख-लाख समझाया, मगर तुमने न माना। आखिर, तुम खुद ही मुसीबत में पड़े। तुमने हमारा दिल जलाया है, तो हम तुम्हारा घर भी न जलाये ? जिस वक़्त यह खत तुम्हारे पास पहुंचेगा, मकान जल-भुनकर खाक हो गया होगा।

शहसवार।

शाहजादे साहब ने यह मज़मून सुना, तो त्योरियो पर बल पड़ गये और चेहरा मारे ग़ुस्से के सुर्ख़ पड़ गया।

चौवन

रात का वक़्त था, एक सवार हथियार साजे, रातों-रात घोड़े को कड़कड़ाता हुआ वगटुट भागा जाता था। दिल मे चोर था कि कही पकड न जाऊं ! जेलखाना झेलू। सोच रहा था, शाहज़ादे के घर मे आग लगायी हे, खैरियत नही। पुलिस की दौड़ आती ही होगी। रात भर भागता ही गया। आख़िर सुबह को एक छोटा-सा गांव नजर आया। वदन थककर चूर हो गया था। अभी घोड़े से उतरा ही था कि बस्ती की तरफ़ से गुल की आवाज आयी। वहां पहुंचा, तो क्या देखता है कि गांव भर के वाशिंदे जमा है, और दो गंवार आपस में लड़ रहे है। अभी यह वहां पहुंचा ही था कि एक ने दूसरे के सिर पर ऐसा लट्ठ मारा कि वह जमीन पर आ रहा। लोगो ने लट्ठ मारने वाले को गिरफ़्तार कर लिया और थाने पर लाये। शहसवार ने दरियाफ़्त किया, तो मालूम हुआ कि दोनो की एक जोगिन से आशनाई थी।

सवार—यह जोगिन कौन है भई ?

एक गंवार—इतनी उमिर आयी, अस जोगिन कतहू न दीख।

इतने मे थानेदार आ गये। ज़ख़्मी को चारपाई पर डालकर अस्पताल भिजवाया और खूनी को गवाहों के साथ थाने ले गये। मियां सवार भी उनके साथ हो लिये, थाने में तहकीक़ात होने लगी।

थानेदार—यह किस वात पर झगड़ा हुआ जी ?

चौकीदार—हुजूर, वह सास जौन जोगिन बनी है।

थानेदार—हम तुमसे इतना पूछता है कि किस वात पर लड़ाई हुआ ?

चौकीदार—जैसे इहौ वहां जात रहै और वहौ वहां जात रहे। तौन आपस में लाग-डांट है गयी। ऐ वस एक दिन मार-धार है गयी वस, लाठी चलै लाग। मूर से रकत वहुत वहा।

मौलवी—सूवेदार साहव, आज दोनो ने खूव कुज्जियां चढ़ायी थी।

थानेदार—आप कौन है ?

मौलवी—हुजूर, गांव का क़ाजी हूं।

थानेदार—यही मकान है आपका ?

मौलवी—जी हां, पुराना रईस हूं।

शहसवार—वेशक !

थानेदार—देहात वाले भी अजीव जांगलू होते हैं। एक वार एक मुशायरे में जाने का इत्तफ़ाक़ हुआ। वड़े-वड़े गंवार के लट्ठ जमा थे। एक साहव ने शेर पढ़ा, तो आखिर में फ़रमाते हैं—वीमार हों। लोग हैरत में थे कि इस हौं के क्या माने ? फिर हज़रत ने फ़रमाया—सरशार हौं। मारे हंसी के लोट गया। हां, मौलवी साहव, फिर क्या हुआ ?

मौलवी—वस, जनाव, फिर दोनों में कुश्ती हुई। कभी यह ऊपर, वह नीचे, कभी वह नीचे, यह ऊपर। तव तो मैं भागा कि चौकीदार से कहूं। दौड़ता गया।

थानेदार—जनाव, इस महावरे को याद रखिएगा।

मौलवी—वस, मैं धौड़के पूरन चौकीदार के मकान पर गया। उसकी जोड़ू वोली—

सवार—कौन वोली ?

थानेदार—(हंसकर) सुना नहीं आपने ? जोड़ू !

मौलवी—हुज़ूर, हुक्काम हैं, आपको हंसना न चाहिए।

थानेदार—जी हां, मैं हुक्काम हूं; मगर आप भी तो उमरां हैं ! हां, फ़रमाओ जी।

मौलवी—देखिए, फ़रमाता हूं।

सवार—अव हंसी ज़ब्त नहीं हो सकती।

मौलवी—वस जनाव, वहां से मैं इस चौकीदार को लाया। वहां आकर देखा, तो खून के दरिया वह रहे थे।

इतने में खवर आयी कि ज़ख्मी दुनिया से रवाना हो गया। थानेदार साहव मारे खुशी के फूल गये। मामूली मार-पीट 'खून' हो गयी। खूनी का चालान किया और जज ने उसे फांसी की सजा दे दी।

जिस वक़्त खूनी को फांसी हो रही थी, मियां सवार भी तमाशा देखने आ पहुंचे। मगर उस वक़्त की हालत देखकर उनके दिल पर ऐसा असर हुआ कि आंखें खुल गयीं। सोचने लगे—दुनिया से नाता तोड़ लें। किसी से हसद और कीना न रखें। अगर कहीं पकड़ गया होता, तो मुझे भी यों ही फांसी मिलती। खुदा ने वहुत वचाया। मगर ज़रा इस जोगिन को देखना चाहिए। यह दिल में ठान कर जोगिन के मकान की तरफ़ चले।

जव लोगों से पूछते हुए उसके मकान पर पहुंचे, तो देखा कि एक खूवसूरत वाग़ है और एक छोटा-सा खुशनुमा वंगला, वहुत साफ़-सुथरा। मकान क्या, परीखाना था। जोगिन के क़रीव जाकर उसको सलाम किया। जोगिन के पोर-पोर पर जोवन था। जवानी फटी पड़ती थी। सिर से पैर तक संदली कपड़े पहने हुए थी। शहसवार हज़ार जान से लोट-पोट हो गये। जोगिन इनकी चितवनों से ताड़ गयी कि हज़रत का दिल आया है।

सवार—वड़ी दूर से आपका नाम सुनकर आया हूं।

जोगिन—अक्सर लोग आया करते हैं। कोई आये, तो खुशी नहीं, न आये तो रंज नहीं।

सवार—मैं चाहता हूं कि उम्र भर आपके क़दमों के तले पड़ा रहूं।

जोगिन—आपका मकान कहां है ?

सवार—

घर बार से क्या फ़क़ीर को काम ?
क्या लीजिए छोड़े गांव का नाम।

जोगिन—यहां कैसे आये ?

सवार—रमते जोगी तो हैं ही, इधर भी आ निकले।

जोगिन—आखिर इतना तो वतलाओ कि हो कौन ?

सवार—एक बदनसीब आदमी।

जोगिन—क्यों ?

सवार—अपने कर्मों का फल।

जोगिन—सच है !

सवार—मुझे इश्क़ ही ने तो गारद कर दिया। एक वेगम की दो लड़कियां है। उनसे आंखें लड़ गयी। जीते जी मर मिटा।

जोगिन—शादी नही हुई ?

सवार—एक दुश्मन पैदा हो गया। आजाद नाम था। वहुत ही खूबसूरत सजीला जवान।

मियां आजाद का नाम सुनते ही जोगिन के चेहरे का रंग उड़ गया। आंखों से आंसू गिरने लगे। शहसवार दंग थे कि वैठे-विठाए इसे क्या हो गया।

सवार—जरा दिल को ढाढस दो, आखिर तुम्हें किस बात का रंज है ?

जोगिन—

ख़ौफ़ से लेते नही नाम कि सुन ले न कोई;
दिल ही दिल में तुम्हें हम याद किया करते है।

हमारी दास्तान ग़म से भरी हुई है ! सुनकर क्या करोगे। हां, तुम्हें एक सलाह देती हूं। अगर चाहते हो कि दिल की मुराद पूरी हो तो दिल साफ़ रखो।

सवार—तुम्हारे सिवा अगर किसी और पर नजर पड़े; तो आंखें फूट जाएं !

जोगिन—यही दिल की सफ़ाई है ?

सवार—शीशी से गुलाव निकाल लो। मगर गुलाव की वू वाक़ी रहेगी। दुनिया को छोड़ तो बैठें, पर इश्क़ दिल से न जायेगा। अब हम चाहते है कि तुम्हारे ही साथ ज़िंदगी वसर करें। आजाद उसके साथ रहें, हम तुम्हारे साथ।

जोगिन—भला तुम आज़ाद को पाओ, तो क्या करो ?

सवार—कच्चा ही चवा जाऊं ?

जोगिन—तो फिर हमसे न बनेगी ? अगर तुम्हारा दिल साफ़ नही, तो अपनी राह लगो।

सवार—अच्छा, अब आज से आजाद का नाम ही न लेंगे।

पचपन

आजाद का जहाज जब इस्कंदरिया पहुंचा; तो वह खोजी के साथ एक होटल मे ठहरे। अव खाना खाने का वक़्त आया, तो खोजी बोले—लाहौल; यहां खाने वाले की ऐसी तैसी चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, मगर हम जरा-सी तकलीफ़ के लिए अपना मजहब न छोड़ेंगे, आप शौक़ से जायं और मजे से खाएं; हमें माफ़ ही रखिए।

आज़ाद—और अफ़ीम खाना मज़हव के खिलाफ़ नहीं ?

खोजी—कभी नहीं ! और, अगर हो भी तो क्या यह ज़रूरी है कि एक काम मज़हव के खिलाफ़ किया, तो और सब काम मज़हव के खिलाफ़ ही करें ?

आज़ाद—अजी, तो किस गधे ने तुमसे कहा कि यहां खाना मज़हव के खिलाफ़ है ? मेज-कुर्सी देखी और चीख़ उठे कि मज़हव के खिलाफ़ है ? इस ख़ब्त की भी कोई दवा है !

ख़ोजी—अजी, वह ख़ब्त ही सही ! आप रहने दीजिए।

आज़ाद—खाओ या जहन्नुम में जाओ।

ख़ोजी—जहन्नुम में वे जाएंगे, जो यहां खाएंगे। यहां तो सीधे जन्नत में पहुंचेंगे।

आज़ाद—वहां अफ़ीम कहां से आयेगी ?

इतने में दो तुर्की आये और अपनी कुर्सियों पर बैठकर मज़े से खाने लगे। आज़ाद की चढ़ी वनी। पूछा, ख्वाजा साहव, वोल गीदी, अव शरमाया या नहीं ? ख़ोजी ने पहले तो कहा ये मुसलमान नहीं हैं। फिर कहा, शायद हों ऐसे-वैसे ! मगर जव मालूम हुआ कि दोनों ख़ास तुर्की के रहने वाले हैं, तो वोले—आप लोग यहां होटल में खाना खाते हैं ? क्या यह मज़हव के खिलाफ़ नहीं ?

तुर्की—मज़हव के खिलाफ़ क्यों होने लगा ?

आखिर खोजी झेंपे। फिर होटल में खाना खाया। थोड़ी देर के वाद आज़ाद तो एक साहव से मिलने चले और खोजी ने पीनक लेना शुरू किया। जव नींद खुली, तो सोचे कि हम वैठे-वैठे कव तक यहीं मक्खियां मारेंगे। आओ देखें, अगर कोई हिन्दुस्तानी भाई मिल जाय, तो गप्पें उड़ें। इधर-उधर टहलने लगे। आखिरकार एक हिन्दुस्तानी से मुलाक़ात हुई। सलाम-वन्दगी के वाद वातें होने लगीं। ख्वाजा साहव ने पूछा—क्यों साहव, यहां कोई अफ़ीम की दुकान है ? उस आदमी ने इसका कुछ जवाव ही नहीं दिया। खोजी तीखे आदमी। उनको भला यह ताव कहां कि किसी से सवाल करें और वह जवाव न दे ? विगड़ खड़े हुए—न हुई क़रौली खुदा की क़सम ! वरना तमाशा दिखा देता।

हिन्दुस्तानी ने समझा, यह पागल है। अगर वोलूंगा, तो खुदा जाने, काट खाय, या चोट करे। इससे यही अच्छा कि चुप ही रहो। मियां ख़ोजी समझे कि दव गया, और भी अकड़ गये। उसने समझा, अव चोट किया ही चाहता है। ज़रा पीछे हट गया। उसका पीछे हटना था कि मियां ख़ोजी और भी शेर हुए। मगर कुंदे तौल-तौलकर जाते थे। फिर रोव से पूछा—क्यों वे, यहां ठंडा पानी मिल सकता है ? वह ग़रीव झट-पट ठंडा पानी लाया। ख़ोजी ने दो-चार घूंट पानी पिया और अकड़कर वोले—मांग, क्या मांगता है ? उस आदमी ने समझा, यह जरूर दीवाना है ! आपकी हालत तो इतनी ख़राव है, पल्ले टका तो है नहीं और कहते हैं—मांग, क्या मांगता है ? ख़ोजी ने फिर तन कर कहा—मांग कुछ। उस आदमी ने डरते-डरते कहा—यह जो हाथ में है, दे दीजिए।

खोजी का रंग उड़ गया। जान तक मांगता, तो देने में दरेग न करते; मगर चीनिया वेगम तो नहीं दी जाती। उससे पूछा—तुम यहां कव से हो, क्या नाम है ? उसने जवाव दिया—मुझे तहौवरखां कहते हैं !

खोजी—भला, इस होटल में मुसलमान लोग खाते हैं ?

तहौवरखां—वरावर ! क्यों न खाएं ?

होटलवालों ने मिसकोट की कि खोजी को छेड़ना चाहिए। इस होटल में क़ाहिरा का रहने वाला वौना था। लोग सोचे, इस वौने और खोजी से पकड़ हो तो अच्छा। वौना वड़ा शरीर था। लोगों ने उससे कहा—चलो, तुम्हारी कुश्ती वदी गयी है। वह देखो, एक आदमी हिंदोस्तान से आया है। कितना अच्छा जोड़ है। यह सुनकर

बौना मियां खोजी के क़रीब गया और झुककर सलाम किया। खोजी ने जो देखा कि एक आदमी हमसे भी ऊचा मिला, तो अकड़कर आंखो से सलाम का जवाब दिया। बौने ने इधर-उधर देखकर एक दफ़ा मौक़ा जो पाया, तो मिया खोजी की टोपी उतारकर पड़ाक से एक धौल जमायी और टोपी फेंककर भागा। मगर जरा-जरा से पांव, भागकर जाता कहा ? खोजी भी झपटे। आगे-आगे बौना और पीछे-पीछे मियां खोजी। कहते जाते थे—ओ गीदी, न हुई करौली, नही तो इसी दम भौंक देता। आखिर बौना हांपकर खड़ा हो गया। तब तो खोजी ने लपककर हाथ पकड़ा और पूछा—क्यो बे ! इस पर बौने ने मुह चिढाया। खोजी ग़ुस्से मे भरे तो थे ही, आपने भी एक धप जड़ी।

खोजी—और लेगा ?

बौना—(अपनी ज़बान मे) छोड़, नही मार ही डालूंगा।

खोजी—दे मारूं उठाकर ?

बौना—रात आने दो।

खोजी ने झल्लाकर बौने को उठाकर दे मारा, चारों खाने चित्त, और अकड़कर बोले—वो मारा ! और लेगा ! खोजी से ये बातें ?

इतने मे आजाद आ गये। खोजी तने बैठे थे, उम्र भर मे उन्होने आज पहली ही मर्तबा एक आदमी को नीचा दिखाया था ! आजाद को देखते ही बोले—इस वक़्त एक कुश्ती और निकली !

आजाद—कुश्ती कैसी ?

खोजी—कैसी होती है कुश्ती ? कुश्ती और क्या ?

आजाद—मालूम होता हे, पिटे हो।

खोजी—पिटनेवाले की ऐसी-तैसी ! और कहने वाले को क्या कहू ?

आजाद—कुश्ती निकाली !

तहौवरखां—हां हुजूर, यह सच कहते है।

खोजी—लीजिए, अब तो आया यक़ीन !

आजाद—क्या हुआ, क्या ?

तहौवरखां—जी, यहां एक बौना है। उसने इनके एक धौल लगायी।

आजाद—देखा न ! मै तो समझा ही था कि पिटे होंगे।

खोजी—पूरी बात तो सुन लो।

तहौवरखां—बस, धौल खाकर लपके। उसके कई चपते लगायी और उठाकर दे पटका।

खोजी—वह पटखनी बतायी कि याद ही तो करता होगा। दो महीने तक खटिया से न उठ सकेगा।

तहौवरखां—वह देखिए, सामने खड़ा कौन अकड़ रहा है ? तुम तो कहते थे कि दो महीने तक उठ ही न सकेगा।

रात को कोई नौ बजे खोजी ने पानी मांगा। अभी पानी पी ही रहे थे कि कमरे का लैंप गुल हो गया और कमरे मे चटाख-चटाख की आवाज गूजने लगी।

खोजी—अरे, यह तो वही बौना मालूम होता है। पानी इसी ने पिलाया था और चपत भी इसी ने जडी। दिल में कहा—क्या तड़का न होगा ? जिंदा खोदकर गाड़ दू तो सही।

खोजी पानी पीकर लेटे कि दस्त की हाजत हुई। बौने ने पानी मे जमालगोटा मिला दिया था। तिल-तिल पर दस्त आने लगे। मशहूर हो गया कि खोजी को हैजा हुआ। डॉक्टर बुलाया गया। उसने दवा दी और खोजी दस्तो के मारे निढाल होकर

चारपाई पर गिर पड़े। आज़ाद एक रईस से मिलने गये थे। होटल के एक आदमी ने उनको जाकर इत्तला दी। घवराए हुए आये। ख़ोजी ने आज़ाद को देखकर सलाम किया, और आहिस्ता से वोले—रुखसत ! ख़ुदा करे, तुम जल्द यहां से लौटो। यह कहकर तीन वार कलमा पढ़ा।

आज़ाद—कैसी तवियत है ?

ख़ोजी—मर रहा हूं, एक हाफ़िज़ वुलवाओ और उससे कहो, क़ुरान शरीफ़ पढ़े।

आज़ाद—अजी, तुम तो दिन में अच्छे हो जाओगे।

ख़ोजी—जिंदगी और मौत ख़ुदा के हाथ है। मगर भाई, ख़ुदा के वास्ते ज़रा अपनी जान का ख़याल रखना। हम तो अव चलते हैं। अव तक हंसी-ख़ुशी तुम्हारा साथ दिया; मगर अब मजबूरी है। आव-दाने की वात है, हमको यहां की मिट्टी घसीट लायी।

आज़ाद—अजी नहीं, आज के चौथे रोज़ दनदनाओगे। देख लेना। डंड पेलते होंगे।

ख़ोजी—ख़ुदा के हाथ है।

आज़ाद—देखिए, कव मुलाक़ात होती है।

ख़ोजी—इस वूढ़े को कभी-कभी याद करते रहना। एक वात याद रखना, परदेस का वास्ता है, सवसे मिल-जुल कर रहना। जूती-पैज़ार, लड़ाई-झगड़ा किसी से न करना। समझदार हो तो क्या, आख़िर वच्चे ही हो। यार, जुदाई ऐसी अखर रही है कि वस, क्या वयान करूं।

आज़ाद—अच्छे हो जाओ, तो हिन्दोस्तान चले जाना।

ख़ोजी—अरे मियां, यहां दम भर का भरोसा नहीं है।

दूसरे दिन आज़ाद ख़ोजी से रुखसत होकर जहाज़ पर सवार हुए। इतने दिनों के वाद ख़ोजी की जुदाई से उन्हें वहुत रंज हो रहा था। थोड़ी देर के वाद नींद आ गयी, तो ख्वाव देखा कि वह हुस्नआरा वेगम के दरवाज़े पर पहुंचे हैं और वह उन्हें फूलों का एक गुलदस्ता दे रही है। एकाएक तोप दग़ी और आज़ाद की आंख खुल गयी। जहाज़ क़ुस्तुनतुनिया पहुंच गया था।

छप्पन

आज़ाद तो उधर क़ाहिरे की हवा खा रहे थे, इधर हुस्नआरा वीमार पड़ीं। कुछ दिन तक तो हकीमों और डॉक्टरों की दवा हुई, फिर गंडे-तावीज़ की वारी आयी। आख़िर आवोहवा तव्दील करने की ठहरी। वहारवेगम के पास गोमती के किनारे एक वहुत अच्छी कोठी थी। चारों वहनें, वड़ी वेगम और घर के नौकर-चाकर सव इस नयी कोठी में आ पहुंचे।

वेगम—मकान तो वड़ा कुशादा है ! देखूं, चन्द्रवेधी है या सूर्यवेधी।

हुस्नआरा—हां अम्माजान, यह ज़रूर देखना चाहिए।

रुहअफ़ज़ा—ले लो, ज़रूर। हज़ार काम छोड़कर।

दोनों वहनें हंसती-वोलती मकान के दालान और कमरे देखने लगीं। छत पर एक कमरे के दरवाज़े जो खोले, तो देखा, दरिया लहरें मार रहा है। हुस्नआरा ने कहा—वाजी, इस वक़्त जी ख़ुश हो गया। हमारी पलंगड़ी यहीं विछे। वरसों की वीमार यहां रहे, तो दो दिन में अच्छा-भला चंगा हो जाय।

सिपहआरा—बहार बहन, भला कभी अंधेरे-उजाले दूल्हा भाई नहाने देते हैं दरिया मे ?

बहारबेगम—ऐ हे, इसका नाम भी न लेना। इनको बहुत चिढ है इस बात की।

सुबह का वक़्त था, चारो बहने ऊंची छत पर हवा खाने लगी कि इतने मे एक तरफ से धुआ उठा। हुस्नआरा ने पूछा—यह धुआं कैसा है ?

रूहअफजा—इस घाट पर मुर्दे जलाये जाते है।

हुस्नआरा—मुर्दे यहीं जलते हैं ?

बहारबेगम—हा, मगर यहा से दूर है।

सिपहआरा—हाय, क्या जाने कौन बेचारा जल रहा होगा ?

रूहअफजा—जिंदगी का भरोसा नही।

बडी बेगम ने सुना कि यहां मुर्दे जलाये जाते है, तो होश उड़ गये। बोली—ऐ बहार, तुम यहां कैसे रहती हो ? खुरशेद दूल्हा आये, तो उनसे कहू।

हुस्नआरा—फ़ायदा ? बरसो से तो वह यहां रहते है; भला तुम्हारे कहने से मकान छोड़ देगे !

सिपहआरा—यह हमेशा यहां रहते है; कुछ भी नही होता। हम जो दो दिन रहेगे, तो मुर्दे आकर चिपट जाएंगे भला ?

बड़ी बेगम का बस चलता, तो खड़े-खड़े चली जाती; मगर अब मजबूर थी। यहां से चारों बहने दूसरी छत पर गयी तो बहारबेगम ने कहा—यह जो उस तरफ़ दूर-दूर तक ऊचे-ऊचे टीले नजर आते है, यहां आबादी थी। जहां तुम बैठी हो, यहा वजीर का मकान था। मजाल क्या था कि कोई इस तरफ़ आ जाता ! मगर अब वहा खाक उड़ती है, कुत्ते लोट रहे है।

इतने मे एक किश्ती इसी घाट पर आकर रुकी। उस पर से दो-तीन आदमी उतरे एक बूढे थे, दूसरा नौजवान। दोनो एक क़ालीन पर बैठे और बाते करने लगे। बूढ मिया ने कहा—मिया आजाद-सा दिलेर जवान भी कम देखने मे आयेगा। यह उन्ही का शेर है···

सीने को चमन बनायेगे हम,
गुल खायेगे गुल खिलायेगे हम।

जवान—(गुलबाज) मियां आजाद कौन थे जनाब ?

इस पर बूढे मिया ने आजाद की सारी दास्तान बयान कर दी। दोनो बहने कान लगाकर दोनो आदमियो की बाते सुनती थी और रोती थी। हैरत हो रही थी कि ये दोनो कौन है और आजाद को कैसे जानते है ? महरी से कहा—जाके पता लगा कि वह दोनो आदमी जो दरख्त के साथ बैठे हुक्का पी रहे है, कौन है ? महरी ने एक भिश्ती के लड़के को इस काम पर तैनात किया। लडके ने जरा देर मे आकर कहा—दोनो आदमी सराय मे ठहरेगे और दो दिन यहा रहेगे। मगर है कौन, यह पता न चला। महरी ने जाकर यही बात हुस्नआरा से कह दी। हुस्नआरा ने कहा—उस लड़के को यह चवन्नी दो और कहो, जहा ये टिके; इनके साथ जाये और देख आये। महरी ने जोर से पुकारा—अबे ओ शुबराती ! सुन, इन दोनो आदमियो के साथ जा। देख, कहा टिकते है।

शुबराती—अजी, अभी पहुचा।

शुबराती चले। रास्ते मे आपको शौक चर्राया कि छल्लामीरी खेले। एक घंटे मे शुबराती ने कोई डेढ पैसे की कौड़ियां जीती। मगर लालच का बुरा हो, जमे तो दम के दम मे डेढ़ पैसा वह हारे, और बारह कौड़िया गिरह से गयी, वहा से उदास होकर चले।

राह में बन्दर का तमाशा हो रहा था। अब मियां शुबराती जा चुके। कभी बंदरिया को छेड़ा, कभी बकरे पर ढेला फेंका। मदारी ने लिखा कि लौंडा तेज़ है, तो बोला—इधर आओ जवान, आदमी हो कि जानवर ?

शुबराती—आदमी।

मदारी—सुअर कि शेर ?

शुबराती—हम शेर, तुम सुअर।

मदारी—गधा कि गधी ?

शुबराती—गधा।

मदारी—उल्लू कि बैल !

शुबराती—तुम उल्लू, तुम्हारे बाप बैल, और तुम्हारे दादा बछिया के ताऊ।

थोड़ी देर के बाद मियां शुबराती यहां से रवाना हुए, तो एक रईस के यहां एक सपेरा सांप का तमाशा दिखा रहा था। मियां शुबराती भी डट गये। सपेरा तोंबी में भैरवी का रंग दिखाता था।

रईस ने कहा—तब जानें, जब किसी के सिर से सांप निकालो।

सपेरे ने कहा—हजूर, मंतर में सब कुदरत है। मुल कोई आध सेर आटा तो पेट भर खाने को दो। जिसके बदन से कहिए, सांप निकालूं।

लौंडे यह सुनकर हुर्र हो गये कि धरे न जायं। मियां शुबराती डटे खड़े रहे।

सपेरा—वाह जवान, तुम्हीं एक बहादुर हो।

शुबराती—और हमारे बाप हमसे बढ़कर।

सपेरा—यहां बैठ तो जाओ।

मियां शुबराती बेधड़क जा बैठे। सपेरे ने झूठमूठ कोई मंत्र पढ़ा और ज़ोर से मियां शुबराती की खोपड़ी पर धप जमा कर कहा यह लीजिए सांप। वाह-वाह का दौंगड़ा बज गया। रईस ने सपेरे को पांच रुपये इनाम दिये और कहा—इस लौंडे को भी चार आने पैसे दे दो। मियां शुबराती ने चवन्नी पायी, तो फूले न समाये। जाते ही गोल-गप्पे वाले से पैसे के कचालू, धेले के दही-बड़े, धेले की सोंठ की टिकिया ली और चखते हुए चले। फिर तकिये पर जाकर कौड़ियां खेलने लगे। दो पैसे की कौड़ियां हारे। वहां से उठे, तो हलवाई की दुकान पर एक आने की पूरियां खायीं और कुएं पर पानी पिया। वहां से आकर महरी को पुकारा।

महरी—कहो, वह हैं ?

शुबराती—वह तो चले गये।

महरी—कुछ मालूम है, कहां गये ?

शुबराती—रेल पर सवार होकर कहीं चल दिये।

महरी ने जाकर हुस्नआरा से यह खबर कही, तो उन्होंने कहा—लौंडे से पूछो, शहर ही में हैं या बाहर चले गये ? महरी ने जाकर फिर शुबराती से पूछा—शहर में हैं या बाहर चले गये ? शुबराती को इसकी याद न रही कि मैंने पहले क्या कहा था, बोला—किसी और सराय में उठ गये।

महरी—क्यों रे झूठे, तू तो कहता था, रेल पर चले गये ?

शुबराती—मैंने ?

महरी—चल झूठे, तू गया कि नहीं।

शुबराती—अब्बा की क़सम, गया था।

महरी—चल दूर हो, मुआ झूठा।

इतने में बड़ी बेगम का पुराना नौकर हुसैनबख्श आ गया। हुस्नआरा ने उसे

बुलाकर कहा—बड़े मियां, एक साहब आज़ाद के जानने वालों मे यहां आये हैं और किसी सराय में टहरे हैं। तुम ज़रा इस लौंडे शुबराती के साथ उस सराय तक जाओ और पता लगाओ कि वह कौन साहब है। अब मियां शुबराती चकराये कि ख़ुदा ही ख़ैर करे। दिल में चोर था, कहीं ऐसा न हो कि वह अभी सराय में टिके ही हों, तो मुझ पर बेभाव की पड़ने लगें। दबे दांतों कहा चलिए। आगे-आगे हुसैनबख्श और पीछे-पीछे मियां शुबराती चले। राह में शुबराती ने एक लौंडे की खोपड़ी पर धप जमायी, और आगे बढ़े, तो एक दीवाने पर कई ढेले फेंके, और दो क़दम गये, तो एक बूढ़ी ने मामा से कहा—नानी, सलाम। वह गालियां देने लगी, मगर आप बहुत खिलखिलाये। और आगे चले, तो एक अन्धा मिला। आपने उससे कहा—आगे गड्ढा है, और उसकी लाठी छीन ली। हुसैनबख्श कभी मुस्कराते थे, कभी समझाते। चलते-चलते एक तेली मिला, मियां शुबराती ने पूछा—क्यों भई तेली, मरना, तो अपनी खोपड़ी हमें दे देना। मन्तर जगाऊंगा। तेली ने कहा—चुप! लौंडा बड़ा शरीर है। और आगे बढ़े, तो एक रंगरेज़ से पूछा—क्यों बड़े भाई, अपनी दाढ़ी नहीं रंगते? उसने कहा—कहो तुम्हारे बाप की दाढ़ी रंग दें नील से। अब सुनिए, दो हिन्दू बोरिया-बक़छा संभाले कहीं बाहर जाने के लिए घर से निकले। मियां शुबराती एक आंख दबाकर सामने जा खड़े हुए। वे समझे, सचमुच काना है। एक ने कहा—अबे, हट सामने से ओ बे काने! आपने वह आंख खोल दी। दूसरी दबा ली। दोनों आदमी इसे असगुन समझकर अन्दर चले गये। इतने में एक औरत सामने से आयी। मियां शुबराती ने देखते ही हांक लगायी—'एक लकड़िया बांसे की, कानी आंख तमाशे की।'

ज्यों ही दोनों सराय में पहुंचे, हुसैनबख्श ने बढ़कर बूढ़े मियां को सलाम किया। बड़े मियां बोले—जनाब, मियां आज़ाद से मेरी पुरानी मुलाक़ात है। मेरी लड़कियों के साथ वह मुद्दत तक खेला किये हैं। मेरी छोटी लड़की से उनके निकाह की भी तजवीज हुई थी; मगर अब तो वह एक बेगम से क़ौल हार चुके है। इसके बाद कुछ और बातें हुईं। शाम को हुसैनबख्श रुख़सत हुए और घर आकर हुस्नआरा से कहा—वह तो आजाद के पुराने मुलाक़ाती है। शायद आजाद ने उनकी एक लड़की से निकाह करने का वादा भी किया है। यह सुनते ही हुस्नआरा का रंग फ़क़ हो गया। रात को हुस्नआरा ने सिपहआरा से कहा—कुछ सुना? उस बुड्ढे की एक लड़की के साथ आजाद का निकाह होने वाला है।

सिपहआरा—ग़लत बात है।

हुस्नआरा—क्यों?

सिपहआरा—क्यों क्या, आजाद ऐसे आदमी ही नही।

हुस्नआरा—दिल्लगी हो, जो कही आजाद उससे भी इक़रार कर गये हों। चलो ख़ैर, चार निकाह तो जायज़ भी हैं। लेकिन अल्लाह जानता है, यक़ीन नही आता। आजाद अगर ऐसे हरज़ाई होते तो जान हथेली पर लेकर रूम न जाते।

हुस्नआरा ने जबान से तो यह इतमीनान जाहिर किया, पर दिल से यह ख़याल दूर न कर सकी कि मुमकिन है, आज़ाद ने वहां भी क़ौल हारा हो। एक तो उनकी तबीयत पहले ही से ख़राब थी, उस पर यह नयी फ़िक्र पैदा हुई तो फिर बुख़ार आने लगा। दिल को लाख-लाख समझातीं कि आजाद बात के धनी हैं, लेकिन यह ख़याल दूर न होता। इधर एक नयी मुसीबत यह आ गयी कि उनके एक आशिक़ और पैदा हो गये। यह हज़रत बहारबेगम के रिश्ते में भाई होते थे। नाम था मिर्जा अस्करी। अस्करी ने हुस्नआरा को लड़कपन में देखा था। एक दिन बहारबेगम से मिलने आये, और सुना कि हुस्नआरा बेगम आजकल यहीं हैं, तो उन पर डोरे डालने लगे। बहारबेगम से बोले—

अब तो हुस्नआरा सयानी हुई होंगी ?

बहारबेगम—हां, खुदा के फ़जल से अब सयानी हैं।

अस्करी—दोनों बहनों में हुस्नआरा गोरी हैं न ?

बहारबेगम—ऐ, दोनों खासी गोरी-चिट्टी हैं; मगर हुस्नआरा जैसी हसीन हमने तो नहीं देखी। गुलाब के फूल जैसा मुखड़ा है।

अस्करी—तुम हमारी बहन कैसी हो ?

बहारबेगम—इसके क्या माने ?

अस्करी—अब साफ़-साफ़ क्या कहूं, समझ जाओ। बहन हो, बड़ी हो, इतने ही काम आओ। फिर और नहीं तो क्या आक़बत में बख्शाओगी ?

बहारबेगम—अस्करी, खुदा जानता है. हमें दिल से तुम्हारी मुहब्बत है।

अस्करी—बरसों साथ-साथ खेले हैं।

बहारबेगम—अरे, यों क्यों नहीं कहते कि मैंने गोदियों में खिलाया है।

अस्करी—यह हम न मानेंगे। ऐसी आप कितनी बड़ी हैं मुझसे। बरस नहीं हद दो बरस।

बहारबेगम—ऐ लो, इस झूठ को देखो, छतें पुरानी हैं।

अस्करी—अच्छा, फिर कोई पंद्रह-बीस बरस की छुटाई-बड़ाई है ?

बहारबेगम—हुई है ?

अस्करी—अच्छा, अब फिर किस दिन काम आओगी ?

बहारबेगम—भई, अगर हुस्नआरा मंजूर कर लें, तो है। मैं आज अम्मांजान से ज़िक्र करूंगी।

इतने में हुस्नआरा बेगम ने ऊपर से आवाज़ दी—ऐ बाजी, जरी हमको हरे-हरे मुलायम सिंघाड़े नहीं मंगा देतीं ? मुहम्मद अस्करी ने रसूखियत जताने के लिए मामा से कहा—मेरे आदमी से जाकर कहो कि चार सेर ताज़े सिंघाड़े तुड़वा कर ले आये। हुस्नआरा ने जो उनकी आवाज़ सुनी, तो सिपहआरा से पूछा—यह कौन आया है ? सिपहआरा ने कहा—ऐ, वही तो हैं अस्करी ! थोड़ी देर में मिर्ज़ा अस्करी तो चले गये, और चलते वक़्त बहारबेगम से कह गये कि हमने जो कहा है, उसका खयाल रहे। बहारबेगम ने कहा—देखो, अल्लाह चाहे तो आज के दूसरे ही महीने हुस्नआरा बेगम के साथ मंगनी हो। हुस्नआरा उसी वक़्त नीचे आ रही थी। यह बात उनके कान में पड़ गयी। पांव-तले से मिट्टी निकल गयी। उलटे-पांव लौट गयीं और सिपहआरा से यह क़िस्सा कहा। उसके भी होश उड़ गये। कुछ देर तक दोनों बहनें सन्नाटे में पड़ी रहीं। फिर सिपहआरा ने दीवाने-हाफ़िज़ उठा लिया और फ़ाल देखी, तो सिरे पर ही यह शेर निकला—

बेरौ ई दाम मुर्ग़े दिगर नेह;
कि उनका रा बुलंद अस्त आशियाना।

(यह जाल दूसरी चिड़िया पर डाल। उनका का घोंसला बहुत ऊंचा है।)

सिपहआरा यह शेर पढ़ते ही उछल पड़ी। बोली—लो फतह है। बेड़ा पार हो गया।

इतने में बहारबेगम आ पहुंचीं और हुस्नआरा से बोलीं—तुम लोगों ने मिर्ज़ा अस्करी को तो देखा होगा ? कितना खूबसूरत जवान है !

सिपहआरा—देखा क्यों नहीं; वही शौक़ीन से आदमी है न ?

बहारबेगम—अबकी आयेगा तो ओट में से दिखा दूंगी। बड़ा हंसमुख, मिलन-

सार आदमी है। जिस वक़्त आता है, मकान भर महकने लगता है। मेरी बीमारी में बेचारा दिन भर में तीन-तीन फेरे करता था।

हुस्नआरा ये बातें सुनकर दिल ही दिल में सोचने लगी कि यह कह क्या रही हैं। कैसे अस्करी? यहां तो आज़ाद को दिल दे चुके। वह टर्की सिधारे, हम कौल हारे। इनको अस्करी की पड़ी है। बहार बेगम ने बड़ी देर तक अस्करी की तारीफ़ की; मगर हुस्नआरा कब पसीजने वाली थी। आखिर, बहारबेगम ख़फ़ा होकर चली गयी।

दूसरे दिन जब अस्करी फिर आये, तो बहारबेगम ने उनसे कहा—मैंने हुस्नआरा से तुम्हारा जिक्र तो किया, मगर वह बोली तक नहीं। उस मुए आज़ाद पर लट्टू हो रही हैं।

अस्करी—मैं एक तरकीब बताऊं, एक काम करो। जब हुस्नआरा बेगम और तुम पास बैठी हो, तो आज़ाद का ज़िक्र ज़रूर छेड़ो। कहना अस्करी अभी-अभी अखबार पढ़ता था, उसका एक दोस्त है आज़ाद, वह नानबाई का लड़का है। उसकी बड़ी तारीफ़ छपी है। कहता था, इस नानबाई के लौंडे की ख़ुशक़िस्मती को तो देखो, कहां जाकर शिप्पा लड़ाया है? जब वह कहें कि आजाद शरीफ़ आदमी हैं, तो कहना, अस्करी के पास आजाद के न जाने कितने खत पड़े हैं। वह क़सम खाता है कि आजाद नानबाई का लड़का है, बहुत दिनों तक मेरे यहां हुक्क़े भरता रहा।

यह कहकर मिर्ज़ा अस्करी तो विदा हुए, और बहारबेगम हुस्नआरा के पास पहुंचीं।

हुस्नआरा—कहां थीं बहन? आओ, दरिया की सैर करें।

बहारबेगम—ज़रा अस्करी से बातें करने लगी थी। किसी अख़बार में उनके एक दोस्त की बड़ी तारीफ़ छपी है। क्या जाने, क्या नाम बताया था? भला ही-सा नाम है। हां, खूब याद आया, आज़ाद। मगर कहता था कि नानबाई का लड़का है।

हुस्नआरा—किसका?

बहारबेगम—नानबाई का लड़का बताया था। तुम्हारे आशिक़ साहब का भी तो यही नाम है। कहीं वही अस्करी के दोस्त न हों।

सिपहआरा—वाह, अच्छे आपके अस्करी हैं जो नानबाइयों के छोकरों से दोस्ती करते फिरते हैं।

बहार तो यह आग लगाकर चलती हुई, इधर हुस्नआरा के दिल में खलबली मची। सोचीं, आज़ाद के हाल से किसी को इत्तला तो है नहीं, शायद नानबाई ही हों। मगर यह शक्ल-सूरत, यह इल्म और कमाल, यह लियाक़त और हिम्मत नानबाई में क्योंकर आ सकती है? नानबाई फिर नानबाई हैं। आज़ाद तो शाहज़ादे मालूम होते हैं। सिपहआरा ने कहा—बाजी, बहार बहन तो उधार खाये बैठी है कि अस्करी के साथ तुम्हारा निकाह हो। सारी कारस्तानी उसी की है। अस्करी के हथकंडों से अब बचे रहना। वह बड़ा नटखट मालूम होता है।

शाम को मामा ने एक ख़त लाकर हुस्नआरा को दिया। उन्होंने पूछा—किसका ख़त है?

मामा—पढ़ लीजिए।

सिपहआरा—क्या डाक पर आया है?

मामा—जी नहीं, कोई बाहर से दे गया है।

हुस्नआरा ने ख़त खोलकर पढ़ा। ख़त का मजमून यह था—

क़दम रख देखकर उलफ़त के दरिया में जरा ऐ दिल;
ख़तरा है डूब जाने का भी दरिया के नहाने में।

हुस्नआरा वेगम की ख़िदमत में आदाव। मैं जताये देता हूं कि आज़ाद के फेर में न पड़िए। वह नीच क़ौम आपके क़ाविल नहीं। नानवाई का लड़का, तंदूर जलाने में ताक़, आटा गूंधने में मश्शाक़। वह और आपके लायक़ हो! अव्वल तो पाजी, दूसरे दिल का हरजाई, और फिर तुर्रा यह कि अनपढ़! वहार वहन मुझे खूव जानती हैं। मैं अच्छा हूं या बुरा, इसका फ़ैसला वही कर सकती हैं। आज़ाद मेरे दुश्मन नहीं, मैं उन्हें खूव जानता हूं। इसी सवव से आपको सलाह देता हूं कि आप उसका खयाल दिल से दूर कर दें। खुदा वह दिन न दिखाये कि आजाद से तुम्हारा निकाह हो।

तुम्हारा
अस्करी

हुस्नआरा ने इस ख़त के जवाव में यह शेर लिखा—

न छेड़ ऐ निकहते वादे-वहारी, राह लग अपनी;
तुझे अठखेलियां सूझी हैं, हम वेजार वैठे है।

सिपहआरा ने कहा—क्यों वाजी, हम क्या कहते थे? देखा, वही वात हुई न? और झूठा तो इसी से साबित है कि मियां आज़ाद को अनपढ़ वताते हैं। खुदा की शान, यह और आज़ाद को अनपढ़ कहें! हम तो कहते ही थे कि यह वड़ा नटखट मालूम होता है।

हुस्नआरा ने यह पुर्जा मामा को दिया कि जा, वाहर दे आ। अस्करी ने यह ख़त पाया, तो जल उठे। दिल में कहा—अगर आज़ाद को नीचा न दिखाया. तो कुछ न किया। जाकर वड़ी वेगम से मिले और उनसे खूव नमक-मिर्च मिला-मिलाकर वातें कीं। वहारवेगम ने भी हां-में-हां मिलायी और अस्करी की खूव तारीफ़ें कीं। आज़ाद को जहां तक वदनाम करते वना, किया। यहां तक कि आख़िर वड़ी वेगम भी अस्करी पर लट्टू हो गयीं मगर हुस्नआरा और सिपहआरा अस्करी का नाम सुनते ही जल उठती थीं। दोनों आज़ाद को याद कर-करके रोया करतीं, और वहारवेगम वार-वार अस्करी का ज़िक्र करके उन्हें दिक़ किया करतीं। यहां तक कि एक दिन वड़ी वेगम के सामने सिपहआरा और वहारवेगम में एक झौड़ हो गयी। वहार कहती थीं कि हुस्नआरा की शादी मिर्जा अस्करी से होगी, और ज़रूर होगी। सिपहआरा कहती थीं—यह मुमकिन नहीं।

एक दिन वड़ी वेगम ने हुस्नआरा को वुला भेजा, लेकिन जव हुस्नआरा गयीं, तो मुंह फेर लिया। वहारवेगम भी वहीं वैठी थीं। वोलीं—अम्मांजान तुमसे बहुत नाराज़ हैं हुस्नआरा!

वेगम—मेरा नाम न लो।

वहारवेगम—जी नहीं, आप ख़फ़ा न हों। मजाल है, आपका हुक्म न मानें।

वेगम—सुना हुआ है सव।

वहारवेगम—हुस्नआरा, अम्मांजान के पास आओ।

हुस्नआरा परेशान कि अव क्या करूं। डरते-डरते वड़ी वेगम के पास जा वैठी। वड़ी वेगम ने उनकी तरफ़ देखा तक नहीं।

वहारवेगम—अम्मांजान, यह आपके पास आयी हुई हैं, इनका क़सूर माफ़ कीजिए।

वेगम—जव यह मेरे कहने में नहीं हैं, तो मुझसे क्या वास्ता? अस्करी-सा लड़का मशाल लेकर भी ढूंढ़ें, तो न पाये। मगर इन्हें अपनी ही ज़िद है।

बहारबेगम—हुस्नआरा, ख़ूब सोचकर इसका जवाब दो।

बेगम—मैं जवाब-सवाब कुछ नहीं मांगती।

बहारबेगम—आप देख लीजिएगा, हुस्नआरा आपका कहना मान लेंगी।

बेगम—बस, देख लिया !

बहारबेगम—अम्मांजान, ऐसी बातें न कहिए।

बेगम—दिल जलता है बहार, दिल जलता है ! अपने दिल में क्या-क्या सोचते थे, मगर अब उठ ही जायें यहां से, तो अच्छा।

यह कहकर बड़ी बेगम उठ कर चली गयीं। हुस्नआरा भी ऊपर चली गयी और लेटकर रोने लगी। थोड़ी देर में बहार ने आकर कहा—हुस्नआरा, जरी पर्दे ही में रहना, अस्करी आते हैं। हुस्नआरा ने अस्करी का नाम सुना, तो कांप उठीं। इतने में अस्करी आकर, बरामदे मे खड़े हो गये।

बहारबेगम—बैठो अस्करी !

अस्करी—जी हां, बैठा हूं। ख़ूब हवादार मकान है। इस कमरे में तुम रहती हो न ?

बहारबेगम—नहीं, इसमें हमारी बहनें रहती हैं।

अस्करी—अब हुस्नआरा की तबीयत कैसी है ?

बहारबेगम—पूछ लो, बैठी तो हैं।

अस्करी—नहीं, बताओ तो आख़िर ?

बहारबेगम—तुम भी तो हकीम हो ? भला पर्दे के पास से नब्ज़ तो देखो ?

हुस्नआरा मुसकरायीं। सिपहआरा ने कहा—ऐ, हटो भी ! बड़े आये वहां से हकीम !

बहारबेगम—तुम तो हवा से लड़ती हो।

सिपहआरा—लड़ती ही हैं !

अस्करी—इस वक़्त खाना खा चुकी होंगी। शाम को नब्ज़ देख लूंगा।

बहारबेगम—ऐ, अभी खाना कहां खाया ?

सिपहआरा—हां-हां खा चुकी हैं।

मिर्ज़ा अस्करी तो रुख़सत हुए, मगर बहारबेगम को सब्र कहां ? पूछा—हुस्नआरा, अब बोलो, क्या कहती हो ? सिपहआरा तिनक कर बोलीं…अब कोई और बात भी है, या रात-दिन यही ज़िक्र है ? कह दिया एक दफ़ा कि जिस बात से यह चिढ़ती हैं, वह क्यों करो।

बहारबेगम—होना वही है, जो हम चाहती हैं।

हुस्नआरा—ख़ैर, बहन, जो होना है, हो रहेगा। उसका ज़िक्र ही क्या ?

सिपहआरा—बहार बहन, नाहक़ बैठे-बिठाये रंज बढ़ाती हो।

बहारबेगम—याद रखना, अम्मांजान अभी-अभी क़सम खा चुकी हैं कि वह तुम दोनों की सूरत न देखेंगी। बस, तुम्हें अब अख़्तियार है, चाहे मानो, चाहे न मानो।

कई दिन इसी तरह गुज़र गये। हुस्नआरा जब बड़ी बेगम के सामने जातीं, तो वह मुंह फेर लेती। दोनों बहनें रात-दिन रोया करतीं। सोची कि यह तो सब के सब हमारे ख़िलाफ़ हैं, आओ, रूहअफ़ज़ा को बुलायें, शायद वह हमारा साथ दें। मामा ने कहा—मैं अभी-अभी जाती हूं। जहां तक बन पड़ेगा, बहुत कहूंगी। और, कहना क्या है, ले ही आऊंगी।

इतने में बहारबेगम ने आकर कहा—ऐं हुस्नआरा, जरी पर्दा करके अस्करी को नब्ज़ दिखा दो। ज़ीने पर खड़े हैं। हुस्नआरा मजबूर हो गयी। सिपहआरा को इशारे से

बुलाया और कहा—वहार वहन तो वाहर ही वैठेंगी। मेरे बदले तुम नव्ज़ दिखा दो। सिपहआरा ने मुसकरा कर कहा—अच्छा, और पर्दे के पास वैठ कर नव्ज़ दिखायी।

अस्करी—दूसरा हाथ लाइए।

वहारवेगम—वुखार तो नहीं है ?

अस्करी—थोड़ा-सा वुख़ार तो जरूर है। कमज़ोरी वहुत है।

जव अस्करी चले गये, तो हुस्नआरा ने वहारवेगम से कहा—आपके अस्करी तो वड़े होशियार हैं !

वहारवेगम—क्या शक भी है ?

हुस्नआरा—उफ़, मारे हंसी के वुरा हाल है। वाह रे हकीम !

सिपहआना—'नीम हकीम, ख़तरे जान।'

वहारवेगम—यह काहे से ?

हुस्नआरा—नव्ज़ किसकी देखी थी ?

वहारवेगम—तुम्हारी।

हुस्नआरा—अरे वाह, कहीं देखी हो न ? वस, देख ली हिकमत।

वहारवेगम—फिर किसकी नव्ज़ देखी ? क्या सिपहआरा वैठ गयी थीं ?

सिपहआरा—और नहीं तो क्या ? कमज़ोरी वताते थे। कमज़ोरी हमारे दुश्मनों को हो !

वहारवेगम—भला इलाज में क्या हंसी करनी थी ?

वाहर जाकर वहार ने अस्करी को ख़ूव आड़े-हाथों लिया—ऐ वस, जाओ भी, मुफ़्त में हमको वद वनाया ! हुस्नआरा ने हंसी-हंसी में सिपहआरा को अपनी जगह विठा दिया, और तुम ज़रा न पहचान सके। ख़ुदा जानता है, मुझे वहुत शरम आयी।

शाम को रूहअफ़ज़ा वेगम आ पहुंचीं और वड़ी वेगम के पास जाकर सलाम किया।

वड़ी वेगम—तुम कव आयीं ?

रूहअफ़ज़ा—अभी-अभी चली आती हूं। हुस्नआरा कहां हैं ?

वहारवेगम—हमें उनका हाल मालूम नहीं। कोठे पर हैं।

रूहअफ़ज़ा—जरी, वुलवाइए !

वहारवेगम—दोनों वहनें हमसे खफ़ा हैं।

रूहअफ़ज़ा कोठे पर गयी, तो दोनों वहनें उनसे गले मिलकर ख़ूव रोयीं।

रूहअफ़ज़ा—यह तुमको क्या हो गया हुस्नआरा ? वह सूरत ही नहीं। माजरा क्या है ?

सिपहआरा—अव तो आप आयी हैं; सव कुछ मालूम हो जायेगा। सारा घर हमसे फिरंट हो रहा है। हमें तो खाना-पीना उठना-वैठना सव हराम है !

वहारवेगम को यह सव्र कैसे होता कि रूहअफ़ज़ा आयें और दोनों वहनें इनसे अपना दुखड़ा रोयें। आकर धीरे से वैठ गयीं।

रूहअफ़ज़ा—वहन, यह क्या वात है ! आख़िर किस वात पर यह रंजारंजी हो रही है ?

वहारवेगम—मैं तुमसे पूछती हूं, अस्करी में क्या वुराई है ? शरीफ़ नहीं है वह, या पढ़ा-लिखा नहीं है, या अच्छे ख़ानदान का नहीं है ? आख़िर इनके इनकार का सवव क्या है ?

सिपहआरा—हमने एक दफ़े कह दिया कि हम अस्करी का नाम नहीं सुनना चाहते।

रूहअफ़ज़ा—तो यह कहो, बात बहुत बढ़ गयी है। मुझे जरा भी कुछ हाल मालूम होता, तो फ़ौरन ही आ जाती।

बहारबेगम—अब आयी हो, तो क्या बना लोगी ? यह एक न मानेंगी।

रूहअफ़ज़ा—वह तो शायद मान भी जायें, मगर आपका मान जाना अलबत्ता मुश्किल है।

बहारबेगम—यह कहिए, आप इनकी तरफ़ से लड़ने आयी हे ?

रूहअफ़ज़ा—हां, हमसे तो यह नही देखा जाता कि खाहमख्वाह झगड़ा हो।

ये बातें हो रही थीं कि बड़ी बेगम साहिबा भी लठिया टेकती हुई आयी।

रूहअफ़ज़ा—आइए अम्मांजान, बैठिए।

बेगम—मै बैठने नही आयी, यह कहने आयी हूं कि अस्करी के साथ हुस्नआरा का निकाह जरूर होगा। इसमें सारी दुनिया एक तरफ़ हो, मैं किसी की न सुनूंगी। मैं जान दे दूंगी। यह न मानेंगी, तो जहर खा लूंगी; मगर करूंगी यही, जो कह रही हू।

बड़ी बेगम यह कहकर चली गयी। हुस्नआरा इतना रोयी कि आंखे लाल हो गयीं। रूहअफ़ज़ा ने समझाया, तो बोली···बहन ! अम्मांजान मानेंगी नही, और हम सिवा आजाद के और किसी के साथ शादी न करेंगे ? नतीजा यह होना है कि हमी न होंगे।